SOCIO-ECONOMIC CONDITION UNDER THE SULTAN S OF DELHI AND AGRA FROM 1399 TO 1526 A. D.

Thesis Submitted For The Degree of

DOCTOR OF PHILOSOPHY

By

REKHA SRIVASTAVA

Under The Supervision of

Dr. P. L. VISHWAKARMA

DEPARTMENT OF MED./MOD. HISTORY

UNIVERSITY OF ALLAHABAD

ALLAHABAD

1993

प्राक्कथन

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध के लिये विषय का चुनाव करते समय मेरा ध्यान उत्तर तैमूर कालीन दिल्ली सल्तनत की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति की ओर गया। इस विषय के बारे में मेरी रुचि को देखते हुए परमपूज्य गुरुवर प्रो० राधेश्याम जी ने आवश्यक संशोधन के साथ मुझे इस विषय पर कार्य करने की अनुमति दे दी। शोध कार्य के दौरान समय-समय पर उन्होंने मुझे आवश्यक निर्देश व मार्ग-दर्शन भी दिये। उनके प्रति मैं चिरकृतज्ञ रहूँगी। वास्तव में उनके प्रति कृतज्ञता का भाव समुचित रूप से प्रकट कर पाने के लिए मेरे पास उपयुक्त शब्द नहीं है। बिना उनकी प्रेरणा के यह शोध-प्रबन्ध पूरा नहीं हो सकता था। बहुत से विद्वानों की कृतियों का अध्ययन करके तदकालीन सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति के बारे में आवश्यक सूचनाएँ एकत्र की जा सकीं। कुछ कृतियाँ समकालीन लेखकों की हैं कुछ परवर्ती तथा आधुनिक लेखकों की। ऐसे सभी लेखकों के प्रति मैं कृतज्ञता प्रकट करती हूँ जिनका अध्ययन मैंने किया है। वास्तव में सामाजिक एवं धार्मिक प्रवृत्तियाँ, जिनकी गूँज कण-कण में होती है, चन्द शब्दों में बाँधना कठिन कार्य है। फिर भी मेरे निर्देशक डा० पी०एल० विश्वकर्मा ने अपने बहुमूल्य सुझावों एवं निर्देशों के द्वारा पूरे शोध-प्रबन्ध के तैयार होने के दौरान मेरा इस प्रकार से मार्ग-दर्शन किया कि इस अपरिमित विषय को मैं चन्द शब्दों में ढाल सकी। उन्होंने प्रारम्भ से लेकर अन्त तक मेरे शोध कार्य में विशेष रुचि लेते हुये अपना बहुमूल्य समय देकर मुझे कृतार्थ किया जिसके लिये मैं उनके प्रति आभार प्रकट करती हूँ।

मेरे पूज्य पिता श्री महेश चन्द्र श्रीवास्तव, पूज्य माता श्रीमती लज्जावती श्रीवास्तव एवम् सभी भाई, बहनों, एवं भाभियों ने मुझे शोध-कार्य के लिये निरन्तर प्रोत्साहित किया और हर सम्भव सहायता प्रदान की। सबसे अधिक प्रोत्साहन मेरी बहन स्वर्गीया चित्रा श्रीवास्तव ने दिया था। शोध-कार्य के मध्य विवाह हो जाने पर भी मेरा शोध-कार्य तीव्रगति से चलता रहा। मेरे पति श्री आशीष कुमार एवं श्वश्रू श्रीमती विनोदनी श्रीवास्तव मुझे शोध-कार्य को पूर्ण करने के लिये

निरन्तर उत्साहित करते रहे । सभी की प्रेरणा व सहयोग से मेरा यह शोध-कार्य परिपूर्ण हो सका । अतः सभी के प्रति मैं हृदय से आभारी हूँ । मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय के पुस्तकालयाध्यक्ष एवं पुस्तकालय के समस्त अधिकारियों तथा कर्मचारियों के प्रति आभारी हूँ, जिन्होंने पुस्तकें उपलब्ध कराने में मेरी हर सम्भव सहायता की ।

अन्त में मैं प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध के टंकणकर्ता श्री राम बरन यादव को धन्यवाद देती हूँ, जिन्होंने सहज भाव से मेरे शोध-प्रबन्ध का टंकण किया ।

रेखा श्रीवास्तव
रेखा श्रीवास्तव

दिनांक : 5-12-93

विषयानुक्रमणिका

प्रथम अध्याय

भूमिका

भूमिका

1398 ई0 से दिल्ली सल्तनत का राजनीतिक वर्चस्व क्षीण होने लगा । परवर्ती तुगलक सुल्तानों की अयोग्यता व तैमूर के आक्रमण ने सल्तनत की जड़ें हिला दी । इस सूखते वृक्ष को सैय्यद वंश के शासक हरा-भरा न कर सके । अन्तिम राजवंश लोदियों का था । उसके तीनों शासक सल्तनत को सुदृढ़ करने के लिए प्रयत्नशील रहे। सिकन्दर लोदी के समय स्थिति बेहतर प्रतीत होने लगी । किन्तु इब्राहिम लोदी की अदूरदर्शिता पूर्ण नीतियों एवं बाबर की बेहतर सैनिक क्षमताओं के कारण 21 अप्रैल, 1526 ई0 का दिन दिल्ली सल्तनत (जो सिकन्दर लोदी के समय से आगरा राजधानी होने के कारण 1504 ई0 से आगरा सल्तनत कही जा सकती है) के अवसान का दिन सिद्ध हुआ । इसी दिन पानीपत का प्रथम युद्ध हुआ जिसमें इब्राहिम लोदी पराजित हुआ और मारा गया । उसी के साथ लोदी वंश का अवसान हो गया और सल्तनत का भी पटाक्षेप हो गया ।

तैमूर के आक्रमण एवं बाबर के पाँचवें आक्रमण के बीच के उत्तरी भारत के राजनीतिक परिदृश्य का ऐतिहासिक आकलन कई विद्वान शोधकर्त्ताओं की कृतियों में हो चुका है । आग़ा मेंहदी हुसैन की 'द तुग़लक डाइनेस्टी' व 'राइज एण्ड फाल आफ मुहम्मद बिन तुग़लक' एस0एम0 बनर्जी की 'हिस्ट्री आफ फ़िरोजशाह तुग़लक', डोर्न की 'हिस्ट्री आफ द अफ़गान्स', आर0सी0 जौहरी की 'फ़िरोज तुग़लक' ईश्वरी प्रसाद की 'ए हिस्ट्री आफ द करौना टर्क्स इन इण्डिया, भाग 1', अब्दुल हलीम की 'ए हिस्ट्री आफ द लोदी सुल्तान्स आफ डेलही एण्ड आगरा' तथा अवध बिहारी पाण्डेय की 'द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया' आदि महत्त्वपूर्ण कृतियाँ सम्पूर्ण विषय-वस्तु को राजनीतिक दृष्टि से सुस्पष्ट करने में सहायक हैं । समकालीन सामाजिक व आर्थिक परिदृश्य का अध्ययन करने की आवश्यकता ने प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध के लिए विषय का चुनाव करते समय मेरा ध्यान सर्वाधिक आकृष्ट किया । मुस्लिम शासन की स्थापना की प्रारम्भिक दो शताब्दियाँ (1206 ई0 से 1398 ई0 तक) एक प्रकार से सन्धिकाल थीं । उसके बाद उत्तरी भारत का सामाजिक एवं आर्थिक परिदृश्य सुस्पष्ट रूप से उभरता है । दुर्भाग्य से 1398 ई0 से 1526 ई0 के बीच का काल अनेक राजनीतिक व आर्थिक संकटों का काल रहा । इस अवधि में जनता को

अनेक कठिनाइयाँ हुईं । सामाजिक एवं धार्मिक सौष्ठव एवं सौहार्द की स्थापना के लिए प्रयास इस अवधि में प्रारम्भ हो जाने से ऐसा लगा कि जैसे जन-मानस के घायल हृदयों के लिए विरेचन की आवश्यकता ने ही इस प्रयास को जन्म दिया हो । पन्द्रहवीं शताब्दी यदि एक ओर सिकन्दर लोदी की कट्टरता का स्मरण कराती है तो दूसरी ओर गुरू नानक और कबीर का । यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं है कि गुरू नानक और कबीर के प्रयास हिन्दू-मुस्लिम सौहार्द की स्थापना के लिए मजबूत नींव डालने में सफल हुए । सिकन्दर लोदी का दृष्टिकोण भले ही कट्टर रहा हो, उसी के शासन-काल में कबीर अपनी सामाजिक एवं धार्मिक अवधारणाओं की घुट्टी हिन्दू और मुस्लिम सम्प्रदायों को पिलाते रहे । सभी बाह्याडम्बरों का विरोध कबीर ने निर्भय होकर किया ।

सूफ़ीवाद के द्वारा भारत में मुसलमानों के अन्दर नवीन जागृति लाई जा रही थी । चिश्तिया सिलसिला का इस संदर्भ में विशेष योगदान रहा । भारत की उपेक्षित जातियाँ जिन्हें शूद्र कहा जाता था, चिश्तिया सिलसिला के आलोक से प्रभावित होने लगी थीं । मानवता से प्यार करने का जो संदेश शेख़ निज़ामुद्दीन औलिया ने दिया वह हिन्दुओं को भी उसी प्रकार प्रिय हुआ जैसे मुसलमानों को । 'सियारुल औलिया' में मीर ख़ुर्द ने, शेख़ निज़ामुद्दीन औलिया के द्वारा शम्सुद्दीन याहया को दिया गया एक ख़िलाफ़तनामा (उत्तराधिकार का प्रमाण-पत्र) उल्लिखित किया है, जिसमें कहा गया है, 'हे मुसलमानों, मैं ईश्वर (अल्लाह) की शपथ लेकर कहता हूँ कि ईश्वर (अल्लाह) उनसे प्यार करता है जो मानवता के लिए उसे प्यार करते हैं और उनसे भी प्यार करता है जो ईश्वर (अल्लाह) के लिए मानवता से प्यार करते हैं । ईश्वर से प्रेम करने एवं उसकी प्रशंसा करने का यह एकमात्र तरीका है ।'[1] महबूबे इलाही शेख़ निज़ामुद्दीन औलिया का प्रेम का संदेश उनके शिष्यों के द्वारा देश के

---

1. युसुफ हुसेन : मध्यकालीन भारतीय इतिहास की झलक (अंग्रेजी संस्करण), पृष्ठ 43.

विभिन्न भागों में फैलाया गया । शेख़ सिराजुद्दीन उसमानी (मृत्यु 1357 ई०) ने यह संदेश बंगाल में फैलाया । शेख़ बुरहानुद्दीन गरीब (मृत्यु 1340 ई०) ने दौलताबाद में और शेख़ सैयद हुसेन, शेख़ हिसामुद्दीन और शाह बरकुल्ला ने गुजरात में फैलाया ।[1] आन्तरिक प्रकाश और हृदय के अध्यात्म के इस सिद्धान्त की मन्दाकिनी निरन्तर प्रवाहमान रही है । दयालुता एवं परोपकारिता पर चिश्तिया सूफ़ियों ने बल दिया है । युसुफ हुसेन ने कुरान का एक उद्धरण देते हुए लिखा है कि "अपने सहधर्मियों के प्रति दयालुता एवं परोपकारिता का भाव रखना इस्लाम के मुख्य सिद्धान्तों में से एक है ।" इसी पर सूफ़ी रहस्यवादियों ने जोर दिया ।[2] चिश्ती सूफ़ियों ने अपने सहधर्मियों के जीवन को सुधारने का प्रयास किया । साथ ही देश के अन्य निवासियों में भी अपना मत प्रचारित किया । ऐसा उन्होंने अपनी सादगी और अपने निष्ठावान जीवन की पवित्रता के द्वारा किया । वे समानता एवं सामाजिक न्याय के अग्रदूत थे ।[3]

चिश्तिया सिलसिला के अलावा भी कई सिलसिले भारत में अपने अपने ढंग से कार्य कर रहे थे । इन सबका विवरण प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में समाहित किया गया है । <u>शुहरावर्दी</u> सिलसिला उत्तरी पश्चिमी भारत में अच्छी तरह से स्थापित था। <u>फ़िरदौसिया</u> सिलसिला के शेख़ शरफुद्दीन याहया मनेरी के प्रति फ़िरोज तुग़लक बड़ी श्रद्धा रखता था ।[4] (फ़िरदौसिया सिलसिला, शुहरावर्दी सिलसिला की ही एक

---

1. युसुफ हुसेन, मध्यकालीन भारतीय संस्कृति की झलक (अंग्रेजी संस्करण), पृष्ठ 44-46.

2. वही, पृष्ठ 45.

3. वही, पृष्ठ 45-46.

4. वही, पृष्ठ 49.

शाखा थी ।ॾ फिरदौसिया शाखा का बिहार में प्रभाव था ।

युसुफ हुसेन का यह विचार बहुत प्रभावपूर्ण है कि "मुख्यत: इन्हीं रहस्यवादियों के कारण ऐसा हुआ कि दिल्ली सल्तनत के विघटन एवं देश के विभिन्न भागों में विभिन्न राजवंशों की स्थापना के पश्चात् मुस्लिम समाज आध्यात्मिक एवं नैतिक रूप से सुदृढ़ हुआ । एक ओर इन रहस्यवादियों के कारण तथा दूसरी ओर हिन्दू भक्तों के कारण शासक एवं शासित के बीच की खाई कुछ हद तक पाटी जा सकी ।"[1] प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में इन बातों का गहन अध्ययन यथास्थान समाहित किया गया है ।

आर्थिक रूप से 1398 से 1526 ई0 के काल को परखने का कार्य भी प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध की परिधि के अन्तर्गत है । राजनीतिक अस्थिरता एवं युद्धों के बाहुल्य के वातावरण में नवीन आर्थिक विकास की प्रक्रिया नहीं पनपती है । इसके विपरीत यथास्थितिवाद की कड़ियों की अविच्छिन्नता पर भी प्रश्नचिह्न लग जाता है । ये कड़ियाँ कहाँ, कब और कैसे विच्छिन्न हुईं और उन्हें पुन: जोड़ने के क्या प्रयास किए गए इसका अध्ययन शोध-प्रबन्ध में समाहित है । मध्यकाल में पूरे देश में बड़े बड़े नगरों की संख्या में वृद्धि हुई । सिकन्दर लोदी के शासनकाल का एक उदाहरण सुविख्यात है । उसने 1504 ई0 में आगरा को जो कि एक गाँव था, राजधानी के नगर के रूप में स्थापित एवं विकसित किया । आगरा का पूरा विकास अकबर के समय में हुआ । 1398 ई0 में तैमूर के आक्रमण तक दिल्ली का राजनीतिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में प्रधान स्थान बना रहा । उसके पश्चात् दिल्ली का सामाजिक एवं आर्थिक ढाँचा विश्रृंखलित हो गया ।[2] उत्तरी भारत में दिल्ली के अलावा श्रीनगर, लाहौर

----

1. युसुफ हुसेन, मध्यकालीन भारतीय संस्कृति की झलक ॺअंग्रेजी संस्करणॾ, पृष्ठ 53.

2. वही, पृष्ठ 138.

और आगरा प्रमुख नगर थे । सल्तनत काल में नगरीय आर्थिक विकास खूब हुआ । बड़े पैमाने पर वाणिज्य होता था ।[1] नगरों की महत्ता इसलिए भी अधिक थी कि ये सुल्तान तथा प्रशासकीय वर्ग के मुख्यालय थे । यहाँ पर व्यापार वाणिज्य के प्रमुख केन्द्र बने ।

मूल्यों की स्थिति फ़िरोज़शाह तुग़लक की मृत्यु के पश्चात् बदलने लगी । अफीफ के अनुसार फ़िरोज़शाह तुग़लक के समय बिना किसी प्रयास के सामान्य स्तर पर मूल्य बने रहे । गेहूँ 8 जीतल प्रति मन, जौ और चना 4 जीतल प्रति मन थे । अलाउद्दीन ख़िलजी के समय भी करीब ऐसी ही स्थिति थी । पन्द्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में जब शम्स-ए सिराज अफीफ ने अपनी तारीखे फ़िरोज़शाही लिखा तब तक मूल्यों में वृद्धि हो गयी थी । फ़िरोज तुग़लक की मृत्यु के पश्चात् राजनीतिक अव्यवस्था एवं तैमूर के आक्रमण से उत्पन्न परिस्थितियों में सामान मंहगे हो गए ।[2]

दास प्रथा का प्रचलन सल्तनतकाल में रहा । दासों का निर्यात भी होता था । फ़िरोजशाह तुग़लक ने इस निर्यात को रोका था क्योंकि वह स्वयं दासों का संग्राहक था । तैमूर ने जब आक्रमण किया (1398-99 ई0) तो उसने एक लाख लोगों को दास बनाकर फिर उनका कत्ल करवा दिया । उसके पश्चात् उसने बहुत से दासों का अपने अमीरों में वितरण कर दिया । तमाम शिल्पी एवं विभिन्न पेशों के लोग भी दास के रूप में ले जाए गए ।[3] इरफान हबीब ने लिखा है कि चौदहवीं शताब्दी

---

1. तपन रायचौधरी, इरफान हबीब : द कैम्ब्रिज इकोनॉमिक हिस्ट्री आफ इण्डिया, भाग 1, पृष्ठ 82.

2. वही, पृष्ठ 89.

3. वही, पृष्ठ 91.

के बाद दास-प्रथा में गिरावट आ गई। बाबर ने अपने भारत वृत्तान्त में शिल्पी एवं कामगारों का जाति के रूप में तो वर्णन किया है किन्तु दासों के रूप में कोई विवरण नहीं दिया है।[1] सस्ता शिल्पी एवं कामगार उपलब्ध होने के कारण दासों के रूप में उनका क्रय अब आवश्यक नहीं रह गया था।

तैमूर की भारत में की गई लूटपाट से दिल्ली सल्तनत आर्थिक रूप से भी उजड़ गई और काफी समय तक विपन्नता बनी रही। इरफान हबीब के अनुसार इसके बाद शुद्ध चाँदी और सोने के सिक्कों में बहुत कमी आ गई। इनका प्रयोग दिखावटी रह गया। व्यापार के लिए मुद्रा के रूप में इनका प्रयोग कम हो गया। 'दिल्ली के परवर्ती तुगलक सुल्तानों और सैय्यद सुल्तानों की स्वर्ण मुद्राएं प्राप्त करना दुर्लभ है।'[2]

समकालीन फ़ारसी और अरबी ग्रन्थों में तत्कालीन उद्योगों के बारे में बहुत कम जानकारी दी गई है। मुस्लिम विजय के कारण उद्योग, व्यापार और वाणिज्य को व्यवधान नहीं पहुँचा। नगर हो या गाँव, शिल्पी एवं कारीगर अपने पुश्तैनी पेशे में लगे रहे। नगरों की वृद्धि ज्यों ज्यों होती गई त्यों त्यों उत्पादन में वृद्धि होनी स्वाभाविक थी। मुस्लिम शासकों एवं प्रशासकीय वर्ग के लोगों व धनी लोगों की आवश्यकता की वस्तुएँ शाही कारखानों के द्वारा उपलब्ध कराई जाने लगीं। इनमें कुशल कारीगर काम पर लगाए गए। स्वर्णकार, दस्तकार, रेशमी वस्त्र निर्माता, दर्जी, चित्रकार, पगड़ी बनाने वाले, तलवार तथा अन्य अस्त्र बनाने वाले आदि विविध प्रकार के लोग शाही कारखानों के लिए कार्य करते थे। तैमूर के पश्चात्

---

1. तपन रायचौधरी और इरफान हबीब : द कैम्ब्रिज इकोनामिक हिस्ट्री आफ इण्डिया, भाग 1, पृष्ठ 92.

2. वही, पृष्ठ 98-99.

अध:पतन की ओर मुड़ी अर्थव्यवस्था के कारण औद्योगिक गतिविधियों को ठेस पहुँची। इस काल में कोई तकनीकी विकास हुआ हो, इसकी संभावना नहीं है। पुराने औजार ही काम में लाए जाते रहे। प्रशिक्षण पारिवारिक वातावरण में स्वत: पिता के द्वारा पुत्र को होता रहा। वस्त्र उद्योग, धातु उद्योग, आभूषण उद्योग, शीशा उद्योग, कागज उद्योग, चर्म उद्योग, चीनी उद्योग, किसी न किसी रूप में चलते रहे। मिट्टी के बर्तन, सुगन्धित इत्र, पत्थर एवं काष्ठ-कला, चटाई एवं टोकरी निर्माण, हाथी दाँत का कार्य आदि मध्यकाल में चलते रहे थे।[1] इनके लिए 1398 ई0 से 1526 ई0 के बीच के काल के लिए अलग से विशेष विवरण उपलब्ध नहीं है।

शोध-प्रबन्ध के लिए समकालीन व परवर्ती सभी उपादेय ग्रन्थों को आधार बनाया गया है। इलियट और डाउसन के द्वारा समकालीन स्त्रोतों का जो अनुवाद किया गया है जैसा कि भाग 3, भाग 4 और भाग 5 में समाहित है, उसका सूक्ष्म अध्ययन किया गया है। प्रमुख ग्रन्थ इस प्रकार हैं - तारीखे मुबारकशाही : लेखक - यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी, तबकाते अकबरी : लेखक - निज़ामुद्दीन अहमद बख्शी, वाकेआते मुश्ताकी : लेखक - शेख रिज़कुल्लाह मुश्ताकी, तारीखे दाउदी : लेखक - अब्दुल्लाह, तारीखे शाही : लेखक - अहमद यादगार, अफ़्सानये शाहाने : लेखक - मुहम्मद कबीर बिन शेख इस्माईल आदि।

सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी के द्वारा समकालीन स्त्रोतों का जो अनुवाद किया गया है उसके अध्ययन को भी आधार बनाया गया है। उनके ग्रन्थों में उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1 एवं भाग 2 तथा मुगलकालीन भारत - बाबर प्रमुख हैं।

---

1. चोपड़ा, पुरी दास : सोशल, कल्चरल एण्ड एकोनामिक हिस्ट्री आफ इण्डिया, भाग 2, पृष्ठ 97-107.

समकालीन स्त्रोतों के अलावा परवर्ती स्त्रोतों का भी सहारा लिया गया है । आधु-
निक ग्रन्थों और पत्र-पत्रिकाओं का भी सूक्ष्म अध्ययन किया गया है । शोध-प्रबन्ध
के अन्त में विस्तृत सन्दर्भ ग्रन्थ सूची दी गयी है ।

शोध-प्रबन्ध को इस प्रकार तैयार किया गया है कि 1398 ई0 से 1526 ई0
के बीच के उत्तरी भारत की यथेष्ट सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक स्थिति स्पष्ट
हो सके । चूँकि समाज का एक प्रमुख आधार धर्म होता है इसलिए सामाजिक वृत्तान्त
के सन्दर्भ में धार्मिक, स्थिति का समावेश किया गया है । धार्मिक स्थिति पर विशेष
अध्ययन इस शोध-प्रबन्ध की विषयवस्तु का प्रमुख भाग नहीं है ।

द्वितीय अध्याय

1399 से 1526 ई0 तक की राजनीतिक परिस्थितियाँ

अ. तैमूर एवम् तुग़लक वंश
ब. सैय्यद वंश
स. लोदी वंश

[अ] तैमूर का आक्रमण एवं तुग़लक वंश का अन्त

फ़िरोजशाह तुग़लक की 1388 ई0 में मृत्यु के पश्चात् अयोग्य उत्तराधिकारी एवं अमीरों की गुटबन्दी के कारण दिल्ली सल्तनत की दशा उत्तरोत्तर बिगड़ती गयी।[1] जौनपुर में एक नये और शक्तिशाली राज्य की स्थापना हुई जिसने बिहार पर अपनी सत्ता कायम की। मालवा में एक खिलजी अमीर ने एक नये वंश की स्थापना की। गुजरात ने भी अपनी स्वाधीनता की घोषणा कर दी। दिल्ली सल्तनत का विस्तार पंजाब और दिल्ली [राजधानी] के आसपास के कुछ भू-भाग तक ही परिमित हो गया था। जब 1398 ई0 में तैमूर ने सिन्धु नदी पार की तब उसे दिल्ली का मार्ग साफ़ मिला। उसका मार्ग में तब तक कोई उल्लेखनीय प्रतिरोध नहीं हुआ जब तक वह स्वयं दिल्ली की सीमा पर नहीं जा पहुँचा।[2] ऐसी स्थिति में 1398 ई0 में तैमूर ने आक्रमण करके उसका ऐसा विनाश कर दिया, कि केवल कुछ समय और किसी प्रकार चल सकी। अलेक्जेण्डर डाऊ (Dow) ने तो तैमूर के द्वारा दिल्ली की लूट से ही मुगल साम्राज्य की शुरूआत की परछाईं देखी है। उनका मन्तव्य है कि तैमूर के पश्चात् अफ़गानों ने जो प्रयास अपनी सत्ता के हेतु किया वह एक प्रकार का पराजयी संघर्ष था। कुछ समय तक तैमूर के उत्तराधिकारी अपनी आन्तरिक गुट-बन्दियों व मध्य-एशियाई समस्यों के कारण भारत की ओर विशेष ध्यान नहीं दे सके। तैमूर का पाँचवाँ वंशज बाबर जब भारत पर आक्रमण करने आया तो मुगल साम्राज्य की स्थापना हो गयी।[3]

---

1. द डेल्ही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 111-112; के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 1, के0एम0 पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 127.
2. के0एम0 पणिक्कर : वही, पृष्ठ 127.
3. जे0एस0 ग्रेवाल : मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृष्ठ 17-18; के0एस0 लाल : वही, पृष्ठ 1.

तैमूर का जन्म 9 अप्रैल 1336 ई0 में ट्रान्स आक्सियाना के कैच उर्फ -'शहर-ए-सब्ज़' में हुआ था जो कि समरकन्द से करीब 40 मील दक्षिण में है ।[1] वह तुर्की की बरलास नस्ल का था । 1369 ई0 में 33 वर्ष की अवस्था में तैमूर समरकन्द के सिंहासन पर बैठा ।[2] ट्रान्स आक्सियाना, तुर्किस्तान का एक भाग, पूरा अफगानिस्तान, ईरान, सीरिया, कुर्दिस्तान और एशिया माइनर का बड़ा भू-भाग, उसके विशाल साम्राज्य में धीरे-धीरे आ गया ।[3] उसने अपनी आत्म-कथा में लिखा है कि "हिन्दुस्तान पर आक्रमण करने के पीछे उसका उद्देश्य यहाँ के काफिरों का विनाश करना है ।"[4] वास्तव में भौतिक व धार्मिक दोनों ही कारणों से प्रेरित होकर तैमूर भारत पर आक्रमण करने आया था ।[5] के0एस0 लाल ने लिखा है कि तैमूर विश्वविजय का स्वप्न देखा करता था ।[6]

---

1. के0एस0 लाल, ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 14.

2. ए0एल0 श्रीवास्तव : द सल्तनत आफ देलही : पृष्ठ 220; के0एस0 लाल के अनुसार वह 34वें वर्ष में 9 अप्रैल 1370 ई0 को गद्दी पर बैठा (ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 15)

3. द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 116; इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 285.

4. द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 116; इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ट 284- 389.

5. द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 116.

6. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 15.

<u>तैमूर के आक्रमण के समय तुग़लकवंश की दशा</u> :

तैमूर के आक्रमण के समय दिल्ली सल्तनत की दशा बहुत खराब हो चुकी थी। अमीरों व शाहजादों की गुटबन्दी के कारण जल्दी-जल्दी सुल्तानों में परिवर्तन होता गया। ग़ियासुद्दीन तुग़लकशाह द्वितीय, अबूबक्र, नासिरुद्दीन मुहम्मदशाह और हुमायूँ के हाथ गद्दी थोड़े थोड़े दिन क्रम से होती हुयी अन्ततः तुग़लकवंश के अन्तिम सुल्तान महमूदशाह के हाथ आ गई।[1] यह 1394 ई० थी। सुल्तान महमूदशाह तो केवल नाममात्र का सुल्तान था वास्तविक सत्ता उसके मंत्री मल्लू इकबाल खाँ के हाथों में थी। मल्लू इकबालखाँ ने अपने प्रतिद्वन्द्वी अमीरों को पछाड़कर अपनी स्थिति सुदृढ़ कर ली। स्वयं सुल्तान उसके हाथ की कठपुतली बन गया।

नासिरुद्दीन महमूदशाह को गद्दी पर बैठाने में अमीरों के जिस गुट ने सहयोग दिया था उसका नेता मुकर्रब खाँ, वकील-उस-सल्तनत के पद पर प्रतिष्ठित किया गया। इस समय दिल्ली सल्तनत के सभी प्रान्तों में प्रान्तपतियों तथा हिन्दू सरदारों के द्वारा सत्ता की ऐसी खुलेआम अवहेलना प्रारम्भ हो गयी थी कि वे वस्तुतः स्वतन्त्र शासक की तरह कार्य करने लगे थे। मलिक सरवर ख्वाजा जहाँ ने मई 1394 ई० में दिल्ली से प्रस्थान करके कोइल, इटावा और कन्नौज को जीतकर जौनपुर की ओर प्रस्थान किया और वहाँ विजय[2] प्राप्त करके एक स्वतन्त्र शर्क़ी राज्य की स्थापना की। जौनपुर इसकी राजधानी बना। सुल्तान महमूदशाह ने

----

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 22 (तारीख-ए-मुबारकशाही का अनूदित अंश)

2. इलियट एवं डाउसन : भारतवर्ष का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 28;
सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 167-68.

एक अभियान ग्वालियर के विरुद्ध किया । इस दौरान अमीरों की गुटबन्दी खुलकर सामने आ गयी । सआदत खाँ, का सुल्तान पर अधिक प्रभाव था । मल्लू ने उसका प्रभाव खत्म करने के लिए एक षड्यन्त्र रचा । षड्यन्त्र का कार्यान्वयन होने के पहले ही इसका भेद खुल गया । अस्तु मल्लू खाँ दिल्ली से भागकर मुकर्रब खाँ के संरक्षण में चला गया । जब सुल्तान स्वयं सआदत खाँ के साथ दिल्ली गया तो उसके लिये भी दिल्ली के दरवाजे बन्द कर दिये गये । 3 महीने के बाद सुल्तान तभी उसमें प्रवेश पा सका जब उसने मुकर्रब खाँ के साथ समझौता कर लिया ।

प्रतिद्वन्द्वी सुल्तान नुसरतशाह

सुल्तान महमूदशाह की अयोग्यता से दिल्ली सल्तनत का बहुत नुकसान हो रहा था । ऐसे में जब एक प्रतिद्वन्द्वी सुल्तान भी हो गया अर्थात् सल्तनत के अन्तर्गत दो सुल्तान हो गये[1] तब उसकी हालत कितनी खराब हो गयी होगी इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है । मल्लू और मुकर्रब खाँ के हाथों मात खाकर सआदत खाँ फिरोजाबाद भाग आया और उसी ने फ़िरोजशाह तुग़लक के एक पौत्र नुसरत खाँ (फतहखाँ का पुत्र था) को नुसरतशाह की उपाधि से फिरोजाबाद में ही गद्दी पर बैठा दिया । दिल्ली सल्तनत गृहयुद्ध की आग में झुलसने लगी । फिरोजाबाद, दोआब, सम्भल, पानीपत, भक्कर और रोहतक के अमीरों ने नुसरतशाह का पक्ष लिया । दिल्ली के अमीरों ने महमूदशाह का पक्ष लिया । वास्तविकता यह थी कि दोनों ही पक्ष के सुल्तान अपने अपने अमीरों के हाथ की कठपुतली मात्र थे । अमीर, उमरा अपने अपने स्वार्थ के लिये लड़ रहे थे । न किसी को सल्तनत की परवाह थी न सुल्तान की । अपने अपने क्षेत्रों में स्वतन्त्र शासन करने की इच्छा बलवती होती जा रही थी । जो गृहयुद्ध चल रहा था उसमें रोज सैकड़ों व्यक्ति मारे जा रहे थे । 3 वर्षों तक यह स्थिति चली । तत्पश्चात् मल्लू इक़बाल खाँ का मुकर्रब

----

1. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 11.

खाँ से झगड़ा हो गया । मल्लू ने नुसरतशाह का पक्ष ले लिया और फिरोजाबाद चला गया । वहाँ से नुसरतशाह को उसने भागने के लिए विवश कर दिया । नुसरतशाह पानीपत भाग गया और मल्लू ने फ़िरोजाबाद पर कब्जा कर लिया । मल्लू ने मुकर्रब खाँ को शीघ्र ही मार डाला और सुल्तान महमूदशाह के नाम पर स्वयं सर्वेसर्वा बन बैठा । मल्लू इकबाल ने दिल्ली में पहुँचकर अपनी सत्ता जमानी शुरू ही की थी, कि सूचना मिली कि तैमूर ने सिन्धु नदी पार कर लिया है । चिनाव और राबी पार करते हुये वह आगे बढ़ रहा है और उसने तुलम्बा और मुल्तान हस्तगत कर लिया है।

तैमूर का आक्रमण

तैमूर के आक्रमण के पहले ही उसके पौत्र पीर मुहम्मद ने भारत के विरुद्ध अभियान छेड़ दिया था । पीर मुहम्मद विशाल तैमूरी साम्राज्य के काबुल, कन्धार, गजनी एवं अन्य पड़ोसी राज्यों का प्रान्तपति था । उसने सिन्धु नदी पार करके उच्च अधिकृत कर लिया और मुल्तान पर हमला बोल दिया था । 1398 ई० के मार्च-अप्रैल महीने में तैमूर ने समरकन्द से एक विशाल सेना लेकर प्रस्थान किया । तैमूर के आक्रमण का वज्रपात कटोर किले पर हुआ । यह क्षेत्र कश्मीर और काबुल के मध्यवर्ती भाग में है । यहाँ बहुत रक्तपात हुआ ।[1] 24 सितम्बर 1398 ई० को तैमूर ने सिन्धु नदी को पार किया । आसपास के जमींदारों ने आकर तैमूर की अधीनता स्वीकार की । झेलम नदी को पार करके तैमूर तुलम्बा पहुँचा । तुलम्बा मुल्तान से लगभग 20 मील दूर था । तुलम्बा के सैय्यद, उलमा, शेख़ सभी लोग तैमूर से मिलने

---

1. इलियट एवं डाउसन, भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 286; के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 15; ऐलेक्जेन्डर डॉन : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 3-4; के०एम० पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 127.

आये । बिना युद्ध के ही तैमूर को यहाँ पर विजय मिल गई ।[1] तुलम्बा की विजय के पश्चात् तैमूर को ज्ञात हुआ कि पीर मुहम्मद ने मुल्तान जीत लिया है ।[2] अब तैमूर ने आगे बढ़कर अपने पौत्र की सेना को भी अपने साथ कर लिया । अर्थात् दोनों सेनाएँ संयुक्त रूप से आगे बढ़ने लगीं ।

भटनेर :

अब भटनेर का किला आक्रान्त किया गया ।[3] उल्लेखनीय है कि तैमूर ने भीषण मार-काट, स्त्रियों व बच्चों को बन्दी बनाना, नगर के नगर लूट लेना और जला देना, अपनी सैनिक गतिविधियों का अभिन्न अंग बना लिया था । इस गति-विधि को तैमूर के पूरे भारतीय आक्रमण के दौरान स्थान-स्थान पर दोहराया जाता रहा । इस पहलू को इतना अधिक प्रकाश में लाया जा चुका है कि इस पर अब और अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं है ।

भटनेर हिन्दुस्तान के प्रसिद्ध किलों में से एक था । यहाँ का शासक राव दुलचन्द्र था ।[4] राव दुलचन्द्र ने तैमूर के सामने अधीनता प्रकट करने के बजाय उसका

----

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 295-296.

2. वही, पृष्ठ 299, (मुलफुजात-ए-तीमूरी से अनूदित), अलेक्जेन्डर डाउ : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, पृष्ठ 3.

3. इलियट और डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 302-305.

4. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 20-21.
के0एस0 लाल ने इसका नाम रावदलजीत लिखा है, ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 21.

मुकाबला करने का निश्चय किया । उसने दुर्ग और नगर की प्राचीरों की सुरक्षा की तैयारियाँ कर ली । तैमूर ने युद्ध में स्वयं भाग लिया । अपने अमीरों, शेख नूरुद्दीन अमीर सुलेमान, अमीर अल्लादाद और पुत्र शाहजादा खलील, सुलेमान और शेख मुहम्मद को आदेश दिया कि दुर्ग को घेर लिया जाय । आदेशानुसार सैनिकों ने भटनेर दुर्ग को घेर लिया । पहले ही आक्रमण में दुर्ग और नगर- हिन्दुओं के हाथ से छीन लिया । तैमूर के सैनिकों ने करीब 10 हज़ार काफिरों को मारा । काफिरों के शरीर से इतना रक्त निकला जैसे रक्त की नदी बह रही हो ।[1] जब राव दुलचन्द ने आत्म-समर्पण कर दिया फिर भी तैमूर का आक्रोश ठंडा नहीं हुआ । किए गए प्रतिरोधों से तैमूर क्रुद्ध हो गया था । उसने आदेश दिया, कि काफिरों की हत्या कर दी जाय । दुर्ग के अन्दर के लोगों ने देखा कि अब बचने का कोई रास्ता नहीं है तो अपनी स्त्री और बच्चों को मकान के अन्दर बन्द करके आग लगा दी और स्वयं युद्ध में मारे गए । एक घण्टे के अन्दर 10,000 लोगों के सिर काटे गये । राव दुल-चन्द को भी मौत के घाट उतार दिया गया ।[2] तैमूर के इस्लामी जोश को राहत मिली । लोगों से अतुल धनराशि लूटपाट की गई ।

भटनेर के पश्चात् यही कहानी सरसूती में दोहराई गई । वहाँ के सभी हिन्दू मारे गए । स्त्रियाँ व बच्चे दास बना लिए गए और उन्हें इस्लाम में दीक्षित कर

---

1. शरफुद्दीन अली यज़दी : जफरनामा, भाग 2, पृष्ठ 75-76 ;(अनुवादक) सैय्यद अतहर रिज़वी : तुग़लक कालीन भारत, भाग 2, पृष्ठ 248-250; इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 302-303; डॉन : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 6.

2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 304-305; के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत ; पृष्ठ 22.

लिया गया । यहाँ से भी काफी धनराशि तैमूर के सैनिकों ने बटोरी ।[1] इसके बाद तैमूर ने फतहाबाद एवं अहरूनी के दुर्ग जीते ।[2] अहरूनी से प्रयाण कर तैमूर तोहाना नामक गाँव आया । यहाँ जाट लोग रहते थे । ये लोग उद्दण्ड प्रकृति के थे । तैमूर के आगमन की सूचना पाकर वे भयभीत होकर जंगलों की ओर भागे। फिर भी तैमूर के सैनिकों ने 2000 जाटों को मौत के घाट उतार ही दिया । स्त्रियों, बच्चों व सम्पत्ति का अपहरण यहाँ भी पुरस्कार के रूप में किया गया।[3] तैमूर ने दिल्ली का मार्ग पकड़ा । अब उसका निशाना दिल्ली था । तैमूर की सेना का संगठन इस प्रकार निर्देशित था कि दाँये पक्ष का नेतृत्व शाहजादा पीर मुहम्मद जहाँगीर, शाहजादा रूस्तम, अमीर सुलेमानशाह, और कुछ अन्य लोगों को सौंपा गया । बाँये पक्ष का नेतृत्व सुल्तान महमूदखाँ, शाहजादा खलील सुल्तान, शाहजादा सुल्तान हुसैन, अमीर जहाँशाह आदि लोगों को दिया गया । इस व्यवस्था को पूर्ण कर तैमूर दिल्ली की ओर बढ़ा । समाना, कैथल, होते हुए तैमूर पानीपत पहुँचा । लोग तैमूर के आगमन की सूचना पाकर भाग गये । तैमूर के सैनिकों ने दुर्ग पर कब्जा कर लिया ।[4] अब तैमूर दिल्ली के निकट पहुँचा ।[5] जहाँ-नुमा महल की ओर सेना आगे बढ़ी । जहाँनुमा महल को फ़िरोज़शाह ने यमुना नदी

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 304-305.
2. वही, पृष्ठ 306; के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 22 - दिल्ली सूबा के अन्तर्गत हिसार फिरोजा सरकार में अहरूनी एक महाल था ।
3. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 306-307, के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 22.
4. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 308; के०एस० लाल: ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 23.
5. इलियट एवं डाउसन : वही, भाग 4, पृष्ठ 26 (तारीख-ए-मुबारकशाही का अनूदित अंश) के०एस०लाल:वही, पृष्ठ 23; डॉन : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 8-9.

के तट पर एक पहाड़ी की चोटी पर बनवाया था ।[1] सुल्तान महमूदशाह और मल्लू इकबाल ने आक्रान्ता का मार्ग रोकने के लिए अभी तक कुछ नहीं किया था । 12 दिसम्बर 1398 ई० को तैमूर की एक सेना के साथ उन्होंने जहाँनुमा महल के पास युद्ध किया ।[2] इसमें सुल्तान महमूद की पराजय हो गई । वह अपनी सेना सहित वहाँ से भाग आया । इस युद्ध की विजय प्राप्त करने तक तैमूर के खेमे में युद्धबन्दियों की संख्या बढ़कर एक लाख हो चुकी थीं । तैमूर को यह बताया गया कि यदि निर्णायक युद्ध के पहले इन हिन्दूबन्दियों को न मार डाला गया तो ये युद्ध में शत्रु की ओर से कूद पड़ेंगे । इनको पीछे छोड़कर जाना भी खतरनाक होगा । इन्हीं परिस्थितियों में तैमूर ने आदेश दिया कि सभी युद्धबन्दियों को मार डाला जाये । तैमूर के आदेश पर मारे गये युद्धबन्दियों में केवल हिन्दू ही नहीं थे मुसलमान भी थे । निज़ामुद्दीन अहमद और यहिया बिन अहमद सरहिन्दी आदि किसी भी भारतीय लेखक ने यह नहीं लिखा हैं कि केवल हिन्दू ही मारे गये थे । मृतकों की संख्या निज़ामुद्दीन अहमद और यहिया के अनुसार 50 हज़ार से अधिक नहीं थी । बदायूँनी और हाजी-दवीर भी इसी मत से सहमत हैं । दूसरी ओर मलफूजाते तिमूरी ने मृतकों की संख्या एक लाख लिखी है । इसमें स्त्रियों तथा बच्चों की संख्या भी शामिल थी । शार-फुद्दीन मज़दी जो कि जफरनामा का लेखक है, भी इस बात को मानता है कि केवल 15 वर्ष के ऊपर के पुरुष ही मारे गये थे । स्त्रियों और बच्चों को नहीं मारा गया था ।[3] तैमूर ने स्वयं अपने हाथों से अपने 15 बन्दियों को मारा था ।

----

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 309.

2. के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 24.

3. के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 24, 319-320;

   इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 311-312.

शेख़ सैय्यद एवं दरवेशों के मकान को छोड़कर सभी मकानों को लूटा गया। इससे हिन्दुओं एवं मुसलमानों दोनों को क्षति हुई। लूट में अत्यधिक धन प्राप्त हुआ।[1] इसके पश्चात् तैमूर ने दिल्ली को जीतने के लिये व्यवस्था बनाई, दायाँ पार्श्व शाहजादा पीर मुहम्मद जहाँगीर, अमीर यादगार विरलास आदि लोगों को सौंपा और बायाँ पार्श्व शाहजादा सुल्तान हुसैन, शाहजादा खलील, सुल्तान अमीर जहाँशाह आदि लोगों के हाथों में सौंपा।[2] आगे भाग का नेतृत्व शाहजादा रूस्तम अमीर शेख नुरूद्दीन को सौंपा। तैमूर ने अपना स्थान मध्य भाग में रखा। इस प्रकार तैमूर की व्यूह-रचना तैयार हो गयी। सुल्तान महमूद भी निर्णायक युद्ध की तैयारी में जुट गया। 17 दिसम्बर 1398 ई० को निर्णायक युद्ध हुआ।[3] सुल्तान महमूद ने दायें पार्श्व का नेतृत्व मुईनुद्दीन मलिक हादी तथा अन्य अफसरों को सौंपा और बायाँ पार्श्व का नेतृत्व तागीखाँ मीर अली आदि अन्य लोगों को सौंपा। सुल्तान महमूद की सेना में 10,000 अनुभवी सवार, 40,000 वीर प्यादे थे। 125 हाथी कवच पहने हुये थे।[4] घनघोर युद्ध हुआ तथा महमूद की सेना हार गयी। सुल्तान भागकर गुजरात चला गया और इकबाल खाँ जमुना पार करके बरन पहुँच गया।[5]

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 309, अलेक्जेन्डर डॉड : द हिस्ट्री आफ हिन्दोस्तान, पृष्ठ 8.
2. के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 26.
3. वही, पृष्ठ 28.
4. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 313-314; के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 28.
5. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 315; के०एस०लाल: ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 28.

18 दिसम्बर को तैमूर ने दिल्ली नगर में प्रवेश किया । मृत्यु का जो ताण्डव-नृत्य तैमूर ने करीब 15 दिन तक के अपने दिल्ली प्रवास के दौरान कराया उसकी मिसाल मिलना दुर्लभ है। सुल्तान महमूद शाह व मल्लू खाँ भाग गए । जनता स्वामी विहीन हो गयी । कुछ प्रतिरोध जनता ने करना प्रारम्भ किया तो इसका परिणाम समूची जनता के विनाश के रूप में दिल्ली में दिखाई पड़ा ।[1]

शुक्रवार 19 दिसम्बर को तैमूर का एक भव्य दरबार दिल्ली में आयोजित हुआ । जुमा की नमाज के बाद तैमूर के नाम का खुतबा पढ़ा गया । दिल्ली नगर की सभी मस्जिदों में ऐसे ही खुतबा पढ़ा गया । तैमूर ने उलमा वर्ग के सदस्यों को बहुमूल्य वस्त्र और सामान उपहार में दिए ।[2] इस दरबार में शाहजादे अमीर नूमान, अन्य अधिकारीगण, नगर के सैय्यद उलमा, शेख, अन्य मान्यगण उपस्थित हुये । जब सब आ गये तब तैमूर ने दरबार में प्रवेश किया और सिंहासन पर बैठा । नृत्य व गायन आयोजित हुए । शराब, शर्बत, मिठाईयाँ, चपातियाँ, मांस, रोटी लोगों में बाँटी गयी । तैमूर ने उन शहजादों, अमीरों और मुख्य लोगों को जिन्होंने इस युद्ध में अपनी वीरता का प्रदर्शन किया था मूल्यवान पोशाकें, टोपियाँ, कमरबन्द, तलवारें, घोड़े व खन्जर आदि प्रदान किया और ऊँचे ऊँचे पद दिये । नगर के

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 27 (तारीख-ए-मुबारकशाही के अनूदित अंश से) डॉड : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 09-10.

2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 317; जफरनामा : सरफुद्दीन यजदी, भाग 2, पृष्ठ 118-119 (अनुवादक) सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुगलककालीन भारत, भाग 2, पृष्ठ 258; के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 29.

सैय्यदों और उल्माओं को भी पोशाकें और अन्य वस्तुयें भेंट में दी गई, उसका उल्लेख ज़फरनामा में किया गया है । इलियट और डाउसन के तृतीय खण्ड में इसका अनुवाद है ।[1]

दिल्ली नगर की लूट

तैमूर के आक्रमण की सफलता के परिणाम दिल्ली वालों के लिए अत्यधिक भयंकर हुए । एक लाख लोगों की हत्या पहले की गयी थी। हत्याओं का अन्त नहीं हुआ था। वास्तव में यह क्रम तब तक चलता रहा जब तक तैमूर भारत के किसी भाग में रहा । तैमूर के सैनिकों ने इतनी अधिक लूटमार करी कि प्रत्येक सैनिक के पास 50 से 100 तक लोग बन्दी थे । लूट में हीरे, मोती, लाल अनेक रत्न, मोहरें सोने-चाँदी के टके, अलाई सिक्के, सोने चाँदी के बर्तन आदि प्राप्त हुये ।[2] हिन्दुओं के सिरों के ऊँचे-ऊँचे मीनार बनाये गये । उनके शरीर को पशु-पक्षी खा गये । तैमूर के आदेशानुसार केवल सैय्यदों और उलमाओं के घरों को छोड़ कर सब नगर लूटा गया था । जो कारीगर थे उन्हें तैमूर ने एकत्र किया । वह

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 318.

2. वही, पृष्ठ 318-319, 360-361; जफरनामा : सरफुद्दीन यजदी, भाग 2, पृष्ठ 221 अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लककालीन भारत, भाग 2, पृष्ठ 258; हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 1;

   राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 16.

   (नवल किशोर): तारीख-ए-फरिश्ता, पृष्ठ 224.

   के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 30-31.

अपनी राजधानी समरकन्द में एक मस्जिद-ए-जामी बनवाना चाहता था । इसलिए वह कारीगरों को समरकन्द ले गया । तैमूर दिल्ली में 15 दिन रुका रहा ।[1] दिल्ली की विजय के पश्चात् तैमूर ने 1 जनवरी 1399 ई0 को वहाँ से प्रस्थान किया तथा 4 जनवरी 1399 ई0 को वह मेरठ पहुँचा ।[2] उत्तर की ओर बढ़ते हुए उसने बहुत नर-संहार किया । शिवालिक की पहाड़ियों तक जाने के पश्चात् उसने पश्चिम की ओर अपना रुख किया और नगरकोट तथा जम्मू पर विजय प्राप्त की । यहाँ भी लूटपाट के कृत्य किए गए । सिन्धु नदी को 19 मार्च 1399 ई0 को तैमूर ने पार करके हिन्दुस्तान छोड़ दिया ।[3] वास्तव में हिन्दुस्तान उसके द्वारा छोड़ी गई तबाही से काफी समय तक नहीं उबर पाया । अस्तु तैमूर कोई ऐसा विजेता नहीं था, जो आया, लूटा और चला गया । उसने किया तो यही लेकिन इसके परिणाम बड़े दूरगामी सिद्ध हुए । यह ऐसा करारा झटका सल्तनत को दे गया कि कुछ स

----

1. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 30-31.

2. वही, पृष्ठ 31.

3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 218; एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 170; यहिया बिन अहमद बिन अब्दुल्ला सरहिन्दी: तारीखे मुबारक शाही : पृष्ठ 165÷167; अनुवादक - सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लककालीन भारत, भाग 2, पृष्ठ 219-222 ; तबक़ाते अकबरी : निज़ामुद्दीन अहमद बख्शी : पृष्ठ 256; अनुवादक - सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लककालीन भारत, भाग 2, पृष्ठ 359; इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 27.

तब अवश्य तुगलक वंश का नाम भर का शासन चलता रहा और कुछ समय तक सैय्यदों और लोदियों ने तैमूर के वंशजों को भारत की सीमा के बाहर रोके रखा, लेकिन वे कब तक ऐसा कर सकते थे । तैमूर ने राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक सभी प्रकार से तो तबाही मचाकर सल्तनत की जड़ें हिला दी थी । आखिर खोखली जड़ों पर कोई इमारत चिरस्थायी तो नहीं हो सकती है ।

तैमूर ने भारत छोड़ने के पहले खिज़्रखाँ को जो कि मुल्तान का प्रान्तपति रह चुका था, अपने प्रतिनिधि के रूप में नियुक्त किया । खिज़्रखाँ को 6 मार्च 1399 ई० को तैमूर ने अपनी ओर से मुल्तान[1], लाहौर और दीपालपुर का शासन सौंप दिया। वह अपने देश लौटने के करीब 5 वर्ष पश्चात् मार्च 1405 ई० में मर गया और उसको एक सुन्दर मकबरे में दफनाया गया ।[2] भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित : द देहली सल्तनत के पृष्ठ 120 पर लिखा है कि "कुछ इतिहासकारों का मन्तव्य था कि दिल्ली के वायसराय के रूप में भी खिज़्रखाँ को नियुक्त किया गया था[3] किन्तु इसका कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलता है । यदि तैमूर को दिल्ली के लिए अपना कोई वायसराय

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 27 (तारीख-ए-मुबारक शाही), के०एस० लाल : ने 5 मार्च 1399 ई० में इसे लिखा है । के०एस० लाल: ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 40; डॉर्न : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 11.

2. के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 40; हैवल : आमरून रूल इन इण्डिया, पृष्ठ 377.

3. द देलही सल्तनत, भारतीय विद्या भवन, पृष्ठ 120.

नियुक्त करना ही होता तो संभव था कि वह दिल्ली प्रवास के दौरान ही इसकी व्यवस्था कर लेता किन्तु उसका ऐसा न करना इस बात को इंगित करता है कि शायद जाते समय सीमावर्ती पंजाब, मुल्तान और दीपालपुर में ही उसने अपने प्रतिनिधि के माध्यम से अपने अधिकार को बनाए रखने से सन्तुष्टि प्राप्त कर ली है। / फिर भी उसे भारत में किसी साम्राज्य का निर्माता नहीं कह सकते। उसकी पाँचवीं पीढ़ी का शासक बाबर ही इस श्रेय को प्राप्त करने का अधिकारी है।

प्रभाव :

तैमूर के आक्रमण के उपरान्त दिल्ली की दशा अत्यन्त खराब हो गयी थी। के०एम० पणिक्कर का कथन है कि "तैमूर के आक्रमण से दिल्ली की प्रतिष्ठा को भीषण धक्का पहुँचा। लगभग दो सौ वर्षों तक साम्राज्य की राजधानी बने रहने के बाद यह नगर एक प्रान्तीय राजधानी मात्र रह गया। तैमूर ने मानों दिल्ली का सुहाग सिन्दूर छीन लिया हो और वह वैधव्यावस्था के नैराश्य में डूब गयी हो।"[1] तैमूर के आक्रमण ने भारत में जितनी बर्बादी की उतनी उस समय तक किसी भी विदेशी आक्रमणकारी ने नहीं की थी। दिल्ली और उसके आसपास चारों ओर महामारी और अकाल का प्रकोप हो गया। भुखमरी के कारण हजारों की संख्या में लोग मरने लगे। 2 मास तक दिल्ली की दशा बड़ी अव्यवस्थित और शोचनीय बनी रही।[2] तैमूर जिस रास्ते से होकर आया और गया उसके सैनिकों ने फसलों

----

1. के०एम० पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 127-128.

2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 27 (तारीखे मुबारक शाही के अनूदित अंश से) सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी, उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 3; डॉ० सावित्री शुक्ल : संत साहित्य की सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 37-67; डॉ० ललित मुकर्जी : सम्पूर्ण भारत का इतिहास, पृष्ठ 55; डॉ० रियाज अहमद खाँ शेखानी : मुगलिया सल्तनत का उरूज का जबाल, पृष्ठ 35; के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृ०44; ए०बी० पाण्डेय : द फर्स्ट आफगान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 26.

को नष्ट कर दिया । व्यापार वाणिज्य नष्ट हो गए । लाखों लोग कत्ल किए गए । चारे के अभाव में जानवर भी मरने लगे । उनकी लाशें सड़ने लगी । कोई लाशों को उठाने वाला नहीं था अत: बीमारी फैलने लगी ।[1] उत्तर-पश्चिमी प्रान्तों, दिल्ली और राजस्थान के उत्तरी भागों को इतनी बुरी तरह लूटा और जलाया गया कि इन प्रदेशों को अपनी पूर्व समृद्धि प्राप्त करने में अनेकों वर्ष लग गये।[2]

तुग़लक वंश का अन्त

तैमूर के जाने के पश्चात् दिल्ली सल्तनत की विघटनकारी प्रवृत्ति तेजी से सक्रिय और बलवती हो गई । तैमूर से पराजित होने के पश्चात् नासिरुद्दीन व मल्लू इकबाल दोनों ने पलायन कर दिया ।[3] तीन महीने तक दिल्ली का सिंहासन रिक्त रहा । प्रतिद्वन्द्वी सुल्तान नुसरतशाह भी आक्रमणकारी के डर से छिपता रहा । तैमूर के वापस चले जाने के पश्चात् नुसरतशाह ने दिल्ली आकर अपना अधिकार स्थापित कर लिया । उसकी यह सफलता अल्प स्थायी सिद्ध हुई । शीघ्र ही मल्लू इक़बाल खाँ ने दिल्ली आकर अपना अधिकार स्थापित कर लिया ।[4]

----

1. यहिया बिन अहमद बिन अब्दुल्ला सरहिन्दी : तारीख़े मुबारकशाही, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी, उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 3, एल0पी0 शर्मा, भारत का इतिहास, पृष्ठ 171, डॉ0 सावित्री शुक्ल : संत-साहित्य की सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 38-67.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 218-219.

3. द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन, पृष्ठ 121.

4. द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 12, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 28 [अनूदित अंश : तारीखे मुबारकशाही] के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 40-45.

1401 ई0 में उसने सुल्तान महमूदशाह को दिल्ली बुलाया । महमूदशाह अपने प्रवास के दौरान पहले गुजरात गया था फिर वहाँ से मालवा चला आया था और वहीं रह रहा था । सुल्तान का पद अब उसके हाथ में पुन: आ गया । वास्तव में वह मल्लू इकबाल के हाथों की कठपुतली ही बनकर रह गया । नुसरतशाह मेवाड़ भाग गया था जहाँ कुछ समय पश्चात् उसकी मृत्यु हुई । सुल्तान नासिरुद्दीन महमूद तथा मल्लू इकबाल ने सल्तनत की दशा को सुधारने का प्रयास किया किन्तु उन्हें अधिक सफलता नहीं मिली । दिल्ली और दोआब का क्षेत्र उसके कब्जे में आया। प्रान्तों में स्वतन्त्रता की होड़ लगी हुई थी ।[1] बंगाल और पूरा दक्षिण चौदहवीं शताब्दी के पहले ही स्वतन्त्र हो चुके थे । उसके बाद जौनपुर, मालवा, गुजरात, खानदेश में स्वतन्त्र राज्य बन गए । कई अमीरों ने सल्तनत के विभिन्न इलाकों पर स्वतन्त्रता पूर्वक शासन करना प्रारम्भ कर दिया जैसे दिलावर खाँ धार में, गालिबखाँ समाना में, शम्सखाँ बयाना में[2]। मल्लू इकबाल व सुल्तान महमूद ने जौनपुर पर पुन: अधिकार करने का प्रयास किया किन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली । मल्लू इकबाल के बढ़ते नियंत्रण से मुक्त होने का अवसर देखकर सुल्तान कन्नौज अभियान के लिए गया। स्वयं कन्नौज में ही रहने लगा और मल्लू इकबाल दिल्ली लौट गया ।[3] कन्नौज में इस समय

----

1. ए0बी0 पाण्डेय, द फर्स्ट अफ़गान इम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 26.

2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 28,
सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 4-5.

3. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 29;
सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 6;
के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 55.

इब्राहिमशाह का अधिकार था । सुल्तान ने कन्नौज पर कब्जा करके कुछ समय तक वहीं निवास किया ।

मल्लू इक़बाल दिल्ली का शासन सूत्र अपने हाथों में लिए रहा । उसने ग्वालियर और इटावा पर अधिकार करने का प्रयास किया किन्तु सफलता नहीं मिली ।[1] कन्नौज में रह रहे सुल्तान महमूद के विरुद्ध भी प्रस्थान किया । यहाँ भी सफलता हाथ नहीं लगी । मुल्तान में खिज्रखाँ का शासन था । उसके विरुद्ध मल्लू इकबाल ने अभियान किया ।[2] खिज्रखाँ के विरुद्ध भी उसे असफलता ही मिली। इसी अभियान में मल्लू इकबाल मारा गया । उसकी मृत्यु के पश्चात् सुल्तान नासिरुद्दीन महमूदशाह दिल्ली लौटा । खिज्रखाँ का प्रभाव बढ़ रहा था । उसने समाना, सरहिन्द, सुनाम और हिसार पर कब्जा कर लिया । सुल्तान की ओर से एक अफगान अमीर दौलत खाँ ने दोआब पर सल्तनत का स्वामित्व बनाए रखने का भरसक प्रयास किया । खिज्रखाँ के धावे रोहतक[3] और दोआब में भी हुए । 1409 ई0 में खिज्रखाँ दिल्ली के निकट फ़िरोजाबाद तक आ धमका था । उसे रसद की कमी के कारण वहाँ से हटना पड़ा ।[4] इसी के बाद उसने रोहतक और दोआब में धावे किए

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 29-30; सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 6-7.
2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 28-30; सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 5-8.
3. यहिया बिन अहमद बिन अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीख़े मुबारकशाही, पृष्ठ 178-179 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 11.
4. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 57.

थे । 1410 ई0 में खिज्रखाँ ने पुन: दिल्ली के निकट फिरोजाबाद पर धावा किया और पुन: उसे रसदाभाव के कारण वापस लौटना पड़ा ।

इस प्रकार सुल्तान नासिरुद्दीन महमूद का अधिकार बिल्कुल नाममात्र का केवल दिल्ली, दोआब, रोहतक और संभल पर ही था । करीब अठ्ठारह वर्ष तक उसने नाममात्र का शासन किया । इस अवधि में उसे नुसरतशाह की प्रतिद्वंद्विता झेलनी पड़ी । तैमूर से पराजित होकर भागना पड़ा और फिर कुछ समय तक स्वयं अपने मंत्री मल्लू इकबाल के कसते शिकंजे से छुटकारा पाने के लिए भागना पड़ा । इस अयोग्य शासक की अक्टूबर 1412 ई0 में मृत्यु हो गई ।[1] उसी के साथ तुगलक वंश का अन्त हो गया ।

उस समय के सर्वाधिक प्रभावशाली अमीर दौलत खाँ लोदी को अमीरों ने सुल्तान बना दिया ।[2] खिज्रखाँ की शक्ति इतनी बढ़ चुकी थी कि अब उसे रोकने के लायक सल्तनत की शक्ति नहीं रह गई थी । 1414 ई0 में खिज्रखाँ दिल्ली पर अधिकार करने के लिए आ धमका । चार महीने के प्रतिरोध के बाद दौलत खाँ ने आत्म-समर्पण कर दिया । दौलत खाँ को बन्दी बनाकर हिसार भेज दिया गया और बाद में मार डाला गया ।[3] दिल्ली पर अधिकार हो जाने पर खिज्रखाँ ने

---

1. फरिश्ता, और यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी [तारीख-ए-मुबारकशाही] के अनुसार यह तिथि फरवरी 1413 ई0 है : द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 124] इलियट एवं डाउसन : भारतवर्ष का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 33, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 61, के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ सल्तनत, पृष्ठ 59.
2. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 59.
3. वही, पृष्ठ 60.

शासन करना प्रारम्भ किया । इस प्रकार दिल्ली सल्तनत का वह शासक बन गया ।[1] उसके वंश को सैय्यद वंश कहा जाता है ।

...

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 33-34 ;
   सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 12-13.
   ए०एल० श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 219.

   के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 59-60.

ब. सैय्यद वंश

खिज्रखाँ (1414-1421 ई0) :

तुगलक वंश के पतन के बाद खिज्रखाँ ने सैय्यद वंश की नींव डाली । खिज्रखाँ सैय्यद तथा उसके पुत्र सुल्तान मुबारकशाह ने सल्तनत को विनाश के ढेर से बचाने का असफल प्रयास किया ।[1] खिज्रखाँ मलिक उस्सर्क सुलेमान का पुत्र था जिसको बचपन में नासिर-उल-मुल्क मदीन दौलत ने गोद ले लिया था और उसका पालन-पोषण किया था । मलिक मदीन दौलतनेखिज्रखाँ को मुल्तान का सूबेदार नियुक्त किया था[2]परन्तु 1395 ई0 में मल्लू इक़बाल के भाई सारंगखाँ ने उसे मुल्तान से भगा दिया तब खिज्रखाँ मेवात चला गया जब तैमूर ने भारतवर्ष पर आक्रमण किया तब खिज्रखाँ ने तैमूर का साथ दिया । तैमूर ने भारतवर्ष से जाते समय सरहिन्द पहुँचने पर खिज्रखाँ को मुल्तान, लाहौर और दीपालपुर का सूबेदार बना दिया । 4 जून 1414 ई0 में खिज्रखाँ ने दिल्ली के तत्कालीन शासक दौलतखाँ लोदी से दिल्ली छीन लिया । इस प्रकार सैय्यद वंश की उसने नींव डाली ।[3] खिज्रखाँ के सुल्तान बन जाने पर

---

1. ए0बी0 पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 26-27.
2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 34-35;
   राधेश्याम : सल्तनत कालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 18;
   यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे मुबारकशाही, पृष्ठ 182;
   अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 14, डान : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 19.
3. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 174; के0एस0 लाल के अनुसार खिज्रखाँ सैय्यद 4 जून 1414 ई0 को दिल्ली सल्तनत का शासक बना (ट्वाइलाइट आफ सल्तनत, पृष्ठ 60 ; डॉन : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृ019.

दिल्ली सल्तनत फिर व्यवस्थित होने लगी । उसने तैमूर वंश के प्रति निष्ठा को ध्यान में रखते हुए सुल्तान की उपाधि नहीं धारण की थी ।

खिज्रखाँ ने दिल्ली को अपनी राजधानी बनाया।[1] वह अपने आपको तैमूर का प्रतिनिधि समझता था क्योंकि जब तैमूर भारतवर्ष में था तो खिज्रखाँ ने तैमूर की राजनीतिक, अधीनता स्वीकार कर ली थी । इसी कारण वह स्वयं को सुल्तान कहलवाना नहीं चाहता था । फिर भी वह स्वतन्त्र रूप से कार्य करता था और सुल्तान सदृश ही था । औपचारिकता से उसकी प्रभुसत्ता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा । खिज्रखाँ ने अपने नाम के आगे "रैयात-ए-आला खिज्रखाँ" लिखना शुरू किया जिसका अर्थ है "उच्च ध्वज की सेवा"[2] सिंहासन पर बैठने से पूर्व उसकी उपाधि "मसनदे-ए-आला" थी । तबकात-ए-अकबरी में उसको "रायात-ए-आला" कहा गया है । बदायूँनी उसकी उपाधि "मसनद-ए-आला" कहना अधिक उपयुक्त मानता है । फरिश्ता इन उपाधियों का उपयोग नहीं करता है । वह उसको केवल सैय्यद खिज्रखाँ लिखता है ।[3]

खिज्रखाँ ने तैमूर और उसके उत्तराधिकारी "शाहरूख" का नाम खुतबा में शामिल किया । उसने अपने नाम के सिक्के नहीं ढलवाये । फ़िरोज़शाह तुग़लक तथा

----

1. के०एम० पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 128.

2. के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 72.

3. डॉ० ललित मुकर्जी : सम्पूर्ण भारत का इतिहास, पृष्ठ 56;

के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 72.

उसके उत्तराधिकारियों के समय के सिक्के को चलने दिया ।[1] सिक्कों पर तुग़लक शासकों का नाम रहने का कारण यह भी हो सकता था कि तैमूर की लूटपाट के कारण सोने-चाँदी की कमी हो गयी थी और आर्थिक कठिनाइयाँ व्याप्त थीं । उसके पीछे उसका मूल उद्देश्य तुर्क एवं अफ़ग़ान सरदारों को सन्तुष्ट रखना भी हो सकता था । इससे प्रजा की सहानुभूति भी वह प्राप्त कर सकता था ।[2] बाद में खुत्बे में खिज्रखाँ का नाम भी शामिल कर लिया गया । खिज्रखाँ ने तैमूर के नाम का खुतबा पढ़वाया और अपनी उपाधि "रैयत-ए-आला" रखी । तैमूरिया की अधीनता स्वीकार करने के कारण ही खलीफा का नाम खुतबा और सिक्कों दोनों से गायब हो गया परन्तु यह दिखावा अधिक दिनों तक न चल सका । उसके पुत्र मुबारक शाह ने (1421-1434) ई० में तुग़लकों और तैमूरियों का नाम खुत्बे और सिक्के से हटवा दिया । उसने शाह सुल्तान की उपाधि ग्रहण की जिसके कारण तैमूरियों ने सैय्यदों को सहायता देना बन्द कर दिया । उन्होंने भारत की सीमा पर बराबर आक्रमण करना प्रारम्भ कर दिया । इसी कारण भारत और उसके बाहर किसी ने सैय्यदों की सार्वभौमिकता को स्वीकार नहीं किया ।[3] खिज्रखाँ जब तक जीवित रहा तैमूर के पुत्र शाहरूख को हमेशा भेंट और राजस्व भेजा करता था ।[4]

---

1. के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ सल्तनत, पृष्ठ 71.

2. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 174.

3. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 19.

4. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, पृष्ठ 34-35.

4 जून 1414 ई0 को खिज्रखाँ ने सीरी के किले में प्रवेश कर शहर की प्रजा को इनाम (वह भूमि जो किसी उत्तम सेवा के कारण पुरस्कार में दी जाती थी) दिया और सबका वेतन निश्चित किया क्योंकि तैमूर के आक्रमण के कारण लोगों की आर्थिक दशा अत्यन्त खराब हो गयी थी। सुल्तान के इस इनाम के कारण लोग सुखी और सम्पन्न हो गये।[1]

सिंहासन पर बैठने के उपरान्त मलिकुश शर्क़ मलिक तुहफा को ताजुल मुल्क की उपाधि दी और उसे वज़ीर बनाया और सहारनपुर की अक्ता और शिक़ सैयिदुस्सादात सैयिद सालिम को प्रदान की। यह सुल्तान का प्रमुख परामर्शदाता बना। समस्त कार्य उसकी सम्मति से सम्पादित किया जाने लगा। मलिक अब्दुर्रहीम को अला-उल-मुल्क की उपाधि देकर सम्मानित किया और मुलतान और फतेहपुर की अक्ता और शिक़ उसे सौंपी। मलिक सरोब को शहनये शहर चुना और खिज्रखाँ ने अपना नाम बेगैबत बनाया।[2] मलिक खैरुद्दीन खानी आरिज़े ममालिक तथा मलिक कालू को शहनये फील के पद पर नियुक्त किया। मलिक दाउद को दबीरी का पद प्रदान किया गया और इख्तियार खाँ को दोआब के मध्य की शिक़

----

1. यहिया बिन अहमद अब्दुल्ला सिहरिन्दी : तारीखे़ मुबारकशाही, पृष्ठ 183; अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 14, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 542.

2. यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे़ मुबारकशाही, पृष्ठ 183; अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 63-74; हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 542; डॉन : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 19.

प्रदान कर दी गई और खिज्रखाँ ने सुल्तान महमूद के समय में उसके जो-जो दास जिन जिन परगनों, ग्रामों तथा अक्ताओं के स्वामी थे उन्हें उसी जगह रहने दिया और सबको अपने अपने परगने में जाने की इजाजत दी । इस प्रकार खिज्रखाँ ने राज्य का कार्य सुव्यवस्थित कर दिया ।[1]

खिज्रखाँ का दिल्ली पर अधिकार हो जाने से पंजाब, मुल्तान, सिन्ध, दिल्ली सल्तनत में सम्मिलित हो गये थे । दिल्ली साम्राज्य दोआब और मेवात के कुछ प्रदेशों तक ही सीमित रह गया था । खिज्रखाँ ने सीमाओं को बढ़ाने का कोई प्रयास नहीं किया बल्कि उसने इक्ताओं को "शिक़ों" में बाँटकर स्थानीय वफादारियों को बढ़ने का अवसर दिया । खिज्रखाँ का मुख्य कार्य दिल्ली के निकट के उपजाऊ क्षेत्र को अपने अधीन करना और प्रत्येक वर्ष सैनिक बल द्वारा जागीरदारों से राजस्व वसूल करना था ।[2]

----

1. यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे मुबारकशाही, पृष्ठ 183-184 (अनुवादक): सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 15; ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 266 (अनुवादक) सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 64; हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 543; डाॅन : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 19.

2. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 174.

खिज़्रखाँ ने 1414-1415 ई0 में कटेहर, इटावा, खोर, जलेसर 1416-17 ई0 में ग्वालियर, बयाना, जीता तथा मेवात, बदायूँ आदि स्थानों के शासकों ने कर देने का वादा किया । गुजरात, मालवा और जौनपुर के शासक बराबर दिल्ली को जीतने का प्रयास करते रहे पर असफल रहे ।[1]

1421 ई0 में मेवात पर आक्रमण करने के लिए सुल्तान गया । कोटला के किले को बर्बाद किया फिर ग्वालियर के कुछ क्षेत्रों को लूटा । इटावा आया तथा इटावा के राजा ने अधीनता स्वीकार की । इटावा से वापस आते हुये मार्ग में बीमार पड़ गया । 20 मई 1421 ई0 को दिल्ली पहुँचकर उसकी मृत्यु हो गयी ।[2] खिज़्रखाँ ने 7 वर्ष 2 मास 2 दिन तक राज्य किया ।

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 223; यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे़ मुबारकशाही, पृष्ठ 184-185-186; अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 18-20, ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, भाग 1, पृष्ठ 268-270; अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिजवी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 64-66; हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 544.

2. एल0पी0 शर्मा, भारत का इतिहास, पृष्ठ 175; आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव: दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 224; यहिया बिन अहमद बिन अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे़ मुबारकशाही, पृष्ठ 192 (अनुवादक) सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 21; ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तवक़ाते अकबरी, भाग 1, पृष्ठ 270-71; अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 67-68; हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 546.

चरित्र एवं मूल्यांकन :

खिज्रखाँ सैय्यद वंश का था । स्वयं को पैगम्बर मुहम्मद का वंशज बताया करता था । इसका कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता है ।[1] सैय्यद लोग बड़े उदार वीर, कृपालु एवं विचारशील माने गए हैं । वे अपने वचन के पक्के होते थे । ये सभी गुण खिज्रखाँ में भी थे ।

खिज्रखाँ बड़ा ही दानी एवं पवित्र जीवन व्यतीत करने वाला था । वह न्यायप्रिय शासक था । वह अत्यन्त कर्मठ एवं समर्थ शासक था । उसने निम्न स्तर से उठकर केवल अपनी योग्यता से दिल्ली के सिंहासन तक पहुँचने में सफलता प्राप्त की थी । उसका प्रशासन न्यायसंगत एवं उदार था । उसके शासन में जनता प्रसन्न और सन्तुष्ट थी ।[2] इसी कारण उसे प्रजा का सहयोग प्राप्त हुआ ।

फ़रिश्ता लिखता है कि खिज्रखाँ के शासन काल में लोग सुखी एवं सम्पन्न थे । अमीरों को खिज्रखाँ ने इनाम दिया और अदरार दिए । उसने उनके वेतन

---

1. यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखें मुबारकशाही, पृष्ठ 182-192, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 14-21; इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 35, 40; एल0पी0 शर्मा, भारत का इतिहास, पृष्ठ 174; हबीब निज़ामी: दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 546.

2. अबुल हयी : तारीख-ए-फरिश्ता, भाग 1, पृष्ठ 163; एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 175; हबीब निज़ामी : दिल्ली, सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 546.

निश्चित किये । उसकी मृत्यु 15 मई 1421 ई0 में हुयी । उसकी मृत्यु पर सभी दु:खी हुए ।[1]

वह शासक के रूप में बहुत सफल सिद्ध नहीं हुआ । तुग़लक वंश के पतन और तैमूर के आक्रमण के बाद दिल्ली सल्तनत की जो दुर्बल स्थिति हो गयी थी वह उसे ठीक न कर सका ।[2] खिज्रखाँ को अपने शासनकाल में कोई महत्वपूर्ण सफलता नहीं मिली । उसने राज्य को बढ़ाया नहीं अपितु सुरक्षित रखा । यह भी कम सफलता नहीं थी। उसने इटावा, कटेहर, कन्नौज, पटियाली और कम्पिल को जीतने का पुन: प्रयास किया । इसमें अधिक सफलता नहीं मिली । लगभग प्रत्येक वर्ष वह लूट और राजस्व वसूल करने के लिये सैनिकों के साथ यात्रा पर जाया करता था और लूट का माल लेकर वापस लौटता था । सल्तनत के इलाकों से सैनिकों की सहायता के बिना राजस्व वसूल नहीं हो पाता था ।[3] वह सामन्तों और करद राजाओं को राजस्व अदा करने के लिये बाध्य करता था । पूरा अदा न होने पर शेष भाग अगले वर्ष चुकाने का वचन देने पर बाध्य करता था । सल्तनत में अभी व्यवस्था की जड़ें कमजोर

---

1. के0एस0 लाल के अनुसार - खिज्रखाँ 20 मई 1421 ई0 को मरा-ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 82; अबुल हयी : तारीख-ए-फरिश्ता, भाग 1, पृष्ठ 163; हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 546; डॉन : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 22; एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 175;

2. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 546.

3. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 546; अबुल हयी : तारीख-ए-फरिश्ता, भाग 1, पृष्ठ 163.

ही थी । जैसे ही वह वापस आता था विभिन्न इलाकों के लोग अपने वायदे को तोड़ देते थे और शासक को राजस्व देने में आनाकानी करने लगते थे । यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सरहिन्दी के अनुसार वह न्यायप्रिय तथा उदार शासक था । किन्तु उसमें उस योग्यता, शक्ति तथा चरित्र का अभाव था जो देश के इतिहास के उस संकटकाल में दिल्ली सुल्तान में होनी चाहिए ।[1] उसके शासन काल में अफ़गानों का प्रभाव बहुत बढ़ने लगा था । उसके उत्तराधिकारियों के समय भी यह प्रभाव बढ़ता गया[2] और अन्ततः सैय्यद वंश के लिए घातक सिद्ध हुआ । सैय्यद शासकों ने अधिक से अधिक अफ़गानों को अपनी सेवा में लिया । अफ़गानों की बढ़ती हुयी संख्या ने उन्हें उनकी शक्ति का एहसास करा दिया । 1414 ई० से 1451 ई० तक बहुत से अफगानों ने महत्वपूर्ण शिक़ या इक्ता प्राप्त कर ली ।[3] 1417 ई० में मलिक बहराम लोदी जिसे बाद में इस्लाम खाँ के नाम से जाना गया, को सरहिन्द की इक्ता प्रदान की । उसके अन्तर्गत 12 हजार अफ़गान और सरदार थे । उसका उत्तराधिकारी सरहिन्द में बहलोल हुआ । मलिक सुलेमान लोदी भी मुल्तान में प्रभावशाली अफ़गान अमीर था । वहाँ शेख़ अली के विरुद्ध युद्ध करते हुये वह मारा गया । शेख़

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 223-224; एल०पी० शर्मा, भारत का इतिहास, पृष्ठ 175; यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीख़े मुबारकशाही, पृष्ठ 182:192; अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 14-21; इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 35-40; हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 546.

2. के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 82; रीता जोशी : द रोल आफ अफ़गान नोवेल्टी : ड्यूरिंग द मुगल पीरियड ‖शोध प्रबन्ध‖, पृष्ठ 61.

3. रीता जोशी : द रोल आफ अफ़गान नोवेल्टी : ड्यूरिंग द मुगल पीरियड ‖शोध प्रबन्ध‖, पृष्ठ 61.

अली काबुल का एक मुगल आक्रमणकारी था ﴾1418 ई0﴿ । रापरी की इक़्ता हुसैन खाँ अफ़गान को दी गयी थी । इसी तरह के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं ।[1]

खिज्र खाँ का अमीरों के साथ व्यवहार

खिज्र खाँ अमीरों[2] के साथ अच्छे सम्बन्ध बनाये रखना चाहता था । इसी कारण उसने तुर्क अमीरों को सन्तुष्ट करने की नीति अपनायी थी । उन्हें उनकी जागीरों से वंचित नहीं किया । इसके बावजूद अमीर उससे सन्तुष्ट नहीं हुये । वे बराबर विरोध और विद्रोह करते रहे । प्रत्येक वर्ष सुल्तान या उसके सरदारों को राजस्व वसूल करने के लिए सैनिक अभियानों पर जाना पड़ता था । जागीरदार स्वेच्छा से राजस्व देने को तैयार नहीं होते थे । अथवा अपने आपको किलों में बन्द कर लेते थे । पराजित होने पर ही वे राजस्व देते थे । जागीरदारों से राजस्व वसूली के कार्य में उसके वजीर ﴾मन्त्री﴿ ताज-उल-मुल्क ने उसकी बड़ी मदद की थी । यह कहा जा सकता है कि खिज्र खाँ इन विद्रोही प्रवृत्ति के जागीरदारों को स्थायी रूप से समाप्त नहीं कर सका ।[3]

खिज्र खाँ के दरबार का एक अमीर सैय्यद सलीम था । वह करीब 30 वर्ष तक खिज्र खाँ की सेवा में रहा था । खिज्र खाँ ने उसे तबरहिन्दा का किला, दोआब की बहुत सी अक़्तायें तथा परगने और सरसुती का भू-भाग और अमरोहा की अक़्ता

----

1. रीता जोशी : द रोल आफ अफ़गान, नावेल्टी ड्यूरिंग द मुगल पीरियड, पृष्ठ 61.

2. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 175.

3. वही, पृष्ठ 175-176.

उसे प्रदान की थी । स्वर्गीय सैय्यद सलीम को धन इकट्ठा करने का बहुत शौक था, तबरहिन्दा के किले में इसने कुछ ही समय में अत्यधिक धन, अनाज और कपड़े इकट्ठा कर लिया था । जब सैय्यद सलीम की मृत्यु हुयी, तब उसके समस्त परगने और अक्तायें उसके पुत्र को दे दी गयीं ।[1]

मुबारकशाह ‡1421-1434 ई0‡

जिस समय खिज्रखाँ मृत्यु शैय्या पर पड़ा हुआ था तभी उसने अपने योग्य और उत्तम गुणों से युक्त पुत्र मुबारक खाँ को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया । समस्त अमीरों और मलिकों ने अपनी सहमति प्रकट की और उसे मुबारक खाँ की उपाधि से विभूषित किया । जब 15 मई 1421 ई0 को खिज्र खाँ की मृत्यु हो गयी उसके बाद 20 मई 1421 ई0 को मुबारकशाह को गद्दी पर बैठाया गया ।[2] मुबारक

---

1. यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे मुबारकशाही, पृष्ठ 214; अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 36, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 175.

2. डॉड : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 233, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 9-40, यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिह-रिन्दी : तारीखे मुबारकशाही, पृष्ठ 193, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 22, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 224, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत: भाग 1, पृष्ठ 547; के0एस0 लाल ने ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 84;

‡फ़रिश्ता का उदाहरण देते हुये के0एस0 लाल ने लिखा है कि उसने "मुइज़ुद्दीन अबुल फतह सुल्तान मुबारकशाह" की पदवी धारण की थी, पृष्ठ 84‡.

शाह ने अपने को "नायबे अमीरूल मोमिनीन" घोषित किया और सुल्तान की पदवी धारण की । राजस्व के सभी प्रतीकों का इस्तेमाल करना प्रारम्भ किया । अपने नाम के सिक्के चलवाये, उसने शाहरूख का नाम खुत्बे से हटवा दिया ।[1]

विद्रोह :

कश्मीर की पहाड़ियों के एक क्षेत्र तिल्हा केअपने प्रमुख गढ़ से जसरथ खोखर बड़े आक्रामक धावे करते हुए, 1420 ई0 में कश्मीर नरेश सुल्तान अली को शिकस्त देकर दिल्ली पर कब्जा करने का स्वप्न देखने लगा था ।[2] उसने खिज्रखाँ की मृत्यु के पश्चात् वियास और सतलज पार करके तलबन्दी में आक्रमण किया । वह लूटपाट का निशाना कई क्षेत्रों को बनाता रहा । शाही सेना उसके मुकाबले के लिए भेजी गयी । जसरथ को भगाने के लिए बाध्य होना पड़ा ।[3] 1422 ई0 में जसरथ ने दो बार लाहौर पर आक्रमण किया । दोनों ही बार शाही सेनाओं के आ जाने से उसे पीछे हट जाना पड़ा । उसकी दृष्टि दिल्ली पर कब्जा करने की बराबर बनी रही । उसने 1420 ई0 में कलनौर और जालन्धर पर आक्रमण किया और फिर लाहौर की ओर बढ़ा । उसमें भी उसे असफलता मिली । वह मुबारकशाह के उत्तराधिकारी के समय भी सल्तनत के लिये खतरा बना रहा । उसने सैय्यद वंश का

---

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 539, के0एस0 लाल : ट्वाइ लाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 84.

2. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 84-90, 329; हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 547.

3. यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे मुबारकशाही (इलियट एवं डाउसन, भाग 4, पृष्ठ 40-42, डाऊ : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 24-25, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 176.

अन्त करने के लिए बहलोल लोदी को भी उकसाया था । 1442 ई0 में उसकी रानी ने उसकी हत्या कर दी ।[1] ऐसा करके उसने अपने पिता की मृत्यु का बदला लिया।

एक दूसरा विद्रोह पुलाद तुर्क बच्चा ने किया । के0एस0 लाल ने उसका नाम फौलाद तुर्क बच्चा लिखा है ।[2] वह शेख़ सलीम का एक गुलाम था । उसने शेख सलीम की 1430 ई0 में मृत्यु के बाद तबरहिन्दा के किले से विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दिया । सुल्तान ने मुल्तान के गवर्नर इमादुल मुल्क को साथ लेकर उसके विरुद्ध अभियान किया । पुलाद ने इस शर्त पर आत्म समर्पण करने की बात कही कि उसकी सुरक्षा का वचन देने के लिये इमादुल मुल्क को भेजा जाये, ऐसा करने के उपरान्त भी पुलाद ने समर्पण नहीं किया क्योंकि अफवाह उड़ी थी कि सुल्तान उसकी हत्या करवाना चाहता था ।[3] सुल्तान इस्लाम खाँ, कमाल खाँ और रायफ़िरोज जैसे अमीरों को घेराबन्दी जारी रखने का दायित्व सौंपकर स्वयं लौट आया । उसके

---

1. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 121, डाड : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 32-33, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत : भाग 1, पृष्ठ 548.

2. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 90; आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 224.

3. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 91-92, यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीख़े मुबारकशाही, भाग 1, पृष्ठ 215-216; अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 36-37; डाऊ : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 33, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 549.

दमन के लिये काफी समय तक प्रयास किया जाता रहा । अक्तूबर 1433 ई० में अंततः किला जीत लिया गया और पुलाद को मार डाला गया ।[1]

मुगल धावे :

मुबारकशाह के शासनकाल का परवर्ती भाग मुगल धावों से क्षुब्ध रहा । शाहरुख के पौत्र मसूद मिर्जा की ओर से काबुल के उपप्रान्तपति ने आक्रमण किये । मुबारक से सम्बन्ध बिगड़ गये थे । यह कहना कठिन है कि ये धावे शाहरुख के आदेश पर किये जा रहे थे । इसमें काबुल और गजनी के प्रान्तपति मसूद मिर्जा का हाथ अधिक था । 1423 ई० में शेख अली ने भक्कर और सिविस्तान पर धावे किये। 1431 ई० में वह पुनः आ धमका ।[2] उसके पश्चात् उसने जालन्धर, फिरोजपुर और लाहौर पर धावे किये । यहाँ के प्रान्तपति सिकन्दर तुहफा ने उपहार के तौर पर काफी धनराशि दी । दीपालपुर होते हुये वह मुल्तान आया । यहाँ के प्रान्तपति इमादुल मुल्क ने उसे पराजित कर दिया । सुल्तान ने कुछ ही समय बाद इमादुलमुल्क

---

1. डाऊ : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 33-34, के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 92, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 558.

2. के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 93, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 549-550; यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीख़े मुबारकशाही, भाग 1, पृष्ठ 200-201 [अनुवादक] सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 26-28.

को मुल्तान से स्थानान्तरित कर दिया । शेख़ अली ने अवसर देखकर चार महीने के अन्दर ही मुल्तान पर फिर आक्रमण कर दिया । मुबारकशाह इस समय जसरथ खोखर के विद्रोह से परेशान था । ऐसा लगता है कि शेख अली का जसरथ खोखर से कोई गुप्त तालमेल था । लाहौर पर शेख अली का आक्रमण हुआ । इस बार शेख अली को भागना पड़ा क्योंकि सुल्तान तथा इमाद-उल मुल्क और इस्लाम खाँ की सेनायें संयुक्त होकर उसके विरुद्ध जा रही थी । इसके बाद शेख अली आक्रमण का साहस नहीं कर सका । करीब एक शताब्दी तक भारत मुगलों के आक्रमण से बचा रहा ।[1]

<u>मुबारकशाह और जौनपुर का शासक इब्राहीम शाह शर्की</u>

सुल्तान शम्सुद्दीन इब्राहीम शर्की ने 1401 ई0 से 1440 ई0 तक चालीस वर्षों तक जौनपुर पर शासन किया । मुबारकशाह का शर्की वंश के शासक इब्राहीम शाह के साथ बयाना, कलपी[2] और मेवात के मसले पर बराबर वैमनस्य बना रहा । 24 मार्च 1428 ई0 को बयाना के पास एक युद्ध में इब्राहीम की पराजय हुयी ।[3]

---

1. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 94-95, यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे मुबारकशाही, पृष्ठ 223-224 अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 41-42.
2. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 106; हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 553-554.
3. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 107-108, डाउ : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 29, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 553; एल0 पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 176; यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे मुबारकशाही, भाग 1, पृष्ठ 210-211; अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 33.

बयाना पर मुबारकशाह का पुनः अधिकार हो गया । इसके बाद कालपी के प्रश्न पर टकराव हुआ । कालपी मालवा के हुशंगशाह के अधिकार में था । मुबारक ने इसमें हस्तक्षेप करना चाहा किन्तु इसी अवधि में उसकी हत्या हो गयी । हुशंगशाह ने कालपी को अपने राज्य में मिला लिया । इब्राहीम शर्की निराश होकर लौट गया ।

मेवात का विद्रोह :

मुबारकशाह के शासन काल में मेवात से विद्रोह की स्थिति बनी रही । जलाल खाँ और अब्दुल कादिर जिन्हें जल्लू और कद्दू कहते थे उनके नेता थे । 1425 ई0 में मेवातियों का पहला विद्रोह हुआ था ।[1] उसे कड़ाई से दबाया गया था । इसके बाद जल्लू और कद्दू के नेतृत्व में मेवातियों का प्रतिरोध काफी समय तक चला । कद्दू मारा गया व जल्लू ने कर देना स्वीकार करते हुए अधीनता स्वीकार की । उसे मुबारकशाह के मंत्री सरवर-उल-मुल्क ने अधीनता मानने के लिये बाध्य कर दिया था ।

कुछ लघु अभियान :

मुबारकशाह के समय बदायूँ के अमीर महावत खाँ ने विद्रोह त्यागकर सुल्तान

----

1. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 104-105 ; डाड : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 32, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 551, यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे़ मुबारकशाही, भाग 1, पृष्ठ 204-205; अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 29-30, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 176.

के प्रति निष्ठा दिखाई । 1422 ई0 और 1428 ई0 में कटेहर में धावे किये गये[1] और वहाँ से कर वसूल किया गया । इटावा के राजा को कर देने के लिए बाध्य किया गया । ग्वालियर से भी सैनिक बल से कर वसूल किये गये । इसके लिए 1427-1429 एवं 1432 ई0 में सैनिक अभियान किये गये ।

अमीरों के प्रति नीति :

मुबारकशाह को अपने अमीरों से उचित सहायता नहीं मिली । उसे भी अपने पिता की तरह राज्य के विभिन्न भागों में विद्रोहियों का दमन करने और व्यवस्था बनाये रखने के लिये अमीरों के विरुद्ध स्वयं सैनिकों को नियुक्त करना पड़ा । बदायूँ, इटावा, कटेहर, ग्वालियर में राजस्व वसूल करने में उसे बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा क्योंकि इस कार्य में अमीरों और जागीरदारों ने उसकी सहायता नहीं की । सुल्तान ने यहाँ के अमीरों और जागीरदारों के विरुद्ध सैनिक कार्यवाही में अधिक सफलता नहीं प्राप्त की ।[2]

मुबारकशाह राज्य का विस्तार न कर सका । उसकी एक उपलब्धि यह थी कि शाह की उपाधि धारण करके उसने अपने को बाह्य आधिपत्य से स्वतन्त्र किया ।

---

1. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 101; हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 549-550; यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे़ मुबारकशाही, भाग 1, पृष्ठ 200-203, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 26-29.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 224, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 1-16.

उसने अपने नाम के सिक्के चलाये । उसने अपने राज्य को खोक्खर और काबुल के मुगल आक्रमणों से बचाया । जौनपुर और मालवा के शक्तिशाली शासकों के प्रभाव एवं अधिकार क्षेत्र को बढ़ने से रोका । उसका 13 वर्ष का शासनकाल अपने राज्य के विदेशी शत्रुओं और आन्तरिक विद्रोहों को दमन करने में बीता । इसमें उसे सफलता मिली । सुल्तान ने इक्तदारों के स्थानान्तरण की नीति अपनायी ताकि वे किसी स्थान-विशेष पर अपना सुदृढ़ निजी या पुश्तैनी अधिकार न समझ बैठे । जब उसके अमीर सैय्यद सलीम की मृत्यु हो गयी तो उसके पास दोआब के कई परगने, इक्ता, तथा जागीर, सरहिन्द का दुर्ग, सरसुती की इक्ता, अमरोह की इक्ता, सब उसके मरने के बाद उसके पुत्र को दे दिया ।[1] उसके इस कार्य से जागीरदार और इक्तादार बड़े असन्तुष्ट हुये । फ़िरोज तुगलक के उत्तराधिकारियों के समय में सुल्तानों की दुर्बलता का लाभ उठाकर जागीरदार अपनी जागीरों और इक्ता को अपनी पैतृक सम्पत्ति समझने लगे थे ।इस कारण ये जागीरदार सुल्तान से न तो डरते थे और नाही उसके साथ सहयोग करते थे । इसके विपरीत वे सुल्तान का विरोध करके निजी स्वार्थों की पूर्ति में हिचकिचाते नहीं थे ।

मुबारकशाह की असफलता का एक कारण यह था कि उसने अपने योग्य एवं वफादार अमीरों, असैनिक अधिकारियों, दरबारियों को चुनने में योग्यता नहीं दिखायी । वह लोगों की योग्यता का अच्छा पारखी नहीं था । वह व्यक्तियों का स्वभाव पहचानने में दक्ष नहीं था । लोगों पर सहज ही विश्वास करना उसकी कमी थी । इसी कारण उसकी हत्या कर दी गयी ।[2]

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 51.

2. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 176; हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 547.

मुबारकशाह की हत्या :

मुबारकशाह ने वज़ीर सरवर-उल-मुल्क को नाराज कर दिया था । 1433 ई0 में उसने वित्तीय अधिकार सरवर-उल-मुल्क से छीनकर कमाल-उल-मुल्क को प्रदान कर दिये । दीवान और वज़ीर के कार्यालय अलग-अलग कर दिये गये । इस पर रुष्ट होकर सरवर ने कंकू और काजू, खत्री तथा मीरान सदर और काज़ी अब्दुल समद की मदद से मुबारक के शासन का अन्त कर देने का निश्चय किया । मुबारकशाह ने मुबारकाबाद नामक नगर बसाया था । वहीं 19 फरवरी 1434 ई0 को काजू के पौत्र सिद्धपाल तथा रानू ने उसकी उस समय हत्या कर दी जब वह शुक्रवार की नमाज के लिये मस्जिद में प्रवेश कर रहा था । मुबारकशाह नें 13 वर्ष 3 मास 16 दिन तक शासन किया था ।[1] मुबारकशाह की हत्या के पश्चात् दिल्ली के सुल्तान का प्रभाव बहुत घट गया । नसरुद्दीन महमूद तुग़लक के समय जैसी स्थिति पुन: उत्पन्न हो गयी ।[2]

---

1. यहिया बिन अहमद अब्दुल्ला सरहिन्दी : तारीख़े मुबारकशाही, पृष्ठ 234-35. अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 49, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 59, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 547, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 224; के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 112.

2. ए0वी0 पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 27.

<u>चरित्र</u> :

सैय्यद वंश का सबसे अधिक सफल शासक मुबारकशाह था । वह बुद्धिमान था तथा उसके पास स्वामिभक्त सेना थी । उसके सामन्ती मित्रों की सेना भी निष्ठा-पूर्वक उसकी आज्ञा पाकर कार्य करती थी । उसने बाह्य एवं आन्तरिक खतरों से सल्तनत की रक्षा की । उसके अन्दर एक बहादुर योद्धा के गुण थे । अपने मन्त्रियों और अधिकारियों की नियुक्ति के प्रश्न पर स्वयं उनके साथ सम्बन्धों के बारे में उसने कुशाग्रबुद्धि का परिचय नहीं दिया । जल्दी जल्दी स्थानान्तरण, कुछ अमीरों पर अविश्वास इत्यादि के कारण उसे भयंकर परिणाम झेलने पड़े और उसकी हत्या भी हुई । एक व्यक्ति के रूप में वह उदार था ।

फरिश्ता का कथन है कि मुबारक एक सभ्य राजकुमार था । उसमें अनेक प्रशंसनीय गुण विधमान थे ।[1] उसने अपने पूरे शासनकाल में अपने मुँह से कभी किसी को अपशब्द नहीं कहा । किसी को कभी गाली नहीं दी । न तो बुरी लगने वाले एक भी शब्द कहे । वह अपनी जिम्मेदारियों का काम स्वयं करता था । कभी उमरावर्ग पर नहीं छोड़ता था । शासन का सारा काम वह स्वयं करता था । 'तारीख-ए-मुबारकशाही' इसी बादशाह के नाम पर लिखी गयी थी ।[2] मुबारकशाह के चरित्र में एक दोष यह था कि वह विलासी प्रवृत्ति का बादशाह था । जब उसे खाली समय मिलता था तो वह विलासिता में ग्रस्त हो जाता था । जब मेवात को जीत लिया और दिल्ली आया तब फिर विलासिता में ग्रस्त हो गया ।[3]

---

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 547, अब्दुल हयी : तारीख-ए-फरिश्ता, पृष्ठ 513.
2. अब्दुल हयी : तारीख-ए-फरिश्ता, पृष्ठ 513.
3. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 46-49, निज़ामुद्दीन अहमद बख्शी : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 276, अनुवादक - रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 72.

मुबारकशाह कमजोर और अनिश्चित स्वभाव का व्यक्ति था ।[1] मुबारक शाह धार्मिक प्रवृत्ति का बादशाह था । वह मज़ारों के दर्शन के लिए जाया करता था । जब बादशाह ने सियूर और लोहूर का किला जीत लिया तब 1433 ई० को मशामखा के मज़ार का दर्शन करने मुल्तान गया ।[2]

मुहम्मदशाह (1434-1445 ई०)

19 फरवरी 1434 ई० को जब मुबारकशाह की हत्या कर दी गयी तब राज्य सिंहासन खाली हो गया| मीरान सदन ने अमीरों, मलिक, इमाम, सैय्यद, और सैनिक तथा नागरिक लोगों से अनुमति लेकर 19 फरवरी 1434 ई० को शुक्रवार की नमाज हो जाने के बाद मुहम्मदशाह को सिंहासन पर बैठाया । मुहम्मदशाह मुबारकशाह का भतीजा था और खिज्र खाँ का नाती था ।[3]

सिंहासन पर बैठने के उपरान्त मुहम्मदशाह ने अमीरों को बड़ी बड़ी उपाधियाँ, बहुमूल्य बख्शीशें, प्रदान की । जिन लोगों को मुबारकशाह ने पद, गाँव,

---

1. डॉ० ईश्वरी प्रसाद : ए शार्ट हिस्ट्री आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृष्ठ 213, डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 78.

2. यहिया बिन अहमद बिन अब्दुल्लाह सरहिन्दी : तारीखे मुबारकशाह, पृष्ठ 231, अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 46-47.

3. यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे मुबारकशाही, पृष्ठ 236, अनुवादक : रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 50, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 59-60, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 177, के०एस०लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 114.

जागीरें, पेंशनें दिये थे। वे सब उन लोगों के पास रहने दिया बल्कि उनमें अपनी ओर से और वृद्धि कर दी। अपने ज्येष्ठ पुत्र सैय्यद सालिम को "मजलिसे आली सैय्यद खाँ" की उपाधि दी और उसके छोटे भाई को "शुजा-उल-मुल्क" की उपाधि दी और मलिक रूकनुद्दीन को "नासिरूल मुल्क" की उपाधि प्रदान की और इन लोगों को जरी के कमरबन्द (पेटी), पगड़ियाँ, जागीरें, मरातिब, दयायें, एवं अक्तायें भी उपहारस्वरूप प्रदान की। मलिक उस्शर्क हाज़ी शुदनी को राजधानी का कोतवाल बनाया।[1] कमालुद्दीन को विजारत का पद दिया और उसे "कमालखाँ" की उपाधि दी गयी। मलिक जीमन को "गाजिमुलमुल्क" की उपाधि प्रदान की। अमरोहा और बदायूँ की विलायत जैसे उसके पास पहले थी। वैसे अब भी रहने दी गयी। अलहदाद लोदी ने अपने लिए कोई उपाधि लेना स्वीकार नहीं किया बल्कि अपने भाई को "दरियाखाँ" की उपाधि दिलवायी। मलिक ख्वाराज मुबारकखानी को "इकबाल खाँ" की उपाधि दी गयी। पूर्व की भाँति हिसार फीरोजा की विलायत उसी के पास रहने दी गयी।[2] मुलिकुश्शर्क को "पावोस" द्वारा सम्मानित किया गया और उसे बहुत सा इनाम और खिलअत प्रदान की गयी। उसे

---

1. यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे मुबारकशाही, पृष्ठ 243, अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 54, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबकाते अकबरी, पृष्ठ 290; अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 84, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 62-63.

2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 62.

बादशाह ने अपनी कृपा और दया द्वारा सम्मानित किया था । इसके अलावा अन्य अमीरों जैसे मजलिसें आली इस्लाम खाँ, मुहम्मद खाँ बिन जीरफ खाँ, खानें आज़म आसद खाँ, कमाल खाँ, मुहम्मद खाँ, नुसरत खाँ, का पुत्र युसुफ खाँ औहदी, बहादुर खाँ, मेवा का नाती अहमद खाँ, इकबाल खाँ, अमीर हिसार, फीरोजा, अमीर अली गुजराती सभी लोगों को शाही कृपा द्वारा सम्मानित किया गया ।[1] सरवरुलमुल्क को खाने जहाँ और मीरादद सद्र को मुईनुल मुल्क की उपाधि प्रदान की । इस प्रकार सल्तनत में शासन की व्यवस्था की । यद्यपि सरवरुलमुल्क ने सुल्तान के प्रति अधीनता की शपथ ले ली थी पर वास्तविक रूप से उसने राजश्री चिह्न, राजकोष, हाथी तथा सब शास्त्रागार पर अपना ही अधिकार अभी कर रखा था ।[2] करीब छः महीने तक खान-ए जहाँ की उपाधि से विभूषित सरवर-उल मुल्क सर्वे सर्वा बना रहा ।[3] वह पुराने अमीरों को उन्मूलित करने का प्रयत्न करने लगा । पुराने अमीरों ने कमाल-उल-मुल्क के नेतृत्व में कड़ा प्रतिरोध किया । अन्ततः सरवर-उल-मुल्क मारा गया । कमाल-उल-मुल्क को वज़ीर बनाकर मुहम्मदशाह ने पुनः अपनी राजकीय प्रभुसत्ता वास्तविक रूप में प्राप्त की । वह स्वयं गद्दी हड़पना चाहता था । इसी कारण उसने षड्यन्त्र रचने प्रारम्भ कर दिये ।

---

1. यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे मुबारकशाही, पृष्ठ 243, अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, पृष्ठ 54, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 62.
2. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 288, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 82, यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखें मुबारकशाही, पृष्ठ 236-237, अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 50, के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 114.
3. द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 134.

चरित्र एवं मूल्यांकन :

मुहम्मदशाह बड़ा ही दयालु, उदार, सहनशील तथा सर्वगुण सम्पन्न सुल्तान था । उसके चरित्र का सबसे बड़ा दोष यह था कि वह वैषयिक आसक्तियों में लीन रहता था । जब लंगाह के सहायकों ने विद्रोह कर दिया तब मुल्तान में अशान्ति फैल गयी । इसका लाभ उठाकर इब्राहीम शर्की ने कुछ परगनों पर अपना अधिकार कर लिया । इसके अलावा ग्वालियर के राय तथा अन्य रायों ने मालगुजारी देना बन्द कर दिया था । इसके बावजूद मुहम्मदशाह को कोई शर्म महसूस नहीं हुयी । बल्कि व्यर्थ में अपना समय व्यतीत करता रहा ।[1] इसी कारण यह सुल्तान अपने पूर्वाधिकारियों से अधिक दुर्बल सिद्ध हुआ । इसने अपनी अयोग्यता से सैय्यद वंश के पतन का मार्ग प्रशस्त कर दिया था क्योंकि मुहम्मद ने शासन सम्बन्धी कार्यों में विवेक से काम नहीं लिया था इसी कारण लाहौर और सरहिन्द का शासक बहलोल लोदी जो मालवा के महमूदशाह खिलजी के विरुद्ध सुल्तान की सहायता करने आगे बढ़ा था उसने दिल्ली पर अपना अधिकार स्थापित करने की कोशिश की ।[2]

राज्य का कार्य दिन-प्रतिदिन अव्यवस्थित होता चला गया । ऐसी स्थिति आ गयी कि दिल्ली से 20 कोस की दूरी पर रहने वाले सरदारों ने अधीनता त्यागना

----

1. ख़्वाज़ा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 291, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 84-86.

2. द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 135.

प्रारम्भ कर दिया । वे खुले तौर पर बगावत करने को तैयार हो गये । मुल्तान एक स्वतन्त्र राज्य हो गया । पूर्व में शर्कियों ने कुछ परगने हस्तगत कर लिए । 1445 ई0 में मुहम्मदशाह की मृत्यु हो गयी । मुहम्मदशाह ने 10 वर्ष कुछ मास तक शासन किया था ।[1]

...

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 64, एल0पी0 शर्मा: भारत का इतिहास, पृष्ठ 177, के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 122.

अलाउद्दीन आलमशाह (1445-1451 ई0) :

मुहम्मदशाह ने अपनी मृत्यु के पूर्व बदायूँ से अपने पुत्र अलाउद्दीन को बुलाकर उसे अपना उत्तराधिकारी बना दिया । उसने अलाउद्दीन आलमशाह की पदवी धारण की । अमीरों ने और मलिक बहलोल ने उसके प्रति अपनी स्वामिभक्ति प्रकट की[1] पर नया सुल्तान अपने पूर्वजों से भी अयोग्य निकला । उसके अन्दर प्रशासनिक क्षमता का अभाव था । उसके समय सल्तनत का प्रभाव बहुत संकुचित हो गया । एक कहावत प्रचलित हो गयी थी कि -

"बादशाह - ए - शाह आलम, अज देलही ता पालम"[2]

ऐसी परिस्थितियों में बहलोल लोदी दिल्ली सरकार की दुर्बलता से अधिक से अधिक लाभ उठाने का प्रयत्न करने लगा । वह स्वयं सिंहासन पर बैठने का स्वप्न देखने लगा । ऐसी ही परिस्थितियों में अलाउद्दीन आलमशाह और उसके वज़ीर हमीद खाँ के मध्य झगड़ा छिड़ गया क्योंकि सुल्तान अहमद खाँ का वध कराना चाहता था । इसी कारण हमीद खाँ ने बहलोल को दिल्ली आने का निमन्त्रण दिया ।

----

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 563; इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 64, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 226; के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 123, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, भाग 1, पृष्ठ 292, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 27.

2. ए0वी0 पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़ग़ान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 27.

हमीद खाँ ने सोचा था कि यह अफ़गान अमीर (बहलोल) मेरे हाथ की कठपुतली बन जायेगा और मै वज़ीर के रूप में शासन सूत्र अपने अनुसार संभालूँगा ।[1]

बहलोल एक कुशल कूटनीतिज्ञ व्यक्ति था । उसकी निगाह दिल्ली की सत्ता पर 1443 ई0 से ही लगी हुई थी । 1443 ई0 में बहलोल ने दिल्ली पर सैन्यशक्ति से अधिकार करना चाहा था, किन्तु वह सफल नहीं हुआ था । 1447 ई0 में भी उसने एक प्रयास किया । वह भी असफल रहा । अब उसने देखा कि उसके लिए अनुकूल अवसर आ गया है । अस्तु उसने इसका लाभ उठाया । वह सरहिन्द से दिल्ली आ धमका और कुटिल नीति से दिल्ली पर अपना अधिकार कर लिया । हमीद खाँ को अपने मार्ग से हटा दिया । कुछ समय के बाद अपने कुछ आदमी को दिल्ली में रखकर स्वयं सैनिक संगठन करने के लिए दीपालपुर चला गया और सुल्तान अलाउद्दीन को लिखा भेजा कि "वह तो वास्तव में उसका स्वामिभक्त नौकर ही है और सेवक" ।[2]

अलाउद्दीन आलमशाह में प्रशासनिक क्षमता का नितान्त अभाव था ।[3] उसने सम्पूर्ण सत्ता बहलोल लोदी के हाथों में जाने दी । स्वयं बदायूँ जाकर रहने लगा । आलमशाह ने बहलोल लोदी को प्रत्युत्तर दिया कि "मेरे पिता तुमको अपना पुत्र कहते थे । मेरे पास तुम्हारा सामना करने का कोई साधन नहीं है । मैं केवल बदायूँ

---

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 564.

2. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 178; हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 564.

3. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 124, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 564.

के एक जिले से सन्तुष्ट हूँ और अपनी सारी राज्यसत्ता तुम्हें सौंपता हूँ ।" तब बहलोल लोदी ने निर्भय होकर राजचिह्न को धारण किया और दीपालपुर छोड़कर दिल्ली गया । 19 अप्रैल 1451 ई0 को उसका सिंहासनारोहण हुआ ।[1] उसने बहलोल शाह गाज़ी की उपाधि धारण की । अपने नाम के सिक्के ढलवाए । सिक्कों पर से आलमशाह का नाम हटवा दिया ।[2]

अलाउद्दीन एक साधारण अमीर की भाँति बदायूँ में अपना जीवन व्यतीत करने लगा । वह गंगा के तट खैराबाद से लेकर हिमालय की तराई तक के क्षेत्र पर 1476 ई0 तक शासन करता रहा । 1478 ई0 को उसकी मृत्यु हो गयी । अला-उद्दीन आलमशाह ने 7 वर्ष कुछ मास तक ही केवल राज्य किया था ।[3] अलाउद्दीन आलमशाह की मृत्यु से सैय्यद वंश का अन्त हो गया और लोदी वंश की स्थापना हुयी ।

----

1. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 127, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 178.

2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 65, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 226, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 293-294, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 86.

3. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 65, के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 128, द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 138, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी भाग 1, पृष्ठ 294, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीनं भारत, भाग 1, पृष्ठ 86-87.

<u>सैय्यद वंश का पतन</u> :

सैय्यद वंश का शासनकाल सबसे कम, केवल (1414 से 1451 ई0 तक) 37 वर्षों तक चला । सैय्यद शासकों ने न तो खिलजी वंश के शासकों की तरह साम्राज्य विस्तार करने का प्रयत्न किया और न ही तुगलक वंश के शासकों की तरह प्रशासन में सुधार लाने का प्रयत्न किया । सैय्यद वंश के शासक किसी भी आदर्श को अपने और अपनी प्रजा के सम्मुख रखने में सफल नहीं हुये । विभाजन और विघटन की जो प्रवृत्ति फ़िरोज तुगलक के उत्तराधिकारियों के समय में थी वह सैय्यद शासकों के समय भी बनी रही । सैय्यद शासकों का राजनीतिक प्रभुत्व दिल्ली तथा इर्द-गिर्द के कुछ इलाकों तक ही सीमित रहा[1] और इस सीमित इलाकों की भी सुरक्षा करने में असमर्थ रहे । 1451 ई0 में सत्ता बहलोल लोदी के हाथ में चली गयी और लोदी वंश की स्थापना हुई ।[2]

राजत्व अथवा प्रशासन के क्षेत्र में कोई योगदान सैय्यद शासकों ने नहीं दिया। भू-राजस्व प्रशासन भी सैनिक अभियानों के माध्यम से चलाया जा रहा था । के0 एस0 लाल ने लिखा है कि "सैय्यद शासन के आखिरी दिनों में उसके राज्य का तेजी से पतन हुआ तथा नगर और जिले स्वतन्त्र होने लगे ।"[3]

---

1. सैय्यद वंश के अन्तिम शासक आलमशाह के बारे में यह युक्ति प्रचलित हो गयी थी कि "दुनियाँ का बादशाह दिल्ली से बदायूँ तक का ही शासक रह गया था । दिल्ली से पालम की दूरी 10 मील है" के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 124-128.

2. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 539, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 174.

3. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 130.

सैय्यद शासकों में कोई प्रशासनिक एकरूपता नहीं थी । अमीरों का अपने अपने क्षेत्रों में बोलबाला था । वे किसी न किसी रूप में अपने अपने क्षेत्रों में अपनी सत्ता का उपयोग प्राय: स्वतन्त्रतापूर्वक कर रहे थे । अमीर, मुक्ता, जावित, तथा जमींदार बहुत प्रभावशाली हो गए । सुल्तान इनसे विभिन्न कर वसूल किया करता था । जैसे - महसूल, माल, खिदमती, खिराज आदि । इक्ता का शिकों में अतिरिक्त विभाजन इस समय अत्यन्त लोकप्रिय हो गया था । प्रशासन में इस विषमता के फलस्वरूप राजनीतिक एकता की भावना का पूर्ण विनाश हो गया था।[1]

इस प्रकार 37 वर्षों के नगण्य शासन के बाद सैय्यद वंश का अन्त हो गया । मुल्तान के राज्य के रूप में उसका उत्थान हुआ था और बदायूँ के राज्य के रूप में उसका अवसान हो गया । भारत के मध्ययुग के इतिहास में राजनीतिक और सांस्कृतिक दृष्टि से उसका कोई महत्त्वपूर्ण योगदान नहीं था । फिर भी तैमूर के बाद उजड़ी हुई दशा को ठीक करने तथा विघटित दिल्ली सल्तनत के पुनर्निर्माण के कार्य में सैय्यद शासकों ने उस कड़ी के रूप में कार्य किया जिसने इसे लोदी वंश से जोड़ दिया । जाते जाते सैय्यद वंश की दशा इतनी बिगड़ गयी कि बहलोल लोदी को सब कुछ नये शिरे से व्यवस्थित करके राज्य की संरचना करनी पड़ी ।[2]

अमीरों का अपने अपने क्षेत्रों में बोलबाला था । अफ़गानों का प्रभुत्व सैय्यद वंश के शासनकाल से ही बढ़ने लगा था । कई महत्त्वपूर्ण प्रान्तों और इक्ताओं के शासक अफ़गान अमीर थे । मलिक अल्लाहदाद लोदी सम्भल का प्रान्तपति था ।

----

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 539.

2. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 130.

उसकी मृत्यु के बाद उसके भाई दरया खाँ लोदी ने अपना प्रभाव दिल्ली के बाहरी भाग निकटवर्ती प्रदेशों तक बढ़ा लिया था । कुतुब खाँ अफ़गान रापरी का गवर्नर था । इस प्रकार दिल्ली सल्तनत में अफ़गानों का प्रभुत्व बहलोल लोदी के द्वारा सत्ता अपहृत किये जाने के पहले ही से स्थापित था ।[1]

इन अफ़गान अमीरों का आपस में मनमुटाव एवं वैमनस्य बराबर बना रहा था इसलिये वे अभी तक एक नहीं हो पाये थे । बहलोल लोदी जैसा नेता जब इन्हें मिल गया तब वे अपने राज्य की स्थापना करने में सफल हुये । 1436 ई० के बाद से अफगानों के प्रभुत्व में वृद्धि होने लगी । मुल्तान और समाना से लौटने के बाद मुहम्मद शाह ने शासन के कार्यों में रुचि लेना बन्द कर दिया । राज्य के अन्दर और सीमावर्ती क्षेत्रों पर मुसीबतों के बादल मँड़राने लगे तथा विद्रोह होने प्रारम्भ हो गये। सल्तनत की दशा बहुत बिगड़ गई । ऐसी स्थिति में बहलोल लोदी का प्रभाव बढ़ने लगा । उसी ने 1451 ई० में लोदी वंश की स्थापना की ।[2] 1441 ई० में जब जसरथ खोखर ने विद्रोह किया तो इस विद्रोह को दबाने के लिए बहलोल से कहा गया । बदले में बहलोल को दीपालपुर और लाहौर प्रदान किया गया (सरहिन्द पहले से ही उसके पास था) जसरथ खोखर पराजित हुआ । जसरथ खोखर के पराजित होने से बहलोल लोदी की स्थिति पंजाब में और सुदृढ़ हो गयी । उसने रोह से अफ़गान कबीले के लोगों को अपनी सेना की संख्या बढ़ाने के लिए आमन्त्रित किया । उसने पानीपत तक के क्षेत्र को अपने प्रभाव में कर लिया । दिल्ली की सत्ता की ओर अब उसकी निगाहें लग गयीं ।[3]

----

1. ए०वी० पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्ड़िया, पृष्ठ 39.

2. रीता जोशी : द रोल आफ अफ़गान नोवेल्टी ड्यूरिंग द मुगल पीरियड, पृष्ठ 62-63.

3. वही, पृष्ठ 65.

सैय्यद वंश का वंशावली वृक्ष

---
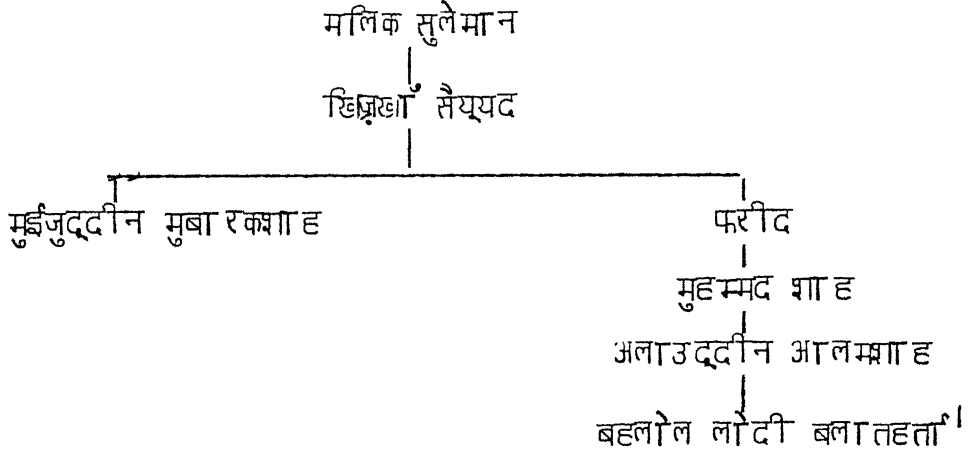
1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 226.

स. लोदी वंश

बहलोल लोदी (1451-1489 ई0)

अफ़गानी भाषा में लोदी शब्द से आशय महान या वरिष्ठ से है ।[1] लोदी शासक अफ़गान थे । यह तथ्य निर्विवाद रूप से स्थापित हो चुका है । सर-वूल्जले हेग ने इनको शुद्ध अफ़गान नहीं माना है । उन्होंने लिखा है कि "लोदी लोग मूलत: खिलजी या धिलजयी तुर्क थे किन्तु अफ़गानिस्तान में वे इतने अधिक समय तक रहे थे कि पन्द्रहवीं शताब्दी तक उनको अफ़गान माना जाने लगा ।[2]

अफ़गानों की उत्पत्ति के बारे में अवध बिहारी पाण्डेय ने विस्तृत प्रकाश डाला है ।[3] उनका निष्कर्ष है कि लोदी शासक अफ़गान थे ।

बहलोल लोदी का बचपन का नाम बल्लू खाँ था । बल्लू खाँ के पिता का नाम काला था । बल्लू खाँ जब छोटा था तभी उसके पिता की मृत्यु हो गयी तब बल्लू खाँ का पालन-पोषण उसके चाचा सुल्तान शाह लोदी ने किया । सुल्तान शाह की उपाधि इस्लाम खाँ (जलालुद्दीन मुहम्मद खाँ)थी ।[4] इस्लाम खाँ की गणना

----

1. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 323 (संस्करण 1963).
2. सर बूल्जले हेग : कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया, पृष्ठ 224, ए0बी0 पाण्डेय: द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 30.
3. ए0बी0 पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 30-37.
4. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 571, ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 294-295, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 198, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 3, अनुवादक, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन

खिज्रखाँ और मुबारकशाह के प्रसिद्ध अमीरों में की जाती है । जलालुद्दीन की दो पत्नियाँ थीं । एक अफ़गान थी दूसरी राजपूत । अफ़गान पत्नी ने एक पुत्री को जन्म दिया था जिसका नाम फिरदौसी था । राजपूत स्त्री ने एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम कुतुबखाँ था । जलालुद्दीन ने बहलोल का विवाह अपनी पुत्री फिरदौसी से किया था ।[1] जलालुद्दीन ने 3 वर्ष 6 मास तक राज्य किया था । एक बार जब वह बीमार पड़ गया तथा बचने की कोई उम्मीद नहीं थी तभी उसने अपने भतीजे बल्लूखाँ और अपने पुत्र कुतुबखाँ को बुलाया और कहा कि अब मैं नहीं बचूँगा, तुम दोनों भाई आपस में इस तरह का व्यवहार करना कि मेरा वंश नष्ट न होने पाये । कुतुबखाँ से कहा कि, "बहलोल अफ़गान स्त्री के गर्भ से उत्पन्न हुआ है और तुम राजपूत स्त्री के गर्भ से, अफ़गान जाहिल होते हैं । वे तेरे आज्ञाकारी न होंगे" यह कहकर अपने सिर की पगड़ी उतारकर बल्लूखाँ के सिर पर रखी और बल्लू

... भारत, भाग 1, पृष्ठ 240, अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 2, अनुवादक रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 307, इलियट एवं डाउसन, भाग 5, पृष्ठ 59, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 227, डाड : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 45-46.

12. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 294-295, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 198, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 571, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 3, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 240, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 59, अहमद यादगार : तारीखे शाही : पृष्ठ 2, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 307.

खाँ के सिर की पगड़ी उतारकर कुतुबखाँ के सिर पर रख दी और कहा कि, "बल्लू तेरा बादशाह है और तू कल्लू का वज़ीर"[1] कुछ समय बाद उसके चाचा की मृत्यु हो गयी। 19 अप्रैल 1451 ई0 को बहलोल लोदी सिंहासन पर बैठा और अपनी उपाधि अबुल मुजफ्फर बहलोल शाह गाज़ी रक्खी।[2] तारीखे़ दाउदी के लेखक अब्दुल्लाह के अनुसार बहलोल लोदी का राज्यारोहण 12 जून 1446 ई0 को हुआ लेकिन यह सत्य नहीं है।[3] सिंहासन पर बैठने के पश्चात् अपने नाम का सिक्का चलवाया और खुत्बा पढ़वाया पर उसने सुल्तान शाहलोदी का नाम खुत्बे से अलग नहीं किया।[4]

---

1. ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी : पृष्ठ 294-295, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 198, अब्दुल्लाह : तारीखे़ दाउदी, पृष्ठ 3, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी, उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 240, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 59, मुहम्मद कबीर बिन शेख़ इस्माईल : अफ़सानये शाहान, 14 व अनुवादक सैय्यद् अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 365.

2. ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 301, अनुवादक रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 202, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 64-65, आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत पृष्ठ 228, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 180, हबीब निज़ामी दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 575, अबुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 18,

3. अब्दुल्लाह : तारीखे़ दाउदी, पृष्ठ 10, अनुवादक रिज़वी : उ0तै0का0भा0, पृ0244.
4. वही, एवं आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 228.

बहलोल लोदी के पुत्र

सुल्तान बहलोल लोदी के 9 पुत्र थे - सबसे बड़ा पहला पुत्र ख्वाजा बायजीद था । दूसरा पुत्र निज़ामखाँ - जो सुल्तान सिकन्दर के नाम से प्रसिद्ध हुआ । तीसरा बारबकशाह, चौथा आलमखाँ, जो सुल्तान अलाउद्दीन की उपाधि से बादशाह हुआ । पाँचवाँ जमालखाँ, छठाँ मियाँ याकूब, सातवाँ फतहखाँ, आठवाँ मियाँ मूसा, नवाँ जलालखाँ ।[1]

बहलोल लोदी के अमीर

उसके प्रतिष्ठित अमीरों में 54 व्यक्ति थे - जो निम्नवत् हैं :-

पहला - खान जहाँ लोदी, दूसरा मुबारक खाँ लोहानी, तीसरा महमूद खाँ लोदी, चौथा - तातार खाँ लोदी, पाँचवाँ खाने खाना शेखजादा मुहम्मद फ़र्मुली, छठा - खाने खाना लोहानी, सातवाँ - आज़म हुमायूँ शिरवानी, आठवाँ - मुबारक खाँ लोहानी, नवाँ - आलम खाँ लोदी, दसवाँ - जलाल खाँ, ग्यारहवाँ - शेरखाँ लोदी, बारहवाँ - मुबारक खाँ लोदी मूसा खेल, तेरहवाँ - अहमदखाँ, चौदहवाँ -

----

1. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 298-314, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 201-211, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 12, अनुवादक : रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 246, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग, 1, पृष्ठ 575, अबुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान : देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 47,

डाउ : द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 2, पृष्ठ 48.

खाने खाना फ़र्मुली, पन्द्रहवाँ - उमर खाँ शिरवानी, सोलहवाँ - आलम खाँ लोदी जो भीकमखाँ का पुत्र था, सत्रहवाँ - इब्राहीम खाँ शिरवानी, अट्ठारहवाँ - मुहम्मद शाह लोदी, उन्नीसवाँ - बाबर खाँ शिरवानी, बीसवाँ - हुसेन फ़र्मुली, इक्कीसवाँ - सुलेमान फ़र्मुली, बाइसवाँ - सईद खाँ लोदी, तेईसवाँ - इस्माईल खाँ लोहानी, चौबीसवाँ - तातारखाँ फ़र्मुली, पच्चीसवाँ - उस्मान खाँ फ़र्मुली, छब्बीसवाँ - शेख़ज़ादा मुहम्मद पुत्र इमाद फ़र्मुली, सत्ताइसवाँ - शेख़ जमाल उस्मान, अट्ठाइसवाँ - शेख़ अहमद फ़र्मुली, उन्तीसवाँ - आदम लोदी, तीसवाँ - हुसेन खाँ दौर, इक्तीसवाँ - कबीर खाँ लोदी, बत्तीसवाँ - नसीरखाँ लोहानी, तैंतीसवाँ-गाज़ी खाँ लोदी, चौंतीसवाँ - मौलाना जम्मन कम्बोह हुज्जाबे खास, पैंतीसवाँ - मज्दुद्दीन हुज्जाबे खास, छत्तीसवाँ - शेख़ उमर हुज्जाबे खास, सैंतीसवाँ - शेख़ इब्राहीम हुज्जाबे खास, अड़तीसवाँ - मुकबिल हुज्जाबे खास, उन्तालीसवाँ - काज़ी अब्दुल वाहिद हुज्जाबे खास, चालीसवाँ - ख्वास खाँ भूवा, इक्तालीसवाँ - ख्वाजा नसरुल्लो, बयालीसवाँ - मुबारक खाँ, तैंतालीसवाँ - इक़बाल खाँ, चौवालीसवाँ - ख्वाजा असगर देहली के हाकिम क्वाम का पुत्र, पैंतालीसवाँ - शेर खाँ मुबारक खाँ लोहानी का भाई, छियालीसवाँ - इम्मादुलमुल्क, सैंतालीसवाँ - दरिया खाँ लोहानी का मीर अदल, अड़तालीसवाँ - राय प्रताप, उन्चासवाँ - राय कालीन पच्चासवाँ - राय करन, इक्यानवाँ - मियाँ मारूफ फ़र्मुली, बावनवाँ - मियाँ फरीद, तिरपनवाँ - खाने जहाँ बलंकी का पुत्र मियाँ जमन, चौवनवाँ - मीर मुबारिज खाँ आदि ।[1]

---

1. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद: तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 298-299, 314-315, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 210-211, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 12, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 246.

सिंहासन पर बैठने के बाद बहलोल ने समस्त सारन प्रदेश गंडक तक मियाँ हुसेन फ़र्मुली के पिता को दिया । जौनपुर का प्रदेश मियाराँ खाँ लोहानी को दिया । आगरा का प्रदेश हुमायूँ सरवानी को दिया । सुल्तान अहमदखाँ को बयाना का प्रदेश दिया । कन्नौज ख्वाजा अहमद को तथा बहराइच और गोरखपुर का सारा प्रदेश फर्मुली सरदारों को दिया और पंजाब का राज्य बाइरवेल के लोदियों को दिया । बतनी गजून को मुल्तान का प्रदेश और महमूद खाँ लोदी को कालपी का प्रदेश प्रदान किया । इस प्रकार बहलोल ने समस्त छोटे बड़े अमीरों को राज्य प्रदान करके विभिन्न स्थानों पर भेज दिया और स्वयं दिल्ली रहकर वहाँ से सारा शासन प्रबन्ध देखने लगा ।[1]

बहलोल का शर्की शासक से संघर्ष

जब बहलोल लोदी ने दिल्ली में अपनी स्थिति मजबूत कर ली तब वह पंजाब चला गया और राजधानी की देखभाल करने का कार्य अपने बड़े बेटे ख्वाजा बायजीद, शाह सिकन्दर सरवानी और इस्लामखाँ की विधवा बीबी मट्टू को सौंपा । महमूदशाह शर्की ने मौके का फायदा उठाकर 1452 ई० में राजधानी को घेर लिया ।[2] महमूदशाह का दिल्ली पर आक्रमण करने का कारण यह था कि शर्की वंश के जौनपुर के शासक महमूदशाह ने सैय्यद वंश के अन्तिम शासक अलाउद्दीन आलम शाह की पुत्री से विवाह किया था । अलाउद्दीन आलमशाह की पुत्री यह चाहती

---

1. मुहम्मद कबीर बिन शेख इस्माईल : अफ़सानये शाहान, पृष्ठ 22, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 370-371.

2. अबुल हलीम : हिस्ट्री आफ द लोदी सुल्तान्स आफ देलही एण्ड आगरा, पृष्ठ 21.

थी कि उसका पति बहलोल की जगह दिल्ली पर शासन करे क्योंकि दिल्ली पर पहले उसके पिता का राज्य था । महमूदशाह अलाउद्दीन आलम शाह का दामाद होने के कारण दिल्ली पर अपना पैतृक अधिकार मानता था । वह बहलोल की शक्ति को दिल्ली में जमने से पहले ही उखाड़ देना चाहता था । इसकारण महमूदशाह ने बहलोल के शासन के पहले वर्ष ही दिल्ली पर आक्रमण कर दिया[1] । युद्ध शुरू होने के पहले ही महमूदशाह का सेनापति दरियाखाँ लोदी बहलोल से मिल गया । इस समय बहलोल मुल्तान की तरफ गया हुआ था । वापस आ गया । नलीरा नामक स्थान पर पड़ाव डाला । दिल्ली में रह रहे अफ़गान सैनिकों और बीबी मट्टू ने अनेक स्त्रियों को पुरूषों के वस्त्र पहनाकर दुर्ग के परकोटे के चारों ओर शत्रु को धोखा देने के लिये खड़ा कर दिया[2] पर इनकी सेना कम होने के कारण बहलोल के पुत्र तथा अन्य अमीर किले में बन्द हो गये । सुल्तान महमूद ने फतेहखाँ हरेवी को 30 हजार अश्वारोही तथा 30 हाथी देकर बहलोल पर आक्रमण के लिए नियुक्त किया । कुतुबखाँ लोदी ने दरियाखाँ लोदी से जो सुल्तान महमूद से मिल गया था युद्ध की व्यवस्था कर रहा

---

1. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 95, 246-311, अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 10-11, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 311, के० एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 134-135.

2. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 576-577, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 95, अब्दुल्लाह तारीखें दाऊदी, पृष्ठ 13, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 246-311.

था चिल्लाकर कहा कि, "तेरी मातायें तथा बहनें किले में बन्द हैं, तुझे यह क्या हुआ है, जो शत्रु की ओर से युद्ध कर रहा है और स्त्रियों की रक्षा नहीं करता है।' यह सुनकर दरियाखाँ शर्की सेना से अलग हो गया। नरेला (दिल्ली से 17 मील दूर) नामक स्थान पर शर्की सेना पराजित हो गई। फतेहखाँ हरेवी को बन्दी बना लिया गया।[1] क्योंकि फतेहखाँ ने राय करन के भाई पिथौरा की हत्या कर दी थी। इसलिये रायकरन ने फतेहखाँ का सिर काट दिया और सुल्तान बहलोल की सेवा में भेज दिया। सुल्तान महमूद के पास इतनी ताकत नहीं थी कि युद्ध करता। वह पराजित हुआ और वापस जौनपुर लौट गया। बहलोल ने भागती सेना का पीछा किया और भारी मात्रा में लूट का माल प्राप्त किया। इस विजय से बहलोल की प्रतिष्ठा में काफी वृद्धि हो गयी।[2]

मेवात पर आक्रमण :

बहलोल लोदी ने मेवात पर आक्रमण किया। यहाँ पर अहमद खाँ मेवाती शासन करता था। मेवात में आधुनिक गुड़गाँव और अलवर के जिले तथा भरतपुर और आगरा जिले के कुछ भाग शामिल थे। बहलोल लोदी से डरकर अहमद खाँ

---

1. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 203-248 (अनुवादित अंश तबक़ाते अकबरी से) अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ द लोदी सुल्तान्स आफ डेलही एण्ड आगरा, पृष्ठ 22-23.

2. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 577, एल0पी0 शर्मा : मध्य कालीन भारत, पृष्ठ 181, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 203 (अनूदित अंश तबकाते अकबरी अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 15 अनुवादक रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 248.

मेवाती ने समर्पण कर दिया । सुल्तान ने अहमद खाँ मेवाती से 6 जिले छीनकर दिल्ली में मिला लिया । अहमद खाँ मेवाती ने अपने चाचा मुबारक खाँ को स्थाय रूप से सुल्तान की सेवा में रख दिया ।[1]

अन्य विजय :

मेवात के बाद बरन कस्बे में आया । सम्भल के हाकिम दरिया खाँ लोदी ने सुल्तान के आगे समर्पण किया और 7 परगने भेंट किये । यहाँ के बाद कोल गया कोल के राज्यपाल ईसा खाँ ने सुल्तान के प्रति अपनी स्वामिभक्ति प्रकट की । सुल्तान ने उसे कोयल के प्रदेश पर बना रहने दिया ।[2] इसके बाद सुल्तान बुरहानाबाद पहुँचा तो सकेत के हाकिम मुबारक खाँ ने अधीनता स्वीकार की । फिर सुल्तान भोगांव गया वहाँ के हाकिम रामप्रताप ने भी समर्पण किया । सुल्तान ने उसकी विलायत उसी के अधिकार में रहने दी । इसके पश्चात् सुल्तान रापरी गया रापरी के हाकिम हसन खाँ के पुत्र कुतुब खाँ ने किले को बन्द कर लिया । कुछ समय बाद सुल्तान ने रापरी का किला जीत लिया । रापरी के बाद सुल्तान इटावा आया । इटावा के हाकिम ने भी समर्पण किया ।[3]

---

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 577, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 229, एल0पी0 शर्मा : मध्यकालीन भारत, पृष्ठ 181, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 203-248 (अनुवादित अंश तबक़ाते अकबरी से)

2. वही ।

3. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 578, एल0पी0 शर्मा : मध्यकालीन भारत, पृष्ठ 181, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 203 (उद्धरित अंश तबक़ाते अकबरी से)

महमूद शर्की का बहलोल पर आक्रमण तथा सन्धि :

सुल्तान महमूद शर्की ने फिर बहलोल पर आक्रमण करने के लिये इटावा के पास अपना डेरा लगाया । पहले दिन दोनों सेनाओं के बीच युद्ध होता रहा, दूसरे दिन कुतुबखाँ तथा रायप्रताप ने सन्धि की/ सन्धि की शर्तों में यह तय हुआ कि "जो कुछ भी मुहम्मदशाह के अधिकार में था वह सब सुल्तान बहलोल के अधीन रहे और जो कुछ जौनपुर के बादशाह सुल्तान इब्राहीम के अधिकार में था वह सुल्तान महमूद के पास रहे/ फतेहखाँ, हरेवी के युद्ध में 7 हाथी, जो बहलोल लोदी ने छीन लिये थे, उसे सुल्तान महमूद को वापस कर दे और वर्षा ऋतु के बाद शम्साबाद को बहलोल, जूनाखाँ से (सुल्तान महमूद की ओर से उस ओर का हाकिम था) वापस ले लें । इस सन्धि के बाद सुल्तान महमूद जौनपुर चला गया ।[1] बहलोल ने जूनाखाँ को फरमान भेजा कि वह शम्साबाद छोड़कर चला जाये पर जूनाखाँ ने आज्ञा नहीं मानी । बहलोल ने उस पर आक्रमण कर दिया । जूनाखाँ पराजित होकर भाग गया । शम्साबाद को बहलोल ने रायकरन को दिया । इस सूचना को पाकर सुल्तान महमूद बहलोल से युद्ध करने के लिये शम्साबाद आया । सुल्तान महमूद और बहलोल के बीच युद्ध हुआ । युद्ध में कुतुब खाँ लोदी बन्दी बना लिया गया । इसी समय सुल्तान महमूद बीमार पड़ गया और 1459 ई0 में सुल्तान महमूद की मृत्यु हो गयी (एल0पी0 शर्मा के अनुसार 1457 ई0 में हुयी) तब महमूद की

----

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 578, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 229-230, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 302-303, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 203-204.

पत्नी बीबीराजी ने शाहजादा भीखन खाँ को सिंहासन पर बैठाया[1] और उसकी उपाधि मुहम्मदशाह निश्चित की । मुहम्मदशाह ने बहलोल से सन्धि कर ली । सन्धि की शर्तों में यह तय हुआ कि सुल्तान महमूद की विलायत मुहम्मदशाह के अधिकार में रहेगी और बहलोल के पास जो कुछ है वह उसके पास रहेगा किन्तु उसमें कुतुबखाँ को वापस करने की शर्त नहीं थी । मुहम्मदशाह जौनपुर चला गया । सुल्तान बहलोल दिल्ली वापस लौटने लगा ।[2] जब सुल्तान बहलोल दिल्ली के पास घनकोर नामक स्थान पर पहुँचा ही था कि तभी कुतुबखाँ की बहन शम्स खातून ने बहलोल के पास संदेश भिजवाया कि "उसके भाई को पहले मुहम्मदशाह के बन्दीगृह से छुड़वाये तब आगे बढ़े ।" सुल्तान तुरन्त मुड़ गया । मुहम्मदशाह भी जौनपुर से वापस चल पड़ा । मुहम्मदशाह ने शम्साबाद से रायकरन को हटाकर जौनाखाँ को वहाँ नियुक्त किया । रापरी नामक स्थान पर दोनों सेनाओं के बीच कुछ दिन तक युद्ध होता रहा । रामप्रताप, मुबारिजखाँ और कुत्बखाँ मुहम्मद शर्की से मिल

---

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 578, आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 230, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 181, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 204 (अनुवादित अंश तबक़ाते अकबरी) सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 249-311, द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 140.

2. हबीब निज़ामी : वही, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : वही, (अनुवादित अंश तबक़ाते अकबरी), अहमद यादगार : तारीख़े शाही, पृष्ठ 14-15, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 313-314.

गये । इससे शर्कियों की शक्ति में वृद्धि हो गयी । जब मुहम्मदशाह अपने भाइयों के विरुद्ध योजना बना रहा था तभी उसके भाई हुसेन ने उसका वध कर दिया । स्वयं हुसैनशाह के नाम से जौनपुर का शासक बन गया ।[1] एक ऐसी घटना घटी जिससे युद्ध 4 वर्षों तक बन्द रहा । घटना यह थी कि सुल्तान हुसेन शर्की का छोटा भाई राजकुमार जलालखाँ जो जौनपुर के सिंहासन पर मुहम्मद का उत्तराधिकारी बना था वह रात में जल्दी जल्दी अपने भाई से मिलने जा रहा था । भूल से बहलोल के शिवि को हुसेनखाँ का शिविर समझ बैठा, उसमें चला गया । उसे तुरन्त बन्दी बना लिया गया तब दोनों सुल्तानों के बीच यथापूर्व स्थिति के आधार पर समझौता हो गया । शम्साबाद पर शर्कियों ने अपना अधिकार बनाये रखा । रामप्रताप सुल्तान बहलोल लोदी से मिल गया । सुल्तान हुसैन ने कुतुबखाँ लोदी को जौनपुर से बुलाकर उसे सम्मानसहित बहलोल के पास वापस भेज दिया और बहलोल ने जलालखाँ को शर्की सुल्तान के पास भेज दिया ।[2] हुसेनशाह शर्की वंश का अन्तिम शासक था । उसने बहलोल के विरुद्ध लगातार युद्ध किया लेकिन अन्ततः उसे जौनपुर से हाथ धोना पडा और बिहार में शरण लेनी पड़ी । सिकन्दर लोदी के समय उसे बिहार से भागकर बंगाल चले जाना पड़ा । जौनपुर की विजय और उसका दिल्ली सल्तनत में विलय बहलोल लोदी के राज्य की एक महत्त्वपूर्ण घटना थी ।[3]

----

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 578-579, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 181, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 17-18, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 204-249.

2. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 579, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 305-306, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 205-206.

3. द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 140, के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 150.

सुल्तान बहलोल द्वारा शम्साबाद की विजय :

कुछ समय पश्चात् सुल्तान बहलोल लोदी ने शम्साबाद को जूनाखाँ से लेकर रायकरन को दे दिया और बहलोल लोदी दिल्ली लौट आया ।[1]

मुल्तान पर आक्रमण :

1468-69 ई0 में जब कुतुबुद्दीन लंगाह मरा तो बहलोल ने मुल्तान की ओर प्रस्थान किया । तभी रास्ते में उसे यह समाचार मिला कि सुल्तान हुसेन शर्की की सेना दिल्ली की ओर बढ़ रही है । हुसैनशाह साहसी और महत्वाकांक्षी था । दिल्ली पर अपना अधिकार करना चाहता था तब वह तुरन्त दिल्ली लौट आया । चंदवार नामक स्थान पर 7 दिनों तक दोनों सेनाओं के बीच युद्ध होता रहा तथा अन्त में एक सन्धि हुयी कि 3 वर्ष तक दोनों बादशाह अपनी अपनी विलायत से सन्तुष्ट रहें और युद्ध न करें । 3 वर्ष बीत जाने के बाद सुल्तान हुसैन ने फिर दिल्ली पर आक्रमण किया । भतवारा कस्बे के निकट युद्ध हुआ । खानेजहाँ ने दोनों के बीच फिर सन्धि करवायी । 1479 ई0 में सुल्तान हुसेन ने फिर दिल्ली के निकट यमुना तट पर कुंजा नामक स्थान पर डेरा लगाया । दुर्ग पर सुल्तान हुसेन का आक्रमण

----

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 579, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 206-249 ‡उद्धरित अंश तबक़ाते अकबरी से‡ द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 140, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 16-17, अनुवादक, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 249.

असफल होते देख कुतुबखाँ लोदी ने दोनों के बीच सन्धि करवायी[1] तब सुल्तान हुसेन ने सन्धि पर विश्वास करके शिविर छोड़ दिया। बहलोल ने सन्धि तोड़कर उसका पीछा किया। उसका शिविर, खज़ाना लूट लिया। हुसेन के 40 प्रतिष्ठित अमीरों को बन्दी बना लिया, सुल्तान हुसेन के परगने-कम्पिला, पटियाली, शम्सा-बाद, सकेत, कोल, मारहरा, जलानी, कस्बों पर अपना अधिकार कर लिया।[2] तभी रापरी के आधीन (सोनहर) आराम महजूर ग्राम में दोनों के बीच सन् 1479 ई0 में फिर युद्ध हुआ। हुसेन पराजित हुआ। अन्त में इस शर्तों पर सन्धि हुयी कि दोनों अपनी अपनी विलायत तथा प्राचीन सीमा से सन्तुष्ट रहें।[3] तब सुल्तान हुसेन रापरी आया और सुल्तान बहलोल धोपामऊ ग्राम चला गया। इसके बाद बहलोल ने इटावा को जीतकर इब्राहीम खाँ को दिया। 1484 ई0 में सुल्तान बहलोल ने जौनपुर पर पुन: आक्रमण किया। सुल्तान हुसैन जौनपुर छोड़कर कन्नौज चला गया। रहब नदी के पास दोनों के बीच युद्ध हुआ। सुल्तान हुसेन युद्ध में

---

1. ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 308-309, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 207, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 579-581. आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव, पृष्ठ 229-30.
2. ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 310, अनुवादक : सैय्यद अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 207-208, हबीब निजामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 582.
3. ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 310, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 208, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 582.

पराजित हुआ । उसकी सम्पत्ति और सेना पर बहलोल लोदी ने अपना अधिकार कर लिया । हुसेन खाँ की पत्नी बीबी (मलिक-ए-जहाँ) खूंजा जो खिज्रखाँ के पौत्र सुल्तान अलाउद्दीन की पुत्री थी उसे बन्दी बना लिया गया पर सुल्तान बहलोल ने उसकी सम्मानपूर्वक रक्षा की ।[1] पर मौका पाकर बीबी खूंजा अपने पति के पास भाग गयी । तब सुल्तान बहलोल ने फिर युद्ध किया । हुसैन खाँ पराजित होकर बिहार चला गया । जौनपुर पर सुल्तान बहलोल का अधिकार हो गया ।[2] जौनपुर की विजय बहलोल की सबसे महत्वपूर्ण विजय थी । फिर अपने पुत्र बरबकशाह को जौनपुर के सिंहासन पर बिठा दिया । 1488 ई0 में हिसार फीरोजा गया वहाँ कुछ दिन रहने के बाद दिल्ली लौट आया । बहलोल ने अन्तिम आक्रमण ग्वालियर पर किया । ग्वालियर को विजय किया । ग्वालियर के राजा मानसिंह ने 80 लाख टन्के भेंट किये ।[3] ग्वालियर उसी के पास रहने दिया गया । फिर सुल्तान

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 230-231, एल0पी0 शर्मा: भारत का इतिहास, पृष्ठ 182, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 208-209 (अनुवादित अंश तबक़ाते अकबरी), अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 18-19, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 250-251.
2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 231, एल0पी0 शर्मा : वही, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 210, अब्दुल हलीम, हिस्ट्री आफ द लोदी सुल्तान्स आफ देलही एण्ड आगरा, पृष्ठ 45.
3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 155, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 182, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 584.

बहलोल लोदी इटावा गया । इटावा पर रायदादू के पुत्र सकट सिंह का अधिकार था । इटावा पर अधिकार किया ।[1] जब दिल्ली वापस लौट रहा था तभी रास्ते में बीमार पड़ गया । सकेत परगने के अधीन (जलाली के निकट) तिलावली ग्राम में 12 जुलाई 1488-89 ई0 में सुल्तान बहलोल लोदी की मृत्यु हो गयी । उस समय उसकी उम्र 80 वर्ष की थी । उसने 38 वर्ष 8 मास तथा 8 दिन तक राज्य किया था ।[2] अफ़्सानये शाहान के लेखक : मुहम्मद कबीर बिन शेख़ इस्माईल का कथन है कि बहलोल लोदी ने 44 वर्ष 7 मास 20 दिन तक राज्य किया[3] किन्तु यह विश्वसनीय नहीं है ।

---

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 584, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 231, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 20 अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 250, ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 313 अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 210.

2. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 584, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 231, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 182, ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 313, अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 210, 251 एवं 321, द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 141, के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 156.

3. मुहम्मद कबीर बिन शेख़ इस्माईल : अफ़्सानये शाहान, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 371.

अमीरों के साथ व्यवहार :

सुल्तान बहलोल लोदी बड़ा कुशल राजनीतिज्ञ था । अपनी स्थिति की दुर्बलताओं को भलीभाँति समझता था कि उसकी शक्ति पूर्णरूप से अफ़गान अनुयायियों पर निर्भर है इसलिये अमीरों को सन्तुष्ट रखने का पूरा प्रयास किया । बहलोल भलीभाँति जानता था कि अफ़गान अमीर तथा अनुयायी जो शुरू से ही जातीय एवं व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का उपयोग करते आये हैं अगर उन पर पाबन्दी लगायी जायेगी तो वे सहन नहीं करेंगे और विद्रोह करने लगेंगे/इसलिये बहलोल लोदी ने अमीरों के साथ ऐसा व्यवहार करना प्रारम्भ किया कि मानों वह अफ़गान अमीरों में से एक है। कभी भी सुल्तान के जैसे हाव-भाव उनके सामने नहीं दिखाये ।[1] एक सार्वजनिक घोषणाकीकि "मैं अपने को केवल अमीरों का अमीर समझता हूँ"/मुश्ताकी लिखता है कि इसी कारण सुल्तान ने अमीरों के सामने सिंहासन पर बैठना बन्द कर दिया । वह एक छोटा कालीन बैठने के लिये उपयोग में लाता था/उसी पर स्वयं भी बैठता था और अपने अमीरों को भी अपने साथ बैठाता था । यहाँ तक कि "दरबारे आम" में भी कभी सिंहासन पर नहीं बैठता था । अपने अमीरों को भी अपने सामने

---

1. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़े-आते मुश्ताकी, पृष्ठ 9, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 97, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी : पृष्ठ 10-11, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 245, अब्दुल हयी तारीख़-ए-फरिश्ता, पृष्ठ 538, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 231,

   एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 180, अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान : देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 52.

खड़े नहीं होने देता था । अमीरों के साथ बैठकर भोजन करता था ।[1] अपने अमीरों और सैनिकों के साथ भाई जैसा व्यवहार करता था । अपने अमीरों को फरमानों में "मसनदे अली" कहकर सम्बोधित करता था । अगर कोई अमीर संयोग से सुल्तान से नाराज हो जाता था तो सुल्तान उस अमीर के घर जाता था तथा अपनी कमरबन्द से तलवार निकालकर उसके सामने रखता और क्षमा याचना करता था कि "यदि तुम मुझे राजपद के योग्य नहीं समझते हो तो तुम मुझे राजपद से हटाकर किसी और को शासक बनाओ मुझे कोई अन्य कार्य सौंप दो ।"[2] अपनी स्थिति को दृढ़ करने के लिये

---

1. शेख रिज़कुल्लाह मुश्ताकी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी : पृष्ठ 9, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 97, ए०वी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 36, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 231, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के संदर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 19, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 183, अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान : देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 52, घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 26, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग, 4, पृष्ठ 531, भाग 5, पृष्ठ 76.

2. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 585, शेख रिज़कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़े आते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 9 अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 97, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 331, डॉ० रियाज अहमद खाँ शेरवानी : मुगलिया सल्तनत का उरूज वा जबाल, पृष्ठ 36, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 232, घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक तथा आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 26, अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 52-53, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी : पृष्ठ 11, अनुवादक : रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 245.

एवं अमीरों को प्रसन्न रखने के लिये इन्हें जागीरें, भेंट, पुरस्कार दिया । अफ़गानों को उनके मूल-निवास स्थान "रोह" से आमन्त्रित किया क्योंकि ये अमीर ही राज्य और शासन के आधार थे । अमीरों को प्रसन्न करके अपनी शक्ति का आधार बनाया ।[1] सुल्तान स्वयं कहता था कि "मेरे लिये इतना ही पर्याप्त है कि राजसी ठाट-बाटों के प्रदर्शन के बिना भी दुनियाँ मुझे जानती है कि मैं सुल्तान हूँ" मेरे लिये सिर्फ सल्तनत का नाम ही काफी है ।[2]

बहलोल ने न केवल इन अमीरों को प्रसन्न किया बल्कि अपनी शक्ति और प्रतिष्ठा की सुरक्षा के लिये विद्रोही तथा उद्दण्ड अमीरों और सरदारों को दण्ड भी दिया । उन पर सैनिक आक्रमण किया । उसने मेवात, सम्भल, कोल, इटावा, रापरी, भोगाँव, ग्वालियर आदि स्थानों पर सैनिक आक्रमण किये वहाँ के जागीर दारों और जमींदारों को अपना आधिपत्य स्वीकार करने के लिये मजबूर किया । उन्हें राजस्व देने के लिये तैयार किया । इन जमींदारों की जागीरों में कमी की, और उनकी शक्ति को दुर्बल बनाया यद्यपि बहलोल ने अफ़गान अमीरों को बड़ी बड़ी जागीरें दी पर इन अफ़गान सरदारों को अपनी स्वतन्त्र जागीर या राज्य बनाने का अवसर नहीं दिया ।[3]

----

1. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 180-183, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 585, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 231-32.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 228, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 585, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 11, अनुवादक : रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 97, अब्दुल हयी: तारीख-ए-फरिश्ता, पृष्ठ 538, अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 53.

3. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 180-181.

इस प्रकार से बहलोल लोदी ने एक निरंकुश शासक के अधिकारों का उपभोग नहीं किया बल्कि अपने उच्च आचरण द्वारा अफ़गान सरदारों को यह दिखाना चाहता था कि सुल्तान कोई अलग व्यक्ति नहीं है बल्कि उन्हीं लोगों में से एक है। उसकी शक्ति एवं सद्भावना सुल्तान के अधिकारों के आधार है। अफ़गान अमीरों, सरदारों के प्रति इस नीति के कारण लोदी वंश की सत्ता दृढ़ हो गयी। सभी अफ़गान सरदार, लोदी, फरमूली, लुहानी, शेरवानी ने न केवल शासक के प्रति अपनी स्वामि-भक्ति प्रकट की बल्कि दृढ शक्ति संकल्प होकर साम्राज्य की सेवा की।[1]

बहलोल लोदी के ऊपर इसका मनोवैज्ञानिक दबाव यह पड़ा कि वह अमीरों के कोपभाजन का शिकार होने से बच गया। किन्तु अमीरों के प्रति अपनायी गयी नीति से लाभ एवं हानि दोनों हुयी। लाभ यह हुआ कि अमीरों के अन्दर षडयन्त्र रचने व सिंहासन प्राप्त करने की इच्छा में कमी आयी।[2] हानि यह हुयी कि अफ़गान अमीर अपने प्रभाव व शक्ति के बारे में सचेत हो गये। अमीरों के साथ जो समानता का व्यवहार किया उनकी शक्ति और प्रतिष्ठा में जो वृद्धि की इससे अमीरों के अन्दर अपने अपने अधिकार पाने की भावना बढ़ी। एक निरंकुश शासक के स्थान पर कई निरंकुश शासक हो गए। सुल्तान एक उच्च अमीर या अमीरों का अमीर मात्र बनकर रह गया था।[3] बहलोल लोदी की इस नीति ने बहुत सीमा तक गैर अफ़गान शासकीय वर्ग को अफ़गान शासक से अलग कर दिया था। एक ओर घनश्यामदत्त शर्मा

---

1. घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 26.

2. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत का इतिहास, पृष्ठ 19.

3. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 19, घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 26.

का कथन है कि बहलोल लोदी की अमीरों के प्रति यह नीति काफी अव्यावहारिक तथा अदूरदर्शितापूर्ण रही जो भारतीय परिस्थितियों में सफल नहीं हो सकती थी।[1] तो दूसरी ओर आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव और एल०पी० शर्मा का कथन है कि बहलोल लोदी को अपने इस सुदीर्घ शासन काल में अपनी इस नीति के कारण पर्याप्त सफलता मिली और उसके शक्तिशाली अफगान अनुयायियों ने कभी उसे कष्ट नहीं दिया ।[2]

चरित्र एवं मूल्यांकन :

शासन सम्बन्धी कार्यों में बहलोल लोदी बड़ी रुचि रखता था । वह प्रातः काल जल्दी उठ जाता था । दोपहर तक राजकीय कार्यों में व्यस्त रहता था फिर भोजन करता था । भोजन के उपरान्त दोपहर की नमाज से लेकर रात की नमाज के समय तक उलमा के साथ कुरान पढ़ने एवं सामूहिक रूप से प्रार्थनाएँ करने में व्यतीत करता था । रात की नमाज पढने के बाद हरम में जाता था । कुछ समय वहाँ व्यतीत करने के बाद "खलवत खाना" जाता था ।[3] सुल्तान बहलोल धर्म में आस्था

---

1. घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 26.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 231-232, एल०पी० शर्मा: भारत का इतिहास, पृष्ठ 180-183.

3. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 585;
   इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 330-331.
   अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 54.

रखता था । इस्लाम धर्म के नियमों का विधिवत् पालन करता था । प्रत्येक परि-स्थितियों में शरा के अनुसार कार्य करता था । धर्म की उन्नति तथा धार्मिक कार्यों को करने में समय का बड़ा पाबन्द था पर वह धर्मान्धता से असाधारण रूप से मुक्त था जो उसके पुत्र सिकन्दर लोदी के क्रिया-कलापों की विशेषता थी । वह उलमा तथा धर्म तत्वज्ञों का यथेष्ट आदर करता था । अपने धर्म का पालन करता था पर दूसरे धर्म वालों को घृणा की दृष्टि से नहीं देखता था ।[1] अपना अधिकांश समय धार्मिक लोगों के साथ व्यतीत करता था । बहलोल ने राजपूतों तथा अन्य हिन्दू जमींदारों के साथ अच्छे सम्बन्ध बनाये रखा । जैसे रायकरन, रायप्रताप, रायवीर सिंह, रायत्रिलोकचन्द रायधंधू आदि उसके ऐसे सरदार थे जिन पर वह बहुत अधिक विश्वास करता था । इन राजपूत जागीरदारों और जमींदारों को राज्य में ऊँचे पद दिये । इन लोगों ने भी बड़ी वफादारी से सुल्तान की सेवा की थी ।[2]

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 232, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 299, अनुवादक रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 201, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 330-331, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 585, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 10-11, अनुवादक रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 245, अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 51, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 184.

2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 331, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 232-238, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 583, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 11 अनुवादक : रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 97, एल0पी0 शर्मा : भारत का इति-हास, पृष्ठ 183, अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 52.

बहलोल लोदी में न्याय करने की क्षमता बड़ी उच्च कोटि की थी । वह जनता के आवेदन स्वयं सुनता था । कभी भी वज़ीरों और अमीरों पर नहीं छोड़ता था । वह मुस्लिम कानून को अच्छा समझता था । मुस्लिम कानून और अपनी बुद्धि, ज्ञान के अनुसार न्याय करता था ।[1]

सुल्तान बहलोल लोदी एक वीर, निर्भीक योद्धा तथा सफल सेनानायक था । उसके अन्दर सबसे बड़ा गुण यह था कि उसमें स्वस्थ सामान्य बुद्धि, यथार्थवादिता और बुद्धिमत्ता पर्याप्त मात्रा में विद्यमान थी । कूटनीतिज्ञ और परिस्थितियों को समझने वाला था । वह अपने समय की संभावनाओं को अच्छी तरह समझकर ही उसके अनुरूप कार्य करता था इसीलिये जौनपुर के अतिरिक्त दिल्ली सल्तनत के दक्षिण बंगाल, राजस्थान, मालवा आदि प्रान्तों को जीतने का विचार नहीं बनाया ।[2] सैनिक, नेता तथा शासक दोनों ही रूपों में वह अपने पूर्वजों से अधिक योग्य एवं कुशल था । जो फिरोज की मृत्यु से लेकर अलाउद्दीन आलमशाह तक दिल्ली के सिंहासन पर बैठे थे । बहलोल ने विद्रोही जागीरदारों को दबाया । जौनपुर राज्य को दिल्ली सल्तनत में मिलाया जो 85 वर्षों से दिल्ली के सुल्तानों को चुनौती दे रहा था क्योंकि शक्ति तथा साधनों में दिल्ली सल्तनत की तुलना में अधिक श्रेष्ठ था ।[3]

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 331, अब्दुल हलीम: द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 51, हबीब निज़ामी: दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 571, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 232, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 11, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 245.

2. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 183, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव: दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 231.

3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, एल0पी0 शर्मा: भारत का इतिहास, पृ0 182.

सुल्तान बहलोल लोदी में दया की भावना तो इतनी अधिक थी कि अपने दरवाजे से कभी किसी भिखारी, अनाथ को खाली हाथ वापस जाने नहीं देता था।[1] स्त्रियों को बहुत अधिक आदर की दृष्टि से देखता था । जब जौनपुर के सुल्तान हुसैनशाह की पत्नी उसके अधिकार में आ गयी तो उसके साथ शिष्टता एवं आदर का व्यवहार किया । अपने रक्षकों के साथ उसे उसके पति के पास पहुँचा दिया, जबकि यही स्त्री उसके और हुसैनशाह के बीच शत्रुता का कारण थी ।[2]

सुल्तान बहलोल ने सबसे उल्लेखनीय कार्य यह किया कि उसने "बहलोली" नामक सिक्के को चलाया जो अकबर से पहले तक उत्तरी भारत में विनिमय का मुख्य साधन था[3] जिसने दिल्ली सल्तनत के मुद्रा शास्त्रीय इतिहास में अपना नाम अमर कर लिया था ।

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 232, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 184, शेख रिज़कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 9, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 97, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 10-11, अनुवादक : सैयद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 245.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 232, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 183.

3. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 184, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 585.

लोदी शासकों में सुल्तान बहलोल लोदी एक योग्य शासक माना जाता है। यह उसके सैनिक प्रतिभा और परिश्रम का परिणाम था कि लोदी वंश दिल्ली सल्तनत के इतिहास में अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान पा सका। अपने जीवन का प्रारम्भ सरहिन्द की सूबेदारी से प्रारम्भ किया और सैनिक प्रतिभा के बल से सिंहासन पर बैठा। मुहम्मदशाह से "मलिक" की उपाधि धारण की। उसकी मृत्यु के समय दिल्ली सल्तनत पंजाब से लेकर पिहार तक फैला हुआ था। उसके आधीन दिल्ली, बदायूँ, बरन, सम्भल, रापरी के राज्य थे। राजस्थान का कुछ भाग भी उसके अधिकार में था। ग्वालियर, धौलपुर, बाड़ी के शासक उसे राजस्व भेजा करते थे।[1]

...

---

1. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 182, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 584.

सुल्तान सिकन्दर लोदी

बहलोल लोदी का बेटा सिकन्दर लोदी था । सिकन्दर लोदी का बचपन का नाम शाहजादा निजाम था ।[1] सिंहासन पर बैठने के बाद अपनी उपाधि सिकन्दर रखी । जिस समय सुल्तान बहलोल लोदी की मृत्यु हुयी उस समय निजाम दिल्ली में था । अपने पिता की मृत्यु की खबर पाकर तुरन्त जलाली गया । उत्तराधिकार के प्रश्न को लेकर अमीरों के 3 दल बन गये थे । इस समस्या को हल करने के लिए सकती से 15 मील दूर उत्तर स्थित एक गाँव में सरदार एकत्र हुये । इसमें एक दल निजामखाँ को सिंहासन पर बैठाना चाहता था तो दूसरा दल स्वर्गीय सुल्तान के सबसे बड़े बेटे बारबकशाह को बैठाना चाहता था । बारबकशाह इस समय जौनपुर का शासक था । तीसरा दल बहलोल के सबसे बड़े बेटे बायजिद के पुत्र आजम हुमायूँ को सिंहासन पर बैठाना चाहता था ।[2] निज़ाम का सभी दल इस कारण विरोध कर रहे थे कि निजाम की माँ जैबन्द एक सुनार की पुत्री थी । जिस समय बहलोल लोदी मृत्यु शैय्या पर पड़ा हुआ था उस समय उसने निजाम को दिल्ली से बुलाया कि कहीं मेरी मृत्यु के बाद वह सिंहासन हस्तगत न कर ले, पर निजाम नहीं

---

1. अहमद यादगार : तारीखे़ शाही, पृष्ठ 29, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 321.

2. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 586-587, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 232, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 184 ;
अब्दुल्लाह : तारीखे़ दाऊदी, पृष्ठ 34 अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 258.

आया । निजाम की माँ इस समय सुल्तान बहलोल के साथ थी[1] और अपने बेटे को सिंहासन पर बैठाने की कोशिश कर रही थी परन्तु बहलोल का चचेरा भाई ईसाखाँ जो बारबकशाह का समर्थक था, उसने निजाम की माँ को गाली दी और अशिष्टता पूर्ण शब्दों में कहा कि "एक सुनार स्त्री का पुत्र सिंहासन पर बैठने के लिए उपयुक्त नहीं है ।"[2] ईसाखाँ के इस गलत व्यवहार से कुछ अमीर निजाम की माँ के पक्ष में हो गये । खानेखाना फरमुली ने ईसाखाँ को झिड़का : "कि तुम एक दास हो और शाही सम्बन्धों से तुम्हारा कोई प्रयोजन नहीं है" तब ईसाखाँ ने निजाम के प्रति अपनी निष्ठा प्रकट की और सभा से उठकर चला गया । अन्य दो दल बिना किसी निर्णय पर पहुँचे आपस में झगड़ते रहे ।

खानेजहाँ, खानेखाना फ़र्मुली तथा अपने पिता के सभी अमीरों की सहमति से शुक्रवार 16 जुलाई 1489 ई0 को जलाली कस्बे के निकट एक टीले पर जो काली नदी के तट पर स्थित था जिसे "कुशके सुल्तान फ़िरोज" कहते हैं वहाँ 18 वर्ष की उम्र से सिंहासन पर बैठा । अपनी उपाधि सुल्तान सिकन्दर रखी ।[3] अपने सबसे

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 232-233.

2. वही, पृष्ठ 233, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 587; अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ द लोदी सुल्तान्स आफ देलही एण्ड आगरा, पृ059.

3. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, भाग 1, पृष्ठ 314 अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1 पृष्ठ 210-211. अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 60, अहमद यादगार : तारीख़े शाही, पृष्ठ 34-35, अनुवादक : रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 324, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 587, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 34-35, अनुवादक : रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 258, अहमद यादगार : तारीख़े शाही, पृष्ठ 34, अनुवादक : रिज़वी : वही, भाग 1, पृष्ठ 324.

बड़े बेटे अहमद खाँ को आजम हुमायूँ की उपाधि दी ।[1] अमारों का मनसब बढ़ाया । सेना को दो माह का वेतन इनाम के रूप में दिया । अपने प्राचीन सेवकों को योग्यतानुसार अमीर का पद, घोड़े, जागीर, वस्त्र इनाम में दिया ।[2] दिल्ली को अपनी राजधानी बनाया[3]। इसके बाद सुल्तान सिकन्दर का सबसे मुख्य काम अफगान सरदारों से अपनी सत्ता मनवाना, अपने सगे सम्बन्धियों को अधीनता स्वीकार करने पर विवश करना, प्रतिद्वन्द्वियों का दमन करना, अपने अनुयायियों की शक्ति में वृद्धि करना, आन्तरिक शान्ति-व्यवस्था बनाना, अपने चुनाव का औचित्य सिद्ध करना था ।

सबसे पहले सिकन्दर रापरी की ओर गया । रापरी पर उसके चाचा आलमखाँ का अधिकार था । वह भी दिल्ली का सिंहासन हस्तगत करना चाहता था । सिकन्दर ने रापरी और चंदवार का दुर्ग घेर लिया । आलमखाँ ने पटियाली जाकर ईसाखाँ के यहाँ शरण ली । आलमखाँ सामना न कर सका तथा समर्पण कर दिया । रापरी खानेखाना को दिया । आलमखाँ को इटावा का सूबेदार नियुक्त किया ।[4] ईसाखाँ को पटियाला के पास युद्ध में पराजित किया । युद्ध में घायल हो

----

1. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 320, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 215.
2. अहमद यादगार : तारीख़े शाही : पृष्ठ 35 अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 324, अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 60.
3. के0एम0 पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 128.
4. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 587, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 233, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 185, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 315, अनुवादक: सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 211-12.

जाने के कारण ईसाखाँ की मृत्यु हो गयी । पटियाली को सिकन्दर ने रायगणेश को सौंप दिया ।[1] तत्पश्चात् सिकन्दर ने कालपी पर आक्रमण किया । इस समय कालपी पर सिकन्दर के चचेरे भाई आजम हुमायूँ का अधिकार था । उसे हराया तथा कालपी छीनकर मुहम्मद खाँ लोदी को दे दिया ।[2] फिर जालरा के विरोधी सरदार तातारखाँ को पराजित किया पर जालेर की जागीर उसी के पास रहने दी ।

बयाना पर आक्रमण :

बयाना का शासक सुल्तान अशरफ था । सुल्तान अशरफ का पिता सुल्तान अहमद जिलवानी जौनपुर के सुल्तान हुसेन के प्रति बड़ी निष्ठा रखता था । इस कारण सिकन्दर चाहता था कि सुल्तान अहमद जिलवानी जौनपुर के हुसेन का साथ न दे इसलिये सुल्तान ने जिलवानी के समक्ष यह प्रस्ताव रखा कि वह बयाना उसे दे

----

1. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ द लोदी सुल्तान्स आफ देलही एण्ड आगरा, पृष्ठ 62, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 185, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 587, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 233, निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 315, अनुवादक: सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 212.

2. एल0पी0 शर्मा : मध्यकालीन भारत, पृष्ठ 185, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 233, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 588, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृ0 316-317, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 212, अब्दुल्लाह तारीखे दाऊदी, पृ0 45-46, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृ0 267.

देगा तो सुल्तान सिकन्दर लोदी उसे जलेसर, चंदवार, मारहरा और सकीत के प्रदेश दे देगा । पहले जिलवानी बयाना देने को तैयार हो गया पर बाद में विरोध किया । तब सुल्तान सिकन्दर ने आगरा घेरने का आदेश दिया । आगरा इस समय हैबत खाँ जिलवानी के आधीन था । हैबतखाँ जिलवानी सुल्तान अशरफ के प्रति निष्ठावान था । सुल्तान सिकन्दर ने 1491 ई0 में बयाना पर आक्रमण किया । सुल्तान अशरफ सामना न कर सका । उसने आत्म-समर्पण कर दिया । बयाना दिल्ली सल्तनत में मिला लिया । बयाना की देखभाल करने का कार्य खानेखाना फ़रमुली को सौंपा और स्वयं वापस दिल्ली आ गया ।[1]

बारबकशाह का दमन :

बारबकशाह सुल्तान सिकन्दर लोदी का बड़ा भाई तथा जौनपुर का शासक था । सुल्तान यह चाहता था कि बारबकशाह उसकी केवल आधीनता स्वीकार कर ले और सुल्तान के नाम का खुतवा पढ़वाये जिससे राज्य का विभाजन न हो इसलिये सुल्तान ने इस्माईल खाँ नूहानी को फरमान देकर भेजा परन्तु बारबकशाह ने यह बात मानने से इन्कार कर दिया तो सिकन्दर लोदी जौनपुर की ओर अग्रसर हुआ । बारबकशाह भी अपनी सेना लेकर कन्नौज तक बढ़ आया था ।[2] कन्नौज के समीप

---

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 588, अहमद यादगार : तारीखे़ शाही, पृष्ठ 36-37, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 325, के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 167.

2. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ द लोदी सुल्तान आफ देलही एण्ड आगरा, पृष्ठ 62, के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 164-165.

दोनों के बीच युद्ध हुआ । बारबकशाह पराजित होकर बदायूँ भाग गया । सुल्तान ने उसका पीछा किया । अन्त में बारबकशाह ने आत्म-समर्पण कर दिया । हारने के बावजूद सिकन्दर ने बारबकशाह को फिर जौनपुर पर शासन करने का अधिकार दे दिया । बारबकशाह के दरबार में अपने व्यक्तियों को रखा और अपने विश्वासपात्र सरदारों को जागीरें एवं परगने दिये । बारबकशाह के दरबार तथा महलों में अपने गुप्तचरों को नियुक्त किया[1] ताकि जौनपुर की सारी रिपोर्ट उसे मिलती रहे । बारबकशाह की महत्वाकांक्षा पर एक प्रभावक नियन्त्रण लगा दिया । कुछ दिनों उपरान्त हुसैनशाह के भड़काने पर जौनपुर राज्य के जमींदारों ने विद्रोह किया । बारबकशाह विद्रोह दबा न सका और लखनऊ के पास दरयाबाद चला गया ।[2] सुल्तान सिकन्दर लोदी ने पुन: जौनपुर के विद्रोह को दबाया फिर बारबकशाह को अपने अधीनस्थ सामन्त के रूप में जौनपुर के सिंहासन पर बैठाया । इसके बावजूद

---

1. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 185, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 187-188, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 233-234, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 315-316, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 212, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 44-45, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 266-267, अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 37-38, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 325-326.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 234.

बारबकशाह जौनपुर का शासन सम्भाल न सका । वह नितान्त अयोग्य निकला । उसे हटाकर कारागार में डाल दिया गया तथा जौनपुर में अपने सूबेदार की नियुक्ति कर दी ।[1]

बिहार की विजय :

बारबकशाह का दमन करने तथा जौनपुर को दिल्ली राज्य में मिलाने के कारण सुल्तान का बिहार के प्रान्त से संघर्ष हो गया । बिहार बंगाल का एक भाग था । जौनपुर के कुछ जमींदारों का भूतपूर्व सुल्तान हुसैनशाह से घनिष्ठ सम्बन्ध था। सुल्तान इन जमींदारों की शक्ति को खत्म करना चाहता था । फाफामऊ (इलाहाबाद के निकट) भील राजा पर जो विद्रोही जमींदारों का नेता था उस पर सुल्तान ने आक्रमण किया पर विफल रहा । 1494 ई0 में फिर आक्रमण किया पर असफल रहा । हुसैनशाह की भील राजा से दोस्ती थी । हुसैनशाह ने सिकन्दर पर 1494 ई0 में बनारस के निकट आक्रमण किया । हुसैनशाह पराजित होकर बंगाल भाग गया और 1500 ई0 में उसकी मृत्यु हो गयी । बिहार पर सिकन्दर लोदी का अधिकार

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 234, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 185, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 588, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 316, अनुवादक: सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 212, अब्दुल्लाह : तारीखे़ दाऊदी, पृष्ठ 46-47, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 267-268,
अहमद यादगार : तारीखे़ शाही, पृष्ठ 42, अनुवादक : सैय्यद अतहर सब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 327-328.

हो गया । उसे दिल्ली राज्य में मिला लिया ।[1] सुल्तान ने तिरहुत पर आक्रमण किया । तिरहुत के राजा ने अधीनता स्वीकार की तथा कर देने का वचन दिया।[2]

<u>बंगाल की सन्धि</u> :

बंगाल का शासक अलाउद्दीन हुसैनशाह यह सहन नहीं कर सका कि बिहार पर सुल्तान सिकन्दर लोदी राज्य करे क्योंकि वह बिहार को अपने राज्य का एक भाग समझता था और हुसैनशाह को अपना अधीनस्थ सामन्त मानता था इसलिये उसने अपने पुत्र दानियाल को दिल्ली पर आक्रमण करने भेजा । सुल्तान सिकन्दर ने महमूद खाँ लोदी और मुबारकखाँ लोहानी को लड़ने के लिये तैयार किया किन्तु सिकन्दर और अलाउद्दीन हुसैन बिना लड़े समझौता करने को तैयार हो गये । दोनों सुल्तानों ने यह वायदा किया कि एक दूसरे के राज्य पर आक्रमण नहीं करेंगे और न ही एक दूसरे के शत्रुओं को अपने अपने राज्य में शरण देंगे और सुल्तान अलाउद्दीन बिहार, तिरहुत, सारन की सरकारों और उसके द्वारा विजित अन्य क्षेत्रों पर सुल्तान सिंकदर लोदी की सत्ता स्वीकार करेगा ।[3]

----

1. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 185, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव: दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 236, अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ द लोदी सुल्तान्स आफ देलही एण्ड आगरा, पृष्ठ 71, के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सुल्तान, पृ०171.

2. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 185, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 236, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृ० 590.

3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 236, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 185-186, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 590, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 320, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1,

बंगाल अभियान से लौटने के बाद सिकन्दर लोदी ने सारन अपने सैनिकों को जागीर के रूप में दे दिया फिर चुनार पर आक्रमण किया । हुसेन शर्की के सरदार दुर्ग में बन्द हो गये । चुनार के बाद सिकन्दर रीवाँ (भट्टा) प्रदेश में स्थित कँतित को विजय करने चला । कंतित के राजा रायभेद ने तुरन्त समर्पण कर दिया ।[1]

पटना पर आक्रमण :

1498-99 ई० में सुल्तान ने पटना पर आक्रमण किया । इसका कारण यह था कि सुल्तान ने पटना के शासक राय सालवाहन से उनकी बेटी माँगी, किन्तु राय सालवाहन अपनी बेटी देने को तैयार नहीं हुये । इसका बदला लेने के लिये आक्रमण किया । पटना का इतनी बुरी तरह से तहस-नहस किया कि पटना नगर खाली हो गया पर बन्धूगर का किला नहीं जीत पाया तथा वापस जौनपुर आ गया ।[2]

... पृष्ठ 215, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाउदी, पृष्ठ 54, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृ० 272-273.

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 589, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 318-320, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 213-216.

2. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 321,

अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 216.

1494 ई0 में सिकन्दर लोदी ने पुन: रायभेद पर जो कंतित का शासक था आक्रमण किया क्योंकि वह शर्कियों का पक्षपाती था । राय का पुत्र वीरसिंह पराजित हुआ । राय सरकूच भाग गया । अब सिकन्दर फफूंद गया, पर अकाल और बाढ़ के कारण सिकन्दर की सेना काफी नष्ट हो गयी ।[1] सेना का पुनर्संगठन करने के लिये जौनपुर लौट आया ।

रीवाँ पर आक्रमण :

1498 ई0 में सुल्तान सिकन्दर लोदी ने पुन: रीवाँ (भट्टा) पर आक्रमण किया ।[2] आक्रमण का कारण यह था कि रीवां के शासक रायभेद ने हुसेन शर्की को लोदी प्रदेश पर आक्रमण करने के लिये उकसाया था । इससे सिकन्दर लोदी चिढ़ गया । सिकंन्दर ने बांधूगढ़ का दुर्ग घेरा पर विजय न कर सका, तभी सिकन्दर जौनपुर वापस आ गया क्योंकि मुबारकखाँ लोदी भूजीखेल ने कोष का गबन किया था।[3] उसे आकर दण्ड दिया ।

1499-1503 ई0 (4 वर्ष) सुल्तान सम्भल में रहा क्योंकि जो सरदार सिकन्दर से नाराज थे वे सुल्तान को हटाकर फतेहखाँ को सिंहासन पर बैठाने की

---

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 589-590, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 317, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 213.

2. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ द लोदी सुल्तान्स आफ देलही एण्ड आगरा, पृष्ठ 75.

3. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 590-591.

योजना बना रहे थे तभी षड्यन्त्र की सूचना सुल्तान को शेख़ ताहिर ने दी । सुल्तान ने असन्तुष्ट होकर असगरखाँ, दिल्ली के राज्यपाल सैय्यदखाँ सरवानी, तातारखाँ, महमूदशाह की हत्या करवा दी[1] । कुछ सरदार गुजरात भाग गये ।

धौलपुर की विजय :

मार्च 1501-1502 ई0 में धौलपुर पर आक्रमण किया । धौलपुर का शासक राजा विनायकदेव था । वह ग्वालियर भाग गया । सिकन्दर ने धौलपुर पर अधिकार कर अधम खाँ को धौलपुर का अधिकारी नियुक्त किया ।[2]

ग्वालियर पर आक्रमण :

ग्वालियर पर आक्रमण का कारण यह था कि ग्वालियर के राजा मानसिंह ने सिकन्दर के शत्रु राय मानिकदेव तथा अन्य विद्रोहियों को अपने यहाँ आश्रय दिया था । इससे चिढ़कर सुल्तान ने 1503 ई0 में ग्वालियर के निकट असी (असान) नामक झील के तट पर पड़ाव डाला पर ग्वालियर विजित न कर सका ।[3] 1506 ई0

---

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 591.
2. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 591, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 186, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 236-237, ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 324, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 218-219, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाउदी : पृष्ठ 60, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 277.
3. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 591, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 186, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृ0236-237, ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृ0 324-325....

में पुन: कूच किया पर विजय न कर सका । 1505 ई० में मंद्रायल को विजय किया, फिर उतगिर, चन्देरी पर अपना अधिकार किया[1] बयाना, धोलपुर, ग्वालियर आदि स्थानों पर कड़ा नियन्त्रण रखने की दृष्टि से सिकन्दर लोदी ने आगरा को 1505 ई० में राजधानी बनाया और आधुनिक आगरा की नींव पड़ी।[2] 1510 ई० में नागौर को जीता ।[3]

नरवर की विजय :

1507 ई० - 1508 ई० में सुल्तान सिकन्दर लोदी ने कालपी के हाकिम जलालखाँ को नरवर का किला जीतने के लिये भेजा । जलालखाँ एक वर्ष तक किले को घेरे रहा । पर विजत कर नहीं सका । अनाज एवं जल के अभाव के कारण नरवर के किले में बन्द लोगों ने आत्म-समर्पण कर दिया । तब सुल्तान ने नरवर के

.. अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 219, के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 175.

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 237, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 592.

2. के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 176.

3. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 186, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 237, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 325, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 219, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 61, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 278.

आलिमों और पवित्र व्यक्तियों को अदरार इनाम दिये । बाद में नरवर के किले को इस कारण नष्ट कर दिया कि कहीं शत्रु उस पर अपना अधिकार न कर ले ।[1] और वापस आगरा आ गया ।

मालवा एवं रणथंभोर की विजय :

सुल्तान मालवा के अधीन नरवर का किला जीतने की प्रबल अभिलाषा रखता था पर मालवा न जीत सका । उसने सुई सोपर को जीतकर अलीखाँ के भाई अबूबक्र-खाँ को दे दिया ।[2] 1517 ई0 में रणथंभोर पर आक्रमण किया पर रणथंभोर के राज्यपाल ने उसकी सत्ता स्वीकार कर ली पर सुल्तान सिकन्दर लोदी कठगढ़ को न विजय कर सका ।[3]

----

1. अब्दुल्लाह : तारीख़े दाउदी, पृष्ठ 61-62, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 278-279.

2. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 593 ;
आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 237,
ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 328, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 222.

3. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 593, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 225-226.

<u>सुल्तान के कार्य करने की विधि</u> :

सुल्तान सिकन्दर लोदी शासन सम्बन्धी कार्यों में इतना व्यस्त रहता था कि पाँचों समय की नमाज एक स्थान पर नहीं गुजार पाता था ।[1] बल्कि सुबह एक साथ पढ़ लेता था । अपने घर परिवार, पुत्र-पुत्रियों की तरफ ध्यान नहीं दे पाता था । सुल्तान की बेटियाँ शादी लायक हो गयी । पर सुल्तान ने ध्यान ही नहीं दिया । एक दिन एक दाई ने आकर मियाँ भूवा से कहा, कि "बादशाह की पुत्री विवाह योग्य हो गयी है उसकी व्यवस्था करनी चाहिए ।" मियाँ भूवा ने उससे कहा कि "जब बादशाह मस्जिद में नमाज पढ़ने के लिये घर से बाहर जाय तो समस्त मुस्लिम पुत्रियों को चादर उढ़ाकर बादशाह के बिछौने के निकट बैठा दिया जाय । और जब बादशाह मस्जिद से नमाज़ पढ़कर आये तो तू उन्हें वहाँ से चले जाने के लिए कह दे ।" जब बादशाह महल से मस्जिद में नमाज पढ़ने के लिए आया और नमाज पढ़कर महल को चला गया । मियाँ भूवा उसके साथ था । उस समय उसके द्वार पर अन्य कोई व्यक्ति न था । जब बादशाह महल में पहुँचा तो मियाँ भूवा दरवाजे पर खड़ा रहा । जब वह महल में पहुँचा तो दाई ने पुत्री को वहाँ से हटा दिया । इसी बीच बादशाह की निगाह उन पर पड़ी । बादशाह उन्हें देखते ही लौटकर द्वार पर आ गया । उस समय मियाँ भूवा द्वार पर खड़ा हुआ था । बादशाह ने पूछा, "कि, हे भूवा ! तूने स्त्री को देखा ?" मियाँ भूवा ने उत्तर दिया, "हाँ, बादशाह की पुत्रियाँ हैं ।" यह सुनकर बादशाह कुछ देर तक अपना मुँह दीवार की ओर करके खड़ा रहा और ठण्डी साँस भरकर कहा, "हे भूवा ! इनकी व्यवस्था कर।" तब मियाँ भूवा ने चरित्रवान, रूपवान, योग्य, सिकन्दर के कौम के युवकों की सूची

----

1. ए०वी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 46; अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देलही एण्ड आगरा, पृष्ठ 109.

लाकर सुल्तान को दी, बादशाह ने सूची देखी, उन्हें जो जो युवक अपने पुत्रियों के योग्य लगे उनके आगे चिह्न लगा दिया। सुल्तान ने रात्रि में ही विवाह अपनी पुत्रियों का कर दिया तथा बादशाहों के योग्य जो दहेज था वो भी दिया।[1]

सुल्तान की व्यक्तिगत सभा रात को प्रारम्भ होती थी। उसी समय अपने आदेश, सन्देश, राज्यपालों तथा शासकों को भेजा करता था।[2] शासन-सम्बन्धी कार्यों में प्रातः से मध्यरात्रि तक व्यस्त होने के कारण अपना व्यक्तिगत आमोद-प्रमोद तक त्याग कर दिया करता था।[3] सुल्तान सिकन्दर लोदी की यह आदत थी कि जब तक उसके वस्त्र जो शरीर पर पहने रहता था फट नहीं जाते थे, तब तक वह उसे उतारता नहीं था और न ही दूसरा वस्त्र पहनता था। जब तक खूब जोर से नींद नहीं आती थी तब तक सोता नहीं था बल्कि कार्य किया करता था। जब तक खूब जोर से भूख नहीं लगती थी तब तक वह खाना नहीं खाता था। जब तक वह अपनी रक्षा नहीं कर सकता था उस समय तक वह अपनी पत्नियों से सम्बन्ध नहीं रखता था।[4] वह अपने पिता की तरह धोखेबाजी से कार्य नहीं करता था और न ही अपने किये गये वादे से पीछे हटता था।[5]

---

1. मुहम्मद कबीर बिन शेख़ इस्माईल : अफ़सानये शाहाने, पृष्ठ 39-40, अनुवादक: सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 383.
2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 338, अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 112.
3. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 189.
4. मुहम्मद कबीर बिन शेख़ इस्माईल : अफ़सानये शाहाने, पृष्ठ 38 , अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 382.
5. अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान, देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 122.

सुल्तान की यह आदत थी कि वह रात्रि में नहीं सोता था, केवल दिन में भोजन करने के उपरान्त सोता था और शासन-प्रबन्ध की व्यवस्था किया करता था। सीमान्त के अमीरों तथा समकालीन बादशाहों को पत्र लिखवाया करता था। इसी कारण वह रात्रि में कार्य करता था। 17 आमिल तथा विद्वान उसके विश्वास पात्र थे। जब रात्रि समाप्त होने में 6 घड़ी रह जाती तो वह उनके साथ भोजन करता था। उस समय यह प्रथा थी कि {अमीर} वे लोग हाथ धोकर सामने बैठ जाते थे। सुल्तान पलंग पर बैठता था, एक बड़ी कुर्सी पलंग के समीप लायी जाती थी। भोजन का थाल उस कुर्सी पर रख दिया जाता था। उसमें से वह स्वयं भोजन करता था। अन्य लोगों के समक्ष सहनक[1] {थाल} रखा जाता था। सुल्तान के सामने कोई भोजन नहीं करता था। सब हाथ धोकर बैठे रहते थे। जब सुल्तान भोजन कर चुकता था तो वे लोग अपना अपना सहनक {थाल} अपने अपने सेवकों को सौंप देते थे। यदि आवश्यकता होती तो वे लोग भोजन करते थे। रसोई से प्रत्येक व्यक्ति के लिए सहनक निश्चित थे। प्रत्येक के घर वे पहुँचते रहते थे।[2]

----

1. अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 36, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 259.

2. अब्दुल्लाह : वही, अनुवादक : वही,

   इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 338,

   शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 49,

   मुहम्मद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 42, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 328

सुल्तान की यह आदत थी कि "जिस व्यक्ति के लिए एक बार जो चीज जैसे भोजन, वस्त्र एवं नकद, इत्यादि वस्तु निश्चित कर देता था तो आजीवन उसमें कोई परिवर्तन नहीं किया जाता था । उदाहरणार्थ कुतुब आलम शेख़ हाज़ी अब्दुल वह्हाब, शाह जलालुद्दीन, मुहम्मद शीराजी को अपने साथ मक्का ले गया । जिस दिन वे सुल्तान के दर्शनार्थ गये सुल्तान ने उनके लिए भोजन के थाल भिजवाने का आदेश दिया । उस दिन भेड़ का माँस, कुछ हलवे तथा समोसे उपस्थित किये गये और प्रथा अनुसार वही भेजा जाता रहा ।

एक बार बन्दगी शेख़ अब्दुलगनी जौनपुरी ग्रीष्म ऋतु में सुल्तान से भेंट करने पहुँचे । प्रथम दिन शरबत के 6 गिलास उनके पास आतिथ्य सत्कार हेतु भेजे गये । जब तक वे वहाँ रहे वही शरबत तथा भोजन उन्हें भेजा जाता रहा । उनकी मृत्यु के उपरान्त जब शेख़ अब्दुल गनी के पुत्र शेख़ अब्दुलसमद सुल्तान के दर्शन करने आया तो सुल्तान ने आदेश दिया कि जो कुछ शेख़ अब्दुल गनी को भेजा जाता था वही उनको भेजा जाया करे । वे सुल्तान के दर्शन करने आया करते थे । ये निश्चित वस्तुयें उन्हें सर्वदा प्राप्त होती रहती थी । जाड़ा हो अथवा गर्मी, शरबत में कमी नहीं होती थी । इसी प्रकार जिसके लिए एक बार आदेश हो जाता वह सर्वदा चलता रहता ।[1]

1. अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 39, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 262,
   हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 594,
   इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 341,
   शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 49-50
   अहमद यादगार : तारीख़े शाही, पृष्ठ 42, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 132.

सुल्तान से जब कोई भेंट एक बार कर लेता और फिर उसकी सेवा में उपस्थित होता तो उसके प्रति वही सम्मान प्रदर्शित किया जाता जो प्रथम बार प्रदर्शित किया जाता था। उसमें किसी प्रकार का कोई परिवर्तन नहीं किया जाता था वह उनसे वार्तालाप भी उसी प्रकार करता था। जो अमीर जिस स्थान पर खड़ा होकर अभिवादन करता था वह सर्वदा उसी स्थान पर खड़े होकर अभिवादन करता। जिस समय सुल्तान की सवारी निकलती तो जो व्यक्ति अपनी गली में खड़ा हो जाता था वह उसी स्थान से अभिवादन करता था। यदि वह किसी स्थान पर किसी से कोई वार्ता कर लेता अथवा किसी की कोई फरियाद सुन लेता तो जब कभी भी वह उस गली में पहुँचता तो वहाँ ठहर जाता और अभिवादन स्वीकार करता था।[1]

अमीरों के प्रति नीति :

बहलोल लोदी के समय ऐसे तमाम अमीर थे,जो अपनी शक्ति के बल पर सुल्तान के अधिकार को चुनौती देते थे। सुल्तान का यथेष्ट आदर सम्मान नहीं करते थे। सिकन्दर लोदी के समय स्थिति बदल गयी। अब अमीरों को सुल्तान के दरबार में क्षुद्र स्थिति में हाथ बांधे खड़ा रहना पड़ता था। बहलोल लोदी ने अपने को अमीरों के बीच का अमीर ही माना था। सिकन्दर लोदी तुर्कों की तरह निरंकुशतापूर्वक शासन करता था। उद्दण्ड अमीरों को उसने अपनी शक्ति के बल पर दबाया। बहलोल लोदी अमीरों के सामने सिंहासन पर नहीं बैठता था। सिकन्दर लोदी पूरी गरिमा के साथ सिंहासन पर बैठता था। उसने अमीरों को यह आभास कराया

---

1. शेख रिज़कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 50, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 132,

   अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 39-40, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 262

कि वे सुल्तान के नौकर हैं । अमीरों को अपनी जागीर का हिसाब नियमित रूप से दीवाने विज़ारत में देना पड़ता था ।[1] अगर कोई अमीर किसी से घूस लेता, दुर्व्यवहार करता या जागीर में भ्रष्टाचार एवं कुप्रबन्ध रखता था तो उसे कठोर दण्ड दिया जाता था ।[2] भ्रष्टाचार के आरोप में जौनपुर का प्रान्तपति मुबारक खाँ लोदी दिल्ली का प्रान्तपति असगर तथा मुजहिदखाँ एवं शम्सखाँ को भ्रष्टाचार और दुराचार के कारण दण्ड दिया था ।[3]

सुल्तान ने अपने अमीरों को दरबार में तथा दरबार के बाहर सुल्तान के प्रति सम्मान प्रगट करने के लिये बाध्य किया । अमीरों अगर अशिष्ट और असम्मान पूर्ण व्यवहार करते थे तो वह सहन नहीं करता था । एक बार जौनपुर में चौगान खेलते खेलते कुछ अमीर आपस में सुल्तान के सामने लड़ने लगे । सुल्तान यह देखकर अत्यन्त क्रोधित हुआ । एक अमीर को अपने सामने कोड़े लगवाये ।[4] अन्य को दण्ड दिया । अमीरों ने बदला लेने के उद्देश्य से सिकन्दर को पदच्युत करके उसके भाई फतेहखाँ को बैठाने का षडयन्त्र रचा किन्तु षडयन्त्र का भेद समय से पहले खुल गया । सुल्तान ने 22 अमीरों को दरबार से निकाल दिया ।[5]

---

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 594, घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 27.
2. हबीब निज़ामी : वही, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृ0238.
3. ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, भाग 1, पृष्ठ 321, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 238.
4. ए0वी0 पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 218-219.
5. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली, सल्तनत, पृष्ठ 234-235.

कोई अमीर शाही फरमानों की उपेक्षा नहीं कर सकता था । अगर करता था तो उसे दण्ड दिया जाता था ।[1] उसने अमीरों के मध्य अपनी स्थिति को जनता के मस्तिष्क में श्रेष्ठ स्थापित करने के लिये कुछ नियम बनाये थे - जब किसी प्रान्त में कोई शाही फरमान भेजा जाता था तो उसके प्रान्तपति को उस फरमान को लेने के लिये अपने मुख्यालय से 6 मील आगे आकर फरमान को ग्रहण करना होता था । वहाँ एक विशेष रूप से मण्डप बनाया जाता था । शाही दूत उस पर बैठकर प्रान्तपति को फरमान देता था । प्रान्तपति बड़े आदर से उस फरमान को शिरोधार्य करता था । उस फ़रमान को मस्जिद के ऊपर मंच पर जाकर खड़े होकर पढ़ता था । फरमान पढ़ते समय सभी लोग सावधान होकर खड़े रहते थे और अनुशासनबद्ध तरीके से सुनते थे ।[2] इस प्रकार सिकन्दर को अपनी कठोर नीति द्वारा अफ़गान अमीरों पर उचित नियन्त्रण स्थापित करने में सफलता प्राप्त थी ।

सुल्तान सिकन्दर लोदी ने अमीरों पर इस कारण नियन्त्रण रखा ताकि अमीर संगठित होकर विद्रोह न कर दें अथवा सिंहासन पर किसी और को न बैठा दें । सुल्तान अमीरों की विद्रोही भावनाओं से परिचित था । अत: वह अमीरों

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 238-239.

2. घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 27,

हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 594,

इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 340 [अनुवादित अंश तारीख़-ए-दाउदी] ए0बी0 पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 219.

की वैयक्तिक प्रवृत्तियों तथा जातीय स्वतन्त्रता की भावना को नियन्त्रित करना चाहता था । इसी कारण सल्तनत और ताज की प्रतिष्ठा पुनः स्थापित हो सकी जबकि पूर्व सुल्तानों के समय यह प्रतिष्ठा गिर गयी थी ।[1] सिकन्दर ने अमीरों की जो उपेक्षा की उससे अमीर नाराज हो गये । अफगान अमीरों में कबायली परम्परा बहुत सुदृढ़ थी । वे बिरादरीवाद की भावना से ओत-प्रोत थे । उनमें सुल्तान से बराबरी करने जैसी प्रवृत्ति थी । वे किसी की निरंकुश सत्ता के क्षुद्र नौकर बनकर सन्तुष्ट नहीं हो सकते थे लेकिन जब तक सिकन्दर लोदी गद्दी पर रहा उनको कड़े नियन्त्रण में रहना पड़ा ।[2] वैसे आवश्यकता पड़ने पर सिकन्दर लोदी उदार भी हो जाता था और अत्यन्त प्रभावशाली अमीरों के स्वाभिमान की रक्षा भी करता था इसीलिए यह कहा जाता है कि सिकन्दर लोदी का राजत्व सिद्धान्त अफगान व तुर्की राजत्व सिद्धान्त का मिला जुला रूप था ।

मृत्यु :

निरन्तर सैनिक आक्रमण करने से उसका स्वास्थ्य गिर गया । 21 नवम्बर 1517 ई० को दिल्ली में इस संसार से हमेशा के लिये विदा हो गया । उसने 28 वर्ष 5 मास 20 दिन तक राज्य किया[3] पर तारीखे शाही के लेखक अहमद यादगार का कथन है कि "सुल्तान 21 दिसम्बर 1517 ई० को इस संसार से विदा हुआ ।

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 239.

2. ए०बी० पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 160.

3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 237.

एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 188.

उसने 28 वर्ष 5 माह 9 दिन तक राज्य किया ।[1] अफ़सानये शाहान के लेखक मुहम्मद कबीर बिन शेख़ इस्माईल का कथन है "कि उसने 35 वर्ष 9 मास 13 दिन 24 घड़ी तक राज्य किया ।"[2] सुल्तान सिकन्दर लोदी की यादगार में एक दोहा लिखा है-

"सात देशों का सुल्तान सिकन्दर अब नहीं है,
उसके समान अब कोई नहीं है ।"

इस सुल्तान का राज्य अट्ठाईस वर्ष पाँच मास था । यह संसार ईश्वर का है, वह सर्वशक्तिमान है ।[3] सुल्तान सिकन्दर लोदी का मक़बरा सफ्दरजंग की कब्र से करीब सवा मील दूर पत्थर के पुल के पास बना है ।[4]

.. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 594, ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 334, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 226, अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 108, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 359, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 81, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृ029।

1. अहमद यादगार : तारीख़े शाही, पृष्ठ 64, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 339.

2. मुहम्मद कबीर बिन शेख़ इस्माईल : अफ़सानये शाहाने, पृष्ठ 34,अ अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 379.

3. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 359.

4. अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 108.

<u>चरित्र एवं मूल्यांकन</u> :

सुल्तान सिकन्दर लोदी बहुत वीर, प्रतापी, सबका आदर करने वाला बादशाह था। उसके सरापर्दे के आसपास कोई पाप, कुकर्म एवं दुराचार से सम्बन्धित वस्तु अन्दर नहीं जा सकती थी। वासनाओं का दमन करता था। प्रजा के साथ न्यायपूर्वक का व्यवहार करता था। उसमें दया और परोपकार की भावना थी। वह जन-कल्याण का भी ध्यान रखता था। उसने न्याय प्रशासन को सुधारा।[1] दीन दुःखियों की फरियाद स्वयं सुनता और उनकी मदद करता था।[2]

सुल्तान सच्चरित्र, धार्मिक, विद्वान, गुणवान, उलमा, आलियों एवं पवित्र जीवन व्यतीत करने वालों की संगति करता था।[3] सुल्तान बाहरी शान-शौकत, दिखावा, तड़क-भड़क, पसन्द नहीं करता था न ही जुलूस लेकर चलता था, न ही चमकीले वस्त्र पहनता था।[4] बाजार से रोज वस्तुओं के मूल्य की सूची तथा विभिन्न जिलों के समाचार मंगवाता था। अगर कहीं कोई अप्रिय घटना होने की

---

1. ए.वी. पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 60.
2. अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 35, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 259.
   अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 110-12.
   इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 338.
   आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 237.
3. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 338.
   अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 110.
   सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 259.
4. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 338.
   अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 110.

सूचना मिलती थी तो तुरन्त उसकी रोकथाम करता था ।[1] राज्य की सभी घटनाओं तथा अमीरों की गतिविधियों की सूचना प्राप्त करने के लिये सुल्तान ने गुप्तचरों की नियुक्ति की थी । ये गुप्तचर राज्य की सभी छोटी से छोटी बातों की जानकारी सुल्तान को देते थे । कभी कभी सुल्तान स्वयं गुप्त रूप से राज के मामलों का प्रत्यक्ष और आन्तरिक ज्ञान प्राप्त करने के लिये रात को निकला करता था ।

सुल्तान न्यायप्रिय तो इतना अधिक था कि फरियादी की फरियाद तुरन्त सुनता था । अगर किसी दास को उसका स्वामी पूरा पैसा नहीं देता था और काम करवा लेता था । सुल्तान के पास दास फरियाद लेकर जाता था तो सुल्तान पूरा-पूरा हिसाब दिलवा देता था । कोई किसी से बेगार एवं बिना पैसा दिये सामान नहीं लेता था । दरिया खाँ नूहानी को दरबार में प्रातःकाल से बहुत अधिक रात तक आवेदनपत्र प्राप्त करने तथा शिकायतों की जाँच करने के लिये उपस्थित रहना पड़ता था ।[2]

----

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 338-341, अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 39, अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 39 अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 262-263, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 338, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 229-230.

2. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 102-11. अनुवादित अंश वाक़े आते मुश्ताक़ी, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 595, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ189, इलियट एवं डाउसन भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 338, अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 35-44, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत,

सुल्तान के महल में एक काज़ी और बारह उलमा प्रत्येक अवसर पर न्याय करने के लिये बैठे रहते थे। अगर सुल्तान को मार्ग में कोई फरियादी मिल जाता था, तुरन्त उसका न्याय करता था।

राज्य में चारों ओर इतनी अधिक समृद्धि थी कि चोर डाकू का नामो-निशान नहीं था। विद्रोही काफ़िर आज्ञाकारी बन गये थे। अगर कोई विरोध करता था तो या तो उसकी हत्या कर दी जाती थी या राज्य से उसे निकाल दिया जाता था।[1] हसनखाँ ने सुल्तान के राज्य की समृद्धि देखकर एक मसनवी की रचना की -

"यह बड़ा विचित्र काल है, सभी धन धान्य सम्पन्न हैं,
प्रत्येक घर में खुशी तथा सुख पाया जाता है।"[2]

सुल्तान सिकन्दर लोदी का शासनकाल अद्वितीय था। उस समय के लोग बड़े भाग्यशाली थे जिन्हें सुल्तान सिकन्दर लोदी जैसा महान, दयालु, उदार, न्याय प्रिय, वीर, साहसी, योद्धा, सच्चरित्र जीवन व्यतीत करने वाला शासक मिला।[3]

----

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 594-595, शेख़ रिज़्कुल्लाह: मुश्ताकी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 13, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 102-263.

2. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताकी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 81, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 159, 102.

3. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 356, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 190.

सुल्तान सिकन्दर लोदी के चरित्र का सबसे बड़ा दोष यह था कि वह अत्यधिक संकीर्ण और हिन्दुत्व का विरोधी था । न जाने कितने हिन्दुओं का इस कारण वध करवा दिया कि उन्होंने सुल्तान की आज्ञा का पालन नहीं किया था । इसके बावजूद सुल्तान सिकन्दर लोदी ने ऐश्वर्य और सफलता से 29 वर्ष शासन किया था । वह लोदी वंश का सर्वश्रेष्ठ शासक था । अपने आपको अपने पिता बहलोल तथा अपने पुत्र इब्राहीम से अधिक श्रेष्ठ सिद्ध किया ।[1] सिकन्दर ने आगरा शहर बसाया था जिसका शाही वैभव 150 वर्षों तक लोगों की आँखों में चकाचौंध पैदा कर दिल्ली से प्रतिस्पर्धा करता रहा ।[2]

...

---

1. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 78, डॉ० ईश्वरी प्रसाद : ए शार्ट हिस्ट्री आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृष्ठ 131, अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ द लोदी सुल्तान्स आफ देलही एण्ड आगरा, पृष्ठ 131, द देलही सल्तनत, भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 147.

2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 341-342. के०एम० पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 128, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी : पृष्ठ 40, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 263.

सुल्तान इब्राहीम लोदी

29 नवम्बर 1517 ई0 को जब सुल्तान सिकन्दर लोदी की मृत्यु आगरा में हो गयी तब उत्तराधिकार के प्रश्न को लेकर अमीरों के बीच एक समस्या उत्पन्न हो गयी। समस्या यह थी कि उस समय उसके दो पुत्र जो एक ही माता से उत्पन्न थे गद्दी पर बैठने के योग्य थे - पहला इब्राहीम लोदी एवं दूसरा जलालखाँ। तभी सभी अमीरों और राज्य के उच्च पदाधिकारियों की सहमति से राज्य का विभाजन दोनों भाइयों के मध्य इस प्रकार किया गया कि आपस में झगड़ा न हो। "दिल्ली का राज्य सुल्तान इब्राहीम को और जौनपुर का राज्य जलालखाँ को दिया गया।"[1] इब्राहीम को दिल्ली का राज्य इस कारण दिया गया क्योंकि वह अपनी वीरता, बुद्धिमत्ता, सदाचारिता के लिये प्रसिद्ध था तथा सुल्तान सिकन्दर लोदी का सबसे बड़ा बेटा था। 24 दिसम्बर 1517 ई0 को इब्राहीम लोदी दिल्ली के सिंहासन पर बैठा और जलालखाँ जिसने जलालुद्दीन की उपाधि प्राप्त की वह जौनपुर के परगनों के अमीरों और जागीरदारों को लेकर जौनपुर चला गया।[2] अभी जलालखाँ जौनपुर में

---

1. शेख रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 91, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 159, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 6, अहमद यादगार: तारीखे शाही, पृष्ठ 65-66, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 340, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 95, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 294, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृ0 191.

2. अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 85, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 294, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 6, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत,...

अपनी सत्ता ठीक से स्थापित भी नहीं कर पाया था कि इब्राहीम को उसके मुख्य अमीरों में फतेहखाँ बिन आज़म हुमायूँ शिरवानी, खानेजहाँ लोहानी, रापरी का हाकिम खाँ, वजीरों, वकीलों ने उकसाया कि "राज्य के कार्य में किसी को साझीदार बनाना ठीक नहीं है ।" राज्य साझे से नहीं चलाना चाहिए ।" इससे सुल्तान भड़क गया उसने अमीरों की सहमति से जलालखाँ को दिल्ली बुलाने के लिए हैबतखाँ करगदन अन्दाज को एक फरमान देकर भेजा । फरमान में लिखा था कि एक आवश्यक बात में उससे राय लेनी है इसलिये तुरन्त दिल्ली आ जाये । हैबतखाँ ने बड़ी ही धूर्तता एवं चालाकी से बात की जिसे जलालखाँ जान गया और वह न आया । इसके बाद इब्राहीम लोदी ने एक प्रतिनिधिमण्डल शेखज़ादा, सुल्तान मुहम्मद, मलिक इस्माईल, काज़ी हमीउद्दीन को जलालखाँ को वापस लाने के लिये भेजा पर जलालखाँ नहीं आया । तब इब्राहीम ने एक चतुर चाल चली । जलालखाँ के अमीरों को अपनी ओर मिलाने के लिये उन्हें विशेष खिलअत, घोड़े, इनाम दिये, जलालखाँ के अमीरों ने जलाल का साथ देना बन्द करके इब्राहीम के साथ हो गये । 29 दिसम्बर 1517 ई० को इब्राहीम लोदी एक रत्नजड़ित सिंहासन पर बैठा और एक भव्य दरबार लगाया । दरबार के सेवकों, राज्य के पदाधिकारियों को, सेना को

... भाग 1, पृष्ठ 596-597, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 341, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 232, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 239-240, अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 66, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 340, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 191.

उनकी श्रेणी के अनुसार खिलअत, तलवार, हाथी, उपाधि, जागीर प्रदान की ।[1]

उसने अपने नाम का सिक्का चलवाया और अपने नाम का खुत्बा पढ़वाया।[2] सैनिकों की भर्ती की, तोपखाने की व्यवस्था की, आस-पास के परगनों के राजाओं को प्रोत्साहन दिया । जब उसे मालूम हुआ कि अब अमीर उसका साथ नहीं देंगे तब जलालखाँ भागकर कालपी चला गया । अपने सहायकों से राय लेकर जौनपुर की विलायत त्याग दी । कालपी को अपने अधिकार में कर लिया और आज़म हुमायूँ

---

1. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 242-243, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 232-233, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 597, अब्दुल्लाह : तारीखे़ दाउदी, पृष्ठ 86, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 294-295, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 240-241, अहमद यादगार : तारीखे़ शाही, पृष्ठ 68-69, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 341, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 191.

2. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 343-344, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 234-235, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 597-598, अब्दुल्लाह: तारीखे़ दाउदी, पृष्ठ 87, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 295.

शिरवानी के पास अपना एक विश्वासपात्र सेवक को एक फरमान देकर भेजा । उसमें लिखा था कि "आप मेरे पिता तथा चाचा के स्थान पर हैं । इब्राहीम ने मुझे मेरे पिता के तर्के में से थोड़ा सा राज्य दिया है । अब वह भी छीनना चाहता है । आज़म हुमायूँ इस समय इब्राहीम से नाराज़ था वह जलालुद्दीन से मिल गया और हाकिम पर चढ़ाई की पर उसे सफलता नहीं मिली तब लखनऊ गया । लखनऊ जाकर इब्राहीम को सारा वृत्तान्त बताया तब इब्राहीम ने अपने अन्य तीनों भाई इस्माइल खाँ, हुसेनखाँ, शेख़ दौलतखाँ को हांसी के किले में बन्द करवा दिया ताकि वह जलालुद्दीन का साथ न दे सके और स्वयं 5 मई 1517 ई० को जौनपुर की ओर अग्रसर हुआ ।[1] इब्राहीम भोगाँव पहुँचा तभी आजम हुमायूँ अपने पुत्रों सहित जलालुद्दीन का साथ छोड़कर इब्राहीम से आ मिला ।[2]

---

1. ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 344, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 234, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 598, शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 91, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 159, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 241, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 87-88, अनुवादक: सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 295-96. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 191, अहमद यादगार : तारीख़े शाही पृष्ठ 69 अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 341.

2. अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 87-88, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 296, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 598, अहमद यादगार : तारीख़े शाही, पृष्ठ 70-71, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत,

इब्राहीम की कालपी विजय :

जलालुद्दीन कालपी को अपने कुछ सम्बन्धियों के सहारे छोड़कर आगरा गया तभी इब्राहीम की सेना ने कालपी पर अपना अधिकार कर लिया । जलालुद्दीन आगरा में इब्राहीम की सेना का मुकाबला नहीं कर सका तथा भागकर ग्वालियर के राजा के पास शरण ली ।[1]

जलालुद्दीन की हत्या :

सुल्तान इब्राहीम लोदी ने जलालुद्दीन को बन्दी बनाने के लिये आगरा के हाकिम आज़म हुमायूँ शिरवानी को भेजा । अपने पकड़े जाने की खबर पाकर जलालुद्दीन मालवा के सुल्तान महमूद के पास भाग गया । वहाँ से गठाकटंगा गया । वहाँ के गँवारों ने बन्दी बनाकर सुल्तान इब्राहीम के पास भेज दिया । इब्राहीम

1.. भाग 1, पृष्ठ 342, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 241, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 344, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 234.

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 598, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 345-346, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 234-236, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 88 अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 296-297, अहमद यादगार : तारीखे शाही पृष्ठ 72-73, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 343-344, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 241.

ने उसे हाँसी भेजा पर मार्ग में उसकी हत्या कर दी गयी ।[1]

ग्वालियर की विजय :

सुल्तान इब्राहीम लोदी के पूर्व के सुल्तानों ने ग्वालियर को जीतने का कई बार प्रयास किया । इब्राहीम की भी इच्छा थी कि वह ग्वालियर को जीते । ग्वालियर पर आक्रमण करने का मुख्य कारण यह था कि इस समय ग्वालियर के राजा विक्रमाजीत ने जलालखाँ को शरण दी थी । इब्राहीम ग्वालियर की ओर अग्रसर हुआ । दोनों सेना के बीच घमासान युद्ध हुआ । इब्राहीम ने ग्वालियर पर अधिकार कर लिया[2] परन्तु इब्राहीम ने अपनी उदारता से विक्रमाजीत को शम्साबाद की जागीर दे दी । ग्वालियर की विजय करके इब्राहीम दिल्ली आया ।

---

1. अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 89, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 297, अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 74-75, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 343, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 192, शेख रिज़कुल्लाह मुश्ताकी : वाके आते मुश्ताकी, पृष्ठ 91, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 159, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 348, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 237.

2. अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 74, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 297, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 239-241, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 347-348, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 236-237, अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 89-90, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन ...

मेवाड़ पर आक्रमण :

इब्राहीम अपने पिता के स्वप्न को पूरा करना चाहता था । उसने राजस्थान के प्रमुख राज्य मेवाड़ पर आक्रमण किया । इस समय मेवाड़ पर राजा संग्रामसिंह (राणा सांगा) का राज्य था । बिना मेवाड़ को जीते सुल्तान मध्य भारत में अपना प्रभुत्व नहीं स्थापित कर सकता था । इब्राहीम लोदी ने मियाँ मक्खन, उसके साथी हुसैनखाँ, जरवख्श, मियाँ खानेखाना करमानी, मियाँ यासूफ आदि सेनानायकों के साथ एक विशाल सेना राणा सांगा को पराजित करने के लिये भेजी । जैसे ही सेना मेवाड़ की सीमा पर पहुँची राणा ने उन्हें मेवाड़ के वर्तमान जिले असिन्द में स्थित बकरौल के निकट 1517-1518 ई० में युद्ध में पराजित किया। मियाँ और उसके सैनिक घबराकर भाग गये । 1518-1519 ई० को इब्राहीम ने पुन: मेवाड़ पर आक्रमण किया पर पराजित हुआ । इस प्रकार इब्राहीम के समय दिल्ली और मेवाड़ से निरन्तर संघर्ष चलता रहा । इसका फायदा उठाकर राणा ने बयाना तक अपने राज्य का विस्तार कर लिया ।[1]

... भारत, भाग 1, पृष्ठ 297-298, अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 74-75, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 243, के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 205-06. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 192.

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 240.

   एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, 192.

   के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 209-211.

<u>अमीरों का विद्रोह</u> :

सुल्तान इब्राहीम लोदी के शासनकाल की मुख्य घटना सुल्तान और उसके अफगान सरदारों के मध्य संघर्ष था। जलालखाँ के विद्रोह का दमन करने तथा निरंकुश शासन स्थापित करने में उसे जो सफलता मिली उससे इब्राहीम का अभिमान बढ़ गया। अपने पिता के अमीरों के साथ दुर्व्यवहार करने लगा। अपने उद्दण्ड स्वभाव होने के कारण वह अपने अमीरों को कोई मान सम्मान नहीं देता था। तथा न ही उस पर विश्वास करता था। बहलोल लोदी ने जितना दिया। बहलोल लोदी के दरबार में जो अमीर सुल्तान के साथ बराबर कालीन पर बैठते थे। इब्राहीम लोदी के दरबार में नम्र भाव से हाथ जोड़े खड़े रहते थे क्योंकि इब्राहीम का कहना था कि राजा का कोई सगा सम्बन्धी नहीं होता है। सभी लोग राजा की प्रजा हैं। सुल्तान सभी अधिकारों का सूत्रपात है।[1] इब्राहीम लोदी ने अमीरों को बराबर का दर्जा नहीं दिया, अमीर उससे घृणा करने लगे।[2]

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 241, घनश्याम दत्त शर्मा: मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 27, अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 75, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 343, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 7, के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 206-207.

2. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबकाते अकबरी, पृष्ठ 194, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 244.

मियाँ भुआ की हत्या :

मियाँ भुआ सुल्तान इब्राहीम लोदी का सबसे वयोवृद्ध एवं प्रतिष्ठित अमीर था । सिकन्दर लोदी ने उसे अपने शासनकाल में अत्यन्त मान सम्मान दिया था । वह न्यायपालिका का अध्यक्ष था पर अब वृद्धावस्था होने के कारण कार्य ठीक से नहीं कर पाता था । इब्राहीम ने मियाँ भुआ से उसके अधिकार, जागीर, सम्मानसूचक चिह्न छीनकर उसके पुत्र को दे दिया । उसे बन्दीगृह में डाल दिया । कुछ समय पश्चात् उसकी हत्या करवा दी ।[1] सुल्तान ने मियाँ भुआ की हत्या इस कारण करवायी कि एक समय की बात है कि राजा भान का पुत्र सुल्तान के पास आया और सुल्तान से कहा कि, "उसे खज़ाने से कई लाख रूपये दे दिये जायें" पर मियाँ भुआ ने आगे बढ़कर कहा कि "बादशाह के खज़ाने का धन का उपयोग किसी अच्छे काम के लिये करना चाहिये । व्यर्थ में धन व्यय नहीं करना चाहिये । अगर बादशाह मुझे इजाजत दे दें तो मैं धन राज्य के प्रबन्ध में खर्च करूँ ।" सुल्तान इब्राहीम यह सुनकर बड़ा क्रोधित हुआ और आदेश दिया कि मियाँ भुआ को बन्दी बना लिया जाये।जो अमीर मियाँ भुआ से ईर्ष्या करते थे उन्होंने सुल्तान को राय दी कि

---

1. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 91, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 159, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 599, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी पृष्ठ 90, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 298, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 242, अहमद यादगार : तारीख़े शाही, पृष्ठ 75-76, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 343-344, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 193, के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 207.

एक तहखाना बनाकर उसमें बारूद भरकर उसमें मियाँ भुआँ को कैद किया तथा उसी में आग लगा दी । मियाँ भुआँ उसी में जलकर मर गया । सुल्तान राजाभान के प्रति बड़ी कृपादृष्टि रखता था । इब्राहीम को यह पसन्द नहीं था कि अमीर उसके कार्यों में हस्तक्षेप करें ।[1] सुल्तान इब्राहीम के इस व्यवहार से अन्य अमीरों में गहरा असन्तोष उत्पन्न होने लगा । पुराने अमीर सुल्तान से घृणा करने लगे । अमीरों ने विद्रोह करना प्रारम्भ कर दिया ।[2]

आज़म हुमायूँ की हत्या एवं कड़ा में विद्रोह :

आज़म हुमायूँ सरवानी जो ग्वालियर के दुर्ग का घेरा डाले हुये था, ग्वालियर को विजय ही करने वाला था कि इब्राहीम ने वापस आगरा बुलाकर बन्दीगृह में

---

1. मुहम्मद कबीर बिन शेख़ इस्माईल : अफ़सानये शाहाने, पृष्ठ 45 अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 386-387, अहमद यादगार : तारीख़े शाही, पृष्ठ 75, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 343,

   सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 444.

   इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 12-13.

2. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ़ द लोदी सुल्तान आफ देलही एण्ड आगरा, पृष्ठ 160-163.

डलवा दिया । बन्दीगृह में उसकी मृत्यु हो गयी ।[1] आज़म हुमायूँ के पुत्र इस्लाम खाँ को जब यह ज्ञात हुआ तो उसने कड़ा मनिकपुर में विद्रोह कर दिया और अपने पिता की सारी सम्पत्ति पर अपना अधिकार कर लिया था ।[2]

इस्लाम खाँ का विद्रोह :

इब्राहीम ने अहमदखाँ, हुसेन फ़रमुली, अली खानेखाना फ़रमुली, मसनदी अली, बुखारी खाँ फ़रमुली, दिलावरखाँ, तारगखानी, कुतुबखाँ, भीखनखाँ नुहानी, सिकन्दर खाँ आदि अमीरों के नेतृत्व में एक विशाल सेना इस्लामखाँ का दमन करने के लिये भेजी, सुल्तान इब्राहीम की सेना पराजित हुयी[3] तब खासाखेल इकबाल खाँ ने सुल्तान

----

1. अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 98, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 303, अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 85-86, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 348, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 241-242, शेख़ रिज़कुल्लाह मुश्ताकी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 91, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 159.

2. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 211-212.

3. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 600, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 242.

से कहा कि यदि सुल्तान इब्राहीम आज़म हुमायूँ शिरवानी को छोड़ देंगे तो वे आगे कुछ नहीं करेगा किन्तु सुल्तान ने कहना नहीं माना बल्कि सुल्तान ने बिहार के राज्यपाल दरियाखाँ नूहानी, नसीरखाँ नूहानी और शेख़ज़ादा फरमुली को विद्रोहियों का दमन करने के लिये भेजा। दोनों के बीच एक रक्तरंजित युद्ध हुआ जिसमें इब्राहीम विजयी हुआ। इस्लामखाँ रणभूमि में मारा गया।[1]

इस्लामखाँ की धन सम्पत्ति पर इब्राहीम ने अपना अधिकार कर लिया। इस युद्ध में लाशों के ढेर लग गये। पृथ्वी पर इतने सिर कटे गिरे थे कि उन्हें गिनना असम्भव था। मैदान में खून की नदियाँ बहने लगीं। इसके बाद दीर्घकाल तक जब कभी हिन्दुस्तान में कोई युद्ध हुआ तो लोग कहते हैं कि किसी भी युद्ध से इसकी तुलना नहीं की जा सकती है। इस युद्ध में भाई ने भाई, पिता ने पुत्र के विरुद्ध युद्ध किया।[2] इब्राहीम ने सम्मदखाँ लोदी को बन्दी बना लिया। चन्देरी

----

1. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 600, शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 92, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 160, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 242, ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 249-250, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 238, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 194, अहमद यादगार : तारीख़े शाही, पृष्ठ 76-77, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 344.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 242.
   एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 194.

के राज्यपाल हुसेन खाँ फ़रमुली का वध करवा दिया । इससे अमीर और विरोधी हो गये ।[1] चन्देरी के शेख़ हसन फ़रमूली का इब्राहीम ने वध करवा दिया । इससे अमीरों में यह विश्वास हो गया कि जब तक सुल्तान सिंहासन पर बैठा है । हमारा जीवन और सम्पत्ति खतरे में है । अब सुल्तान के अमीरों के पास अपनी आत्म-रक्षा के लिए विद्रोह के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं था । विद्रोह करना प्रारम्भ किया ।

बिहार में विद्रोह :

विद्रोहियों के नेता दरियाखाँ लोदी की मृत्यु हो गयी थी । उसका पुत्र बहादुरखाँ बिहार का जागीरदार था । उसने मुहम्मदशाह के नाम से अपने को सुल्तान घोषित कर बिहार से सम्भल तक के सारे प्रदेश पर अपना अधिकार कर लिया। सुल्तान ने मुहम्मदशाह को पराजित कर बन्दीगृह में डाल दिया ।[2]

---

1. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी, बाबर, पृष्ठ 444, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव: दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 242-243, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 194-195.

2. अब्दुल्लाह : तारीख़े दाउदी, पृष्ठ 91-92, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 299, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 194, शेख़ रिज़कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 125x28, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 168-170.

   ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 351, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 242-243.

<u>बहादुरखाँ का विद्रोह</u> :

लाहौर के राज्यपाल दौलतखाँ लोदी का एक पुत्र बहादुरखाँ इस समय सुल्तान के पास आया था । यह जानकर वह अत्यन्त शंकित हुआ कि सुल्तान राज्य के सभी प्रतिष्ठित अमीरों के विरुद्ध जाँच पड़ताल कर रहे हैं अपने को बन्दीगृह में डाल दिये जाने के भय से अपने पिता दौलतखाँ के पास गया[1] और सारी गतिविधियों से अवगत कराया, कि यदि सुल्तान इब्राहीम बिहार के विद्रोह को दबाने में सफल हुआ तो वह आपको भी लाहौर से निकाल देगा । इसी भय से दौलतखाँ ने अपने आपको स्वतन्त्र घोषित कर दिया । दौलतखाँ ने पंजाब के सभी अमीरों और जागीरदारों को अपनी ओर मिलाया, ताकि इब्राहीम लोदी के विरुद्ध संगठित होकर आक्रमण कर सके ।[2] तभी बहादुरखाँ ने संभल पर अधिकार कर लिया और अपनी उपाधि "सुल्तान मुहम्मद" रखी । अपने नाम का सिक्का चलवाया और खुतबा पढ़वाया ।[3] इब्राहीम का विश्वास अब अमीरों से हटता गया । उसने अपने पिता के 23 अमीर जो रक्षक थे, बिना कारण के मरवा दिया और उसके परिवारों को भी नष्ट कर दिया । कुछ अमीरों को जिन्दा जलवा दिया, कुछ अमीरों को दीवारों से नीचे लटकवा दिया ।[4] सुल्तान इब्राहीम लोदी के इस व्यवहार से नाराज़ होकर दिलावर खाँ स्वयं बाबर

---

1. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 193.
2. वही, पृष्ठ 193-194.
3. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 351, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 238-239.
4. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 21.

से मिलने काबुल गया[1] और बाबर से मिला । इब्राहीम जैसा अमीरों के साथ व्यवहार करता था वह सब बाबर को बताया तब बाबर ने कहा, "तुमने 30 साल तक सुल्तान इब्राहीम, उसके पिता और दादा का नमक खाया है, तुम्हारे पिता और दादा 20 साल तक ऊँचे पद पर थे । ऐसी क्या बात हो गयी है कि तुमने एकदम से उसका साथ छोड़ दिया और इस दरबार में आ गये हो ?" तब दिलावरखाँ ने उत्तर दिया, "कि मेरे पिता और दादा ने 40 साल तक अपने जीवन को खतरे में डालकर राज्य की रक्षा की और राज्य को सुदृढ़ बनाया, किन्तु सुल्तान इब्राहीम ने अपने पिता के सरदारों के साथ बड़ा गलत व्यवहार किया है । 23 सरदारों को जो उसके राज्य के रक्षक थे बिना कारण ही मरवा डाला है और उनके परिवार वालों को नष्ट कर दिया है । कुछ अमीरों को दीवार से नीचे लटकाया है और कुछ को जिन्दा जलवा दिया है इसी कारण जब सरदारों ने अपने आपको सुरक्षित नहीं पाया तो मुझे आपके पास भेजा है ताकि आप भारतवर्ष पर आक्रमण करें और हमें इन अत्याचारों से बचायें । हम सब आपकी आज्ञा का पालन करने को तैयार हैं । वे सब अमीर उत्सुकता से आपके आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं"।[2]

बाबर स्वयं भारतवर्ष को जीतने का इच्छुक था, प्रस्ताव को स्वीकार किया[3] फिर दिलावर खाँ को बाबर ने एक एक घोड़ा और खिलअत प्रदान की ।[4] 16 दिसम्बर 1525 को बाबर काबुल से हिन्दुस्तान की ओर रवाना हुआ । बाबर ने

---

1. अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 87, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 349.
2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 21.
3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 243.
4. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, पृष्ठ 22.

पेशावर लूटा और पंजाब पर अपना अधिकार किया । इस बात की सूचना जब इब्राहीम लोदी को मिली तो वह चकित रह गया और अपने अमीरों के साथ जो दुर्व्यवहार किया था उसका पश्चात्ताप करने लगा । इब्राहीम ने दौलतखाँ को लिखा कि "तुमने मेरे पिता की दयालुता से वर्तमान पद प्राप्त किया है, मेरे पैतृक राज्य में तुम मुगलों को क्यों ले आये हो और पंजाब तुमने बाबर को क्यों दे दिया ?" "मैं अब तुम्हारे साथ सन्धि करना चाहता हूँ, तुम्हें और तुम्हारे बच्चों को कभी तंग नहीं करूँगा । मैं कुरान की कसम खाता हूँ, सोचो और अपने इस गलत विचार को छोड़ो ।" तब दौलतखाँ लोदी ने यह उत्तर दिया कि, "यह सत्य है कि मुझे सुल्तान सिकन्दर ने धूल से ऊपर उठाया था । मैंने भी उसकी सेवा की क्योंकि सुल्तान सिकन्दर सबको खुश रखता था । उसने कभी मुझे मारने की कोशिश नहीं की, पर तुमने अपने पिता के कई नौकरों को जो राज्य के स्तम्भ थे, नष्ट कर दिया है और जनता की तरफ से तुमने अपना विश्वास खो दिया है मुगल तुम्हारे इस खराब व्यवहार के कारण यहाँ आये हैं ।"[1] बाबर ने धीरे धीरे करके सारा पंजाब, सरहिन्द, हिसार फ़िरोजा तक के प्रदेश पर अपना अधिकार कर दिल्ली की ओर बढ़ा । 12 अप्रैल 1526 ई0 को पानीपत नामक स्थान पर पहुँचा, एक हफ्ते तक दोनों सेनाएँ आमने सामने खड़ी रहीं, 21 अप्रैल, 1526 ई0 को प्रातः काल शुबह 6 बजे बाबर और इब्राहीम लोदी के बीच पानीपत के मैदान में युद्ध आरम्भ हुआ । दोपहर तक अफ़गान सेना की घोर पराजय हुयी । इब्राहीम वीर गति को प्राप्त हुआ । हजारों अफ़गान सैनिकों के बीच इब्राहीम के शव ने पानीपत

----

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 22-23.
   हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 601,
   एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 195.

के मैदान को ढ़ँक लिया ।[1] अब्दुल्लाह ने अपनी कृति तारीखे दाउदी में लिखा है कि "कुछ लोगों का कथन है कि सुल्तान इब्राहीम को एक उजाड़ स्थान पर पहचाना गया । वहाँ वह अपने कुछ विश्वासपात्रों सहित मरा हुआ पड़ा था । उसका सिर काटकर बाबर बादशाह के समक्ष लाया गया ।" एक व्यक्ति जो इस युद्ध में उपस्थित था उसने इसका पूर्ण उल्लेख हिन्दी भाषा में इन शेरों में किया है :-

"नौ से अमर हता बत्तीसा,
पानीपत में भारत दीसा ।
सातवीं रजब आपत डारा,
बाबर जीता, बराहम हारा ।।"[2]

तारीखे खानेजहानी के लेखक न्यायत उल्लाह का कथन है कि "सुल्तान इब्राहीम के अतिरिक्त भारत का कोई भी सुल्तान रणभूमि में नहीं मारा गया ।[3]

---

1. रसब्रुक विलियम : ऐन एम्पायर बिल्डर आफ दी सिक्सटींथ सेन्चुरी, पृष्ठ 128-138, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 350-447, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 25-26, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 352, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: पृष्ठ 239, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 243, के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ़ द सल्तनत, पृष्ठ 222-226

2. अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 103, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी, बाबर, पृष्ठ 447.

3. न्यायत उल्लाह : तारीखे खाने जहानी, भाग 1, पृष्ठ 259.

तारीखे शाही के लेखक अहमद यादगार का कथन है कि बाबर उस समय अत्यन्त प्रभावित हुआ जब उसने मृतकों के बीच इब्राहीम का शव देखा, इब्राहीम के सिर को भूमि से उठाकर कहा कि "तुम्हारी वीरता का सम्मान हो" दिलावर खाँ, अमीरखाँ को इब्राहीम के शव को नहलाने का आदेश दिया । कीमखाब के कपड़े मंगवाये, उसे नहलवाकर कपड़े पहनाकर उसी स्थान पर सम्मानपूर्वक दफनवा दिया जिस स्थान पर वह मरा था । उसकी आत्मा की शान्ति के लिये मिठाई बँटवायी ।[1]

इब्राहीम लोदी ने 8 वर्ष कुछ मास तक राज्य किया । इब्राहीम लोदी की मृत्यु से न केवल लोदी वंश की सत्ता का अन्त हुआ, बल्कि दिल्ली सल्तनत का इतिहास भी समाप्त हो गया । अफ़गान लोग जिन्होंने 74 वर्ष । मास 4 दिन तक निरंकुश शासन किया था वे अब अपना निवास स्थान, धन-सम्पत्ति को छोड़कर बंगाल चले गये, बाकी बचे लोग इधर-उधर बिखर गये । हिन्दुस्तान का राज्य लोदी अफ़गानों के हाथ से निकलकर इस भाग्यशाली मुगल वंश को प्राप्त हो गया ।[2] बाबर

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 25-26.

2. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 351-352.

अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 239.

ने इब्राहीम के डेरे से जो सामान मिला उसे लेकर दिल्ली आ गया और दिल्ली आकर रिक्त राजसिंहासन पर बैठ गया ।[1]

<u>चरित्र एवं मूल्यांकन</u> :

सुल्तान इब्राहीम लोदी एक योग्य चरित्रवान, बुद्धिमान, वीर[2], निर्भीक, साहसी, योद्धा एवं सफल सेनानायक था । व्यक्तिगत, बहादुरी में अपने पूर्वजों से आगे था । 1520 ई० में ग्वालियर जीता, आजमखाँ लोदी को पराजित किया ।[3] जब पानीपत के मैदान में इब्राहीम की सेना अधिक होते हुये भी बाबर की सेना से हार रहीं थी तब महमूदखाँ ने सुल्तान से कहा कि "हमारे इतने सैनिक मारे जा रहे हैं । हमारी स्थिति बड़ी भयंकर एवं निराशाजनक है । आप युद्ध-स्थल से चले जायें क्योंकि यदि सुल्तान सुरक्षित रहेगा तो और सेना एकत्रित की जा सकती है ।" पर सुल्तान बड़ा बहादुर था । उसने कहा कि "महमूदखाँ ! राजाओं के लिये युद्ध से भागना बड़ी लज्जास्पद बात है । मेरे सरदार, साथी, शुभचिन्तक मित्र सब मारे गये हैं । यह अच्छा होगा कि मैं भी अपने मित्रों के समान धूल में मिल जाऊँ" यह

---

1. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 252, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 239, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी : पृष्ठ 104, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 304, इलियट एवं डाउसन: भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 27.
2. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ द लोदी सुल्तान्स आफ देलही एण्ड आगरा, पृष्ठ 193.
3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 243, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 195-196, अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 194.

कहकर युद्ध-स्थल पर गया जहाँ युद्ध करते करते वीरगति को प्राप्त हुआ ।[1] वह ईमानदार, परिश्रमी तथा अपनी प्रजा को चाहने वाला था । शासन का कामकाज बड़े उत्साह से किया करता था । न्याय-व्यवस्था बड़ी उच्चकोटि की थी ।[2] वह अपने पिता और बाबा की भाँति कट्टर धार्मिक व्यक्ति था ।[3] इब्राहीम लोदी के शासनकाल की सबसे मुख्य बात यह थी कि उसके शासनकाल में अनाज तथा अन्य सभी वस्तुयें बहुत सस्ती थीं ।[4]

पानीपत के युद्ध में सुल्तान इब्राहीम लोदी की असफलता का मुख्य कारण उसकी खराब सैन्य-व्यवस्था थी ।[5] सैनिकों पर ज्यादा धन खर्च नहीं करता था । इसी कारण उसकी समस्त सेना उसके बुरे कार्यों से दु:खी थी ।[6] उसकी पराजय का दूसरा मुख्य कारण अमीरों का व्यवहार था । अफ़गान होते हुये भी सुल्तान अफ़गान

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 25-26.
2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 243.
3. अब्दुल हलीम : द लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 193, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 243.
4. अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 104-105, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 304-305.
5. अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 194.
6. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 24-25, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 602.

जाति के लोगों का चरित्र एवं उनकी भावनाओं को नहीं समझ सका । अपने पिता और पितामह की नीति का अनुसरण नहीं किया । अमीरों पर कठोर नियन्त्रण रखा जबकि ये अमीर कट्टर लोकतन्त्रवादी थे । ये सुल्तान को केवल अमीरों का अमीर समझते थे । अगर अमीर सुल्तान की आज्ञा का पालन नहीं करते थे तो दण्ड पाते थे । इससे अमीर नाराज हो गये । विद्रोह करने लगे जिसका परिणाम यह हुआ कि सुल्तान ने अपना राज्य खो दिया और अपनी जान से भी हाथ धोना पड़ा ।[1]

...

---

1. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 447.

   अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देलही एण्ड आगरा, पृष्ठ 194.

   एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 196.

बाबर द्वारा हिन्दुस्तान की राजनीतिक दशा का वर्णन

जिस समय बाबर ने भारतवर्ष पर आक्रमण किया उस समय दिल्ली सल्तनत का वैभव नष्ट हो गया था । साम्राज्य बहुत छोटा हो गया था, बिहार स्वतन्त्र हो गया । पंजाब का सूबेदार दौलतखाँ लोदी एक स्वतन्त्र शासक की भाँति व्यवहार कर रहा था । बंगाल, बिहार, गुजरात, गोलकुण्डा, बीदर स्वतन्त्र मुसलमानी राज्य बन गये थे पर इनमें किसी राज्य की स्थिति दृढ़ और व्यवस्थित नहीं थी । राजस्थान में राणा संग्राम सिंह के नेतृत्व में राजपूतों की शक्ति अवश्य श्रेष्ठ थी । दक्षिण भारत में कृष्णदेव राय के नेतृत्व में विजय नगर एक शक्तिशाली और संगठित राज्य बना हुआ था । उड़ीसा में हिन्दू राज्य था । अपने अपने क्षेत्र में शक्तिशाली होते हुये भी हिन्दू राज्य भारत को राजनीतिक एकता और स्थिरता प्रदान करने में सफल सिद्ध नहीं हुये ।[1]

जौनपुर का राज्य सुल्तान हुसैन शर्की के पास था । बाद में जौनपुर पर अफगानों ने अपना अधिकार कर लिया । तैमूर के आक्रमण के बाद पहले सुल्तान बहलोल लोदी ने फिर सिकन्दर लोदी ने जौनपुर हुसैन शर्की से छीन लिया । इसके अलावा अनेक छोटे छोटे राजा तथा रईस लोग प्रदेशों की देखभाल करते थे पर वास्तविक सत्ता इन निम्न 5 मुसलमान सुल्तान तथा 2 हिन्दू शासकों के अधिकार में थी ।[2]

---

1. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 271-272, बाबर : बाबरनामा, अनुवादक : श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 344.

2. बाबर : तुज़्क-ए बाबरी, अनुवादक : इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 195, बाबर : बाबरनामा, अनुवादक : श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 342.

पहला शासक जौनपुर का हुसैन शर्की था जिसका विवरण पिछले पृष्ठ पर दिया जा चुका है। दूसरा शासक गुजरात का सुल्तान मोहम्मद मुजफ्फर था, सुल्तान मोहम्मद बड़ा विद्वान था उसे हदीश पढ़ने का बड़ा शौक था। वह अपना अधिकांश समय कुरान लिखने में व्यतीत करता था। इस जाति को लोग तैग कहते थे। इनके पूर्वज सुल्तान फ़िरोज और उसके रिश्तेदारों के जामबरदार थे। सुल्तान इब्राहीम की पराजय से कुछ दिन पहले ही इसकी मृत्यु हो गयी थी।[1]

तीसरा राज्य दक्षिण में बहमानियों का था परन्तु इस समय दक्षिण के राज्य के विभिन्न प्रान्तों पर शक्तिशाली सरदारों ने अपना अधिकार कर लिया था। इस कारण सुल्तान की शक्ति कमजोर हो गयी थी। उसके हाथ में न कोई सत्ता थी और न ही शक्ति थी। जब सुल्तान को किसी चीज की जरूरत होती थी तो उसे अमीरों के आगे प्रार्थना करनी पड़ती थी।[2]

चौथा राज्य मालवा का था इसे मांडू भी कहा जाता है। सुल्तान महमूद मालवा में राज्य करता था। यह राजवंश खिलजी कहलाता था। काफिर राणा सांगा ने महमूद को पराजित कर उसके कई प्रान्तों पर अपना अधिकार कर लिया था।

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 195 (उद्धरित अंश, तुज़क-ए बाबरी के) बाबर : बाबरनामा, अनुवादक श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 342.

2. बाबर : तुज़क-ए बाबरी, अनुवादक : इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 195, बाबर : बाबरनामा, अनुवादक श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 342.

3. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 195 (उद्धरित अंश, तुज़क-ए बाबरी के) बाबर : बाबरनामा, अनुवादक: श्री केशव कुमार ठाकुर, पृ0342.

पाँचवाँ राज्य बंगाल था जिसका शासक नुसरतशाह था । नुसरतशाह के पिता का नाम सुल्तान अलाउद्दीन था । यह सैय्यद था । पहले बंगाल का सुल्तान अलाउद्दीन था । अलाउद्दीन को तख्त कुल-क्रमानुसार अधिकार में मिला था । बंगाल में यह प्रथा थी कि राजसत्ता कुल क्रमानुगत अधिकार से प्राप्त नहीं होती थी । राजा के लिए एक तख्त होता था और इसी प्रकार प्रत्येक अमीर, वज़ीर और मनसबदार के लिए भी स्थान अलग अलग होता था । इन तख्त और स्थानों को बंगाल के लोग बड़े आदर की दृष्टि से देखते थे । उस समय यह भी बंगाल में प्रथा थी जो कोई व्यक्ति अगर सुल्तान को मारकर तख्त पर बैठ जाता था उसे तुरन्त ही शासक मान लिया जाता था ।[1] सब वज़ीर, अमीर, सैनिक, प्रजा किसान उसकी आज्ञा मानने लगते थे । बंगाल के लोग कहा करते हैं कि "हम तख्त के प्रति वफादार हैं । तख्त पर कोई बैठे हम उसकी आज्ञा मानेंगे । हम उसके प्रति सच्चे भक्त हैं ।" उदाहरणार्थ - नुसरतशाह के पिता के राज्याभिषेक के पहले एक हब्शी उस समय के सुल्तान को मारकर तख्त पर बैठ गया था । जनता ने उसकी आज्ञा का पालन किया फिर कुछ समय बाद अलाउद्दीन ने हब्शी को मार दिया और स्वयं तख्त पर बैठ गया । बंगाल में एक दूसरी प्रथा यह थी कि नया सुल्तान अपने पूर्वजों के कोष को खर्च करना बड़ी शर्म का बात समझता था । नया शासक तख्त पर बैठने के बाद अपने लिए नये कोष का संग्रह करना अपना सबसे प्रथम कर्तव्य समझता था । कोष को संग्रह करना ये लोग बड़ी कीर्ति और प्रसिद्धि का कार्य मानते थे ।[2]

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 195-196 (उद्धरित अंश तुज़क-ए बाबरी के) बाबर : बाबरनामा, अनुवादक : श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 342-343.

2. बाबर : तुज़क-ए-बाबरी, अनुवादक : इलियट एवं डाउसन, भाग 4, पृष्ठ 196, बाबर : बाबरनामा, अनुवादक : श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 343.

काफिर शासकों में सबसे शक्तिशाली बीजानगर का राजा था । दूसरा राणा सांगा था । हिन्दुस्तान में और उसकी सीमा पर कई अन्य राजा थे । इनमें से बहुत से राजाओं ने मुसलमान शासकों की अधीनता कभी स्वीकार नहीं की थी क्योंकि इनके प्रदेश बड़े दुर्गम थे ।[1]

---------::0::---------

---

1. बाबर : तुज़्क-ए-बाबरी, अनुवादक : इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास भाग 4, पृष्ठ 196, बाबर : बाबरनामा : अनुवादक : श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 344.

तृतीय अध्याय

सामाजिक दशा - समाज के विभिन्न वर्ग

अ. समकालीन हिन्दू समाज

ब. समकालीन मुस्लिम समाज

सामाजिक दशा - समाज के विभिन्न वर्ग

अ. समकालीन हिन्दू समाज

हिन्दुस्तान में मुसलमानों ने राज्य का प्रसार, धर्म और तलवार के बल से किया था। इससे हिन्दू जनता के हृदय में शासक-वर्ग के प्रति एक भय व विद्वेष की भावना हमेशा बनी रहती थीं। निरंकुश शासन पद्धति में सुल्तानों व शासक-वर्ग की मनमानी से हिन्दू जनता न केवल राजनीतिक व आर्थिक रूप से त्रस्त हुई थी बल्कि धार्मिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में भी इसका प्रभाव पड़ा था। निष्पक्षता के आधार पर शासन की उम्मीद कैसे की जा सकती थी जबकि शासकीय वर्ग का एक विशेष धर्म से गहरा लगाव हो तथा बहुसंख्यक जनता दूसरा धर्म मानती हो।[1] पन्द्रहवीं शताब्दी के हिन्दू समाज में भारी परिवर्तन आने लगा था। तेरहवीं व चौदहवीं शताब्दी के दौरान हिन्दू समाज मुस्लिम शासन की स्थापना के बावजूद बहुत कम प्रभावित हुआ। वह अपनी सनातन पहचान बनाए रखने के लिए प्रयत्न करता रहा। पन्द्रहवीं शताब्दी के आते आते मुसलमानों के प्रति घृणा व द्वेष की भावना बदलने लगी। कुछ विपदाएँ ऐसी आयीं जिनका हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों के जीवन पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। मंगोलों के आक्रमण, तैमूर के आक्रमण, महामारी व लूटपाट की घटनाएँ समूची जनता के लिए कष्टप्रद रही थीं। ऐसी स्थिति में परस्पर एक दूसरे के नज़दीक आने की प्रेरणा हिन्दू और मुस्लिम समाज को मिली। इस कार्य में प्रशासनिक कारणोंसेभीस्थानीय स्तर पर, मुस्लिम प्रशासन ने हिन्दू समाज के जीवन में कोई हस्तक्षेप नहीं किया था। स्थानीय प्रशासन में जब जमींदार की स्थिति बनी हुई थी तो भला उसके गाँव में रहने वाले अन्य वर्गों की

---

1. द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 617.

स्थिति कैसे बदल सकती थी । एक ओर परिवर्तन विरोधी तत्व थे तो दूसरी ओर भक्तों एवं सूफ़ियों ने सामाजिक मेल-मिलाप के लिए अनुकूल वातावरण तैयार कर दिया था । हिन्दू समाज पन्द्रहवीं एवं सोलहवीं शताब्दी के दौरान संक्रमण काल से गुजरने वाला समाज था । इसमें नवीन सामंजस्य की भावना जागृत हो गयी थी। प्राचीन काल से ही भारतीय संस्कृति की यह विशेषता रही है कि विदेशी तत्वों के सम्पर्क में आने पर हिन्दू समाज अपने को ऐसा बदल लेता था कि उसमें विदेशी तत्व घुल-मिल जाते थे । भारतीय संस्कृति शक, कुषाण, हूण, यवन आदि किसी के सम्पर्क में आने पर पराभूत नहीं हुयी । इस्लामी संस्कृति ने अवश्य हिन्दू समाज को आन्दोलित करके रख दिया । हिन्दू और मुस्लिम धर्मों की अपनी-अपनी विशिष्टताएँ हैं जिनके कारण वे दोनों कभी एक हो ही नहीं सके ।[1] दोनों अपनी-अपनी पहचान बनाए रखे । यत्र-तत्र कुछ पारस्परिक प्रभाव भी पड़े । हिन्दू समाज इस सशक्त प्रतिस्पर्धा में भी सजीव होकर जीवन्त बना रहा और आज तक बना हुआ है ।

हिन्दू समाज में कुरीतियाँ :

कुछ कुरीतियाँ इस समाज को सदियों से ऐसा जकड़े हुए हैं कि यह कहना भी कठिन हो जाता है कि कौन सी बातों को हम कुरीति मानें । बाल-विवाह, सती-प्रथा, जौहर-प्रथा, कन्या की जन्म के समय ही हत्या, वेश्या-वृत्ति, देवदासी-प्रथा, जाति-प्रथा, छुआछूत इत्यादि कुरीतियाँ हिन्दू समाज को इस समय भी जकड़े हुई थीं। धार्मिक अधिमान्यताओं ने लोगों के दिल में कतिपय बातों को इस प्रकार बैठा दिया है कि लोग उनके पीछे तार्किकता के बारे में सोचना भी अधर्म समझते हैं । इसी को अन्ध-विश्वास कहते हैं । पन्द्रहवीं शताब्दी तथा उसके थोड़ा पहले तथा बाद के हिन्दू समाज में भी हमें उपर्युक्त बातों का समावेश मिलता है । एक ओर कुछ लोग

----

1. द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 622.

मेल-मिलाप की संस्कृति की ओर सकारात्मक रूख अपनाने लगे थे तो दूसरी ओर विरोधी भावना की अग्नि को प्रज्वलित करने वाले लोग भी थे। आम-जनता प्राय: अपनी ही समस्याओं में उलझी सिमटी हुयी थी। वह सामाजिक परिस्थिति को बदलने में सर्वथा अक्षम थी।

विरोधी बातें :

विरोधी प्रवृत्ति के कारण हिन्दू और मुसलमान एक न हो सके। हिन्दुओं को जजिया देना पडता था तथा तरह तरह की विषमताओं का शिकार होना पड़ता था। मुसलमानों के सदृश वस्त्र तक वे नहीं पहन सकते थे। एक ओर हिन्दू मूर्ति की पूजा करते थे तो दूसरी ओर मुसलमान मूर्तियों को तोड़ते थे। हिन्दू वर्णाश्रम व्यवस्था के प्रति आस्था रखते थे तो मुसलमान "बिरादराने इस्लाम" का नारा लगाते थे।[1] हिन्दू गाय को माता समझकर उसकी पूजा करते थे जबकि मुसलमान गाय का इस प्रकार का कोई आदर नहीं करते थे। ऐसी ही कई और बातें थीं। इन्हीं कारणों से समाज हिन्दू और मुसलमान दो वर्गों में बँटा ही रहा और पूरा सामंजस्य कभी नहीं स्थापित हो सका।

हिन्दू समाज की स्थिति :

भारतीय समाज का बहुसंख्यक वर्ग हिन्दुओं का था। हिन्दू समाज जाति-पाँति के आधार पर विभिन्न वर्गों में बँटा हुआ था। भारतवर्ष में मुसलमानों के आने के कारण हिन्दुओं ने अपनी सुरक्षा के लिये जाति बन्धन कठोर कर लिये। इससे अनेक नवीन जातियों का जन्म हुआ। हिन्दुओं में जो व्यक्ति जिस जाति में

----

1. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 45, द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 617.

जन्म लेता था वह उसी जाति का माना जाता था। जाति के अनुसार उस व्यक्ति को समाज में स्थान दिया जाता था। यह हिन्दू समाज की प्रमुख विशेषता थी। हिन्दू समाज जाति पर आधारित था। समाज पूर्ववत् चार मुख्य जातियों में बँटा हुआ था। 1. ब्राह्मण, 2. क्षत्रिय, 3. वैश्य एवं 4. शूद्र। इनमें से प्रत्येक की अनेकों उपजातियाँ भी थीं। व्यावसायिक आधार पर जातियों का नामकरण हुआ था।[1]

व्यावसायिक वर्गों में मदिरा बनाने वाले, कल्लाल, स्वर्णकार, जुलाहे, पान बेचने वाले, लोहार, गड़रिये, दूध बेंचने वाले, बढ़ई, धातुकार, भाट, अहीर, कुम्हार, काछी, माली, तेली, नाई, नट, गायक, चित्रक, नर्तक, रंगरेज, छपाई करने वाले आदि अनेकों थे। ये अनेक उपजातियाँ ऊँच-नीच की भावना तथा व्यवसाय के कारण बनीं।[2]

---

1. रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 11, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 210, डॉ0 सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृ0 48, के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 266-268, द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 615.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 210, रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 210.

   के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 113.

वैसे साधारणतया हिन्दू समाज तीन वर्गों में बाँटा हुआ था :-

1. उच्च वर्ग (अभिजात-वर्ग) :

इस वर्ग में राजा, ऊँचे मनसबदार, अमीर, स्थानीय राजे, सरदार, बड़े जमींदार, ब्राह्मण, पुरोहित, सन्त, योगी, हिन्दू शासक आदि आते थे ।

2. मध्य वर्ग :

मध्य वर्ग के अन्तर्गत व्यापारी, साहूकार, चिकित्सक, शिक्षक, काज़ी, ज्योतिषी विद्वान, दुकानदार, सर्राफ, दलाल आदि आते थे ।

3. निम्न वर्ग :

निम्न वर्ग के अन्तर्गत शिल्पकार, वास्तुकार, जुलाहे, धुनियाँ, रंगरेज, नाई, बढ़ई, सैनिक, बंजारे, किसान, मजदूर, दुकानदार, चपरासी, श्रमिक, सेवक, गुलाम, चमार, डोम एवं पासी आते हैं, जो अपने परिश्रम की कमाई पर अपना पेट पालते थे ।[1]

प्रथम वर्ग (अभिजात वर्ग) :

हिन्दू समाज के प्रथम वर्ग में ब्राह्मण, पुरोहित, सन्त, योगी, हिन्दू शासक, अमीर, आचार्य, धर्मशास्त्र की व्याख्या करने वाले उपदेशक आदि आते थे क्योंकि

----

1. ए०वी० पाण्डेय : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 218, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 29, डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 47, सावित्री चन्द्र "शोभा" : समाज और संस्कृति, पृष्ठ 2.

हिन्दू समाज बहु-धर्मों वाला समाज था । हिन्दू धर्म, बौद्ध धर्म एवं जैन धर्म में बँटा था साथ ही अनेक मतों जैसे शैव-मत, वैष्णव-मत में भी विभाजित था । समाज में इन ब्राह्मण, पुरोहित, सन्त, योगी को श्रद्धा एवं सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था क्योंकि ये लोग लोगों में एकता, भातृत्व, प्रेम, समन्वय की भावना पैदा करते थे । इन्हें सद्मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करते थे ।[1] ब्राह्मणों का समाज में महत्त्व बढ़ने का कारण यह था कि जैसे-जैसे तुर्कों का प्रभाव एवं प्रभुत्व बढ़ता गया, क्षत्रियों की पराजय होने लगी । क्षत्रिय, जो पहले हिन्दुस्तान के शासक थे इनका नौकरशाही और शासक-वर्ग में प्रमुख स्थान था । जब इनका पतन होने लगा तब ब्राह्मणों का महत्त्व बढ़ने लगा । यह वर्ग धर्म एवं वर्ण के नाम पर निम्न वर्ग का शोषण करता था । ब्राह्मणों ने अन्तर्जातीय विवाह पर प्रतिबन्ध लगाया जबकि स्वयं कर्म एवं चरित्र से भ्रष्ट थे ।[2]

ब्राह्मणों का मुख्य व्यवसाय धार्मिक ग्रन्थों व धर्मशास्त्रों का अध्ययन करना, व्रत, उपवास, उपासना, साधना, योग करना, विद्या ग्रहण करना, हिन्दू संस्कारों का पालन करना व करवाना, जनता में विद्या और अपने ज्ञान का प्रसार करना,

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 30-33, ए०वी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 218-219, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 312-313, सावित्री चन्द्र "शोभा": समाज और संस्कृति, पृष्ठ 304.

2. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 48-49.

राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 209.

हिन्दू धर्मशास्त्रों द्वारा निर्दिष्ट कर्मकाण्डों को लागू करना, भिक्षा लेना व देना, पूजा-पाठ करना, शिक्षा देना आदि था ।[1]

ब्राह्मणों को कुछ विशेषाधिकार भी प्राप्त थे । जैसे इन्हें मृत्युदण्ड नहीं दिया जाता था।कुछ अपवादों को छोड़कर छोटे मोटे अपराधों पर इन्हें दण्ड नहीं दिया जाता था । वे करों से मुक्त थे किन्तु सभी ब्राह्मण कर से मुक्त थे - यह कथन उचित नहीं प्रतीत होता है । व्यवसाय के आधार पर इन्हें कर देना पड़ता था । ब्राह्मण की हत्या करना जघन्य अपराध माना जाता था ।[2]

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 30-33,

   ए.बी. पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 218-310,

   डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 59.

2. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 36,

   आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 312.

क्षत्रिय :

ब्राह्मण के बाद हिन्दू समाज में क्षत्रिय का स्थान आता है । इनका जन्म ब्रह्मा की भुजा से हुआ था । क्षत्रिय का धर्म एवं कार्य युद्ध करना, देश की बाह्य आक्रमणों से रक्षा करना, धर्म एवं समाज की रक्षा करना, देश में शान्ति एवं व्यवस्था बनाये रखने का प्रयास करना, यज्ञ करना, वेद पढ़ना, शास्त्र धारण करना, प्रति-वादियों के बीच हुये झगड़े को निपटाना, वर्णाश्रम धर्म की रक्षा करना, आदि, कठिन समय पर खेती कर सकते थे । उपहार व दान भी ले सकते थे ।[1]

वैश्य :

क्षत्रिय के बाद वैश्य का स्थान था । वैश्य का कार्य खेती करना, व्यापार वाणिज्य करना, ब्राह्मण एवं क्षत्रिय की सेवा करना, पशुपालन एवं यज्ञ करना, दान करना, शूद्र के द्वारा धन अर्जित करना, ऋण देना आदि इनके कार्य थे ।[2] वैश्य को नमक, मांस, दही, तलवार, पनीर, पानी तथा मूर्तियाँ बेचना मना था, जबकि शूद्र बेच सकते थे ।[3]

---

1. ए०वी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 218, डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा आर्थिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 59, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 40-41, सावित्री चन्द्र "शोभा" : समाज और संस्कृति, पृष्ठ 4, 14.

2. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा आर्थिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 59, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 41, सावित्री चन्द्र "शोभा" : समाज और संस्कृति, पृष्ठ 5-6, 15.

3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 41, डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा आर्थिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 59.

कायस्थ :

क्षत्रिय तथा वैश्यों के मध्य एक नवीन जाति का उदय हुआ । यह जाति कायस्थ की थी । प्रथम बार कायस्थों का उल्लेख यजनवलिका में हुआ है । गुप्त-काल के शिला-लेखों में कायस्थों का उल्लेख मिलता है । ये किसी शासक या सामन्त के अधिकारी होते थे । इनका मुख्य कार्य राजकीय प्रपत्रों को लिखना, राज्य के हिसाब की देखभाल करना, भू-राजस्व विभाग को देखना, न्यायाधीशों की न्याय करते समय सहायता करना था । वेदव्यास में कायस्थों को शूद्रों, नाईयों, कुम्हारों तथा अन्य निम्न जाति के बराबर माना गया है ।[1]

कायस्थ जाति की उत्पत्ति कैसे हुई, इसमें विद्वानों में अनेक मत हैं । श्री हर्ष ने कायस्थों की उत्पत्ति यम के लिपिक चित्रगुप्त से अनुरेखित की है । कुछ शिलालेख में कायस्थ की वंशावली कुश व इनके पिता कश्यप से बतायी है । 1408-1409 ई0 को रीवाँ शिलालेख में लिखा है कि कचरा नामक सन्त ने एक शूद्र की सेवा से प्रसन्न होकर उसे एक पुत्र-रत्न का वरदान दिया । यही पुत्र कायस्थ का पूर्वज हो गया । इस प्रकार कायस्थ की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक विचारधाराएँ हैं ।[2] कायस्थों की भी अनेक जातियाँ एवं उपजातियाँ थीं जैसे गौड़, माथुर, श्रीवास्तव, निगम आदि ।

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 42.

2. वही ।

शूद्र :

इस वर्ग में अनेकों जातियाँ थीं। समाज का अधिकांश वर्ग इसी में आता था। शूद्रों की गणना समाज में सबसे निम्न वर्ग में की जाती थी। अछूत वर्ग में डोम, चाण्डाल आदि आते थे। इस वर्ग को समाज में बड़ी गिरी हुयी निगाहों से देखा जाता था। इनका कार्य सड़क की सफाई करना, मल-मूत्र उठाना, जानवर मर जाये तो उसे उठाना, तीनों वर्गों की सेवा करना आदि था। ये शहर के बाहर रहते थे। जब वे शहर में प्रवेश करते थे तो हाथ में एक डण्डा लिये रहते थे। उसी को खड़खड़ाते हुये आते थे ताकि समाज के उच्च वर्ग के लोग सतर्क हो जायें क्योंकि अगर उच्च वर्ग के लोगों पर इनकी छाया तक पड़ जाती थी तो वे अपने आपको अशुद्ध समझने लगते थे।[1]

ब्राह्मण शूद्रों को छूना भी पसन्द नहीं करते थे। अगर कभी शूद्र से ये भूलवश छू जाते थे तो ब्राह्मण अपने आपको अशुद्ध समझते थे। वस्त्रों को पहने पहने स्नान करते थे। न शूद्रों से बात करते, न उनके साथ यात्रा या भोजन करते थे। इन शूद्रों की अलग बस्तियाँ, कुआँ, तालाब, पोखरे होते थे। भूलवश अगर कोई ब्राह्मण इन शूद्रों के साथ काम कर लेता था तो उसे तरह तरह से प्रायश्चित करना पड़ता था।[2] जाति व्यवस्था के कठोर बन्धनों से हिन्दुओं का यह निम्न वर्ग मुक्त होना चाहता था।

----

1. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा आर्थिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 59, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 45, सावित्री चन्द्र "शोभा" : समाज और संस्कृति, पृष्ठ 6-7, 16-17, द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 581-582.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 22, सावित्री चन्द्र "शोभा" : समाज और संस्कृति, पृष्ठ 16.

मुस्लिम शासन होने के कारण शूद्रों की स्थिति में थोड़ा-थोड़ा सुधार आने लगा, क्योंकि मुसलमानों में छुआछूत की भावना का अभाव था । अब वे पुराणों का पाठ सुन सकते थे । माँस बेंच सकते थे । कुछ लोग शूद्रों के हाथ का बना भोजन ग्रहण करने लगे ।[1] इन शूद्रों ने अपना सामाजिक और आर्थिक स्तर ऊँचा उठाने के लिये, जाति-पाँति के बन्धनों से मुक्त होकर एक नया जीवन व्यतीत करने के उद्देश्य से एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में जाकर बसना प्रारम्भ किया । अनेक नये व्यवसाय करने प्रारम्भ किये ताकि निम्नता का चिह्न मिट जाये । इस काल में अनेक धार्मिक व सामाजिक सुधारक जैसे - कबीर, नानक हुए। इन्होंने भक्ति आन्दोलन के द्वारा ऊँच-नीच के भेदभाव को दूर करने का प्रयास किया । इन सन्तों ने एकेश्वरवाद, निर्गुण ब्रह्म की उपासना पर बल दिया । बाह्य आडम्बरों व मूर्तिपूजा का विरोध किया। इन सन्तों ने संस्कृत भाषा के स्थान पर प्रादेशिक तथा जनभाषाओं में उपदेश दिया । इनकी वाणियों ने जाति-पाँति के बन्धनों को ढीला किया । ब्राह्मणों के महत्त्व और प्रभाव को कम करने का प्रयास किया, इससे ब्राह्मणों ने अपने पूर्वजों का व्यवसाय छोड़ दिया । कुछ जो विद्वान थे, उन्होंने ज्योतिष का कार्य, आयुर्वेद का कार्य तथा अध्ययन-अध्यापन का कार्य करना प्रारम्भ किया । कुछ ब्राह्मणों ने कृषि, व्यापार, वाणिज्य का व्यवसाय अपनाया ।[2] इस प्रकार से हिन्दू समाज के बाहरी ढाँचे में तो कोई परिवर्तन नहीं आया परन्तु आन्तरिक ढाँचे में परिवर्तन आया ।

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 19, डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा आर्थिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 59.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 209-211.

<u>हिन्दू जमींदार</u> :

प्रथम वर्ग में हिन्दू जमींदारों का विशेष स्थान था । तैमूर के आक्रमण के बाद हिन्दू जमींदारों का उत्थान हुआ । कटेहर में रायहरि सिंह, पटियाली में राय साबिर, ग्वालियर में परसिंह, उसका पुत्र वैरमदेव, समाना के समीप राय हेनु जुलजैन भाटी आदि शक्तिशाली हिन्दू जमींदार थे । मुबारकशाह के समय सिधारन गंगू और सिद्धपाल का दरबार में उदय हुआ । वे बड़े प्रभावशाली थे । इससे प्रसन्न होकर सुल्तान मुहम्मदशाह सैय्यद ने उन्हें बयाना, अमरोहा, नरनौल, कुहराम तथा दोआब के कुछ परगने अक्ता में दिये थे ।[2]

सुल्तान बहलोल लोदी के शासनकाल में हिन्दू जमींदारों की स्थिति अच्छी थी । बहलोल लोदी ने अपने शासनकाल में इटावा के राय दादूँ, बक्सर की विलायत के राय त्रिलोकचन्द, धौलपुर के राय विनायकदेव तथा राय जगरसेन, कछवाहा के राय त्रिलोकचन्द को अपने शासनकाल में महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किया तथा इन्हें इज्जत-सम्मान दिया । प्रशासन में मुसलमानों की प्रधानता होने के बावजूद हिन्दुओं की स्थिति शहर में तो कम, पर गाँव और कस्बों में अच्छी थी । इनकी स्थिति

---

1. ए०वी० पाण्डेय : मध्यकालीन भारत और समाज, पृष्ठ 219.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 214.

अच्छी होने का कारण यह था कि अधिकांश हिन्दू अमीर शासक के प्रति निष्ठावान रहते थे[1] परन्तु मुसलमान अमीर लोगों का व्यवहार हिन्दुओं के साथ अच्छा न था।

हिन्दू ज्योतिषी :

हिन्दू ज्योतिषियों को भी समाज में ऊँचा स्थान प्राप्त था । सुल्तान, अमीर, मलिक, प्रतिष्ठित व्यक्ति इन्हें अपने दरबार में आश्रय, इनाम और धन-सम्पत्ति दिया करते थे ।[2]

हिन्दू शिल्पकार :

हिन्दू समाज के शिल्पकारों, बढ़इयों तथा वास्तुकारों को सम्राट ने बहुत प्रोत्साहन एवं संरक्षण दिया था क्योंकि ये शासक कला के शौकीन थे । जब तैमूर वापस अपनी राजधानी समरकन्द जाने लगा तब हजारों की संख्या में इन कारीगरों को अपने साथ ले गया था । 1405 ई0 में अजमेर में बने अढ़ाई दिन का झोपड़ा नामक मस्जिद की मरम्मत बूँदी के सूत्रधार करमा ने की थी । गुजरात के शासक सुल्तान महमूद बगेड़ा के शासनकाल में अहमदाबाद के समीप 1458 ई0 में एक महिला जिसका नाम बाई हरीर था उसने दादाहरीद का कुआँ बनवाया था । ये सुल्तान

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 218, यहिया बिन अहमद सरहिन्दी : तारीखे मुबारकशाही, पृष्ठ 169-238, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 205-251.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 219, के0 एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 61.

के हरम की अध्यक्षा थी । 1506 ई० में अनुविजय नामक शिल्पकार ने कालिंजर के दुर्ग की मरम्मत करवाई थी ।[1] इसके बावजूद हिन्दुओं को मुस्लिम राज्य में ऊँचा स्थान प्राप्त नहीं था । इनके साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार किया जाता था ।[2]

हिन्दुओं की स्थिति:

हिन्दुओं के पतन का एक प्रमुख कारण जाति-व्यवस्था थी । जाति-व्यवस्था के साथ साथ मूर्ति-पूजा अनुसंधान का विरोध आदि भी हिन्दुत्व के प्रमुख दोष थे ।[3] सामाजिक जीवन में जाति-पाँति, बाल-विवाह, मूर्ति-पूजा, बाह्याडम्बर एवं अन्ध-विश्वासों के कारण सभ्यता के सभी पहलुओं पर जीर्णता आ गयी जिसके कारण हिन्दू समाज प्रगति न कर सका ।[4] इसके अलावा हिन्दुओं के साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया जाता था । इन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता था । शासन में उच्च पदों पर हिन्दुओं को कभी नहीं रखा जाता था ।[5] मुसलमानों का शासन होने के कारण कभी कभी मुसलमान हिन्दू लड़कियों के साथ जबरजस्ती निकाह कर लेते थे, अन्यथा उन्हें तरह तरह से अपमानित करते थे ।[6] यदि कोई हिन्दू एक बार

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 219-220.
2. देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 622.
3. श्रीराम शर्मा : भारत में मुस्लिम शासन का इतिहास, पृष्ठ 210, डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा आर्थिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 48.
4. जयचन्द्र विद्यालंकार : इतिहास प्रवेश, पृष्ठ 65-66, डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा आर्थिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 48.
5. द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 622.
6. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 243.

हिन्दू धर्म छोड़कर इस्लाम धर्म ग्रहण कर लेता था तो दुबारा वह हिन्दू धर्म ग्रहण नहीं कर सकता था । सुल्तान सिकन्दर लोदी ने कुछ ब्राह्मणों को केवल इसलिये दण्ड दिया कि वे मुसलमानों को हिन्दू बनाने के लिये प्रोत्साहन दे रहे थे ।[1] हिन्दुओं को अपनी सम्मान की रक्षा के लिये सदैव जागरूक रहना पड़ता था ।

(ब) मुस्लिम समाज :

भारतवर्ष में मुसलमानों का आगमन इस्लाम के अभ्युदय के एक शताब्दी के अन्दर ही हो गया था । आठवीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही यह क्रम निरन्तर जारी था । मंगोलों के आक्रमणों के भय से मध्य एशिया एवं पश्चिमी एशिया के देशों के बहुत से त्रस्त लोग भारत आकर शरण लेने लगे । 13वीं और 14वीं शताब्दियों में ऐसा हुआ । 15वीं शताब्दी में अफ़गानों के शासनकाल में अफगानिस्तान से बड़ी संख्या में लोग हिन्दुस्तान आने लगे ।[2] बहलोल से लेकर इब्राहिम तक तीनों अफ़गान शासक जाति-संकीर्णता के शिकार थे । वे अफ़गानों को ही ऊँचे ऊँचे पद देते थे । पद पाने के लालच में अफगानिस्तान से बड़ी संख्या में लोग आने लगे थे । इन बातों से यह निष्कर्ष निकलता है कि उत्तर तैमूरकालीन भारत में मुसलमानों का विदेशों से आगमन जारी था । मुसलमानों की जनसंख्या में बराबर वृद्धि हो रही थी । बहुत से हिन्दुओं को भी मुसलमान बनाया जाता रहा ।[3] इसके लिये हिन्दुओं को प्रलोभन

---

1. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 243,
   रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 11.

2. राधेश्याम : मध्यकालीन प्रशासन, समाज संस्कृति, पृष्ठ 172.

3. द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 614.

भी दिया गया और उन्हें डराया भी गया । डॉ० राधेश्याम ने लिखा है कि "तेरहवीं व चौदहवीं शताब्दी में विभिन्न अभियानों के दौरान सुल्तानों व उनके सेनानायकों ने अनेक व्यक्तियों को युद्ध में बन्दी बनाकर उन्हें दास बनाया उसके बाद उनका धर्म परिवर्तन करवाकर उन्हें मुसलमान बनने पर मजबूर किया ।[1]

भारत में मुस्लिम समाज की स्थिति को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि उसमें कई तत्वों के लोग थे । ये अरब, ईरान, मध्य एशिया एवं अफगानिस्तान आदि देशों से आये थे । एक ऐसी नौकरशाही बन गयी थी जिसमें उमरावर्ग अच्छी तरह प्रतिष्ठित हो चुका था । मुसलमान समाज में सुल्तान व उसके परिवार के सदस्य सर्वोच्च माने जाते थे । इसके पश्चात् उलमा तथा उमरावर्ग का स्थान था । उमरावर्ग में बड़े-बड़े अधिकारी, दरबारी, व महत्त्व के सेनानायक थे । उलमा वर्ग में शेख, मशाहिक, सैय्यद, धार्मिक एवं पवित्र व्यक्ति एवं सूफी सन्त आते थे । उन्हें समाज बड़े आदर व सम्मानित दृष्टि से देखा करता था । सम्पूर्ण मुस्लिम समाज पर उलमावर्ग का प्रभाव था । समाज की धार्मिक उन्नति का नैतिक दायित्व इन्हीं पर था । ये ही सुल्तान को शरीयत के आधार पर शासन करने के लिये प्रेरणा देते थे । इसी वर्ग में शेख उल-इस्लाम, सद्र-उस सुदूर, काज़ी-उल-कुजात, काज़ी, मुफ्ती, इमाम, मोहत्सिब आदि आते थे ।[2]

मुस्लिम समाज का तेजी से भारतीयकरण हो रहा था । खान-पान से लेकर वस्त्र और आभूषण तक, अस्त्र-शस्त्रों से लेकर विभिन्न कलाओं तक भारत में मुस्लिम समाज पर स्थानीय परिवेश का प्रभाव देखा जा सकता है ।[3]

----

1. राधेश्याम : मध्यकालीन प्रशासन, समाज, संस्कृति, पृष्ठ 172.

2. द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 608.

3. वही, पृष्ठ 608-609.

वैसे तो मुस्लिम समाज में हिन्दू समाज जैसी जाति-प्रथा नहीं है, किन्तु सामाजिक मान्यता में सभी बराबर भी नहीं हैं । इनमें भी छोटे-बड़े व गरीब-अमीर की परिकल्पना समाहित हो गयी है । इस आधार पर जब हम देखते हैं तो मुस्लिम समाज तीन मुख्य वर्गों में बँटा हुआ दिखायी पडता है : 1. उच्च वर्ग, 2. मध्य वर्ग एवं 3. निम्न वर्ग । इसके अलावा दास-प्रथा का प्रचलन होने के कारण दासों का एक अलग वर्ग माना जा सकता है ।

1. उच्च वर्ग :

उच्च वर्ग में सुल्तान, सुल्तान के परिवार के सदस्य, सुल्तान के दास, अमीर ऊँचे मनसबदार, स्थानीय राजे, सरदार, बड़े जमींदार आदि शामिल थे । इस वर्ग को अहल-ए-सैफ कहते थे ।

2. मध्य वर्ग :

इस वर्ग में व्यापारी, कर्ज देने वाले, साहूकार, चिकित्सक, शिक्षक, काज़ी, ज्योतिषी आदि आते थे । डॉ० राधेश्याम ने लिखा है कि इसी श्रेणी में राज्य की ओर से मदद-ए-आश में भूमि, वृत्ति, पेंशन, वज़ीफा, ईनाम तथा अन्य प्रकार की आर्थिक सहायता प्राप्त करने वाले लोग भी आते थे । शहर के सामान्य अधिकारी कोतवाल, चौधरी आदि जिन्हें भूमि सम्बन्धी अधिकार प्राप्त थे, वे इसी श्रेणी में सम्मिलित किये जा सकते थे ।[2]

----

1. राधेश्याम : मध्यकालीन प्रशासन, समाज, संस्कृति, पृष्ठ 151.

द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 608.

3. निम्न वर्ग :

निम्न वर्ग के अन्तर्गत किसान, श्रमिक, छोटे दुकानदार, चपरासी, सेवक, गुलाम, दास आदि आते थे ।[1]

सुल्तान :-

मुस्लिम समाज में सबसे श्रेष्ठ स्थान सुल्तान का था । सुल्तान समाज का नेता, मुखिया, एवं मार्ग-दर्शक माना जाता था । सुल्तान निरंकुश होता था । इसके अधिकार असीमित थे । उस पर न तो मंत्री, न उलमा का नियंत्रण होता था । सुल्तान की व्यक्तिगत इच्छा सर्वोपरि होती थी । सुल्तान सिकन्दर लोदी और इब्राहीम लोदी निरंकुश शासक थे[2] पर उनकी हार्दिक इच्छा यह थी कि सल्तनत की सीमाओं में निरन्तर वृद्धि हो, उनकी सेनाएँ अविजित प्रदेशों को जीतें, स्वतन्त्र एवं अर्ध-स्वतन्त्र हिन्दू राज्य उसकी अधीनता स्वीकार करे, उन्हें उपहार, खिराज़ तथा कर भेजे, उमरा वर्ग शासन के काम में सुल्तान का साथ दे । सुल्तान अपने पद की प्रतिष्ठा एवं गरिमा को बनाये रखने का सदैव प्रयास किया करते थे ।[3] इसके

---

1. डॉ० सावित्री शुक्ला : सन्त साहित्य की सामाजिक तथा आर्थिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 47, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 49.

2. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़े आते मुश्ताक़ी : पृष्ठ 13-14 ‖अनुवादक‖ सैय्यद अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 102, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 338 ‖अनुवादित अंश : तारीखे़ दाऊदी‖

3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 51, डॉ० शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 14‖अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 102.

लिये वे तरह तरह की शाही उपाधियाँ धारण करते थे। सैय्यद शासकों ने "रैयत-ए-आला" व "मसनद-ए-आला" तथा लोदी सुल्तानों ने "सुल्तान" की पदवी धारण की, निजाम ने "सुल्तान सिकन्दर" की पदवी धारण की, इब्राहीम ने सुल्तान की पदवी धारण की। अपने नाम का खुत्बा पढ़वाते थे तथा अपने नाम का सिक्का चलवाते थे।

अपनी शान-शौकत बढ़ाने के लिए जुलूस निकालते थे। जब जुलूस पर जाते थे तो अपने साथ अमीर, सैनिक, नौकर-चाकर, अंग-रक्षक, गणमान्य व्यक्तियों, पताकाएँ आदि को साथ लेकर जाते थे। इससे सुल्तान के पद की प्रतिष्ठा, गरिमा, वैभव,, ऐश्वर्य एवम् आकर्षक व्यक्तित्व का पता चलता था।[1] सुल्तान अपने ऐश्वर्य में वृद्धि करने के उद्देश्य से बड़े बड़े दरबारों का आयोजन करवाते थे। सुल्तान बहलोल लोदी भव्य दरबार लगाने के पक्ष में नहीं था जबकि सुल्तान सिकन्दर लोदी और इब्राहीम लोदी भव्य दरबार लगाते थे।[2]

सुल्तान के महल :

सुल्तानों के महल दो तीन मंजिले के नक्कासीदार बने होते थे। महल दो भागों में बनाये जाते थे। बाहर का हिस्सा मर्दाना कहलाता था। अन्दर का जनाना। मर्दाने वाले भाग में दीवान-ए-आम, दिवान-ए-खास, शस्त्रागार, भण्डार आदि बनाये जाते थे। बाहर, बाग-बगीचे, पुष्पवाटिका, तालाब आदि सुन्दरता के लिये बनाये जाते थे। अन्दर के जनाना वाले हिस्से में रानियों एवं राजकुमारियों के कमरे, रसोई, गुशलखाना आदि बनाये जाते थे। महल में झरोखे अवश्य बनाये जाते थे। झरोखे में बैठकर शासक झरोखा दर्शन देते थे। रानी तथा राजकुमारियाँ इनमें बैठकर संगीत समारोह, पशुओं की लड़ाई देखा करती

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 70-72.

2. वही, पृष्ठ 79-80.

थीं क्योंकि इस समय पर्दा-प्रथा थी। स्त्रियाँ खुले दरबार में पुरुषों के सामने नहीं बैठा करती थीं ।[1]

इन महलों में सजावट बड़ी सुन्दर होती थी । ये भवन ईंट और चूने के बने होते थे । इनकी फ़र्श पर कालीन, गलीचे, दरी, बिछी होती थीं । कमरे में सुन्दर फर्नीचर, मेज, कुर्सियाँ, तख्त, पलंग, पड़े होते थे तथा पलंग पर मसनद, गद्दे पड़े होते थे । खिड़कियों, दरवाजों में रेशम के पर्दे एवं कढ़ाईदार पर्दे पड़े होते थे । इन महलों में सारी सुख-सुविधा की चीजें रहती थीं ।[2] गर्मी में पंखे का इस्तेमाल उस समय भी होता था । पंखे रेशमी कपड़े के बने होते थे, उसमें सुन्दरता बढ़ाने के लिये सोने चाँदी के तार से कढ़ाई की जाती थी। हत्था सोने चाँदी का बना होता था। मोर के पंखों से भी हवा की जाती थी । इसके अलावा घरों में झुलाने वाले पंखे बनाये जाते थे, जिसमें डोरी से खींचने से हवा लगती थी। नौकर डोरी खींचा करते थे ।[3]

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 54-55, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 209-210.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 265, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 211.

3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 58, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 211-212.

अमीर या उमरा वर्ग :

शासन में अमीरों का महत्त्वपूर्ण स्थान था । अमीरों की कई श्रेणियाँ होती थीं । जैसे - खान, मलिक, अमीर, सिपहसालार आदि । यदि अमीर योग्य होता था और जनता का समर्थन उसे मिलता रहता था तो वह सुल्तान बन सकता था । सुल्तान अमीरों को बहुत मान-सम्मान देते थे । पूर्व सुल्तान इन्हें उपाधियाँ, नगद धन, आभूषण, खिलअतें, वस्त्र, विशिष्ट सम्मानसूचक चिह्न जैसे लाल ध्वज, पताकाएँ, घोड़े, हाथी दिया करते थे[2] परन्तु सैय्यद और लोदी शासकों ने अपने अमीरों को केवल उपाधियाँ दीं, विशिष्ट सम्मानसूचक चिह्नों से सम्मानित नहीं किया ।[3]

आय के स्त्रोत :

अमीरों को अपना खर्च चलाने के लिये नगद वेतन नहीं दिया जाता था बल्कि जागीरें दी जाती थी । जागीरों का हस्तान्तरण होता रहता था । जागीरें अनुवांशिक नहीं होती थी । जब किसी जागीरदार की मृत्यु हो जाती थी

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 265.

2. डॉ० राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 126, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 266 (अनुवादक) सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 63-64, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 89.

3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 124-126, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 34-35 (अनुवादित अंश तारीख-ए-मुबारक शाही) के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 89-90.

तो उसकी जागीर उसके पुत्र को दे दी जाती थी । सुल्तान ही अमीरों को जागीर देता था । सुल्तान इन्हें वापस लेने का भी अधिकार रखता था । अमीर जब तक सुल्तान के प्रति निष्ठावान रहता था तभी तक उसके पास जागीर रहती थी । सुल्तान नाराज़ होने पर वापस ले लेता था ।[1] जागीर से उसे जो आय होती थी वे अमीर अपने पास रखते थे । सिकन्दर लोदी ने एक आदेश दिया कि जब किसी को जागीर दी जाय तो जागीर देने के बाद उसका वेतन भी निर्धारित किया जाय। अमीरों को जागीर और वेतन दोनों दिया जाता था ।[2] इसके अलावा ये अमीर निकटवर्ती प्रदेशों पर लूटमार कर धन एकत्र करते थे । युद्ध में जब सुल्तान के साथ जाते थे तो लूटमार करते थे । इसके अलावा विजय होने पर लूट में से 4/5 भाग शासक उन्हें देते थे । अमीर अपने अधीन कर्मचारी से उपहार लेते थे । इस प्रकार से इनकी इतनी अधिक आय होती थी कि वे बड़ी शान-शौकत का जीवन व्यतीत करते थे ।[3] चुनार के दुर्ग के अधीक्षक ताज खान-सारंगखानी के पास असीमित धन था जब उसकी मृत्यु हो गयी तब उसकी विधवा पत्नी लाड मलिका ने शेरखाँ से विवाह किया

----

1. यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सरहिन्दी : तारीखे मुबारकशाही, पृष्ठ 243, {अनुवादक} सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 84, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 125, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 340.

3. ए०वी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 218, के०एम० मिश्र: उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 144, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 87-88.

तो उसे एक सौ पच्चास बहुमूल्य रत्न तथा सात मन मोती, 150 मन सोना उपहार में दिया । सुल्तान बहलोल लोदी का अमीर काला पहाड़ फ़रमूली ने 3 हजार मन सोना एकत्र किया था ।[1] इससे पता चलता है कि इन अमीरों के पास अत्यधिक धन हुआ करता था ।

ये अमीर अपना धन सुल्तान को उपहार देने में, अपने हरम में, मदिरापान, जुआ खेलने, दावत करने, नाच गाने की महफिलों में, कवि, विद्वानों, संगीतकारों, चित्रकारों को आश्रय देने में, गरीबों-दु:खियों, अनाथों को देने में, प्रकृति-प्रकोप, दुर्भिक्ष, अकाल में गरीब जनता की सहायता में, दान में, अमीरों, खानकाहों, मदरसों, मस्जिदों, पुस्तकालयों, बाग-बगीचे लगवाने, मकबरों के रख-रखाव में, गरीब लड़कियों के विवाह पर खर्च करते थे ।[2] अपने लिये बड़े बड़े भव्य महल बनवाते थे । साथ ही साथ जश्न, नृत्य, संगीत की गोष्ठियों, अपने पुत्र-पुत्रियों के विवाह पर असीमित धन व्यय करते थे ।[3]

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 128-135.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 136, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 341.

3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 136-138, ए0वी0 पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 218, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 57, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 211-212.

कुछ अमीरों के मकान बड़े बड़े एक या दो मंजिल बने होते थे। मकान पत्थर तथा ईंट के बने होते थे। इनकी छतें लकड़ी की बनायी जाती थीं। फर्श मकराने के पत्थर से बनायी जाती थीं। बड़े कलात्मक फर्नीचर मकान में रखते थे।[1] अमीर 3-3, 4-4 पत्नियाँ रखते थे। प्रत्येक पत्नी के लिए अलग अलग नौकर, मकान, दासियाँ, हिजड़े रखते थे। ये तरह तरह के कपड़े, आभूषण पहनती थीं। इन्हें नृत्य-तमाशा देखने घूमने की इजाजत नहीं थी। इनके मनोरंजन के लिये नाचने गाने वाली स्त्रियाँ रहा करती थीं। अमीर विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत करते थे। जब घर से बाहर जाते थे तब अपने साथ हाथी, घोड़े, 30-40 व्यक्ति पैदल, छत्र, हुक्का, तलवार आदि लेकर जाते थे।[2]

इनकी आर्थिक दशा अच्छी थी अमीर मुसलमान कुलीन व्यक्ति राज्य के अधिकांश महत्त्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किये जाते थे। बादशाह के राज्य प्रतिनिधि के रूप में विस्तीर्ण भू-भागों पर शासन करते थे। केवल राजस्व विभाग हिन्दुओं द्वारा संचालित होता था। सभी सरकारी सेवाओं पर इनका अधिकार था।[3]

----

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, पृष्ठ 418, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 210.

2. ए०वी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 218, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 134-135, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 211-212.

3. के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 144, द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 622.

अमीर लोग ऐश्वर्य से मण्डित, वैभव से परिवेष्ठित एवं सौभाग्यशाली होते थे। शराब, व्यसन, ऐयाशी, मांस आदि में लगे हुये होते थे। ये लोग वेश्याओं के नृत्य, तीतर बटेर की लड़ाई, हाथियों और मेढकों के संघर्ष में अपने मनोरंजन की दिशा खोजा करते थे। अपने जीवन की कठिनाइयों से बहुत दूर कल्पना लोक के सुखों में विचार करता हुआ अपने जीवन को रात्रि के स्वप्न के समान काट दिया करता था।[1] इन अमीरों को किसी बात की चिन्ता नहीं रहती थी। भोग-विलास, ऐश्वर्य में अपना जीवन व्यतीत करता था।[2] अपने आराम की सुख-सुविधा के लिये अधिक से अधिक धन व्यय किया करता था। विदेशों से सामान मँगवाकर खरीदा करता था।[3]

सम्पन्न लोग रेशम के गद्दे, तकियों पर सोते थे। सोने-चाँदी के काम से अलंकृत और रेशमी गद्दों वाले पलंग उपयोग में लाते थे। बैठने के लिए लम्बी कुर्सियों का उपयोग करते थे[4] जिसमें रेशम की गद्दियाँ पड़ी होती थीं। अन्य लोग कटहल

---

1. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा आर्थिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 47, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 87, ईश्वरी प्रसाद : ए शार्ट हिस्ट्री आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृष्ठ 449.

2. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा आर्थिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 49.

3. डॉ० सावित्री शुक्ला : वही, पृष्ठ 70, डॉ० बनारसी प्रसाद सक्सेना : द शार्ट हिस्ट्री आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृष्ठ 449-648.

4. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 213.

की लकड़ी, मूँगे की बनी तथा सूती धागे से बनी चौकियों का प्रयोग करते थे ।

कुछ अमीर बड़ा सादा जीवन व्यतीत करते थे जैसे भीखन खाँ लोदी अपने पास कोई सेवक नहीं रखता था । एक रात वह छत पर सो रहा था, कि वर्षा आ गयी । उस समय उसके पास कोई सेवक नहीं था । वह अपना पलंग स्वयं उठाकर अन्दर ले आया । प्रात:काल जब अमीर भीखन खान दरबार में उपस्थित हुआ तो सुल्तान सिकन्दर लोदी ने उससे कहा "कि इतने बड़े बड़े अमीर रात्रि में अपने पास कोई सेवक क्यों नहीं रखते हैं ।" यह बड़ा दानी भी था। जब वह भोजन करने बैठता था तो एकबड़े थाल में नाना प्रकार के भोजन लगाकर दो-तीन तन्दूरी रोटी, एक अशर्फी, पान, ये सब चीजें पहले भिखारी को देता था तब स्वयं खाता था ।[1]

अफ़गान अमीर :

लोदी शासन काल में अफ़गान अमीरों का बोलबाला था । इनमें से बहुत से प्रान्तपति थे जिनके पास बड़ी बड़ी फौजें थीं । इब्राहीम लोदी के गद्दी पर बैठने के समय दरियाँ खाँ लोहानी, आजम हुमायूँ सरवानी, और नासिर खाँ नूहानी, तीस हजार से चालीस हजार तक की फौजों के नायक थे ।[2] इतनी बड़ी फौजों के आधार पर यदि वे विद्रोह कर देते थे तो उनका दमन करना बहुत कठिन होता था। ए०वी० पाण्डेय ने लिखा है कि अमीरों का बौद्धिक स्तर बहुत ऊँचा नहीं था ।"[3]

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 146, शेख रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 27 (अनुवादक) सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 114.

2. ए०वी० पाण्ड़ेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 242.

कुछ लोग विद्वान थे जैसे मियाँ भुआ। कुछ लोग बहुत धर्मनिष्ठ थे जैसे मियाँ जैनुद्दीन और मियाँ मारूफ फरमूली। अधिकांश अमीर अन्धविश्वासी और फिजूलखर्च करने वाले थे और भोग-विलास में लिप्त रहने वाले थे। इनके अन्दर अच्छे गुणों का अभाव नहीं था। वे अपने अधीनस्थों और आतिथ्यों के प्रति उदारता दिखाते थे। प्रशासनिक मामलों में अफ़गान अमीर अधिक सफल नहीं थे। वे सैनिक शक्ति के आधार पर अपना दबदबा बनाये रखते थे। जनसाधारण के हित के लिये कार्य करके वे जनता पर अपना अधिकार स्थापित करने में असफल रहे। आर्थिक मामलों में भी अफ़गानों की क्षमता कम थी। लोदी साम्राज्य के पतन के पीछे एक कारण प्रशासनिक अक्षमता भी थी।[1]

मध्य वर्ग :

मध्य वर्ग में मनसबदार, व्यापारी, चिकित्सक, शिक्षक, काज़ी आते थे। ये लोग भी धन सम्पन्न थे। इनकी स्थिति अच्छी थी।[2] पर यह वर्ग न उच्च वर्ग के समान सौभाग्य के पालने में सुख की नींद सोता था न निम्न वर्ग के समान दुर्भाग्य से अभिशाप्त था। इनकी दशा त्रिशंकु की भाँति थी। इस वर्ग के लोग उच्च वर्ग के लोगों की नकल करने का हर सम्भव प्रयास किया करते थे। यह वर्ग मांस, मदिरा, महिला में अनुरक्त रहने के कारण निकम्मा हो गया था। इस वर्ग के लोगों की इच्छाएँ नि:सीम, अभिलाषाएँ अनन्त और अपेक्षाएँ वृहद थीं। पर आय सीमित थी

----

1. ए०वी० पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 243-244.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 317, चोपड़ा पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 135, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 191.

इसलिये ये लोग घूस लेकर, अनाचार, दुराचार एवं भ्रष्टाचार के आधार पर अपने जीवन को गुज़ारा करते थे। उच्च वर्ग के लोगों की नकल करके विदेशों से आया हुआ सामान प्रयोग करते थे।[1] इस वर्ग के हिन्दू जजिया एवम् राजदण्ड से मुक्त होने के लिए तथा समाज में उच्च स्थान पाने के लालच में इस्लाम धर्म ग्रहण कर लेते थे।[2]

इनके मकान ज्यादातर एक मंजिले थे/बहुत कम दो मंजिलों के बने होते थे। मकान की दीवारें ईंट-चूना तथा छत खपरैल की/ जमीन पक्की ईंटों की बनी होती थी। इनके मकानों के चारों तरफ अमीरों की तरह बाग-बगीचे नहीं बने होते थे।[3] किन्तु जो धनी व्यापारी थे उनके मकान बड़े और हवादार होते थे।जो मकान भूमितल पर बने होते थे उसके चारों तरफ चबूतरा बना होता था। कमरे में खिड़कियाँ बनी होती थीं। उसमें जाली के दरवाजे लगे होते थे जिससे अन्दर का व्यक्ति बाहर देख लेता था। ऊपरी मंजिल के मकानों में छज्जे अवश्य बनाये जाते थे। इससे मकान की दीवार पर छाया रहती थी। घर चूने से पोता जाता था।[4]

---

1. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा आर्थिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 48, डॉ० बनारसी प्रसाद सक्सेना : ए शार्ट हिस्ट्री आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृष्ठ 650-651.
2. डॉ० सावित्री शुक्ला : वही, पृष्ठ 49.
3. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 418, चोपड़ा पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक,सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 56-136.
4. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 56.

अपने घरों को सजाने के लिए तरह तरह के फर्नीचर रखा करते थे। जैसे सोने के लिए तख्त, चारपाई रखते थे, उस पर गद्दा बिछाते थे। चारपाई के सिरहने गोल मसनद रखी जाती थी। बैठने के लिये सोफे प्रयोग में लाते थे। ये सोफे धातु तथा लकड़ी के बने होते थे। बेंत की कुर्सियां भी होती थीं, जिस पर गद्दी डालकर बैठा जाता था। बैठने के लिए मोढ़े बनाये जाते थे जिस पर चमड़ा और कपड़ों का खोल चढ़ा होता था।

गर्मी के मौसम में लोग उस समय भी पंखे का प्रयोग करते थे। ये पंखे ताड़ के पत्तों के, हाथी के दांत के, रेशमी कपड़े, रेशमी कागजों के बनाये जाते थे। ये पंखे हाथ से चलाये जाते थे।[2]

आय या वेतन :

इस वर्ग के लोगों की आय निश्चित नहीं थी। शिक्षक, विद्वान, कवि, काज़ी, मुफ्ती मुख्यतः अनुदानों, वृत्तियों, वजीफों या पेंशन पर निर्भर रहते थे, जो विद्वान, कवि दरबार में थे या किसी अमीर की सेवा में थे इन्हें समय-समय पर इन लोगों की ओर से इनाम, नकद धन, वृत्तियां मिला करती थीं जिससे इनका खर्च चलता था।[3]

निम्नवर्ग :

मध्य वर्ग के नीचे शिल्पकार, खब्बाज़ (रोटी पकाने वाले) हलवाई, नानबाई, कस्साब, ज़रगर, लुहार, दरजी, टोपी बनाने वाले, मोजा बनाने वाले, तीर कमान बनाने वाले, कुम्हार, धुनिया, रंगरेज, जुलाहे, नाई, धोबी, बढ़ई इत्यादि थे। इनकी

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 57-58, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियां, पृष्ठ 212-213.
2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 58.
3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 191.

स्थिति सामान्य स्तर की थी । ये कठोर परिश्रम करके किसी तरह अपना जीवन-यापन करते थे ।

फकीरों की दशा :

मुस्लिम समाज का एक महत्त्वपूर्ण वर्ग फकीरों का था । फकीरों की संख्या बहुत अधिक थी । दो तरह के फकीर थे । प्रथम श्रेणी में वे फकीर थे जो किसी प्रकार का उत्पादक श्रम नहीं करते थे जैसे सूफी, सन्त, दिव्य पुरुष आदि । ये लोग जनता की धार्मिक-आध्यात्मिक तथा कभी कभी अन्धविश्वासी आवश्यकताओं की पूर्ति किया करते थे । दूसरी श्रेणी में गरीब भिखारी आते थे । ये हाथ में भिक्षा-पात्र लेकर घूम घूमकर भिक्षा माँगा करते थे । ये गरीब लोग जन-साधारण के खैरात पर निर्भर रहते थे । सूफी सन्तों को राज्य और अभिजातवर्ग द्वारा आर्थिक सहायता मिलती थी । इसमें से कुछ फकीर वैरागी एवं एकान्तवासी होते थे जो समाज से अलग जंगल में कुटिया बनाकर रहते थे ।[1]

सैय्यदों का आदर सम्मान :

इब्नबतूता ने बताया है कि हिन्दुस्तान में शरीफों (सैयिदों) को बहुत आदर सम्मान दिया जाता था । एक बार जब मलिक मुकबिल ने इब्नबतूता को अपने घर दावत पर बुलाया उस समय उस नगर का काज़ी वहाँ उपस्थित था । वह दाहिनी आँख से काना था । उसी के सामने बगदाद का शरीफ बैठा हुआ था । यह बाँयी आँख का काना था । शरीफ काज़ी को देख देखकर हंस रहा था । जब काज़ी ने उससे कहा कि क्यों हंस रहे हो तब शरीफ ने कहा कि मैं तुमसे अधिक सुन्दर हूँ । इस कारण तुम्हें देखकर हंस रहा हूँ । तब काज़ी ने पूछा कि, किस प्रकार तुम हमसे सुन्दर हो तब शरीफ ने कहा तुम भी दाहिनी आँख से काने हो और मैं बायीं आँख से काना हूँ तब उस समय वहाँ उपस्थित सभी लोग हंसने लगे । काज़ी ने शरीफ को

---

1. के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 147.

जवाब नहीं दिया, क्योंकि हिन्दुस्तान में सैय्यदों का बड़ा आदर किया जाता था।[1]

दास प्रथा :

मुसलमानों में दास प्रथा का भी प्रचलन था । हजारों की संख्या में व्यक्ति दास बनाकर बेच दिये जाते थे । अगर वे मुसलमान धर्म स्वीकार कर लेते थे तो भी इसके बावजूद उनके साथ समानता और सौहार्द का व्यवहार नहीं किया जाता था । दासों के साथ कोई सहानुभूति नहीं की जाती थी । राजकीय दासों की संख्या बहुत अधिक हुआ करती थी ।[2] सामन्तों, मनसबदारों और धनी व्यक्तियों के वैभव का अनुमान उनके दास दासियों को देखकर लगाया जाता था । जिस व्यक्ति के पास जितने अधिक दास-दासी हुआ करते थे वह व्यक्ति उतना धनी माना जाता था। 15वीं शताब्दी के किसी भी इतिहासकार ने दासों को खरीदने और बेचने का उल्लेख नहीं किया है । इससे यह मालूम पडता है कि इस अवधि में दास बनाने की प्रथा कम हो गयी थी । दासों को विभिन्न कारीगरों के साथ लगा दिया गया था । बाबर ने भी भारतवर्ष के शिल्पकारों और कारीगरों का वर्णन किया है पर दास-प्रथा का कहीं भी वर्णन नहीं किया है ।[3]

----

1. इब्नबतूता : द रेहेला आफ इब्नबतूता, पृष्ठ 56-57, (अनुवादक) सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तुगलककालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 274, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृ0 104.

2. डॉ0 ईश्वरी प्रसाद : मध्ययुग का संक्षिप्त इतिहास, पृष्ठ 237, डॉ0 सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 46.

3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 208.

स्त्रियाँ भी दास बनायी जाती थी । इन्हें दासी कहा जाता था । स्त्री दास दो प्रकार की होती थी : एक जो घरेलू कामों के लिए रखी जाती थी, तथा दूसरी वे जो साहचर्य या सुखभोग के लिये खरीदी जाती थीं । घरेलू दासी अशिक्षित और अकुशल होती थी । वे केवल घर का काम किया करती थीं । ये हर प्रकार से अपमानित की जाती थीं । दूसरे प्रकार की दास स्त्रियों की स्थिति अधिक सम्मानपूर्ण होती थी । ये राज-परिवार में प्रभावशाली होती थी[1] पर वे काम-क्रीड़ा को शान्त करने का साधन समझी जाती थी । इनके द्वारा व्यभिचार का प्रसार और प्रचार होता था ।[2]

. . .

----

1. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 107-108.

2. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 46.

हिन्दू समाज में स्त्रियों की दशा :

किसी भी समाज के रहन-सहन के स्तर को या मापदण्ड़ को उस काल की स्त्रियों को देखकर आँका जा सकता है । हिन्दू कानून स्त्रियों को समाज में आदर की दृष्टि से देखता है । मनु ने लिखा है, "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः" अर्थात् जहाँ नारियों को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है वहाँ देवता निवास करते हैं ।

स्त्री और पुरुष सृष्टि की दो रचनायें हैं । दोनों का महत्त्व बराबर है परन्तु स्त्री के लिए कुछ मर्यादाएँ भी निर्धारित की गयी हैं जिसके कारण स्त्रियों को पुरुषों से नीचा समझा जाता रहा है/उसे हमेशा किसी न किसी सहारे की आवश्यकता रही है ।[1] बाल्यावस्था में अपने पिता के अधीन विवाह होने के बाद पति के अधीन और विधवा होने पर पुत्र या अन्य परिवारजनों के अधीन रहना पड़ता था । पूर्वकाल से ही परिवार में कन्या का जन्म होने पर दुःख और पुत्र का जन्म होने पर खुशी मनायी जाती रही है[2] पर समाज में इनका महत्त्वपूर्ण स्थान था क्यों कि शिशु के जन्म से लेकर मृत्यु तक परिवार का कोई भी संस्कार इनके बिना पूर्ण नहीं होता था ।[3] हिन्दू समाज में स्त्रियों का महत्त्वपूर्ण स्थान होने के बावजूद स्त्रियों

---

1. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 268.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 20, राधेश्याम: मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 221-236, बन्दना पाराशर : बाबर - भारतीय सन्दर्भ में पृष्ठ 124, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 244, के0 एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 170, द देहली सल्तनत: भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 592.

3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 292, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन एवं उनकी परिस्थितियाँ, पृ0 174.

की दशा आर्थिक रूप से आश्रित जैसी रही है ।

उच्च वर्ग की स्त्रियों की दशा अच्छी थी ।
स्त्रियों को अन्तःपुर में रहना पड़ता था । यहाँ पर वे एकदम निश्चित होकर रहती थीं । यहाँ उनके खाने पीने, रहने की उत्तम व्यवस्था की जाती थीं । यहाँ उनको पद, प्रतिष्ठा एवं स्तर के अनुसार सम्मान दिया जाता था । बिना शासक की अनुमति के उन्हें अन्तःपुर के बाहर जाने की अनुमति नहीं थीं । स्त्रियाँ माँ, पत्नी, बहन, पुत्री के रूप में सम्मान की पात्र थीं । हिन्दू शासकों की पत्नियों, रखैलों को पति की मृत्यु के बाद अथवा युद्ध में पराजय होने के पश्चात् अपनी मर्यादा की रक्षा करने के लिए जौहर करके मृत्यु का वरण करने की प्रथा प्रचलित थी ।[1]

धनी होने के कारण उनके जीवन-यापन का स्तर ऊँचा था । उन्हें अपने खर्चे के लिए पर्याप्त धनराशि उपलब्ध रहती थी । वे विभिन्न त्यौहारों एवं पर्वों पर दान भी देती थीं ।[2] स्त्रियों की शिक्षा का भी प्रबन्ध रहता था । घर पर ही शिक्षक आकर पढ़ाते थे ।[3]

----

1. के०एस० लाल : द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 269.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 292, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 426, के०एस० लाल : द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 269.

3. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 264, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 340, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 336, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 227-228.

उच्च वर्ग की स्त्रियों को अपनी मान-मर्यादा एवं सतीत्व की रक्षा के लिये पर्दा करना आवश्यक था । पर-पुरुष की दृष्टि उनके खुले चेहरे पर अशोभनीय समझी जाती थी । सार्वजनिक समारोह में उनके बैठने के लिए अलग से व्यवस्था की जाती थी । इन्हें घर के बाहर कहीं आना जाना होता था तो पालकी में बैठकर जाती थीं ।[1] वे घूँघट भी करती थीं[2] एस०एम० जाफर महोदय ने हिन्दू स्त्रियों के लिये पर्दे का प्रयोग धार्मिकता के कारण भी आवश्यक बताया है ।[3]

जहाँ तक मध्य वर्ग की स्त्रियों की दशा का प्रश्न है 9 इस वर्ग की स्त्रियों को उच्च वर्ग की स्त्रियों की अपेक्षा थोड़ी अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त थी । पर्दा प्रथा होने के कारण उन्हें स्वतन्त्रता पूर्वक अपने घर के बाहर आने-जाने की अनुमति नहीं थी । अगर घर के बाहर जाती थीं तो पर्दा करके जाती थीं ।[4] इससे यह पता

---

1. युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 122, डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 51, के०एम० अशरफ: हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 179, द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 609.
2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 313, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 176., चोपड़ा पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 40.
3. एस०एम० जफर : कल्चरल आस्पेक्ट्स ऑफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृष्ठ 198-99.
4. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 174, चोपड़ा पुरी एण्ड दास : भारत की सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 40.

चलता है कि स्त्रियाँ पर्दा करके घर के बाहर आ जा सकती थी । विद्यापति ने अपनी कृति कीर्तिलता में लिखा है कि जौनपुर की बाजारों में स्त्रियों की इतनी अधिक भीड़ होती थी कि कभी कभी वे आपस में टकरा जाती थीं जिससे उनकी चूड़ियाँ टूट जाती थीं ।[1]

इस वर्ग की स्त्रियाँ अपने घर का काम, बच्चों का काम, पति की सेवा करना ही अपना पवित्र कर्तव्य समझती थीं । वे अपने घर-परिवार, पति, बच्चों के अलावा बाहरी संसार में क्या हो रहा है इसमें कोई रुचि नहीं रखती थीं । उन्हें बचपन से इसी बात की शिक्षा दी जाती थी ताकि आगे चलकर एक कुशल गृहणी बन सकें ।[2]

इनकी शिक्षा की ओर कम ध्यान दिया जाता था । वे अपने घर पर ही पुस्तकीय शिक्षा के साथ कढ़ाई, सिलाई, बुनाई, खाना बनाने, आदि की शिक्षा ग्रहण करती थी । आमतौर पर अधिक शिक्षा का प्रचलन नहीं था ।[3]

निम्न वर्ग की स्त्रियों में पर्दा प्रथा नहीं थी । इस कारण वे न केवल अपने घरों में सारा काम करती थीं बल्कि शासकों, अमीरों,

---

1. विद्यापति : कीर्तिलता, पृष्ठ 24.
2. के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 174, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 292.
3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत की सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठ-भूमि, पृष्ठ 40, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 174.

सामन्तों, सम्मानित व्यक्तियों के घरों में जाकर सारा काम करना पड़ता था ।
उन्हें हर महीने वेतन दिया जाता था तथा त्यौहारों पर उपहार, खाना, कपड़ा भी दिया जाता था जिससे उनका खर्च चलता था ।[1]

बहुत सी स्त्रियाँ दासी या बाँदी बन जाया करती थीं । कभी-कभी शासक और धनी मानी व्यक्तियों के अधीन हो जाती थीं । उनकी जिन्दगी पूर्ण तया आश्रितों जैसी ही होती थीं । चूँकि हिन्दू समाज में व्यावसायिक विविधता के आधार पर जातिगत वर्गीकरण था अतः विभिन्न जातियों की स्त्रियाँ अपने पारिवारिक कार्यों में पुरुषों का हाथ बँटाती थी । कई कार्य ऐसे थे जो केवल स्त्रियाँ ही करती थी ।[2] जैसे शिशु के जन्म के समय दाई का कार्य, नाउन, धोबिन, मालिन, आया इत्यादि के कार्य । अस्पृश्य समझी जाने वाली जातियों की f स्त्रियाँ मैला साफ करने, कूड़ा उठाने आदि का कार्य करती थी ।[3] पारिवारिक

---

1. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 174-175, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 293, चोपड़ा पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 40.
2. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 264, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 175.
3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृ० 293. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 174-175.

खर्च को चलाने में ये स्त्रियाँ पुरुषों का हाथ बँटाती थीं । यह श्रमप्रधान वर्ग था । इसमें गरीबी अधिक थी । ये स्त्रियाँ बहुत परिश्रमी होती थीं । इस वर्ग में जौहर, सती-प्रथा आदि तो नहीं प्रचलित थीं किन्तु बाल-विवाह प्रचलित था । व्यापक अशिक्षा का बोलबाला था ।[1] आर्थिक रूप से इस वर्ग की स्त्रियाँ अपना महत्त्व अवश्य रखती थीं । इस वर्ग में विधवा का पुनर्विवाह भी सम्भव था जबकि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य इन उच्च जातियों में विधवा का पुनर्विवाह नहीं होता था। इस वर्ग में पर्दा-प्रथा का प्रचलन बहुत कम था क्योंकि पर्दा में इनका गुजारा नहीं हो सकता था ।[2]

माँ के रूप में स्त्रियों का बहुत अधिक मान-सम्मान होता था । जब राजा अपनी माँ के सामने जाते थे तो उनका अभिवादन, चरण छूकर करते थे । मेवाड़ के राजा संग्राम सिंह जब तक अपनी माँ के दर्शन नहीं कर लेते थे तब तक भोजन नहीं करते थे ।[3]

स्त्री की सुरक्षा खतरे में रहती थी क्योंकि शासक व अमीर वर्ग के लोगों को सुन्दर स्त्रियों को प्राप्त करने की हमेशा लालसा बनी रहती थीं । कभी-कभी तो इसी उद्देश्य से युद्ध तक किए जाते थे । वे विजयी होने पर धन-सम्पत्ति के साथ साथ स्त्रियों पर भी अधिकार कर लेते थे और पुरस्कार के रूप में उनका आपस में

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 293, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 174-175.

2. द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 609.

3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 42-44.

वितरण भी करते थे ।[1] इसी कारण हिन्दू लोग अपनी कन्याओं को अपमान और अत्याचार से बचाने के लिए उनका विवाह बाल्यावस्था में (7 से 12 वर्ष की उम्र में) कर दिया करते थे ।[2]

16वीं शताब्दी के बंगाली कवि मुकुंद राय का कथन है कि उन दिनों हिन्दू समाज में अगर कन्या का विवाह 6 से 8 वर्ष के बीच नहीं किया जाता था तो उसे अच्छा नहीं माना जाता था/इसलिये बाल-विवाह किया जाता था । इनका कथन है कि जो पिता अपनी बेटी का विवाह 9 वर्ष की उम्र तक कर देता था वह भाग्यवान और ईश्वर का कृपापात्र है । परन्तु इससे एक बुराई अवश्य है कि कम उम्र में विवाह करने से लड़की लड़के की मनपसन्द शादी नहीं होती थी ।[3] इससे स्त्रियों की दशा और खराब हो गयी । यह व्यवस्था अकबर के समय भी थी । अकबर ने बाल-विवाह पर प्रतिबन्ध लगा दिया था । 14 वर्ष से कम उम्र की लड़की के विवाह करने पर पाबन्दी लगा दी थी किन्तु यह प्रथा चलती ही रही । शाही आदेश इस दिशा में कुछ नहीं कर सका ।[4]

सामान्यत: एक विवाह करने की प्रथा थी । दूसरा विवाह करने की अनुमति तब दी जाती थीं जब पहली पत्नी की मृत्यु हो गयी हो या वह बाँझ हो

----

1. द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृ० 582.
2. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 184, द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृ० 586-587, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 184.
3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास: भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृ० 41.
4. युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 122.

परन्तु सुल्तान, अमीर तथा धनवान लोग बिना किसी कारण के कई-कई पत्नियाँ रख लिया करते थे। केवल कुछ ही लोग इसके अपवाद थे।[1]

निकोलो कोन्टी के अनुसार एक विवाह करने की प्रथा थी परन्तु बहु-विवाह भी होते थे। हिन्दुओं में अपनी जाति को छोड़कर दूसरी जाति में विवाह करना मना था।[2] पहाड़ों में एक स्त्री को कई पति रखने का अधिकार था।[3]

दहेज प्रथा भी प्रचलित थी जो समाज के सभी वर्गों के लिये सामान्य रूप से अभिशाप थी। दहेज अधिक होने के कारण लोग अपनी बेटियों का विवाह अधिक उम्र के लड़के से कर दिया करते थे। तब अकबर ने आदेश दिया कि कन्या से 12 वर्ष से अधिक उम्र के लड़के से विवाह न किया जाये।[4] दहेज में सोना, चाँदी, हीरे,

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 32-34, यूसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 122, एल0 पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 244.
2. निकोलो कोन्टी : ट्रैवेल्स आफ निकोलो कोन्टी, मेगर इण्डिया इन 15न्थ सेन्चुरी हैक्लूट सोसायटी, लन्दन, पृष्ठ 185-187, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास: भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 31, राधेश्याम: सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 28.
3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 289.
4. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 31-41, बन्दना पाराशर : बाबर भारतीय सन्दर्भ में, पृष्ठ 129, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 184.

मोती, कपड़े, हैसियतानुसार भूमि, हाथी, घोड़े, दास, दासियाँ भी दी जाती थी ।[1]

विधवा की दशा एवं सती प्रथा :

हिन्दू धर्म में अगर कोई स्त्री विधवा हो जाती थी तो उसे दूसरा विवाह करने की इजाजत नहीं थी । केवल कुछ नीची जाति की स्त्रियाँ ही विधवा होने पर दूसरा विवाह करती थीं । विधवाओं की दशा अत्यन्त दयनीय थी । इन्हें या तो अपने मृत पति के साथ चिता में जलकर सती होना पड़ता था या मृत्यु-पर्यन्त सन्यासियों की तरह जीवन व्यतीत करना पड़ता था ।[2] अगर किसी लड़की की केवल सगाई ही हुयी होती थी और उसका पति मर जाता था तो भी उसे उसके पति के साथ सती होने के लिये मजबूर किया जाता था ।[3] ज्यादातर

----

1. डॉ० युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 122, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 179.
2. डॉ० रत्नचन्द शर्मा : मुगलकालीन सगुण भक्ति काव्य का सांस्कृतिक विश्लेषण, पृष्ठ 184, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 191, द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 591-592.
3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 313, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक और सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 42, ए०वी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 203, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 21, शेख रिज़कुल्लाह मुश्ताक़ी: वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 123, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 166.

स्त्रियाँ सती हो जाया करती थीं क्योंकि विधवाओं के साथ बहुत बुरा व्यवहार किया जाता था । समाज में उन्हें अत्यन्त घृणा एवं अपमान की दृष्टि से देखा जाता था और अत्यन्त दुःखद जीवन व्यतीत करना पड़ता था । उन्हें शुभ कार्यों में भाग लेने की अनुमति नहीं थी। उन्हें रंगीन वस्त्र नहीं पहनने दिया जाता था, न वे श्रृंगार कर सकती थीं, न लम्बे बाल रख सकती थीं। इनका मुख देखना लोग पसन्द नहीं करते थे और सार्वजनिक कुओं से पानी नहीं भरने दिया जाता था ।

इन विधवाओं को दासी जैसा जीवन व्यतीत करना पड़ता था । इन विधवाओं को धरती पर ईश्वर का अभिशाप समझा जाता था ।[1] मुस्लिम धर्म प्रचारकों ने अक्सर हिन्दू विधवाओं को इस्लाम धर्म ग्रहण करने के लिये कहा क्योंकि जब मुस्लिम धर्म प्रचारकों की इन हिन्दू विधवाओं से भेंट होती थी तो वे हमेशा एक ही प्रश्न पूँछते थे कि तुम्हें किस अपराध के लिये इस सांसारिक सुख-भोग से वंचित किया गया है, जबकि इस्लाम धर्म विधवा को फिर सुहागन बनने की अनुमति देता है । इसलिये तुम लोग इस्लाम धर्म स्वीकार कर दुबारा विवाह कर सुहागन बनो[2]। परन्तु विधवाएं इस्लाम धर्म स्वीकार नहीं करती थीं । अपमान और अत्याचार स्वीकार

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 28-42, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत का इतिहास, पृष्ठ 264. रामगोपाल : भारतीय मुसलमानों का राजनैतिक इतिहास, पृष्ठ 7-8, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 313, डॉ० रत्न चन्द शर्मा : मुगल भक्ति काव्य का सांस्कृतिक विश्लेषण, पृ० 184, के०एम० अशरफ: हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 195.

2. रामगोपाल : भारतीय मुसलमानों का राजनैतिक इतिहास, पृष्ठ 8.

करने के बजाय सती होना अधिक पसन्द करती थीं। सती-प्रथा समाज के लिये एक बहुत बड़ा अभिशाप थी। एक अच्छाई अवश्य थी कि हिन्दू धर्म में गर्भवती स्त्रियों को सती नहीं होने दिया जाता था।[1]

इब्नबतूता ने बताया कि जो स्त्री सती होना चाहती थी उसे पहले सुल्तान से आज्ञा या अनुमति प्रमाणपत्र लेना पड़ता थी। अगर आज्ञा मिल जाती थी तब स्त्री सती होती थी। ऐसा इस कारण किया गया ताकि विधवायें कम संख्या में जलायी जायें। उसे बहुत बड़ी संख्या में लोग देखने आते थे।[2] मुहम्मद तुग़लक प्रथम शासक था जिसने इस प्रथा पर प्रतिबन्ध लगाया था। चूँकि यह प्रथा अति प्राचीन काल से चली आ रही है। इस कारण शासक इसे चाहकर भी पूर्णरूप से बन्द न कर पाये।[3] मुगल सम्राट अकबर ने भी इस प्रथा को बन्द करने का प्रयास किया और निर्देश दिया कि अगर कोई विधवा सती होना नहीं चाहती तो उसे जबरजस्ती न जलाया जाये और अगर किसी स्त्री ने अपने पति के साथ सुखभोग नहीं किया है और

----

1. डॉ० रत्न चन्द शर्मा : मुगलकालीन सगुण भक्ति काव्य का सांस्कृतिक विश्लेषण, पृष्ठ 184, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 192.

2. इब्नबतूता : द रेहला आफ इब्नबतूता, पृष्ठ 137, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी, तुग़लककालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 171, के०एस० लाल : द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 269, शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 123, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 166, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 193-196.

3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी: वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 123, अनुवादक: रिज़वी, वही, पृ0 166.

वह विधवा हो जाती है तो उस स्त्री का विवाह विधुर से कर देना चाहिए । अकबर ने जहाँगीर के ससुर भगवानदास की भांजी, जयमल की विधवा, की रक्षा की। उसका पुत्र उसे सती होने के लिये मजबूर कर रहा था तो उसे अकबर ने जेलखाने में डलवा दिया था[1] इस प्रकार समाज में अपनी इज्जत, मान-मर्यादा-सम्मान बनाये रखने के लिये उच्च वर्ग की विधवाओं को इच्छा न होते हुये भी सती होना पड़ता था ।[2]

कु-प्रथाएँ :

पूर्वकाल की भाँति इस अवधि में भी हिन्दू समाज में कुछ कु-प्रथाएँ विद्यमान थीं । जैसे वेश्यावृत्ति, जौहर-प्रथा, देवदासी-प्रथा, बलि-प्रथा, अस्पृश्यता आदि। वेश्यावृत्ति इस कारण फैली कि विदेशी आक्रमण के कारण अनेक समृद्धशाली परिवार उजड़ गये थे। जो स्त्रियाँ एकदम अकेली पड़ गयी उन्होंने अपना पेट भरने के लिये वेश्या का पेशा अपनाया[3]। जो विदेशी अपना घर परिवार छोड़कर भारतवर्ष आये थे वेश्यावृत्ति समाज के लिए अभिशाप थी । वेश्याओं का व्यवहार परिष्कृत और सुसंस्कृत होता था । कुछ लोग वेश्याओं से बड़े प्रभावित होते थे ।[4]

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 32-43, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 196-197.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 265.

3. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 278-279, विद्यापति : कीर्तिलता, पृष्ठ 14-16, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 197.

4. के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 56.

जौहर प्रथा भी प्रचलित थी । जौहर प्रथा का पालन उच्च वर्ग की महिलाओं एवं रानियों को करना पड़ता था । क्योंकि जब युद्ध में इनके राजा हार जाते थे तो इन्हें विजयी राजाओं के साथ रहना पड़ता था जो उनके लिये बहुत लज्जाजनक बात होती थी/इसलिये ये अपने मान-सम्मान की रक्षा के लिए जौहर करती थीं । ये स्त्रियाँ दुर्ग में अथवा महलों के भीतर सामूहिक रूप से चिता बनाकर जौहर करती थी । जब तैमूर ने भारतवर्ष के भटनेर नामक स्थान पर आक्रमण किया तो तैमूर ने नृशंसतापूर्वक लोगों की हत्या करनी प्रारम्भ कर दी । तब इससे बचने के लिए कई मुसलमान एवं हिन्दू परिवार की स्त्रियों ने आत्मदाह करके जौहर की प्रथा का पालन किया ।[1]

दास-प्रथा भी प्रचलित थी । विजयी राजा पराजित राजाओं की स्त्रियों को दासी बनाकर एक दूसरे राजा को भेंट दिया करते थे, उनसे नृत्य करवाते थे । जबकि उच्च वर्ग की महिलाओं के लिये यह बहुत शर्म की बात होती थी ।[2]

----

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 426, के0एस0 लाल: द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 269, बन्दना पाराशर : बाबर भारतीय सन्दर्भ में, पृष्ठ 125, डा0 रत्न चन्द शर्मा : मुगल कालीन सगुण भक्ति काव्य का संस्कृति विश्लेषण, पृष्ठ 184, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 290, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 197-198.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 208, डा0 सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 46.

हिन्दुओं में एक कु-प्रथा देवदासी प्रथा थी । कतिपय लोग अपनी एक पुत्री को बाल्यकाल में ही मन्दिर में पूजा-अर्चना के समय नृत्य व गीत आदि गाने के लिए देवदासी बनने के लिए दे देते थे । इन्हें देवदासी के रूप में मन्दिर में रख लिया जाता था । देवदासियों को मन्दिर में धार्मिक कार्य करने पड़ते थे । इसके अतिरिक्त उनसे कतिपय लोग अनैतिक कार्य भी करवाते थे । अतः यह प्रथा कुत्सित होती गई ।[1]

एक अन्य प्रथा दिव्य-प्रथा भी प्रचलित थी जो सतीत्व एवं सत्य आचरण की विशुद्धता को प्रमाणित करने के लिये प्राचीनकाल से चली आ रही थी । इसमें कुछ विचित्र रीतियाँ थी जैसे अग्नि में हाथ डालना, गंगाजल को हाथ में लेकर उसे सुखा देना, तुलसी को हाथ में लेकर उसे सुखा देना, खौलते हुये तेल में हाथ डालना आदि। इसे दिव्य कहा गया है । वाल्मीकि रामायण में राम-रावण संग्राम के बाद सीता को अग्नि परीक्षा देनी पड़ी थी ।[2] अन्धविश्वासी ग्रामीणों में यह प्रथा कभी कभी अपना रूप दिखा देती थी ।

---

1. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 244,
   मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 21.

2. डॉ० रत्न चन्द शर्मा : मुगलकालीन सगुण भक्ति काव्य का सांस्कृतिक विश्लेषण, पृष्ठ 185.

मुस्लिम समाज में स्त्रियों की दशा :

जहाँ तक स्त्रियों की शिक्षा, उनकी वेशभूषा व उनके रहने का ढंग का प्रश्न मुस्लिम समाज में है इसका निर्धारण वर्ग के अनुसार था । इस समय समाज चूँकि 3 वर्गों में विभाजित था इस कारण अलग अलग वर्गों की स्त्रियों की दशा अलग अलग थी ।

1. उच्च वर्ग :

उच्च वर्ग में शाही परिवार की महिलाएं, अमीरों की महिलाएं आदि आती थीं । ये लोग धन-सम्पन्न थे । इस कारण इस वर्ग की स्त्रियों की दशा अच्छी थी । स्त्रियों को बड़े आदर एवं मान-सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था/ इस्लाम धर्म के प्रवर्तक मुहम्मद साहब ने भी स्त्रियों की प्रतिष्ठा पर बल दिया है। वे अच्छे वस्त्र एवं सुन्दर आभूषण पहना करती थी । वे पर्दा करती थीं ।

पर्दा उनकी मर्यादा और उच्चता का प्रतीक समझा जाता था । घर से बाहर जाते समय वे विशेष रूप से बुर्कों का प्रयोग करती थीं ।[1] इस वर्ग की स्त्रियों की दशा अच्छी होते हुये भी उन्हें एक कैदी की तरह हरम में रहना पड़ता था । पूर्ण स्वतन्त्रता नहीं प्राप्त थी । उनकी स्थिति पुरुषों से नीची थी ।

----

1. एस0एम0 जाफर : सम कल्चरल आस्पेक्ट्स आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृष्ठ 198, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 244, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 313, युसूफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 122, बन्दना पाराशर : बाबर भारतीय सन्दर्भ में, पृष्ठ 210, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में - प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 258-260, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृ0 177-178.

उन पर बहुत पाबन्दियाँ लगायी गयी थीं । विदेशी आक्रमणों एवं विद्रोहों का खतरा सदैव बना रहता था[1] इसलिये सामाजिक सुरक्षा के कारण शासक, अमीर अपनी स्त्रियों को महलों [अन्त:पुर हरम] की चहारदीवारी के अन्दर बन्द करके रखते थे, ताकि वे वहाँ सुरक्षात्मक तरीके से रह सकें । हरम में उन्हें अपने अनुसार जीवन बिताने की पूर्ण स्वतन्त्रता थी । वहाँ उनको अच्छा खाने पहनने एवं रहने की, सारी सुविधायें दी जाती थी । उन्हें समय समय पर इनाम एवं सम्मान भी दिया जाता था परन्तु उन पर एक सबसे बड़ी पाबन्दी यह थी कि बिना शासक अनुमति के उन्हें हरम से बाहर अकेले जाने की अनुमति नहीं थी । अगर वे जाना चाहती थीं तो डोली, पालकी जो चारों ओर कपड़ों से ढँकी होती थी उस पर बैठकर जाती थीं और उनके साथ सिपाही जाते थे ।[2]

उच्च वर्ग की स्त्रियों को शिक्षा की सुविधा प्राप्त थी परन्तु उन्हें स्कूल, या मदरसा में नहीं भेजा जाता था । उन्हें पढ़ाने के लिये घर पर ही अध्यापक आते थे ।

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 313, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 340, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 336, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 227-228, द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 609.

2. राधेश्याम : सल्तनत कालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 284-285, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 40, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 176.

घर पर रहकर ही वह राजनीति, घुड़सवारी, तलवारबाजी, तैराकी, साहित्य आदि की शिक्षा ग्रहण किया करती थीं ।[1]

शासक वर्ग की स्त्रियाँ राजनीति में भी हिस्सा लिया करती थीं । जब सुल्तान महमूद शाह शर्की की मृत्यु हो गयी तब सुल्तान की माँबीबी राजी ने अपने अमीरों से राय सलाह करके सबकी सहमति से शाहजादा भीकन खाँ को सिंहासन पर बैठाया था[2] । सुल्तान इब्राहीम लोदी की माँ ने ही बाबर को खाने में विष मिलवाकर दिया था क्योंकि इब्राहीम लोदी की मृत्यु के बाद वह बाबर से चिढ़ गयी थी ।[3]

स्त्रियाँ युद्धों में भी भाग लेती थीं । जिस समय बहलोल लोदी सरहिन्द में था उस समय सुल्तान महमूद शर्की ने दिल्ली पर चढ़ाई कर दी तब दिल्ली के किले के भीतर इस्लाम खाँ की पत्नी बीबी मस्तू तथा समस्त अफ़गान सिपाही किले

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 285, के० एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परि-स्थितियाँ, पृष्ठ 176.

2. अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 14, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 313, इलियट एवं डाउसन: भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 67, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 303-304, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 204.

3. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 25.

की रक्षा करने लगे । बीबी मस्तू कुछ स्त्रियों को पुरुषों के वस्त्र पहनाकर कोट के ऊपर भेज देती थी । वे किले की रक्षा किया करती थीं[1] ताकि शत्रु समझे कि पुरुष हैं ।

इसी प्रकार सुल्तान महमूद शर्की ने अपने सिंहासनारोहण के प्रथम वर्ष लाहौर पर आक्रमण किया पर सुल्तान अलाउद्दीन के अमीरों ने महमूद शर्की का साथ नहीं दिया कारण यह था कि सुल्तान अलाउद्दीन की पुत्री का विवाह उससे हुआ था । उसने अपने पति से कहा कि, "देहली का राज्य मेरे पूर्वजों का था । बहलोल खाँ कौन होता है मेरे पूर्वजों के राज्य पर अधिकार जताये । यदि तू आक्रमण न करेगा तो मैं कमर में निषंग बाँधकर बहलोल से युद्ध करूँगी । सुल्तान अपनी पत्नी के शब्दों से बड़ा खुश हुआ और सेना लेकर दिल्ली को घेर लिया ।[2]

----

1. शेख रिज़कुल्लाह मुश्ताकी : वाकेआते मुश्ताकी, पृष्ठ 7, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 95, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 13, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 247, इलियट एवं डाउसन: भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 2, अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 11, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 311.

2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 2, अहमद यादगार: तारीखे शाही, पृष्ठ 10, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 311, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 13, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 246-247.

अहमद खाँ का भतीजा नौरंग खाँ एक रूपवती से बहुत प्रेम करता था। यहाँ तक कि जब वह युद्ध में जाता या शिकार खेलने जाता था तब भी उसे अपने साथ ले जाता था। जब वह मुल्तान पर आक्रमण करने गया था तब वह स्त्री भी उसके साथ गयी थी। जब नौरंग खाँ युद्ध करते हुये मारा गया तब वह स्त्री अपने प्रेमी के स्थान पर युद्ध करने को तैयार हुयी। उसने अस्त्र-शस्त्र धारण किये और सोने से मढ़ा हुआ निषंग अपनी कमर में लगाया और खोल पहनकर नौरंग की सेना में प्रविष्ट हो गयी तब उस स्त्री ने चालाकी से काम किया[1] और उसने नौरंग के भाई से कहा कि, "जब मैं तुम्हारी सेना में प्रविष्ट हूँ तब तुम सारी सेना को मेरे अभिवादन के लिये भेजो और यह घोषणा कर दो कि अहमद खाँ का पुत्र शहजादा आ गया है ताकि शत्रुओं की सेना का साहस कम हो जाये। उन्हें यह न पता चल पाये कि सेनापति की हत्या हो गयी।" फिर इसी प्रकार की घोषणा की गयी। शाही सेना परास्त हुयी। जब अहमद खाँ को विजय की खबर मिली तो वह आश्चर्यचकित रह गया और दाँतों तले अंगुली दबा ली। फिर वह स्त्री उसी प्रकार सैनिकों के वस्त्र धारण किये अहमद खाँ के समक्ष उपस्थित हुयी। तब अहमद खाँ ने उसकी वीरता, योग्यता, साहस एवं चतुराई की बड़ी प्रशंसा करी और उसे ईनाम के रूप में 10,000 रूपये के आभूषण प्रदान किये।[2]

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 5.

2. अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 21-22, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 317-318, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 5.

यद्यपि मुस्लिम समाज में जौहर का प्रथा कोई स्थापित प्रथा नहीं रही है फिर भी समय समय पर इसका उल्लेख मिलता है । उदाहरण के लिए तैमूर के आक्रमण के दौरान भटनेर की विजय हुई । इस विजय के होते ही कई मुस्लिम औरतों ने अपने को अपमान से बचाने के लिए जौहर की ज्वाला में झोंक दिया ।[1]

बहलोल लोदी के राज्यकाल की एक व्यभिचारिणी की कहानी :

स्त्रियाँ अत्यन्त वीर एवं उदार हृदय के साथ उग्र हृदय वाली भी होती थी । माँ अपने स्वार्थ के आगे अपने पुत्र तक की हत्या कर देती थीं इसका उदाहरण निम्न है :-

सुल्तान बहलोल के राज्यकाल में एक सिपाही था । वह कहीं यात्रा पर जाने वाला था । यात्रा हेतु प्रस्थान करते समय उसने अपने पड़ोसी से आग्रह किया कि, "तुम कभी कभी मेरे घर के विषय में पूँछताछ कर लिया करना, संभवत: किसी बात की कोई आवश्यकता पड़ जाय ।" जब वह चला गया तो पड़ोसी कभी कभी आकर पूँछ जाता था कि, "यदि कोई कार्य हो तो बता दो" पड़ोसी कभी कभी उसके घर पर एक व्यक्ति को खड़ा देखता था । वह व्यक्ति पड़ोसी को देखकर हट जाता था । पड़ोसी ने सोचा कि, "यदि यह व्यक्ति इसका सम्बन्धी होता तो फिर उसके होते हुए वह मुझसे क्यों सिफारिश करता और बाजार से कुछ लाने के लिए मुझसे क्यों कहता ? यदि कोई अपरिचित व्यक्ति है तो फिर क्यों यहाँ आता है? इस बात के सम्बन्ध में पता लगाना चाहिये ।" पड़ोसी ने अपने घर में पहुँचकर अपने घर की उस दीवार में जो उस व्यक्ति तथा अपने घर के बीच में थी एक छेद कर दिया । वह उस छेद से देखा करता था कि वह अपरिचित व्यक्ति उसके घर में

---

1. के०एम० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 269.

आता जाता है । पड़ोसी ने सोचा कि उसके हृदय में कोई न कोई बुराई अवश्य है । एक रात्रि में वह व्यक्ति उस स्त्री के घर में पहुँचा । स्त्री ने सुन्दर फ़र्श बिछाये और पलंग को रंगीन कपड़ों द्वारा सजाया और गजक, मदिरा तथा पान की व्यवस्था कर उस युवक के पास आ गयी । स्त्री का 2 वर्षीय पुत्र दूसरी चारपाई पर सो रहा था । वह जाग उठा और रोने लगा । स्त्री ने उठकर उसे सुला दिया और फिर उस पुरुष के पास आ गयी । कुछ समय उपरान्त वह बालक उठकर फिर रोने लगा । स्त्री ने जाकर उसका (अपने पुत्र का) गला काट डाला । कुछ समय तक जब बालक न जागा तो पुरुष ने पूछा कि, "वह बालक बार-बार जागता था, बड़ी देर से नहीं जगा । इसका क्या कारण है? उसने कहा कि, "मैंने उसे अच्छी तरह सुला दिया है ।" उस व्यक्ति ने जाकर देखा तो पता चला कि उसका गला कटा हुआ है । वह बड़ा भयभीत हुआ और उसने आकर कहा कि, "तूने कैसी दुष्टता प्रदर्शित की है । एक क्षण भर के आनन्द के लिये तूने अपने कलेजे के टुकड़े की हत्या कर दी, तू मेरे प्रति कैसे निष्ठावान रहोगी ; तेरे ऊपर विश्वास न करना चाहिए, कारण कि तूने अपने पुत्र का गला काट डाला है ।" स्त्री ने कहा कि, "मैंने तेरे लिए अपने पुत्र की हत्या कर दी और तुम पर उसे न्यौछावर कर दिया, तेरा भी विश्वास मुझसे हट गया और पुत्र भी हाथ से गया । जो कुछ होना था वह हो गया किन्तु तू मुझे अपमानित मत होने दे । मैं इस लाश को घर में दफ़्न किये देती हूँ । मैं समझती हूँ कि तेरा मुझसे प्रेम नहीं रहा, अब तू लौटकर न आयेगा । इसे दफ़्न करने में तू मेरी सहायता कर, कारण कि मुझसे यह कार्य अकेले न हो सकेगा ।" घर के भीतर से उसने कुदाल लाकर उसे दे दिया । एक स्थान पर कब्र खोदी गयी । उस व्यक्ति ने कब्र के पास खड़े होकर लाश को लाने के लिए कहा और कुदाल कब्र के किनारे पर रख दी । स्त्री ने लाश उसे दे दी । उसने लाश को कब्र में रखा । वह व्यक्ति सिर झुकाये हुए ही था कि उस स्त्री ने दोनों हाथ में कुदाल पकड़कर उस व्यक्ति के सिर पर इतनी जोर से प्रहार किया कि उसका भेजा बाहर निकल पड़ा और वह कब्र में गिर पड़ा तदुपरान्त उसने (उस स्त्री ने) उस व्यक्ति

के ऊपर मिट्टी का तेल डाल दिया और कब्र को बन्द कर दिया। पड़ोसी अपने दीवार पर किये छेद से समस्त घटनाओं को अपनी आँखों से देखता रहा और इस कार्य पर आश्चर्य प्रकट करता रहा। उसने सोचा कि, "यदि मैं आज इस कार्य की सूचना कर दूँगा तो यह मुझे भी कष्ट पहुँचायेगी। जब इसका पति आयेगा तभी उससे यह बात कहूँगा।"

प्रात:काल उस स्त्री ने रोना चिल्लाना प्रारम्भ कर दिया कि, "मेरे पुत्र को भेड़िया, उठा ले गया।" जब उसका पति यात्रा से आया तो उसके सम्बन्धी संवेदना प्रकट करने के लिए उपस्थित हुए फतेहा पढ़ा। वह पड़ोसी भी पहुँचा और देर तक बैठा रहा। जब लोग लौट गये तो उस पड़ोसी ने कहा कि, "मैंने तेरे पुत्र की मृत्यु का जो हाल अपनी आँखों से देखा है वह कह रहा हूँ। तू जो कुछ भी कर सकता हो कर। अन्यथा इसमें तेरे प्राण का भय है। उस व्यक्ति ने पूँछा कि, "क्या बात है?" उस व्यक्ति ने उस आदमी को अपने घर ले जाकर उस छेद से वह स्थान दिखाया जहाँ वह बालक दफन किया गया था और कहा कि, "जाकर यदि तू उस स्थान को किसी बहाने से खोद सकता है तो खोद ले। जो बात होगी वह प्रकट हो जायेगी।" वह व्यक्ति घर के भीतर जाकर भूमि की ओर देखने लगा। स्त्री ने पूछा कि, "क्या देखता है, क्या कोई चीज खो गयी है?" उस व्यक्ति ने कहा कि "हाँ, इस स्थान पर मैंने एक चीज भूमि में गाड़ दी थी और अब मैं उस स्थान को भूल गया हूँ। यदि कुदाल हो तो मैं उसे खोद कर देखूँ।" स्त्री ने कहा, कि "कुदाल कोठरी में है। जाकर ले आऊँ।" वह व्यक्ति कोठरी में चला गया। स्त्री ने द्वार बन्द कर लिया और ताला लगा दिया और घर में आग लगा दी, यहाँ तक कि उसका पति भी जल गया। पड़ोसी ने सामना के आमिल[1] के पास पहुँचकर उससे सारी घटना का उल्लेख किया। वहाँ से वह प्यादों को ले आया। इन लोगों ने सर्वप्रथम उस व्यक्ति को देखा जो कोठरी में था।

---

1. आमिल : हाकिम,

तदुपरान्त उन्होंने कब्र खोदी उसमें युवक और बालक दोनों निकाले गये। उस अभागी स्त्री को वे लोग बन्दी बनाकर ले गये। उस स्त्री को बाजार के चौराहे पर आधी भूमि में गड़वा दिया और उस पर बाणों की वर्षा की गयी। उसकी समस्त सम्पत्ति को खालसे में सम्मिलित कर लिया गया।

इससे यह सिद्ध होता है कि उस समय स्त्रियाँ चरित्रहीन हुआ करती थीं। अपने पति के जिन्दा होते हुये दूसरे पुरुषों से प्रेम करती थीं। उनका प्रेम इस सीमा तक पहुँच जाता था कि उसके लिये वे अपने पुत्र और पति की हत्या तक करने के लिये तैयार हो जाती थी। इस तरह के अपराध सिद्ध होने पर स्त्रियों को भी दण्ड दिया जाता था।[1]

<u>सुल्तान का स्त्रियों के प्रति व्यवहार</u> :

सुल्तान मुस्लिम स्त्रियों का बहुत आदर सम्मान करते थे। जब जौनपुर के सुल्तान हुसैनशाह की बेगम सुल्तान बहलोल लोदी के हाथ में आ गयी तो बहलोल ने उसके साथ कोई बुरा व्यवहार नहीं किया, बल्कि बहुत ही आदर और शिष्टता के

----

1. शेख रिज़कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 174-175, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 179-180, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 22-24, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 151-153,

यादगार अहमद : तारीखे शाही, पृष्ठ 99-102, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 350-351.

साथ उसे अपने अंगरक्षकों के साथ उसे उसके पति के पास भिजवा दिया । इसी प्रकार जब बहलोल लोदी 1473-1474 ई0 ने जौनपुर का घेरा डाला और सुल्तान हुसैन को पराजित किया तो सुल्तान के सैनिकों ने मलकये जहाँ (बीबी खूंजा) तथा समस्त अन्तःपुर की स्त्रियों को बन्दी बना लिया जब सुल्तान को यह समाचार मिला तो उसने बड़े आदर के साथ मलकये जहाँ को सुल्तान हुसैन के पास भिजवा दिया ।[1]

सिकन्दर लोदी मुसलमान स्त्रियों का बड़ा आदर सम्मान करता था इसी-लिये उसने मुसलमान स्त्रियों को दरगाहों और सन्तों के मकबरों पर जाने पर रोक लगा दी क्योंकि गुण्डे तथा बदमाश स्त्रियों को परेशान किया करते थे ।[2] इसके बावजूद अगर स्त्रियाँ घर के बाहर जाना चाहतीं थीं तो वे पालकी में बैठकर जाती थीं । शेख़ रिज़कुल्लाह मुश्ताक़ी के अनुसार - स्त्रियाँ जिस गाड़ी में यात्रा करती थीं उस गाड़ी के अन्दर कई बड़े बड़े बक्स रखे जाते थे । एक सन्दूक में एक स्त्री बैठाकर बन्द कर दी जाती थी और उस सन्दूक में ताला लगा दिया जाता था । प्रत्येक सन्दूक के साथ एक डोला रहता था उसमें स्त्री का सामान रहता था ।[3]

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 232, ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 312, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 209.

2. ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : वही, पृष्ठ 337, अनुवादक : वही, पृष्ठ 227-228, के0एस0 लाल : द ट्वाइलाइट आफ दी सल्तनत, पृष्ठ 269, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 595, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 38, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 263.

3. शेख़ रिज़कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 75, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 154.

<u>सुल्तान की वेशभूषा</u> :

सुल्तान अपनी वेशभूषा पर अधिक ध्यान देते थे। मौसम के अनुसार वस्त्र पहना करते थे। वैसे साधारणतया कीमती सोने चाँदी के तारों के कढ़ाई के रंग बिरंगे आकर्षक कपड़े पहना करते थे। शाही परिधानों को खिलअत-ए-बादशाही कहा जाता था।[1] सुल्तान अपने शरीर के ऊपरी भाग को ढँकने के लिये गर्मी के दिनों में मलमल का सादा तथा सोने चाँदी के तारों से कढ़ाईदार रेशमी कुर्तो, जामा या काबाह, शलूका आदि पहना करते थे। इसके अलावा पिरहन (कुर्ता) जरदोजी का कुर्ता जो घुटने के नीचे तक लम्बा होता था, कबा, तातारी लबादा, लम्बा लबादा, ढीलाढाला लबादा भी पहना करते थे जिसे कमर से सोने चाँदी की पेटी से बाँध लेते थे।[2] कुछ शासक बाँहदार काबा पहनते थे जो आस्तीन पर जरी

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 255, ए० वी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 218, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 317, के०एम० मिश्र : उत्तरी भारत में मुस्लिम समाज, पृष्ठ 35, डॉ० युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 123, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 215, डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 47, डॉ० ईश्वरी प्रसाद : ए शार्ट हिस्ट्री आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृष्ठ 651, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 133.

2. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 215, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 256, के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत में मुस्लिम समाज, पृष्ठ 36, युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 123, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 217.

से कढ़ा हुआ होता था । जाड़े के दिनों में अपनी ठंडक को बचाने के लिये ऊनी चुस्त कुर्ता या (काबा) कबाह या अंगरखा पहना करते थे तथा अंगरखे के ऊपर दगला नामक लबादा पहना करते थे जो धुनी हुई रूई का चोंगे के समान बना होता था ।[1] इसके अलावा जाड़े के दिनों में मिरजई पहना करते थे तथा सूती एवं रेशमी कपड़े की बन्डी जिसके अन्दर रूई भरी होती थीं, ठण्डक बचाने के लिये पहना करते थे ।[2] जाड़े के दिनों में कोट पहनते थे । ये कोट ऊनी, ऊँद बिलाव, खरगोश, नेवला आदि जानवरों की खालों की बनायी जाती थीं । इसके अलावा ऊनी कम्बलों के भी कोट बनाये जाते थे ।[3] सुल्तान रात्रि में सोने से पहले एक विशेष वस्त्र जामाए- खाब पहना करते थे ।[4]

----

1. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 215, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 27, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 217, 302, 310.

2. के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत में मुस्लिम समाज, पृष्ठ 37, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 256.

3. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 215-130. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 27, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 217, 302, 310, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 46-47, शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 204, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 195.

4. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 256.

सुल्तान पैरों में सुन्दर आकर्षक, भेड़ों की खाल के तथा मखमल के कढ़ाईदार जूते पहनते थे। सुन्दरता बढ़ाने के लिये मखमल के ऊपर सोने चाँदी के तार से कढ़ाई की जाती थीं। कफश (ऊँची ऐड़ी की चप्पलें) जिनके तलवे में लोहे की कील लगी होती थीं, पहनते थे[1] तथा नालैन जिसके नीचे का तल्ला लकड़ी का होता था उसे भी पहनते थे।

सिर को ढँकने के लिए पगड़ी बाँधते थे। पगड़ी कई प्रकार की होती थी जैसे - खिड़कीदार पगड़ी, नस्तालीख, पटनाऊँ, जुड़ेदार, चक्रीदार, कदम-ए-रसूल, सीपारी अली, लट्टूदार, मक्पेचा, मुर्गपेचा आदि। यह पगड़ी मखमल तथा तंजेब के कपड़े की बनी होती थीं। इसमें सोने चाँदी के तारों से कढ़ाई की जाती थीं। हीरे, मोती जड़े जाते थे। पगड़ी कभी कभी लोग 4 से 70 हाथ लम्बी बाँधा करते थे। पगड़ी सभी वर्ग के लोग बाँधा करते थे।[2] मुसलमान लोग सफेद रंग की गोलाकार पगड़ी बाँधते थे तथा हिन्दू लोग रंगीन कपड़े की ऊँची तथा नोकदार पगड़ी बाँधा करते थे।[3] महुअन एक चीनी यात्री था, जो 1405 ई0 में बंगाल आया था।

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 256, के0 एम0 मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 41, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 47.

2. के0एम0 मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 39, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 110, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 256.

3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 47, डॉ0 युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 123.

उसका कहना था कि शासक तथा सामन्त लोग सफेद कपड़े की पगड़ी बाँधते थे ।[1] सुल्तान सिकन्दर लोदी के सामने अगर कोई व्यक्ति सिर में पगड़ी बाँधे बिना आता था तो सुल्तान उसे देखकर अपना मुँह फेर लेता था और कहता था कि पहले पगड़ी लगाओ, तब मिलो । एक बार मीरान सैय्यद खाँ सुल्तान के सामने बिना पगड़ी के आकर खड़ा हो गया तब सुल्तान ने उसे देखकर मुँह घुमा लिया और कहा कि इसे "पगड़ी" दो । जब वह पगड़ी पहनकर आया तब सुल्तान ने उससे बातें करी ।[2]

सुल्तान के अलावा अमीर भी पगड़ी बाँधा करते थे । बिना पगड़ी बाँधे सुल्तान के सामने नहीं आते थे । पगड़ी बाँधने से यह प्रतीत होता था कि वह सुल्तान को सम्मान दे रहे हैं । पगड़ी 5-6 हाथ लम्बी होती थी । सुल्तान अगर किसी अमीर को बेइज्जत करना चाहता था तो कहता था कि इसके सिर की पगड़ी उतार लो ।[3] इब्राहीम लोदी का अमीर शेख़ मुहम्मद मलमल की सफेद पगड़ी बाँधता था जो 5-6 हाथ लम्बी होती थी ।[4]

----

1. डॉ० युसुफ हुसैन, मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 123.
2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 349.
3. के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत में मुस्लिम समाज, पृष्ठ 35, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 215-216, युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 123, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास: भारत की सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 37.
4. शेख़ रिज़कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 128, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 170.

अमीर :

जहाँ तक अमीरों की वेशभूषा का प्रश्न है ये अमीर, खान, मलिक, अच्छे वस्त्र पहना करते थे। यद्यपि इस्लाम में रेशमी वस्त्र धारण करना वर्जित था किन्तु अमीर ज्यादातर रेशमी वस्त्र ही धारण करते थे। अमीर लोग रेशम तथा जरी के कढ़ाईदार लबादे जिसे [जामा-ए-मुसब्बिर] कहते हैं विशेष शौक से पहना करते थे।[1] सार्वजनिक अवसर पर "खिलअत" पहना करते थे। ये एक सरकारी पोशाक होती थी। सिर पर कुलाह एवम् जरी के काम का बारीक चोंगा पहनते थे। राजकीय अवसर पर कमर में एक सफेद कपड़ा बाँधे रहते थे। अपने निजी जीवन में अमीर अंगरखा, कमीज, पैरों में सलवार तथा ढीला पायजामा जो नीचे से 3 हाथ लम्बा होता था। स्नान करते समय इकबाली [लुंगी जिसे तहमत भी कहते थे] पहनते थे। अन्दर बनियाइन तथा जाड़े के दिनों में बन्डी तथा छोटा जैकेट पहना करते थे।[2] जाड़े के दिनों में अपने कन्धे पर ऊनी शाल [चादर] डाले रहते थे।[3] सिर को ढँकने के लिये पगड़ी अवश्य बाँधते थे। गर्मी के दिनों में सिर को ठण्डा रखने के लिये खस की टोपी लगाया करते थे।[4] पैरों को ढँकने के लिये रंगीन तथा लाल चमड़े के जूते पहनते थे,

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 256.
2. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 216, डॉ० युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 123, के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 37, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास: भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 47.
3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 46.
4. डॉ० युसुफ हुसैन : वही, पृष्ठ 123, के०एम० अशरफ : वही, पृष्ठ 216, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 47.

जिसमें कढ़ाई की होती थी । इस समय आगे से खुले जूते पहनने का रिवाज था । घर के अन्दर प्रवेश करने से पहले जूते उतारना अवश्य होता था । जूते कई प्रकार के बनाये जाते थे जैसे कफ्श, चढवाँ, तलीमशाही, खुर्दनोका, चेतला आदि ।[1]

मोजे पहनने का भी प्रचलन था । कट्टर धार्मिक प्रवृत्ति के कुछ मुसलमान नमाज में सफाई बनाए रखने के विचार से मोजे पहना करते थे ।[2]

हिन्दू अमीर एवं सामन्त मुसलमान अमीरों की तरह ही वस्त्र पहना करते थे ।[3]

---

1. डॉ० युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 123, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 48, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 256.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 47, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 256, डॉ० युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 126.

3. डॉ० युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 123, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 216, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 123.

जहाँ तक उल्मा, शेख़ मशाहिख की वेशभूषा का प्रश्न है । ये लोग रेशमी वस्त्र नहीं पहनते थे । केवल सूती वस्त्र पहनते थे । इनकी वेशभूषा समाज के अन्य लोगों से भिन्न थी । अपने शरीर के सम्पूर्ण अंग को ढँकने के लिए जामा, अबा, कबा और जुब्बा पहनते थे । सिर को ढँकने के लिए लम्बी दरवेशी टोपी तथा दस्तार, कुलाह और शुमाव बाँधते थे ।[1] पैरों में लकड़ी की खड़ाऊँ पहनते थे ।[2] इसके अलावा मशाहिख नालैन पहनते थे ।[3]

<u>सूफ़ी सन्त</u> :

सूफ़ी सन्त खुलकान व खिरका, अनेक पैबन्द लगा हुआ फटा पुराना लबादा, जुब्बा जो घुटनों तक लम्बा होता था पहनते थे । इसके अलावा बाँहदार बनिआइन तथा मिर्ज़ई (बाँहदार जैकेट) पहनते थे । फटे-पुराने पैबन्द लगे कपड़े पहनने में इन्हें बड़ी शान्ति मिलती थी ।[4]

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 257, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 47.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 47.

3. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 256, के0एम0 मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 41, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 47.

4. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 257.

जाड़े के दिनों में दोता ॥धोती॥ कमीज़ और ऊनी लम्बा चोंगा जो ढीला ढाला होता था वह पहनते थे तथा लम्बा कोट या जुब्बा[1] ॥जो घुटनों तक लम्बा होता था पहनते थे। कभी कभी चमड़े की खाल का लम्बा चोंगा ॥कोट॥ पहनते थे। इब्नबतूता ने बताया कि एक बार उसने एक शेख़ को बकरे की खाल का मुरक्का ॥चोंगा॥ पहने हुये देखा था।[2]

सूफ़ी सन्त अपने सिर को बराबर ढँके रखने के लिए सिर पर कुलाह या टोपी[3] पहनते थे। अमीर खुसरो ने बताया कि सूफ़ी सन्त चार तरह की टोपियाँ पहना करते थे, जैसे - चौकोर टोपी, एक तुर्की टोपी, दो तुर्की टोपी, चार तुर्की टोपी और सतुर्की टोपी आदि। इन्हीं कपड़ों से सूफ़ी सन्तों की पहचान होती है।[4]

---

1. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 217, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 257.

2. इब्नबतूता : द रेहला आफ इब्नबतूता, पृष्ठ 219, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुगलककालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 304.

3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 76, इब्नबतूता: द रेहला आफ इब्नबतूता, पृष्ठ 219, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: तुगलककालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 304.

4. अमीर खुसरो : तुग़लकनामा, पृष्ठ 30, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 257.

विद्वान एवं दार्शनिक :

मुसलमान दार्शनिक पैरों में पायजामा पहनते थे तथा ऊपर से सम्पूर्ण शरीर को ढँकने के लिये एक चोगा पहनते थे। सिर पर पगड़ी बाँधते थे।[1]

सैनिक :

सैनिक नरमीना (नरम रेशमी वस्त्र) गर्मी में, पशमीना (ऊनी वस्त्र) जाड़े में चरमीना (चमड़े के वस्त्र) अहमीना (लोहे के बने वस्त्र) तथा कांसे के बने वस्त्र जिसे रूईना कहते थे अभियान पर जाते समय पहनते थे।[2]

वज़ीर तथा कातिब :

तातारी कबाये, तकलावात, ख्वारज्म की इस्लामी कबाये पहनते थे। सिर पर टोपी की जगह सफा बाँधते थे। उसके सिरे को आगे लटका लेते थे। काज़ी तथा मलिक फ़रजिया पहनते थे।[3]

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 47.

2. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 216, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 46.

3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 46.

साधारणतया रूढ़िवादी विचारधारा वाले निम्न वर्ग के जो मुसलमान थे, वे मलमल के कपड़े पहनना पसन्द करते थे। चूँकि मुस्लिम धर्म में या शरियत में ये निर्देश है कि वे रेशमी, मलमल, जरी या रोएँदार व रंगीन वस्त्र न पहनें इस कारण मुसलमान लोगो इन कपड़ों को पहनना पसन्द नहीं करते थे। वे कमीज और पायजामा पहनना अधिक पसन्द करते थे। रूढ़िवादी मुसलमान अपने पैरों को स्वच्छ बनाये रखने के लिए पैरों में मोजे और जूते पहनते थे। जब इन मोजों एवं जूतों को धोते थे, तो कुरान की समुचित आयतें ﴾कद्र - अध्याय 96﴿ अवश्य पढ़ते रहते थे।[1]

योगी लोगों की वेशभूषा एकदम भिन्न होती थी। ये अपने शरीर पर केवल एक बिना सिला वस्त्र लपेटे रहते थे। पैरों में लकड़ी की पादुकाएँ पहनते थे। कुछ अपने सिर पर ऊँची दरवेशी टोपी "कलन्सुवाह" पहने रहते थे[2] तथा जाड़े के दिनों में ढीला ढाला ऊनी चोंगा पहना करते थे।[3]

शाही गुलाम साधारण कुलहा, कमर में कमरबन्द, लाल रंग के जूते तथा जेब में रूमाल डाले रहते थे।[4]

----

1. के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 217.
2. बरबोसा : हार्ते बरबोसा, पृष्ठ 112, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 217.
3. इब्नबतूता : किताब-उर-रहला, भाग 2, पृष्ठ 90.
4. के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 216.

हिन्दुओं की वेशभूषा :

हिन्दुओं की वेशभूषा एक समान न थी । हिन्दुओं की वेशभूषा लगभग मुसलमानों की तरह की थी, वे भी कबा धारण करते थे । अगर हिन्दू अपने माथे पर टीका (तिलक) न लगायें, कानों में कुण्डल न पहनें तो उनमें और मुसलमानों में अन्तर करना कठिन काम था । साधारणतया हिन्दू कुर्ता, महीन धोती, उत्तरी या चरन पहना करते थे । पैरों में पायजामा[1] इतने अधिक चौड़े होते थे कि उनके पैर के पंजे दिखाई नहीं पड़ते थे । एड़ी के पास कसकर उसे पीछे नारे या डोरी से बाँधते थे ।[2]

जाड़े के दिनों में अपनी ठण्ड़क को बचाने के लिये धनी लोग कन्धें से शाल ओढ़ते थे । कश्मीर के कढ़ाईदार ऊनी कबा, पहना करते थे ।[3] कमर में पेटी की जगह रूमाल बाँधते थे ।

बारबोसा, जो 16वीं शताब्दी के चतुर्थ भाग में भारतवर्ष आया था उसने गुजरात के ब्राह्मणों के बारे में लिखा है कि वे कमर के ऊपर कुछ नहीं पहनते थे । केवल नीचे सूती वस्त्र (धोती) पहनते थे जिससे सम्पूर्ण शरीर को ढँक लेते थे ।[4] जिसका

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 258, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 218, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 245.

2. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 258.

3. वही, पृष्ठ 258.

4. के0एम0 अशरफ : वही, पृष्ठ 218-310.

डॉ0 युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 125.

किनारा सुनहरा होता था। ब्राह्मणों की पहचान उनके जनेऊ से होती थी जो उनके लिये पहनना अनिवार्य था। ये 3-4 तार का होता था, कन्धे पर पहनते थे। अपने सिर को ढँकने के लिये पगड़ी और टोपी पहना करते थे।

पैरों में लकड़ी की खड़ाऊँ पहना करते थे और माथे पर तिलक अवश्य लगाते थे।[1]

जो हिन्दू धनी एवं अभिजात वर्ग के होते थे वे कढ़ाईदार, रेशमी, जरी का काम किया वस्त्र पहनते थे। वे कुलह की जगह पगड़ी बाँधते थे और पायजामा की जगह जरी की किनारेदार धोती पहना करते थे।[2]

रावत, राना, जमींदार, राय लोग धोती तथा बण्डी पहना करते थे और कमर में पटका बाँधे रहते थे।

साधु एवं जोगी :

जहाँ तक साधुओं और जोगियों की वेशभूषा का प्रश्न है साधारणतया साधु एक गेरूआ चोंगा पहनते थे और हाथ में एक चक्र, एक त्रिशूल, जाप करने के लिए एक माला, लिये रहते थे। पैरों में लकड़ी की खड़ाऊँ पहनते थे और अपने पास एक छतरी और एक भिक्षापात्र रखते थे। कभी कभी मृगछाल भी ओढ़ते थे किन्तु महात्मा पुरुष

---

1. दौरत - ए - बारबोसा : द बुक आफ दौरत-ए-बारबोसा, पृष्ठ 52, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 218, ईश्वरी प्रसाद : हिस्ट्री आफ मेडीवल इण्डिया, पृष्ठ 176.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 258, ए०बी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 205.

ऐसे आडम्बर से दूर रहते थे ।[1] कुछ साधु केवल एक कौपीन (लंगोटा) पहने रहते थे और एक तुम्बी लिये रहते थे । अपना सिर मुण्डा रखते थे । कानों में बड़ी-बड़ी बालियाँ पहनते थे । हिरन की एक सींग हाथ में लिये रहते थे । अपने सम्पूर्ण शरीर में राख लपेटे रहते थे ।[2]

हिन्दू पण्डित :

हिन्दू पण्डित केवल एक रेशमी चादर कमर में बाँधते थे जिसका एक छोर पैर तक लटकता रहता था । कमर के ऊपर ब्राह्मण वस्त्रहीन होते थे केवल कन्धे पर लाल रंग की रेशमी चादर डाले रहते थे । ब्राह्मण जनेऊ अवश्य पहनते थे ।[3] बरथेमा का कथन है कि हिन्दू पण्डित साधारणतया नंगे सिर और नंगे पैर रहते थे कमर के नीचे के हिस्से को ढाँकने के लिए एक धोती का प्रयोग करते थे ।[4]

मुगल सम्राट बाबर ने अपनी आत्मकथा बाबरनामा में लिखा है कि ग्राम-वासियों (किसानों) की वेशभूषा वहाँ की जलवायु के अनुकूल हुआ करती थी । किसान

---

1. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 218-219.
2. मलिक मुहम्मद जायसी : पद्मावत, पृष्ठ 238, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 218.
3. डॉ० युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 123, मुहम्मद कबीन बिन शेख़ इस्माईल : अफ़सानये शाहान, पृष्ठ 29 अ, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 376.
4. बरथेमा : लुडोविक बरथेमा, पृष्ठ 109.

लोग चूँकि अत्यन्त गरीब थे इस कारण गर्मी के दिनों में एक धोती या एक लंगोट पहनकर पूरी गर्मी व्यतीत कर देते थे। जिन किसानों के पास थोड़ा भी पैसा होता था वे जाड़े के दिनों में अपनी ठण्डक को दूर करने के लिए एक ऊनी चादर से अपने पूरे शरीर को ढँक लेते थे या कभी वे अपना पूरा शरीर एक लम्बे लबादे से ढँक लेते थे तथा शरीर के निचले भाग को ढँकने के लिए पायजामा भी पहना करते थे। जिन गरीब लोगों के पास ऊनी वस्त्र नहीं होते थे वे एक सूती धोती से पूरे शरीर को ढँक लेते थे। ऊनी वस्त्र न होने के कारण ये गरीब लोग अपने घुटनों को पेट तक सिकोड़ कर जाड़े की रात गुजारा करते थे। गरीबी अत्यधिक होने के कारण कृषक ऊनी वस्त्र और जूते नहीं बनवा पाते थे।[1]

हिन्दू स्त्रियों की वेशभूषा :

साधारणतया हिन्दू स्त्रियाँ सूती, रेशमी, जरी के काम की कढ़ाईदार रंगीन छापेदार धोती (साड़ी) पहना करती थीं जो सम्पूर्ण शरीर को ढँक लिया करती थीं।

---

1. बाबर : बाबरनामा, पृष्ठ 519, अनुवादक : श्रीमती ब्रेवरिज, पृष्ठ 242, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 46-136, डॉ० युसुफ हुसैन : मध्य युगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 123, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 254-255, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 202, 130, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 192, बाबर : बाबरनामा, अनुवादक : श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 362.

जिन परिवार में पर्दा प्रथा होती थी उन परिवार की स्त्रियाँ साड़ी के पल्ले से अपना सिर ढँक लिया करती थीं ।[1] वक्षस्थल को ब्लाउज से ढ़ँकती थीं, इसे आँगियाँ, चोली, कुचुली, कंचुकी भी कहा जाता था । अंगिया 2 प्रकार की होती थी । प्रथम - जो वक्षस्थल को केवल ढँकती थीं । दूसरी वह जो कमर तक के भाग को ढँकती थी । ये अंगिया मोटे, पतले तथा जरी के काम की कढ़ाईदार, रंगीन छापेदार होती थीं । उच्च वर्ग की स्त्रियाँ ऐसी कंचुकी पहनती जो पारदर्शी होती थीं जिससे उनका सारा अंग दिखाई पड़ता था ।[2] गाँव की स्त्रियाँ धोती या कुंचुकी का प्रयोग नहीं करती थीं बल्कि एक साड़ी से ही अपने पूरे शरीर को ढँक लिया करती थीं ।[3]

समृद्धिशाली महिलायें लहँगा, दुपट्टा, पंजाबी महिलाएँ सलवार, कुर्ता, घाँघरा आदि पहनती थीं । वस्त्रों का रंग उस देश की परम्परा एवं व्यक्तिगत रुचि के अनुसार होता था ।[4]

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 259-260, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 47, 136, 127, डॉ० युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 127, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 245.
2. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 259, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 47.
3. बाबर : बाबरनामा, अनुवादक : श्रीमती बेवरिज, पृष्ठ 242.
4. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 260, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 47, युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 127.

केवल उच्च वर्ग की स्त्रियाँ पैरों में चप्पल तथा जूतियाँ पहनती थीं । अन्य सभी वर्गों की स्त्रियाँ नंगे पैर चलती थीं । ये जूतियाँ चमड़े की होती थीं जिसमें सोने चाँदी के तारों से मखमल लगाकर कढ़ाई की जाती थी ।[1]

मुसलमान स्त्रियों की वेशभूषा :

साधारणतया मुसलमान स्त्रियों के परिधान शोख, भड़कीले, चमकीले और चित्राकर्षक होते थे । उच्च वर्ग की स्त्रियाँ अपने वस्त्रों के रंग और डिज़ाइन स्वयं पसन्द करके सिलवाती थीं । वे मौसम के अनुसार रंग बिरंगे ऊनी, सूती, रेशमी कपड़े पहना करती थीं । गर्मी के दिनों में सूती और रेशमी तथा जाड़े में सूती, ऊनी, रेशमी तीनों प्रकार के जरी के कढ़ाईदार पहना करती थीं ।[2]

कमर से ऊपरी भाग को ढँकने के लिए (वक्षस्थल) गर्मी के दिनों में रेशमी, जरी की कढ़ाईदार लम्बी कुरती, चोली, नीमतना आदि अपने मनपसन्द रंगों के अनुसार पहना करती थी । कमर से नीचे के हिस्से को ढँकने के लिए घाँघरा, शरारा, गरारा, शलवार, पायजामा जो कमर से पैर के पंजों तक लम्बा होता था

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 260.

2. के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 219, के0एम0 मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 41, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 47.

पहना करती थी[1] चूँकि मुसलमान परिवार में सभी वर्गों में पर्दा अधिक होता था इसलिये मुसलमान स्त्रियाँ अपने सिर को हमेशा दुपट्टे से ढँके रहती थीं, इसी दुपट्टे से अपने वक्षस्थल को भी ढँके रहती थीं तथा जब घर के बाहर कदम रखती थीं तो (सफेद, काला, नीला इन रंगों के) नकाब (बुर्का) से अपना सम्पूर्ण शरीर ढँक लेती थी। ये सिर से पैर के पंजे तक लम्बा होता था। आँख के सामने जाली का कपड़ा लगा होता था जिससे बाहर की चीजें देखती थी।[2]

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 259-260, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 219-220, के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 41, अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 103, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 351, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 27, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास: भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 47.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 260, के०एम० मिश्र : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 41, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 219-220, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 27, अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 103, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 351,

चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 47.

मुसलमानों में चूँकि नीला रंग शोक सूचक माना जाता था इस कारण दैनिक जीवन में उपयोग आने वाले कपड़े नीले रंग के कम पहने जाते थे। प्राय: स्त्रियाँ भड़कीले रंगों के, छपाईदार एवं कढ़ाईदार कपड़े पहना करती थीं।[1]

हिन्दुस्तान में यह प्रथा थी कि चाहे हिन्दू स्त्री हो या मुसलमान स्त्री हो वे अपने पति के मरने के बाद (विधवा हो जाने के बाद) सफेद वस्त्र ही पहना करती है। रंगीन वस्त्र धारण नहीं करती हैं।[2]

कुछ मुसलमान स्त्रियाँ सिर पर पतली टोपियाँ लगाया करती थीं।[3] पैरों में जूतियाँ पहनती थीं। इसमें कढ़ाई की होती थी। जूतियों को पापोश अथवा कफ्श भी कहते थे। ये पादक कई प्रकार के होते थे जैसे चिनील, पेशावरी, धेतली, चन्दूरी आदि। मुसलमान स्त्रियाँ मोजा नहीं पहनती थीं।[4]

----

1. अमीर खुसरो : एजाज-ए-खुसरवी, भाग 1, पृष्ठ 274.

2. सिकन्दर बिन मन्झू गुजराती : मिरात-ए-सिकन्दरी, पृष्ठ 152, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 2, पृष्ठ 358,

3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 27.

4. अहमद यादगार : तारीख़े शाही, पृष्ठ 53, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 334.

के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 43.

पुरुषों का सौन्दर्य प्रसाधन :

हर उम्र के पुरुष अपने आपको अधिक से अधिक सुन्दर दिखाने का प्रयास करते थे। इसके लिए वे तरह तरह के सौन्दर्य प्रसाधनों का प्रयोग करते थे। पुरुष प्रतिदिन सुबह स्नान करते थे। शरीर पर पाउडर, सफेद चन्दन, केसर, इत्र लगाते थे। अपने सफेद बालों को काला दिखाने के लिए वसमा या खिजाब लगाते थे। बालों को धोकर उसमें सुगन्धित तेल लगाते थे।[1] आँखों में काजल और सुरमा लगाते थे। ऐसा कहा जाता है कि इसे लगाने से नेत्रों की ज्योति बढ़ती थी। माथे पर तिलक लगाते थे। दाँतों को स्वच्छ रखने के लिए मंजन करते थे। मुँह से बदबू न आये और होठ लाल रहें इसके लिए पान खाया करते थे।[2] अगर कोई व्यक्ति किसी से मिलने जाता था तो वह अपने मस्तक पर तिलक लगाता था। वस्त्रों पर इत्र और मुँह में पान खाकर तब जाता था।[3]

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 48, डॉ० युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 126, अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 62, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 338, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 221, के० एम० पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 37.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 49, डॉ० युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 126, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 221-222.

3. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 222.

स्त्रियों का सौन्दर्य प्रसाधन :

जिस प्रकार हर उम्र का पुरुष अपने आपको सुन्दर दिखाने के लिए तरह तरह के सौन्दर्य प्रसाधनों का इस्तेमाल करता था उसी प्रकार हर उम्र की स्त्रियाँ अपने आपको सुन्दर दिखाने के लिए तरह तरह के सौन्दर्य प्रसाधनों का इस्तेमाल करती थी। आईने अकबरी में भी स्त्रियों द्वारा सोलह श्रृंगार किए जाने का वर्णन है । हिन्दू और मुसलमान दोनों धर्म को मानने वाली स्त्रियाँ एक ही तरह का श्रृंगार करती थी हिन्दू स्त्रियाँ प्रतिदिन स्नान अवश्य करती थी । स्नान करने से पूर्व अपने सम्पूर्ण शरीर में तेल और उबटन लगाती थी । उबटन लगाने से शरीर सुन्दर, कोमल, आकर्षक बनता था ।[1] तत्पश्चात् साबुन लगाकर नहाती थी । मुसलमानों में रोज नहाने की परम्परा नहीं थी ।[2] स्नान करने के बाद अपने बालों को काष्ठ की, धातु की, एवं जानवरों की सींग की बनी कंघियाँ बनायी जाती थी । उससे चोटी एवं जूड़ा बनाती थी । बालों को लम्बा दिखाने के लिए नकली बाल लगाती थी ।
बालों की सुन्दरता को बढ़ाने के लिए बालों में सोने, चाँदी के आभूषण, रंगीन फीते

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 48, डॉ० युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 127, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 221-222.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 262.

3. चोपड़ा, पुरी एवं दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 48-49, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 222.

रेशम की डोरी एवं फूल लगाती थी । कभी कभी सिर को सुनहरे जड़ाऊंदार कपड़े से ढंक लेती थी । कुछ स्त्रियाँ अपने बालों का स्तूपों की भाँति जूड़ा सिर पर बाँधती थीं । बीच में एक बड़ा सा सुनहरा सूजा खोंसती थीं । बालों में रेशम की डोरी में सोने के छल्ले डालकर लटकाती थी ।[1] हिन्दुओं में जो स्त्रियाँ विवाहित होती थीं वे अपनी माँग में लाल, पीला सिन्दूर लगाती थीं जबकि मुसलमान स्त्रियाँ सफेद चमकीला सिन्दूर लगाती थी । सिन्दूर को सिधौरे में रखने की परम्परा थी ।[2] अपने सम्पूर्ण चेहरे को गोरा दिखाने के लिए सफेदा या गजा लगाती थी ।[3] माथे पर बिन्दी, आँखों में काजल तथा सुरमा एवं अंजन लगाती थी और काले रंग से अपनी भौहों को आकार देती थी । ओठों पर लिपिस्टिक लगाती थी ।[4] हाथों में

---

1. डॉ० युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 124, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 222.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 262, के० एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 222.

3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 262, चोपड़ा पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 48-49, के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 49-51.

4. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 262, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 48-49, के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 49, डॉ० युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 127.

मेंहदी तथा पैरों में मेंहदी और महावर लगाने का रिवाज था[1] तथा दाँतों को काला करने के लिए मिस्सी लगाती थी ।[2]

अपने चेहरे की सुन्दरता को बढ़ाने के लिए गालों में काजल का तिल लगाती थीं । नजर न लगे इसके लिए काजल का टिक्का लगाती थी ।[3] सम्पूर्ण श्रृंगार करने के बाद अपने वस्त्रों पर इत्र अवश्य लगाती थीं ।[4]

स्त्रियों के रत्न [आभूषण] :

पूर्वकाल की भाँति इस काल की स्त्रियाँ भी अपने सौन्दर्य में वृद्धि करने के उद्देश्य से विभिन्न प्रकार के आभूषणों से अपने सम्पूर्ण शरीर को सुसज्जित करती थीं। ये आभूषण सोने, चाँदी तथा विभिन्न धातुओं एवं मोती के बने होते थे । विवाहित हिन्दू स्त्रियाँ अपनी माँग में वेंदी पहनती थी जबकि मुसलमान स्त्रियाँ बालों में झूमर बाँधती थी ।[5] सिकन्दर लोदी का एक अमीर जिसका नाम मियाँ हुसेन खाँ था वह

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 19, के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 51.
2. डॉ० के०एम० मिश्रा : वही, पृष्ठ 50, के०एम० अशरफ : वही, पृष्ठ 222, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 49.
3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 262.
4. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 134, ए०वी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 50.
5. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 263, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 49, के०एम० मिश्रा : वही, पृष्ठ 45. के०एम० अशरफ : वही, पृष्ठ 224, तारीखे शाही : अहमद यादगार, पृष्ठ 60.

दान करने में मशहूर था । एक बार उसने अपने मुसाहिब हमीद खाँ को 3 रत्नजड़ित माँग टीके दान में दिये थे । इसमें एक टीका 5 लाख तन्के का था दूसरा 3 लाख तन्के का और तीसरा 2 लाख तन्के का था ।[1] इसे सूरज या शीश फूल भी कहा जाता था । हिन्दू तथा मुस्लिम दोनों धर्मों को मानने वाली स्त्रियाँ अपने ग्रीवा या गले को विभिन्न प्रकार के कण्ठहार जैसे हार, चेन, हसुली, धुकधुकी, गुलुबन्द, हमेल, चन्दनहार, जुगनू, ढुलकी, ताबीज द्वारा विभूषित करती थी ।[2] कानों में बाली, कुण्डल, करनफूल, झुमकी, लौंग पहना करती थी ।[3] नाक में कील, नथुनी, बुलाक पहनती थी ।[4] हाथों की सुन्दरता को बढ़ाने के लिए कलाई में सोने एवं

---

1. अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 60, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 338.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 49, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 263, के0एम0 मिश्रा : उत्तरी भारत में मुस्लिम समाज, पृष्ठ 47, डॉ0 युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 126, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 245.

3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 49, के0एम0 मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 45, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 263.

4. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 49, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 263, के0एम0 मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 45.

काँच की चूड़ी, कड़ा, दस्तबन्द, गोखरू पहनती थीं तथा बाजू में बाजूबन्द, जोशन, तोड़ा बाँधा करती थीं और हाथों की दसों अंगुलियों में अंगूठियाँ पहना करती थी। हाथ के अँगूठे में अरसी पहनी जाती थी इसमें नग के स्थान पर एक छोटा सा दर्पण लगा होता था ।[1]

कमर में सुन्दरता प्रदान करने के लिए मेखला तथा करधनी, बधी कमर, हेकल ए-कमर पहनती थीं । पैरों में पायल, पाजेब, नूपुर, घूघर, किकनी, तोड़े, कड़े, छड़े, लच्छे, पायजुन पहनती थीं । जो स्त्रियाँ विवाहित होती थीं, वे पैरों की अंगुलियों में बिछुआ और अंगूठे में आवंट पहनती थी पर मुसलमान स्त्रियाँ ये नहीं पहनती थी। हिन्दुओं में जो स्त्रियाँ विधवा हो जाती थी वे मांग टीका और बिछुआ नहीं पहनती थीं बाकी सारे आभूषण मुसलमान स्त्रियाँ भी पहना करती थी ।[2]

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 49, के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत में मुस्लिम समाज, पृष्ठ 48, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 223-224.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 263, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 49, के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 48-49, डॉ० युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 127, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 224, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 245.

उच्च एवं मध्य वर्ग की स्त्रियाँ ही अधिक से अधिक आभूषण पहना करती थीं। ये आभूषण बड़े सुन्दर एवं कलात्मक तरीके से बनाये जाते थे क्योंकि इस देश में स्वर्णकारों की कोई कमी नहीं थी । इस काल में विदेशी स्वर्णकारों के आने से आभूषण निर्माण कला को एक और नई दिशा मिली थीं । इस काल के भी स्वर्णकार अपनी कारीगरी की कुशलता एवं सूक्ष्मता के लिये प्रसिद्ध थे । सुल्तान सिकन्दर लोदी के राज्यकाल में खाने जहाँ लोदी के पुत्र ने अहमद खाँ की पत्नी के लिए हाथी दाँत की एक नीलोफर (कान की बाली या कर्णफूल) बनवाया था जो कली के समान था । उसमें आबनूस का एक भौंरा छिपा रहता था । जब तक पहनने वाली स्त्री सिर न हिलाती तब तक वह कली बँधी रहती थीं । जब वह सिर हिलाती तो नीलोफर खिल जाता और भौंरा भीतर से निकलकर आँख के सामने नाचने लगता था । वह भौंरा सोने के तार से बँधा रहता था । जब वह बातचीत करती, तब तक भौंरा भी हिलता रहता था जब वह सिर को रोक लेती तो भौंरा नीलोफर के भीतर चला जाता था और फूल कली बन जाता था ।[1] अबुल फ़जल ने भी 37 प्रकार के आभूषणों का उल्लेख किया है ।[2] और अबुल फजल ने अपनी कृति आइने अकबरी में बताया है कि नारी को 16 श्रृंगार करना चाहिए जो निम्न थे - स्नान, तेल, मालिश, केश-विन्यास, मस्तक पर कोई अलंकार और चन्दन का लेप, पोशाक, माथे में टीका,

---

1. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 134-135, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 176.

2. अबुल फजल, आईने अकबरी (युसुफ हुसैन, ग्लिम्पसेज आफ मेडिवल इण्डियन कल्चर से उद्धृत), पृष्ठ 134.

आँखों में सुरमा, कानों के लिए कर्णफूल, सोने या मोती की नथुनी, गले में हार, हाथों में मेंहदी, कमर में घुंघरूदार करधनी, पैरों में पायल और अन्त में स्त्री को व्यवहारकुशल होनी चाहिए ।[1]

पुरुषों के रत्न (आभूषण) :

हिन्दू मुस्लिम राजा, अमीर वर्ग तथा साधारण वर्ग के लोग आभूषण पहना करते थे पर ज्यादातर मुसलमान आभूषण के विरोधी थे । वे ताबीज़ और कवच पहनते थे । समृद्धिशाली तथा उच्च वर्ग के पुरुष बहुमूल्य आभूषण सोने चाँदी, उसमें हीरे - मोती जड़े रहते थे पहना करते थे । पुरुष अपने बाजू में बाजूबन्द बाँधते थे । कानों में कुण्डल, बाली एवं गले में मोती की माला हाथों की कलाई में कड़ा तथा अंगुलियों में अंगूठियाँ पहना करते थे ।[2]

राजा व राजकुमार सोने का जड़ाऊ मुकुट पहना करते थे । इसके अतिरिक्त वे सुन्दर तलवार एवं कटार, कमर में बाँधे रहते थे जिससे उनके व्यक्तित्व में निखार आता था । मुसलमान पुरुष अधिक आभूषण नहीं पहनते थे । समृद्धिशाली मुसलमान तथा उच्च वर्ग के अमीर केवल अंगुलियों में किसी रत्न की अंगूठी तथा बाँहों में रत्नों से जड़ा हुआ बाजूबन्द पहना करते थे ।[3]

---

1. अबुल फजल : आइने अकबरी, भाग 2, पृष्ठ 183, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 224.
2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 261, डॉ0 युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 126, के0एम0 अशरफ : वही, ।
3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 49, डॉ0 युसुफ हुसैन : वही 126अबुल फज़ल : आइने अकबरी, भाग 2, पृष्ठ 183, के0एम0 अशरफ : वही, पृष्ठ 224.

खानपान :

खानपान सामाजिक दृष्टि से मानवीय जीवन का अति आवश्यक और विशेष अंग है । हिन्दू मुस्लिम दोनों समाज में(दो तरह का)शाकाहारी एवं मांसाहारी भोजन खाया जाता था किन्तु विभिन्न प्रकार के व्यंजनों के बनाने की विधियों में प्रादेशिक, क्षेत्रीय एवं स्थानीय असमानताएँ थीं तथा बनाने का तरीका फर्क था ।[1] औसत रूप से साधारण लोग 3 बार भोजन करते थे : क. सुबह का कलेउ, ख. मध्याह्न का भोजन एवं ग. सन्ध्या का भोजन । रात्रि के भोजन का कोई उल्लेख नहीं मिलता है ।[2]

शाकाहारी भोजन (व्यंजन) :

भारतीय समाज में अधिकांश लोग शाकाहारी भोजन करते थे । जैसे हिन्दू सन्त, पुरोहित, पण्डित, ब्राह्मण, जैन, बौद्ध या वैष्णव मत के मानने वाले सूफ़ी सन्त छोला, चावल, रोटी, खिचड़ी, नान, जुकरत, फल, सब्जी खाते थे । गाय एवं बकरी का दूध पीते थे । जबकि मुसलमान लोग अधिकतर मांसाहारी भोजन

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 245-246. के0एम0 मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 57.

2. के0एम0 पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 37, के0एम0 मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 56-57, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 52, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 202-226.

करते थे ।[1] शाकाहारी भोजन में मुख्यत: दाल, चावल, रोटी, सब्जी आदि थे ।

दाल :

कई प्रकार की खायी जाती थीं । जैसे अरहर, उर्द, चना, मसूर, मूँग, मटर आदि, में मसालेदार तथा बिना मसालेदार बनाकर खायी जाती थीं । इन दालों की बरी, मुगौड़ी, ठरहरी, मिथौरी बनाकर खाने का प्रचलन था ।[2]

चावल :

चावल को कई तरह से पकाकर खाया जाता था । वैसे मुख्यत: लोग 3 तरह से चावल पकाकर खाया करते थे - जैसे सादा चावल, मीठा चावल और नमकीन चावल। मीठे चावल को बनाने के लिये उस चावल में चीनी तथा गन्ने का रस डालकर पकाते

----

1. ए०बी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 220, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 247, के०एम० अशरफ : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 225, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 325, अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 100, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 291. द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 601.

2. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 246, शेख रिज़कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाके आते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 55, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 137, सावित्री चन्द्र शोभा : समाज और संस्कृति, पृष्ठ 139, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 51.

थे । नमकीन चावल को पोलाव कहा जाता था ।[1] ये पुलाव निम्न प्रकार के बनाये जाते थे जैसे कोरमा, पुलाव, सोमापुलाव, तड़ापुलाव, अच्छा पुलाव, इमली पुलाव, गोश्त पुलाव, दम्पुख्त पुलाव, दोगोश्तपुलाव, बिरयानीपुलाव, कुकूपुलाव, मंतजनपुलाव, चने की दाल का पुलाव, तीतरपुलाव, बटेरपुलाव, कोफ्तापुलाव, नूरपुलाव, अनारदाना पुलाव, मौलापुलाव आदि पोलाव मुसलमानों का प्रिय भोजन था जिसमें गोश्त के टुकड़े डालते थे ।[2] दाल का सबसे लोकप्रिय व्यंजन दालों की सूखी गोली को मसाले तथा केसर के साथ कर पकाकर खाया जाता था । चावल को भूनकर और पीसकर भी खाया जाता था एवं खिचड़ी भी खायी जाती थी ।[3]

रोटी :

रोटी कई तरह से बनायी जाती थी । खमीर युक्त रोटी तथा खमीर रहित रोटी । खमीरयुक्त रोटी का प्रचलन भारत में मुसलमानों द्वारा हुआ, जबकि

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 247, शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 54, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 136.

2. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 547, के0एम0 मिश्रा : उत्तरी भारत में मुस्लिम समाज, पृष्ठ 54-55, के0एम0 पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 37.

3. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताकी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 54, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 136, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 247, के0एम0 मिश्रा : वही, पृष्ठ 57, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 132.

हिन्दू लोग खमीरदार रोटी बहुत कम बनाते थे । रोटी निम्न प्रकार की होती थी जैसे - नान, वाकिरखानी, गावर्दादा वृत्ताकार, गावजबान आदि । खमीररहित रोटी अनेकानेक प्रकार की होती थी जैसे - रोटी, चपाती, त्रिकोनी रोटी, फीकी रोटी, नमकीन रोटी, खजूरभरी रोटी, मीठी रोटी, सतपरती रोटी, पराठा, कचौड़ी आदि ।[1] समकालीन ऐतिहासिक ग्रन्थों और विदेशी यात्रियों के वर्णनों से पता चलता है कि लोग रोटी, मैदे, ज्वार, बाजरा, चना, मटर को पीसकर उसकी रोटी बनाकर खाते थे । इसके अलावा कचौड़ी, मीठी पूड़ी, पुआ, मालपुआ, सुहारे बनाकर खाने का प्रचलन था ।[2]

सत्तू[3], बुकनी तथा गेहूँ, मटर, चना, जौ, बाजरा, मकाई को भूनकर भी खाया जाता था ।[4] दलिया तथा बेसन की पूड़ी, पकौड़ी, कढ़ी, भी खायी जाती

---

1. के0एम0 मिश्रा : उत्तरी भारत में मुस्लिम समाज, पृष्ठ 52, अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 81, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 291, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत की सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 51.

2. सावित्री चन्द्र "शोभा" : समाज और संस्कृति, पृष्ठ 133.

3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 246-247, शेख रिज़कुल्लाह मुश्ताकी : वाकेआते मुश्ताकी, पृष्ठ 54-55, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 136-137, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 51,

4. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 273.

थी ।[1] खाने को स्वादिष्ट बनाने के लिये लौकी, ककड़ी, बथुआ का रायता बनाकर खाने का प्रचलन था ।[2]

<u>सब्जी</u> :

सब्जी मसालेदार तथा बिना मसालेदार दोनों तरह से पकाकर खायी जाती थी । सब्जियाँ निम्न थी, जो उत्पन्न होती थीं → आलू, सीताफल, अरबी, लौकी, तुरई, गाजर, बैगन, पालक, कुलार, कच्छू का साग बथुआ का साग, मिर्च आदि ।[3]

आचार सभी वर्ग के लोग स्वाद से खाते थे । आचार आम, नींबू, मिर्चा, अदरक, करौंदा, गोभी, कटहल आदि का बनाया जाता था ।[4]

----

1. सावित्री चन्द्र "शोभा" : समाज और संस्कृति, पृष्ठ 137.

2. वही, पृष्ठ 139.

3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 246, ए०वी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 220, के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 57, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 132.

4. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 225, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 247, अब्दुल्लाह : तारीखे़ दाऊदी, पृष्ठ 81, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 279-291.

मिठाई :

मिठाई खाने का प्रचलन था । इसके अलावा लोग गाय, भैंस, बकरी का दूध पीते थे[1] और इन्हीं दूध से तरह तरह की चीजें बनायी जाती थीं जैसे - मक्खन, मलाई, रबड़ी, दही, छाछ, खीर, दही से सिखरन आदि ।[2] जहाँ तक मिठाइयों का प्रश्न है 65 प्रकार की मिठाईयाँ बनायी जाती थीं जो निम्न हैं - रसगुल्ला, बर्फी पेड़ा, बालूशाही, गाजर तथा सूजी का हलवा, जलेबी, खोवे के गुलाब जामुन, छेने के रसगुल्ले, रेवड़ी, बेसन एवं खोवे के लड्डू, पेठा, इमरती, घेवर, फैना, गोझा, लवंग, नुक्ती, सोहन हलवा, मोठ, फेनिया। फेनिया दो प्रकार की बनायी जाती थी । नवनीत फेनिया, माशफेनिया, लपसी आदि इसके अलावा मीठे में आटे का हलवा, मीठा सेव, बताशा, इलायची दाना, गजक, सवोनी खाया जाता था ।[3]

----

1. के0एम0 पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 37.

2. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 223, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 248, के0एम0 मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 57, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 225.

3. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 225, सावित्री चन्द्र "शोभा": समाज और संस्कृति, पृष्ठ 132, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 248, के0एम0 मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 53-57, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 59, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 51, शेख रिज़्कुल्लाह मुश्ताकी : वाके आते मुश्ताकी, पृष्ठ 54, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 136.

फल :

बाबर ने बताया कि हिन्दुस्तान में निम्न फल पैदा होते थे जो खाये जाते थे । जैसे - आम, अनार, अंगूर, सेब, जामुन, तरबूज, सन्तरा, अन्जीर, खिरनी, जामुन, खजूर, खरबूजा, महुआ, कसेरू, केला, इमली, अमरख, गन्ना, बड़हल, पाली आला, गूलर, आमला, खुरमा, नारियल, ताड़, नारंगी, नींबू, तुरंज, जानबीरी, अमृतफल, अम्लवेद, अनार आदि ।[1] सुल्तान सिकन्दर लोदी अनार ईराक तथा फारस से मँगवाता था । जोधपुर में अनार बड़ा मीठा उत्पन्न होता था ।[2]

मेवा :

मेवों में मुख्यत: सूखे किसमिस, बादाम, मखाना, अखरोट, पिस्ता, कमल-गट्टा, खजूर, गरी[3], चिरौंजी, चिरारी, खाटिक, छुआरा, मुनक्का,

---

1. बाबर : बाबरनामा, पृष्ठ 184-189, 191-193, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 47-50, 122, 124-184, 305-337, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 287, ए०वा० पाण्डेय : मध्य कालीन शासन और समाज, पृष्ठ 220, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 225.

2. अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 51, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 333.

3. ओम प्रकाश : फूड हैबिट्स आफ इण्डियन्स इन द फिफ्टीन्थ सेन्चुरी प्रोसीडिंग्स आफ इण्डियन हिस्ट्री काँग्रेस 1968, पृष्ठ 279, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 51, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 310 से 368 तक.

चिलगोजा (आदि) ये सब मेवे सूखे तथा खीर, हलुवा, माँस में डालकर खाये जाते थे ।[1]

<u>मांसाहारी व्यंजन</u> :

मुस्लिम समाज के सभी वर्गों में मांस, मछली खाने का उल्लेख मिलता है पर अण्डा खाने का उल्लेख कहीं नहीं मिलता है । मांसों में मुख्यत: बकरे, तीतर, बटेर, कबूतर, सन्कूर, मुर्गों, भेड़, हिरन, काली बत्तख, साँभर, कुरंग, हरे कबूतर, बारह-सिंघा, सरिमल, चकोर, भैंस, सारस, कुलंग, ऊँट आदि पशु-पक्षियों के मांस की सब्जी, क़ीमा, कबाब, पकौड़ा तथा पोलाव में डालकर खाने का उल्लेख मिलता है । ये मांस मछली मसालेदार, बिना मसालेदार तथा भूनकर खाये जाते थे ।[2] मुसलमान अपने भोजन के सम्बन्ध में अपने धर्म के निषेधों को मानते थे जैसे सुअर तथा बिना हलाल किये हुये बकरे का मांस नहीं खाते थे जबकि हिन्दू में शूद्रों के सिवाय कोई अन्य जाति मांस नहीं खाती थी । शूद्र (चमार), डोम तथा कुछ अन्य लोग सुअर पालते

----

1. सावित्री चन्द्र "शोभा" : समाज और संस्कृति, पृष्ठ 141.

2. ए0वी0 पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 220, डॉ0 सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 47, डॉ0 ईश्वरी प्रसाद : ए शार्ट हिस्ट्री आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृष्ठ 549, चोपड़ा, पुरी एवं दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 51, 220. राधेश्याम : सल्तनत कालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 249-250, के0एम0 पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 37-38.

थे एवं उसका मांस खाते थे ।[1] मुगल सम्राट बाबर ऊँट तथा खरगोश का मांस बड़े शौक से खाता था ।[2]

पेय पदार्थ एवं मद्यपान :

पेय पदार्थ भी भोजन का एक अंग है । प्राचीन काल से ही भोजन का प्रारम्भ तथा अन्त पानी से किया जाता था । पेय पदार्थों में शराब, शर्बत, फलों का रस, छाछ, लस्सी आती है । बर्फ का प्रयोग केवल बादशाह और दरबारी लोग करते थे क्योंकि हिन्दुस्तान में बर्फ बहुत कम जगह पायी जाती थी ।[3] अकबर बड़ा भाग्यशाली था । गर्मी के दिनों में उसकी रसोई में हमेशा बर्फ रहती थी ।[4]

----

1. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 227, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 281, चोपड़ा, पुरी एवं दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 52-53.

2. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 50, 125, 222.

3. ए०वी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 220, चोपड़ा, पुरी एवं दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 51, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी; बाबर : पृष्ठ 138-151, के०एम० पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 37-38.

4. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 226.

मुस्लिम समाज में किसी ऐसे सामाजिक वर्ग का उल्लेख करना कठिन है जो मदिरा का सेवन न करता हो। स्त्री-पुरुष तथा शिक्षक मदिरापान का आनन्द लेते थे। सैनिक और सेना के लोग प्रकट रूप से मदिरा पीते थे।[1] मित्रों की गोष्ठियों में बैठकर मदिरापान करना एक आम रिवाज था। यद्यपि इस्लाम धर्म में मद्यपान करना मना था किन्तु सभी शासक, अमीर खुले रूप से मदिरा का आनन्द लिया करते थे। मदिरापान कराने के लिये साकी तथा शराब पिलाने के लिये सुन्दर सुन्दर स्त्रियाँ एवं दासियाँ होती थीं। छोटे बड़े सभी अवसरों पर मदिरा, नृत्य, गायन का आयोजन किया जाता था।[2]

सुल्तान सिकन्दर लोदी शराब बड़े शौक से पिया करता था पर सबके सामने नहीं पीता था क्योंकि कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं था जिसने कभी सुल्तान को मदिरा पीते एवं नशे में देखा हो।[3] इब्राहीम लोदी का अमीर कुतुबखाँ मदिरा पीने का

---

1. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 270.
2. के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत में मुस्लिम समाज, पृष्ठ 59, डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 47, ईश्वरी प्रसाद : ए शार्ट हिस्ट्री आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृष्ठ 649, ओम प्रकाश : फूड हैबिट्स आफ इण्डिया, पृष्ठ 276, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 53, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 271, राधेश्याम : सल्तनत कालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 252.
3. शेख रिज़कुल्लाह मुश्ताकी : वाके आते मुश्ताकी, पृष्ठ 52, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 134, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 21.

शौकीन था । एक बार वह शिकार खेलते खेलते ऐसे सरापर्दे में पहुँच गया जहाँ एक रूपवती स्त्री रत्नजड़ित सिंहासन पर बैठी थी । उसने कुतुबखाँ को अन्दर बुलाया और मदिरा दी । कुतुबखाँ ने दो तीन प्याले मदिरा पी ।[1] कृषक त्योहारों पर ताड़ी तथा सस्ती शराब पीते थे ।[2]

हिन्दू समाज में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य को मदिरा पीने की इजाजत नहीं थी । शूद्र अगर चाहें तो वे पी सकते थे ।[3] स्त्रियाँ भी मद्यपान करती थीं । ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य स्त्रियों के लिये मद्यपान करना मना था । इसके बावजूद राज-महलों की स्त्रियाँ, वेश्याएँ विशेष अवसरों पर मद्यपान किया करती थी ।[4]

नशे के लिये भाँग, अफीम, तम्बाकू, खाया करते थे । चरस, गाजा, चाय, कहवा, ताड़ी, हुक्का आदि पिया करते थे । अगर अमीर और शासक वर्ग नशा

----

1. अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 11-12, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 355.
2. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 202.
3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 21, राधेश्याम: सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 252, के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत में मुस्लिम समाज, पृष्ठ 59, ओम प्रकाश : फूड हैबिट्स आफ इण्डिया, पृष्ठ 276, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 53.
4. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, आर.सी. देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 608.

करते थे तो बुरा नहीं समझा जाता था । जनसाधारण वर्ग करता था तो बुरा समझा जाता था ।[1]

पान :

पान खाने का प्रचलन सभी जाति सभी वर्गों के लोगों में था । घर में आये हुये अतिथि को पान देना एवं भोजन के उपरान्त उसे पान देना एक सामाजिक औपचारिकता समझी जाती थी । धार्मिक एवं अन्य उत्सवों पर पान बाँटने का प्रचलन था ।[2] मुस्लिम समाज में पान खाने का विशेष रिवाज़ था ।[3] सूफ़ी सन्त तथा

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 252, के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 59, ए०वी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 220, शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़े आते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 124, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 167, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 287, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 53.

2. अब्दुल्लाह : तारीख़े दाउदी, पृष्ठ 81, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 291, शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताकी : वाक़े आते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 6, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 94, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 226.

3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 251, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन एवं उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 226, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 84.

मसाहिब भी पान खाते थे। बाबा फरीद गजशंकर, शेख निज़ामुद्दीन औलिया, हजरत शरफ़ुद्दीन यहिया मनेरी आदि सन्त पान बड़े शौक से खाया करते थे।[1]

बर्तन :

हिन्दू लोग ज्यादातर पीतल, ताँबे, लोहे तथा काँसे के बर्तनों में अपना खाना बनाते थे। मुसलमान लोग ताँबे तथा मिट्टी के बर्तनों में खाना बनाते थे।[2] और निम्न वर्ग के लोग मिट्टी के बर्तनों में खाना पकाते थे और पत्तों की थाली में खाते थे।[3] सुल्तानों को खाना सोने एवं चाँदी के बर्तनों में खाने को दिया जाता था। सोने के बर्तनों को सुमून कहा जाता था।[4] सूफ़ीसन्त पत्तों में एवं लकड़ी के

----

1. अमीर खुर्द : सियार-उल-औलिया, उद्धरित, रशीद, पृष्ठ 50, के०एम० अशरफ: हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 202.

2. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 603, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 52, राधेश्याम: सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 266.

3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 52-53 राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 266, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 202.

4. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 603, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 202.

बर्तनों मे खाते थे। अगर उनके घर कोई मेहमान आता था तो उसे भी उसमें खाने को देते थे। एक बार शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी काज़ी मुईनुउद्दीन के पास गये थे। उन्होंने बताया कि सबसे पहले लकड़ी के प्याले में दूध और एक पत्ते में शक्कर और एक पत्ते पर घी रखकर खाने को दिया गया।[1]

हिन्दू जिस स्थान पर खाना बनाते थे, चाहे आंगन हो या रसोई या दालान - उसका अगर फ़र्श पक्का होता था तो पूरा धोते थे। अगर फ़र्श कच्चा होता था तो उसे गोबर और मिट्टी से लीपते थे[2] तब खाना बनाते थे। हिन्दू अपने रसोईघर में जूता, चप्पल पहनकर किसी को अन्दर जाने नहीं देते थे और खाना खाने से पहले हिन्दू नहाते अवश्य थे। कौपीन और धोती पहनकर ही खाना खाते थे। बाकी अपने सारे वस्त्र उतार देते थे। यदि हिन्दू अग्निहोत्री या कोई अन्य ब्राह्मणों की गोत्र का होता था तो वे लोग किसी अन्य जाति के लोगों के हाथ का बना भोजन करना पसन्द नहीं करते थे बल्कि वह और उसकी पत्नी दोनों अपने हाथों से स्वयं अपना भोजन, छुपकर बनाते थे और लोगों से छुपकर खाते थे।[3] दोनों साथ-साथ नहीं बल्कि पहले पति भोजन करता था तत्पश्चात् पत्नी भोजन करती थी।[4]

---

1. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़े आते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 199-200, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 192.
2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 52, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 227.
3. अबुल फजल : आइन-ए-अकबरी, भाग 2, पृष्ठ 172-173, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 227.
4. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 52.

हिन्दू लोग भोजन करने से पूर्व सारा बना हुआ भोजन थोड़ा थोड़ा भगवान के भोग के लिए अलग निकालकर रख देते थे। भोग लगाने के बाद उसे गाय को खिला देते थे तब स्वयं भोजन करना शुरू करते थे। मुगल सम्राट अकबर भी भोजन करने से पूर्व अपने भोजन का एक भाग दरवेशों के लिये निकालकर रख दिया करता था। तब स्वयं भोजन करता था।[1] सुल्तान सिकन्दर लोदी भी प्रत्येक शुक्रवार को नगर के विभिन्न स्थानों पर निर्धनों को कच्चा तथा पका हुआ भोजन बाँटा करता था।[2]

मुसलमानों में भोजन करने का तरीका यह था कि पूरा परिवार जमीन पर दस्तरखान बिछाकर एक साथ भोजन करता था जबकि हिन्दू जमीन को गोबर से लीप कर उस पर पाटा बिछाकर उस पर बैठकर भोजन करते थे। भोजन करने से पूर्व स्वम् बाद में हाथ अवश्य होते थे वरन् वे अपने हाथों को अशुद्ध एवं जूठा समझते थे।[3]

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 52.

2. अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 36, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 260.

3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 52-53.

<u>सुल्तानों का भोजन करने का तरीका (विधि)</u> :

सुल्तान बहलोल लोदी भोजन करते समय अपने द्वारपालों को हट देता था। जो अतिथि आते थे उनके साथ भोजन करता था।[1] बहलोल लोदी का भोजन उसके घर पर नहीं बनता था बल्कि अमीर अपने अपने घर से बारी बारी से लेकर आते थे। भोजन अगर विभिन्न प्रकार का नहीं होता था तो वह नाराज नहीं होता था बल्कि साधारण भोजन से सन्तुष्ट हो जाता था।[2] औसत रूप से एक मेहमान को 20 से 50 प्रकार का भोजन परोसा जाता था। भोजन में भोजन की प्रचुरता ही अतिथि सत्कार का मापदण्ड होता था। अपव्यय पर कोई महत्त्व नहीं दिया जाता था क्योंकि बचा हुआ भोजन निम्न कर्मचारी, भिक्षु, घरेलू नौकर, सेवक ले जाया करते थे।[3]

परन्तु सुल्तान सिकन्दर लोदी का भोजन करने का तरीका एकदम फर्क था। सिकन्दर लोदी आधी रात को भोजन करता था (जब रात्रि समाप्त होने में 6 घड़ी रह जाती थी तब)। अन्य सुल्तानों की तरह सिकन्दर लोदी अपने साथ अपने

---

1. अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 11, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 97, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 585.

2. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 586, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, पृष्ठ 76.

3. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 331, अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 33, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 130-131, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 227.

अमीरों, उल्माओं को भोजन करने की आज्ञा नहीं देता था बल्कि जब भोजन परोसा जाता था तो अमीर लोग हाथ धोकर सुल्तान के समक्ष बैठ जाते थे। सुल्तान पलंग पर बैठता था। सुल्तान के पलंग के बगल में एक कुर्सी रख दी जाती थी/उसी कुर्सी पर भोजन का थाल रखा जाता था। सुल्तान उसी समय भोजन करता था। अमीरों के सामने भोजन के थाल तो रख दिये जाते थे परन्तु उन्हें सुल्तान के साथ-साथ खाने की इजाजत नहीं थी/जब सुल्तान भोजन कर लेता था तब ये अमीर अपने अपने भोजन के थालों को घर ले जाकर खाते थे।[1]

सुल्तान सिकन्दर लोदी यदि किसी व्यक्ति को एक बार माँस और शराब प्रदान कर देता था तो इसमें फिर अपने राज्य के अन्त तक कोई परिवर्तन नहीं करता था ऐसा कहा जाता है कि गर्मी की ऋतु में शेख़ अब्दुल गानी[2] नामक एक प्रसिद्ध पुरुष जौनपुर से सुल्तान से मिलने आये और तब सुल्तान ने उसको ‡अब्दुल गानी को‡ माँस, शराब, अन्य भोजन भिजवाया। गर्मी का मौसम होने के कारण चार घड़े शर्बत के भी भिजवाया। दोबारा अब्दुल गानी जब जाड़े के मौसम में सुल्तान से मिलने आये

---

1. अब्दुल्लाह : तारीख़े-ए-दाउदी, पृष्ठ 37, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 132, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 594, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 338.

2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 341, अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 39, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 132.

तब भी सुल्तान ने उनके लिए वही सारा सामान भेजा जो पहले भेजा था । यहाँ तक कि शर्बत भी भेजा । इसी प्रकार अन्य अमीरों आदि को भी जैसा प्रथम बार जो वस्तु भेंट देता था वैसी ही भेंट भविष्य में वह जब चाहे जितने वर्ष बाद आये देता था । शेख़ अब्दुल गनी की जब मृत्यु हो गयी तब उसका पुत्र शेख़ अब्दुस्समद सुल्तान के दर्शन करने आया तो सुल्तान ने आदेश दिया कि जो कुछ शेख़ अब्दुल गनी को भेजा जाता था वही उनको भेजा जाया करे । चाहे जाड़ा हो या गर्मी शर्बत में कोई कमी नहीं की जाती थीं ।[1]

कुछ मुसलमान अमीर हिन्दुओं के हाथ का बना भोजन करना पसन्द नहीं करते थे । वाक़ेआते मुश्ताक़ी के लेखक शेख़ रिज़्कुल्लाह का कथन है कि मियाँ मारूफ फ़र्मूली एक ऐसा कट्टर मुसलमान अमीर था कि उसने कभी किसी हिन्दू के घर भोजन न किया। एक बार मियाँ हुसेन फ़र्मूली तथा अन्य अमीर चित्तौड़ के राजा के घर अतिथि बनकर गए । राणा ने बड़ी नम्रता से मियाँ के सामने खड़े होकर निवेदन किया कि, "अन्य अमीरों ने हमें सम्मानित करके हमारे यहाँ भोजन किया है आप भी हमारे ऊपर कृपा करके भोजन करें ।" मियाँ ने कहा कि, "मैंने कभी किसी हिन्दू के घर भोजन नहीं

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 341, शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 40, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 132, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 39, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 132.

किया है ।"[1] तब राणा ने कहा कि, "आप हमारे अतिथि होना स्वीकार करें ।" मियाँ ने कहा कि, "मैंने आजीवन ऐसा कार्य नहीं किया है, मैं नहीं कर सकता ।" मियाँ हुसेन ने अफगान भाषा में कहा कि, "बहुत से कार्य आवश्यकतावश किये जाते हैं आप समय को देखते हुए इसके साथ भोजन कर लें ।" मियाँ ने कहा कि, "आप हमारे बुजुर्ग हैं आप इसकी प्रसन्नता के लिए कार्य करें ।" जब समस्त अमीरों तथा राणा ने आग्रह किया, तो उसने थोड़ा सा भोजन दोनों अंगुलियों से उठाकर रूमाल के कोने में बाँध लिया और कहा कि, "खा लूँगा ।" वहाँ से वापस होकर उसने रूमाल में से भोजन खोलकर फेंक दिया ।[2]

सिकन्दर लोदी :

सुल्तान सिकन्दर लोदी के राज्यकाल में भीकन खाँ नामक एक अमीर था । उसका यह नियम था कि जब वह खाना खाने बैठता था तो चीनी के एक बड़े से थाल में 2-3 तन्दूरी रोटी, एक अशर्फी और एक पान का बीड़ा रखकर सबसे पहले भिखारियों को भिजवाता था फिर स्वयं खाना खाने बैठता था । भीकन खाँ साग खाने का बड़ा शौकीन था । एक बार भीकन खाँ शिकार खेलने गया था जब रात हो गयी तो एक गाँव में रूका वहाँ एक स्त्री साग पका रही थी । भीकन खाँ ने उसके यहाँ खाना खाया/साग खाया तो उसे बड़ा स्वादिष्ट लगा तो उसने पूछा, "यह किस चीज

---

1. शेख रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 138, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 178.

2. शेख रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 138, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 178-179.

का साग है ।" तब उस स्त्री ने बताया कि, "नीम की पत्ती है ।" इसे पकाना बड़ा कठिन कार्य है । तब भीकन ख़ाँ ने अपनी जेब से अशर्फ़ी निकालकर उसे इनाम दिया फिर उसने अपने एक सेवक को साग बनाने की विधि सीखने को कहा ।[1]

सुल्तान सिकन्दर लोदी के समय ख़ाने जहाँ लोदी नामक एक महान अमीर था जब ख़ाने जहाँ की मृत्यु हो गयी तब उसके उत्तराधिकारी मियाँ जैनुद्दीन को राज्य की ओर से प्रतिवर्ष । लाख तन्का पान ख़रीदने के लिये दिया जाता था ।[2] जैनुद्-दीन प्रत्येक जुमे की रात्रि में 6 मन शरबत और हलवा दरबार में भेजा करता था और 27 रमज़ान की रात को इससे दुगुना यानि 12 मन हलवा भेजता था । उसकी रसोई सभी लोगों के लिये खुली रहती थी । सभी साधारण, सम्मानित, गोरे, काले सबको 3 बार भोजन दिया जाता था । रमज़ान के पवित्र महीनों में अफ़तार का भोजन तथा शहर का भोजन जिसमें शीर, बिरंज के प्याले, होते थे प्रत्येक को दिये जाते थे । वह जो ख़ुद खाता था वही सबको खाने को दिया करता था ।[3] जैनुद्दीन मुहम्मद साहब की मृत्यु के 12 दिनों के बीच में प्रतिदिन 2 हजार तन्के का भोजन अपनी रसोई में बनवाकर बँटवाता था । पहले दिन और आख़िरी दिन 4-4 हजार तन्कें का उत्तम भोजन और हलवा तैयार करवाकर बँटवाता था ।[4]

---

1. अहमद यादगार : तारीख़े शाही, पृष्ठ 50-51, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 336-337.
2. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 55, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 138.
3. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी, वही, पृष्ठ 57, अनुवादक : वही, पृष्ठ 139.
4. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी, वही, पृष्ठ 57-58, अनुवादक : वही, पृष्ठ 140.

इब्राहीम लोदी :

सुल्तान इब्राहीम लोदी रात को जब एक प्रहर बीत जाती थी उसके बाद भोजन करता था । भोजन करते समय वह स्वयं सिंहासन पर बैठता था । उसके सिंहासन के पास दो कुर्सियाँ रख दी जाती थी । उस पर चीनी मिट्टी के बर्तनों में खाना परोसकर रख दिया जाता था । जब सुल्तान भोजन करता था तब उसके साथ बड़े बड़े अमीर बैठते थे । उनके सामने भी चीनी मिट्टी के बर्तनों में खाना परोसकर रखा जाता था/ वे सुल्तान के साथ सामने बैठकर खाना नहीं खाते थे, बल्कि जब सुल्तान खा लेता था तब वे सब अपना खाना लेकर सुफ्फ़े ताक (मेहराबदार सामवान) में आकर खाते थे ।[1]

हिन्दू मुस्लिम दोनों समाज में मध्यम वर्ग के पास इतना पैसा नहीं होता था कि खाने पर अधिक खर्च करते/ इसलिये वे साधारण दाल-रोटी खाते थे । खिचड़ी उनका प्रिय भोजन होता था ।[2]

मनोरंजन के साधन :

प्रत्येक जाति, समाज एवं समुदाय एवं वर्ग का व्यक्ति अपने जीवन में सुख, सुविधा चाहता ही है साथ ही साथ आनन्द भी उठाना चाहता है । संघर्षशील जीवन में, विषाद, और दु:ख से मुक्त होकर कुछ क्षण आनन्द एवं मनोरंजन में व्यतीत करना चाहता है ताकि उसके मस्तिष्क और शरीर को कुछ शान्ति मिल सके । प्रत्येक

---

1. अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 42, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 328.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 52, के0एम0 मिश्रा : उत्तरी भारत में मुस्लिम समाज, पृष्ठ 56.

मनुष्य का मनोरंजन उसकी व्यक्तिगत रूचि पर निर्भर तो करता ही है साथ ही साथ उसकी आर्थिक स्थिति पर भी निर्भर करता था । कुछ मनोरंजन केवल राजकीय व उच्च वर्ग के लोगों द्वारा ही अपनाये जाते थे । धन की कमी के कारण साधारण वर्ग के लोगों द्वारा उनका नियोजन नहीं हो पाता था । कुछ मनोरंजन सर्वसाधारण जनता के समझे जाते थे जिनको हर वर्ग और हर जाति के लोग करते थे ।

वे मनोरंजन जो राजकीय वर्ग में प्रचलित थे जैसे -जंगली पशुओं जैसे शेर, चीता, तेंदुए, मृग, बारहसिंहा का आखेट करना । इसके अलावा हाथी की लड़ाई, मुर्गों की लड़ाई भी सुल्तान देखकर अपना मनोरंजन करते थे । इसके अलावा चौसर, शतरंज, पोलो, जुआ, नृत्य द्यूतक्रीड़ा, खेलते थे[1] जो मनोरंजन का सबसे प्रिय खेल था । सुल्तान महमूदशाह, बहलोल लोदी, सिकन्दर लोदी शिकार खेलने के बड़े शौकीन थे ।[2] सुल्तान

---

1. द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 613, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 214-229, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 60, अबुल फजल:आइने-अकबरी, भाग 1-2, मूल फारसी से अनूदित अनुवादक : हरिवंश राय शर्मा, पृष्ठ 226-227, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 245.

2. तबकाते अकबरी : ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद, पृष्ठ 263-264, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 61-62, 213, राधेश्याम : सल्तनत कालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 234

बहलोल लोदी तो शिकार करने में इतना दिलचस्पी रखता था कि जब कभी यात्रा पर जाता था तो 2 कोस जाने के बाद शिविर लगाकर शिकार कर लेता था तब आगे बढ़ता था । बचपन में गेंद बहुत खेलता था[1] इसी तरह सुल्तान सिकन्दर लोदी पोलो खेलने में ज्यादा रूचि लेता था जब कभी उसे खाली समय मिलता था तो पोलो खेलने निकल जाता था[2] इससे शारीरिक व्यायाम होता था ।[3]

शतरंज अफ़गानों का प्रिय खेल था । कभी कभी सुल्तान बागों में चले जाया करते थे, वहाँ प्रकृति की छटा देखकर अपने मन के बोझ को हल्का किया करते थे । ये रमणीय वातावरण उनके विचारों को अधिक प्रभावित किया करता था । वे वहाँ बैठकर चिन्तन, मनन करते एवं कविता लिखा करते थे । कभी कभी ये सुल्तान किसी हौज़ के किनारे बैठकर आनन्द लिया करते थे । दिल्ली में हौज़-ए-खास के किनारे अनेक

---

1. अफ़्सानये शाहान : मुहम्मद कबीर बिन शेख़ इस्माईल : पृष्ठ 23ब, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 371, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 234, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 60.

2. सैय्यद इकबाल अहमद जौनपुरी : शर्क़ी राज्य जौनपुर का इतिहास, पृष्ठ 225, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 317, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 213-217.

3. द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 613, राधेश्याम: सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 234-235.

गायक, वादक एवं नृत्य करने वाली स्त्रियाँ रहती थी जो संध्या समय लोगों का मनोरंजन किया करती थीं ।[1]

संगीत भी मनोरंजन का सबसे उत्तम साधन था । सुल्तान तथा अमीर इसका आयोजन करवाया करते थे । रूढ़िवादी दकियानूसी कट्टर मुसलमानों के विरोध के बावजूद मुस्लिम समाज का तीन चौथाई भाग संगीत, नृत्य में रूचि रखता था । कोई भी जश्न, उत्सव, संस्कार, बिना संगीत नृत्य के पूर्ण सम्भव नहीं होते हैं । यहाँ तक कि स्त्री के गर्भाधान से लेकर वृद्ध के परलोक सिधारने तक संगीत, नृत्य का आयोजन किया जाता था । सुल्तान अपने दरबार में बड़े बड़े गायकों, वादकों एवं नृत्य करने वाली स्त्रियों को रखा करते थे । वाद्ययन्त्रों में मुख्यत: वीणा सरोद, सितार, तानपूरा, रबाब, सारंगी, दिलरूबा, मयूरी, पखावज, ढ़ोलक, तबला, बीन, बासुरी, शहनाई बजायी जाती थी ।[2]

---

1. अब्दुल्लाह : तारीख़े दाउदी, पृष्ठ 58, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 275-276, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 237, शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़े आते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 20, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 107.

2. मूल लेखक के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, अंग्रेजी अनुवादक : के०एस० लाल : पृष्ठ 230, के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 104, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 37, बाबर : बाबरनामा, अनुवादक : श्रीमती बेवरिज, पृष्ठ 308-312.

सैय्यद सुल्तान मुबारकशाह संगीत का महान प्रेमी था । उसने अपने दरबार में अनेक संगीतज्ञों को संरक्षण प्रदान किया था ।[1]

सुल्तान सिकन्दर लोदी संगीत का इतना अधिक प्रेमी था कि उसने अपने राज्यकाल में देश-विदेशों से अद्वितीय संगीतज्ञों तथा गायकों को बुलाकर अपने राज्य में संरक्षण दिया । एक प्रहर रात्रि को व्यतीत हो जाने पर वह संगीत की सभा आयोजित करवाता था । उसने चार संगीतज्ञों (दासों) को 1500 दीनार में क्रय किया था इनमें से एक चंग, दूसरा कानून, तीसरा तम्बूरा और चौथा बीणा बजाता था । इनके स्वर इतने हृदयग्राही होते थे कि उनके द्वारा मुर्दे भी जी जाते थे ।[2] इसके अलावा चार शहनाई बजाने वाले थे ये जब आधी रात व्यतीत हो जाती थी (यानि 9 बजे रात से) तब बजाना प्रारम्भ करते थे । इन्हें केवल चार राग़ बजाने का आदेश था । प्रथम कबदारा, द्वितीय अजाना, तृतीय हुसैनी, चतुर्थ रामकली, रामकली पर वादन समाप्त होता था । अगर इन चार के अलावा अन्य कोई राग बजाते थे तो उन्हें दण्ड दिया जाता था ।[3]

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 227.
2. तारीख़े शाही : अहमद यादगार : हस्तलिखित प्रति, पृष्ठ 88, उद्धृत अंश, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 341.
3. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 341, शेख़ रिज़कुल्लाह: मुश्ताक़ी : वाक़े आते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 52, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 134, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाउदी, पृष्ठ 39, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 262.

यद्यपि सुल्तान सिकन्दर लोदी को गाना सुनने का बड़ा शौक था पर सुल्तान उन्हें अपने सामने गाना नहीं गाने देता था । मीरान सईद रुहुल्लाह और सईद-इब्न-ए-रसूल ये दोनों व्यक्ति सुल्तान के बड़े कृपापात्र थे । ये लोग हमेशा सुल्तान के डेरे के पास रहते थे । संगीतज्ञ इन्हीं के सामने गाना गाया करते थे ।[1]

चिश्ती सम्प्रदाय के सूफ़ी सन्त अजमेर के मुईनुद्दीन तथा दिल्ली के निज़ामुद्दीन औलिया को कव्वाली सुनने का बड़ा शौक था । इन्होंने संगीतज्ञों को भक्ति के गाना गाने पर बहुत जोर दिया था ।[2]

अमीर भी संगीत में रूचि रखते थें । सिकन्दर लोदी का अमीर मियाँ ताहा संगीत में इतना निपुण था कि इस काल के संगीतज्ञ स्वयं कहा करते थे कि मियाँ ताहा का मुकाबला कोई नहीं कर सकता है । स्वर के ज्ञान में उसके बराबर कोई नहीं था। एक दिन एक वादक उसके द्वार पर वीणा बजा रहा था । उसके बाजे में एक तार की कमी थी । मियाँ अपने घर के भीतर से सुन रहा था । उसने ख्वास खाँ द्वारा यह सन्देश भेजा कि "आठवें तार को किस कारण पृथक कर दिया ? " जब देखा गया तो पता चला कि जैसा मियाँ ने कहा था वैसा ही था ।[3]

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 341, शेख रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 52, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 134, अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 39, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : वही, पृष्ठ 262.
2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 227.
3. शेख रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 133-134, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : वही, पृष्ठ 175.

अन्य मनोरंजन के साधन जैसे सरकारी उत्सव, सरकारी स्वागत समारोह जैसे किसी विदेशी राजा या दूत का दरबार में आना, युद्ध के बाद विजयोत्सव, राजकुमार या राजकुमारी का जन्म एवं जन्म-दिन, इनका विवाह, आदि उत्सव बड़े धूमधाम से मनाये जाते थे। ये भी मनोरंजन का एक महत्त्वपूर्ण साधन थे। इन उत्सवों में नृत्य, गायन, का आयोजन होता था साथ ही साथ लोगों को उपहार वितरित किये जाते थे।[1] जब बहलोल लोदी के पुत्र (सिकन्दर) का जन्म हुआ तो बहलोल लोदी बड़ा प्रसन्न हुआ और मनोरंजन का आयोजन करवाया था।[2]

सुल्तान इब्राहीम लोदी ने पानीपत पर आक्रमण करने से एक दिन पूर्व बृहस्पतिवार 19 अप्रैल 1526 ई0 को अपना तथा अपने सैनिकों का मनोरंजन करने के लिए एक विशाल जश्न का आयोजन करवाया। उसने अपने सैनिकों और अमीरों को बुलवाया और कहा कि उनके पास जो कुछ वस्त्र हैं वे पहनकर आयें। फिर खेमे, जरदोसी, तथा अतलस का सामबान लगवाकर जश्न का आयोजन करवाया। जो कुछ सोना,

---

1. चोपड़ा, पुरी एवं दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 67, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 295, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 252, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 241, 339, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 21, के0एम0 पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 38.

2. अहमद यादगार : तारीख़े शाही, पृष्ठ 19, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 316.

चाँदी, हीरे, मोती, अशर्फियाँ, जवाहरात थे, उसे न्यौछावर किया । पूरा दिन जश्न में गुजारा[1] और अपने मित्रों से कहा, "मित्रों कल हम मुगल सेना के साथ युद्ध करेंगे । यदि मुझे विजय मिली तो मैं तुम्हें प्रसन्न करने का प्रयत्न करूँगा और अगर नहीं तो, तुम मेरे इन्हीं भेंटों और इरादों से सन्तोष करना ।"[2]

जनसाधारण द्वारा अपनाये गये मनोरंजन के साधन निम्न थे जैसे - पतंग उड़ाना, कबूतर लड़ाना, साँप लड़ाना, मोर नचाना, मुर्गा लड़ाना, बुलबुल लड़ाना, लाल एवं अन्य पक्षियों को लड़ाना आदि । पशुओं में गेण्डा, शेर, चीता, हाथी, ऊँट, भेड़, मुर्गा, बारहसिंहा आदि जानवरों को लड़ाया करते थे ।[3] इसके

---

1. अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 93-94, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 347.

2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 24, बाबर ने बाबरनामा में लिखा है कि इब्राहीम लोदी इतना कंजूस था कि उसे किसी चीज को देने के लिए फुसलाया नहीं जा सकता हैं उसे धन संग्रह करने का बड़ा लालच था । बाबर : बाबरनामा, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 452.

3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 60-62, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 234, के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 75, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 37.

अलावा नट-नटनी का खेल, बाज़ीगर का खेल, कठपुतली का खेल, भाँड़ और पेशेवर विदूषक भी लोगों का अच्छा मनोरंजन किया करते थे ।[1] बाबर ने अपनी आत्मकथा बाबरनामा में हिन्दुस्तान के बाजीगरों/नटों की कला की सराहना की थी ।[2]

जुआ खेलना, कुश्ती तथा दंगल भी मनोरंजन का एक महत्त्वपूर्ण साधन था । कुलीन, साधारण व्यक्ति, शासक, धर्मनिष्ठ व्यक्ति, सन्त, इस खेल को प्रोत्साहन देते थे तथा अपने दरबार में इनका आयोजन करवाकर अपना मनोरंजन करते थे । यहाँ तक कि कभी कभी शासक स्वयं कुश्ती में भाग लेते थे ।[3]

मेला भी मनोरंजन का एक साधन था । उर्स पर मुसलमान सन्तों की दरगाहों पर जाते थे/वहाँ कव्वाली होती थी ।[4] चंड़ल, मंडल, गोटी, पच्चीसी के

----

1. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 256-257, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 238, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 60.

2. बाबर : बाबरनामा, अनुवादक : श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 295, वन्दना पाराशर : बाबर, भारतीय सन्दर्भ में, पृष्ठ 129.

3. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 230, के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत में मुस्लिम समाज की दशा, पृष्ठ 104, बाबर : बाबरनामा, अनुवादक : केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 308-312, वन्दना पाराशर : बाबर, भारतीय सन्दर्भ में, पृष्ठ 129.

4. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 244.

खेल भी मनोरंजन के साधन थे। पच्चीसी जमीन में खाने बनाकर गोटी से खेला जाता था। आगरा के किले तथा फतेहपुर सीकरी में संगमरमर के पत्थरों पर इस खेल के चतुर्भुजाकार खाने बने हुये हैं।[1]

बच्चों के मनोरंजन के साधन निम्न थे जैसे - पतंग उड़ाना, गेंद खेलना, आँखमिचौनी, मुरली बजाना, झूला झूलना, काँच की गोली खेलना, लट्टू नचाना, गुल्ली डण्डा खेलना, कबड्डी खेलना, चदरचपोल, छल्ला चपोल, काले पीले देव, वजीर बादशाह, लोढ़ी, हेतूराय आदि खेल थे। लड़कियाँ गुड्डा गुड़िया खेलती थीं एवं पशु-पक्षी जैसे तोता, मैना, लाल, श्यामा, बिल्ली के साथ भी खेलती थीं/ वे आपस में नाचती गाती भी थीं।[2]

इस प्रकार इन उपरोक्त खेल और तमाशों से यह ज्ञात होता है कि इस अवधि के लोग भी इन मनोरंजन के प्रति अगाध रुचि रखते थे।

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 60, आइने अकबरी : अबुल फजल : मूल फारसी से अनूदित, भाग 1-2, अनुवादक : हरिवंशराय शर्मा, पृष्ठ 227.

2. के०एम० मिश्रा : उत्तर भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 75.

<u>हिन्दुओं के विभिन्न त्यौहार</u> :

हिन्दू और मुसलमान दोनों के त्यौहार अलग अलग थे । उन्हें अलग अलग तरीके से मनाया जाता था । कितने शासक आये, राज्य किये, और चले गये । संकट आया और विनाश हुआ, लोग उत्पीड़ित एवं परेशान हुये, किन्तु स्थानीय और सामान्य त्यौहार पूर्ववत् बने रहे और सदैव बड़े उत्सव और आनन्द के साथ मनाए जाते रहे । नवीन सम्प्रदायों और धार्मिक विश्वासों के आने पर भी इन त्यौहारों का स्वरूप नहीं बदला बल्कि इस दौरान जो अनेक विदेशी यात्री आये उन्होंने इन त्यौहारों का बड़ा गुणगान किया क्योंकि ये त्यौहार अत्यन्त उत्साह,एवं सौहार्दपूर्ण वातावरण में मनाए जाते थे ।

सर्वाधिक प्रचलित त्यौहार निम्न थे - मकर संक्रान्ति, मौनी अमावस्या, वसन्त पंचमी, होलिका दहन, वसन्ती नवरात्रि, रामनवमी , सरहुल, अक्षय तृतीया, गंगा दशहरा, वट सावित्री व्रत, गुरु पूर्णिमा, सोमवती अमावस्या, नागपंचमी, रक्षा बन्धन, कज्जली तीज, हलषष्ठी, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, विश्वकर्मा पूजा, महालक्ष्मी व्रत, अनन्त चतुर्दशी, जीवित पुत्रिका ‡जीड़ितिया‡ व्रत, मातृनवमी, शारदीय नवरात्र, विजयदशमी, महालक्ष्मी पूजा, शरद पूर्णिमा, करवा चौथ, हनुमान जयन्ती, दीपावली, अन्नकूट, गोवर्धन पूजा ‡भइया दूज‡, सूर्यषष्ठी व्रत, अक्षय नवमी, प्रबोधनी एकादशी व्रत, कार्तिक पूर्णिमा, काल भैरव, बड़ा दिन आदि ।[1]

----

1. डॉ० रत्न चन्द्र शर्मा : मुगल कालीन सगुण भक्ति काव्य का सांस्कृतिक विश्लेषण, पृष्ठ 260-279, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 62-64; के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 247-264., एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 245, के०एम० पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 38.

मुसलमानों के विभिन्न त्यौहार :

मुसलमानों के त्यौहार निम्न थे - ईद, इदुलजुहा, शब्बेरात, ग्यारहवीं शरीफ़, मुहर्रम, चेहल्लुम, शहादतें इमाम हसन, आखिरी चहार सम्बा, ईदे-मालाद-फतीहा, हजरत अली जयन्ती, मिला दुब्नवी [शबे मीराज़], रमज़ान आरम्भ[रोज़ा] शहादते अली, जुमा अलीका, शबेकदर आदि ।[1]

बक़रा ईद के त्यौहार पर सभी वर्ग के लोग न केवल बकरे की क़ुर्बानी देते थे बल्कि ऊँट और गाय की भी क़ुर्बानी देते थे । सुल्तान सिकन्दर लोदी का अमीर आज़म हुमायूँ शिरवानी ईदुज्ज़हा के दिन 3 हज़ार गाय, दुम्बे तथा ऊँट की क़ुर्बानी दिया करता था बक़रीद तथा ईद के दिन सम्राट अपने सेवकों, अमीरों तथा निम्न सभी वर्ग के लोगों को उपहार दिया करते थे । अन्य लोग भी अपने से छोटों को ईद पर उपहार देते थे ।[2] मुग़ल सम्राट बाबर ने बक़रा ईद पर हिन्दू वेश को एक

---

1. के0एम0 मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 117-118, राधेश्याम: सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृ0 233-34, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक इतिहास, पृ0 66, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 27, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 249-250, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 634.

2. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़े आते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 69, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 149, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृ0 22-68, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 245.

विशेष सरोपा, जड़ाऊँ कटार, पेटी प्रदान की और हसनअली को जो तुर्कमानों में चग़ताई नाम से प्रसिद्ध था इसे भी सरोपा, जड़ाऊँ कटारपेटी तथा 7 लाख का एक परगना उपहार स्वरूप प्रदान किया था ।[1]

ईद के त्यौहार पर सुल्तान सिकन्दर लोदी ने कैदियों को जेल से रिहा करने की प्रथा शुरू की थी ।[2] नौरोज़ का त्यौहार भी बड़े धूमधाम से मनाया जाता था। नौरोज़ की सुबह बादशाह "मुबारक नौरोज़" कहकर सभी वर्गों की जनता का अभिनन्दन करता था ।[3]

हिन्दू समाज में शिष्टाचार और व्यवहार :

हिन्दू और मुस्लिम दोनों समाज में शिष्टाचार और व्यवहार का तरीका अलग अलग होता था हिन्दू जब अपने बराबर वालों से या छोटे से मिलते थे तो जो हाथ जोड़कर नमस्ते करते थे कुछ लोग अपने बराबर वालों से राम-राम कहकर मिलते थे उच्च पद वाले लोग जब अपने गवर्नर, मंत्री या सेनापति से मिलते थे तो हाथ जोड़कर नमस्ते करते थे तथा जब बराबर के पद वाले लोग(जैसे - एक गवर्नर दूसरे गवर्नर से) मिलते थे तो हाथ मिलाते थे । छोटे लोग जब अपने बड़ों

---

1. बाबर : बाबरनामा, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी, पृष्ठ 339.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 66, के०एम० मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 119, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 2, पृष्ठ 391.

3. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 257.

से जैसे बेटा अपने माँ-बाप, बड़े भाई-बहन से मिलता था तो अपने दोनों हाथों से पैर छूआ करता था। शिष्य अपने गुरु का अभिवादन दण्डवत लेटकर करता था। राजा का अभिवादन भी दण्डवत लेटकर किया जाता था। जब ब्राह्मण राजा से मिलने जाता था तो राजा का अभिवादन अपने दोनों हाथ ऊपर जोड़कर करता था। सिक्ख लोग जब अपने अनुयायियों से मिलते थे तो सत श्री अकाल कहते थे।

हिन्दुओं में अगर उसके घर पर कोई अतिथि आता था तो उसे पान, पुष्प समर्पित किया जाता था। उसे ऊँचे आसन पर बैठाया जाता था। उस पर फूलों की वर्षा की जाती थी। माथे पर चन्दन का लेप लगाया जाता था। अगर गुरू शिष्य के घर आता था तो सर्वप्रथम उसके पैर धोये जाते थे। उसकी सारी देह पर चन्दन लगाया जाता था। गले में फूलों का हार पहनाया जाता था और सिर पर तुलसी के फूलों का एक गुच्छा रखा जाता था। शिष्य अपने गुरू को दण्डवत प्रणाम करता था।[2]

मुस्लिम समाज में शिष्टाचार और व्यवहार :

मुसलमानों में शिष्टाचार और व्यवहार करने का तरीका हिन्दुओं की अपेक्षा भिन्न था। मुस्लिम समाज में सभी वर्ग के लोग जब एक दूसरे से मिलते थे तो एक व्यक्ति दूसरे को "सलाम" कहता था तो दूसरा व्यक्ति उसके उत्तर में "वाले-कुम अस्-सलाम" कहता था। जब दो दोस्त आपस में मिलते थे तो दोनों अपना हाथ

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 38.

2. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 280.

सिर तक ले जाकर सलाम करते थे। प्रेमवश एक दूसरे का आलिंगन भी करते थे जब कोई व्यक्ति सुल्तान से मिलने जाता था तो वह व्यक्ति अपना मस्तक पहले जमीन की ओर झुकाता था फिर सिंहासन की ओर बढ़ते हुये बीच बीच में तीन तीन बार झुककर अभिवादन करता था। इस प्रकार के अभिवादन करने को शर्त-ए-जमी-बोस या भू-चुम्बन समारोह कहा जाता था।[1]

विजयनगर में राजा का अभिवादन करने का तरीका भिन्न था। जब कोई व्यक्ति राजा से मिलने के लिये जाता था तो वह नंगे पैर जाता था। राजा के पास जाकर राजा का चरण स्पर्श करके एक तरफ दोनों हाथ बाँधकर सिर झुकाकर जब तक खड़ा रहता था[2] जब तक राजा उसकी तरफ देख नहीं लेता था।

मुगल सम्राट अकबर के सम्मुख कोर्निस और तसलीम के नियमानुसार अभिवादन किया जाता था। कोर्निस में दाएं हाथ की तलहथी को ललाट पर आगे की ओर रख सिर झुकाया जाता था और तसलीम करते समय दाएँ हाथ को जमीन पर रखना होता

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 38-39, यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे मुबारकशाही, पृष्ठ 204, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 29, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 78, अबुल फजल : आइने अकबरी, भाग 1-2 मूल फारसी से अनूदित हरिवंश राय शर्मा, पृष्ठ 146-147.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 39.

था जिसमें तलहथी ऊपर की ओर रहती थी फिर धीरे धीरे उठाते हुए खड़ा हुआ जा
था तथा तलहथी को सिर के ऊपर रखना पड़ता था जब अभिवादन करने वाला व्यक्ति
खड़ा होता था तो खड़े होने से पहले वह अपना हाथ सीने पर रखता था । अकबर ने
अपने शासन काल में तसलीम करने की क्रिया 3 बार करने का आदेश दिया था और
सिज़दा करने का तरीका बादशाह के सामने दण्डवत लेटकर करना शुरू करवाया था ।[1]
सम्राट शाहजहाँ ने अपने शासनकाल में तसलीम करना बन्द करवा दिया था । इसके
स्थान पर जमींबोसी या जमीन चूमने का तरीका अपनवाया था । किन्तु बाद में
फिर तलसीम को अपनाया । अब तलसीम में चार बार तलसीम करनी पड़ती थी किंतु
औरंगजेब ने इन दोनों प्रथाओं को बन्द करवाकर "सलाम आले कुम" का व्यवहार एवं
शिष्टाचार चलवाया ।[2]

अफ़गान लोग दरबार में किसी शिष्टाचार की चिन्ता कठिनता से ही करते
थे । बहलोल लोदी ने जमीन पर कालीन बिछाकर बैठने का नियम बनाया था ।
उसने सभी लोगों के साथ समानता का व्यवहार करने के कारण ऐसा किया था । वह

---

1. अबुल फजल : आइने अकबरी, भाग 1-2, मूल फारसी से अनूदित - हरिवंश राय शर्मा, पृष्ठ 146-147, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 39, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 78.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 39.

सभी लोगों के साथ कालीन पर बैठता था ।[1] दो सम्भ्रान्त व्यक्ति जब परस्पर मिलते थे तो झुककर सादर अभिनन्दन करते थे । जोर जोर से बोलना और खिलखिलाकर हँसना शिष्टाचार के विरुद्ध समझा जाता था । अतिथियों के आने पर उन्हें पान दिया जाता था । सामाजिक सभाओं में हुक्के का विशिष्ट स्थान था ।[2] धूम्रपान करने का रिवाज था पर बादशाह के सामने कोई व्यक्ति चाहे वह राज्य सम्बन्धी हो राज्य में उच्च पद पर हो, धूम्रपान करने का साहस नहीं करता था ।[3]

---

1. शेख रिज़कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 9, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 97, अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 52, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 331.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 145.

3. के0एम0 मिश्रा : उत्तरी भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 70.

~~4. वही, पृष्ठ 70-71.~~

अन्ध-विश्वास :

अन्ध-विश्वास समाज के सांस्कृतिक विश्लेषण का एक महत्त्वपूर्ण अंग होता है क्योंकि देश, काल, धर्म और जाति के अनुसार मानव समाज में अनेक प्रकार के अन्ध-विश्वास व्याप्त थे। ये इतने गहरे फैले थे कि इन्हें हटाना असम्भव था। समाज का अधिकांश वर्ग एवं व्यक्ति इन बातों पर विश्वास करता था। तत्कालीन समाज अन्ध-विश्वास से परिपूर्ण और अभिशाप्त था।[1]

अन्ध-विश्वास की भावना ज्यादातर गाँवों के लोगों में, कम पढ़े लिखे लोग में, सीधे सरल स्वभाव वाले लोगों में, विधमान थीं जिनकी अवहेलना की कल्पना से उनका कोमल हृदय काँप उठता था। ये अन्ध-विश्वास की भावनाएँ हिन्दू मुस्लिम दोनों समाज में फैली हुयी थीं।

हिन्दू धर्म के मानने वाले सदैव शुभ-अशुभ विचार कर ही कोई काम करते थे शुभ कार्य बिना ज्योतिष के परामर्श से नहीं करते थे।[2] हिन्दू निम्न चीजों को देखना शुभ मानते थे - जैसे - मछली देखना, गाय देखना, स्त्री के सिर पर पानी का भरा घड़ा देखना, ग्वालिन द्वारा कहीं दूध बेचने की आवाज सुनना, माली द्वारा फूल लाना, साँप के सिर पर कौवे को बैठा देखना, हिरन को दाहिनी ओर जंगल में

---

1. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 50.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 273, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 23-27, रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 12, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 61.

भागते हुये देखना, तीतर या चकोर का बाँयी ओर से बुलाना, गधे का चिल्लाना, लोमड़ी को देखना आदि शुभ शगुन माने जाते रहे हैं ।[1] शुभ शकुन में पुरुषों का दाहिना अंग फड़कना और स्त्रियों का बाँया अंग फड़कना शुभ माना जाता था ।[2]

अपशकुन :

अपशकुन वे लक्षण माने जाते हैं जिसके होने से आने वाले कार्य बिगड़ जाते हैं इन लक्षणों से पता चलता है कि अवश्य कोई विपत्ति आने वाली है - जैसे - केतु का उदय होना, पृथ्वी का काँपना, प्रतिमाओं का रोना, कुत्तों का रोना, सियार का रोना, पक्षियों को समूह में चिल्लाकर बोलना, बिल्ली रोना, बिल्ली का रास्ता काटना, पुच्छल तारे का निकलना, बिना पर्व के सूर्य ग्रहण लगना, कोई शुभ काम करते समय छींकना, रात को सोते समय खराब स्वप्न आना, स्त्री की दाहिनी आँख फड़कना पृथ्वी का काँपना, आदि अपशकुन लक्षण माने जाते रहे हैं ।[3]

अन्य अनेकों अन्ध-विश्वास की भावनाएँ लोगों में व्याप्त थीं । जैसे - भूत-प्रेत, चुड़ैल, जादू-टोना, झाड़-फूँक आदि बातों पर बहुत अधिक विश्वास किया जाता

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 273-274, डॉ0 रत्न चन्द्र शर्मा : मुगलकालीन सगुण भक्ति का का सांस्कृतिक विश्लेषण, पृष्ठ 299.

2. डॉ0 रत्न चन्द्र शर्मा : वही, पृष्ठ 201.

3. वही, पृष्ठ 203-204.

रहा है ।[1] पिचाशों की पूजा की जाती थी ताकि मृत्यु आत्माएँ न भटकें ।[2] सुल्तान इब्राहीम लोदी के राज्यकाल में जादू-टोना के सम्बन्ध में एक घटना निम्न प्रकार से है - "कहा जाता है कि सिकन्दर नामक एक युवक चन्दौसी कस्बे के समीप यात्रा कर रहा था, हवा की गर्मी के कारण वह एक वृक्ष की छाया में खड़ा हो गया, उस वृक्ष के नीचे एक बुढ़िया बैठी थी, उसने युवक से कहा कि "तेरी पगड़ी पर तिनका है यदि कहो तो मैं निकाल दूँ ।" उस युवक ने कहा "अच्छा" जब उस युवक ने अपना सिर झुकाया तो बुढ़िया ने उस युवक की पगड़ी में कोई वस्तु छिपा दी, जिससे वह युवक विवेकशून्य हो गया, जब बुढ़िया चलने लगी तो युवक भी उसके पीछे पीछे चलने लगा । यहाँ तक कि वह दोनों एक घने जंगल में पहुँच गये जहाँ चारों ओर से चोरों ने तलवारें खड़ी कर दी । उस युवक पर आक्रमण कर दिया ताकि सारा सामान उससे छीन लें । इसी बीच में उस युवक की पगड़ी एक वृक्ष की डाल में अटक गई और वह भूमि पर गिर पड़ी । पगड़ी के गिरते ही वह युवक अपने होश में आ गया । वह सावधान हो गया । युवक ने धनुष बाण तान दिया । वे चारों युवक भाग गये तब युवक बुढ़िया को बाँधकर चन्दौसी ले आया और कोतवाल को सौंप दिया । उस बुढ़िया की बाजार में हत्या कर दी गयी ।[3] जादू-टोने द्वारा मृतक व्यक्ति को जीवित किया करते थे ।[4]

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 313, मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 27, रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 12, डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृ० 55.

2. डॉ० सावित्री शुक्ला : वही, पृष्ठ 55.

3. अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 106, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 305

4. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 407.

पुनर्जन्म में भी हिन्दुओं को विश्वास था । कवियों का कहना है कि चौरासी लाख बार विभिन्न योनियों में जन्म लेने के बाद मानव मानव-शरीर का रूप धारण करता है । कहा जाता है कि मनुष्य अपने कर्मों के अनुसार ही अनेक योनियों में जन्म लेता है । ऐसा कहा जाता है कि गुरू की निन्दा करने वाला मण्डूक, की योनि में, देवता की निन्दा करने वाला घोर नरक में, सन्तों की निन्दा करने वाला उल्लू की योनि में, प्रत्येक व्यक्ति को गाली देने वाला व्यक्ति चमगादड़ की योनि में जन्म लेता है ।[1]

लोगों का विश्वास था कि जो स्वप्न प्रात:काल दिखायी पड़ता है वह अवश्य पूरा होता हैं ।[2]

देवताओं को प्रसन्न करने के लिए पशुओं की बलि दी जाती रही हैं । लोगों का ऐसा विश्वास था कि पशुओं की बलि देने से विपत्ति टल जाती है ।[3]

----

1. डॉ0 रत्न चन्द्र शर्मा : मुगल कालीन सगुण भक्ति काव्य का सांस्कृतिक विश्लेषण, पृष्ठ 248, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृ0274
2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 274.
3. डॉ0 ईश्वरी प्रसाद : ए शार्ट हिस्ट्री आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृष्ठ 653, डॉ0 सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 50.

पूर्वकाल की भाँति इस काल के लोगों के मन के अन्दर यह धारणा बैठ चुकी थी कि पीरों की मज़ारों पर जाकर मानता मानने से मन की इच्छा पूरी होती है। इसी कारण हिन्दू मुस्लिम दोनों धर्म के स्त्री, पुरुष, बच्चे, अपने दुःख को दूर करने के लिये, अपने मन की इच्छाओं की पूर्ति के लिये मज़ारों पर जाकर मानता मानते थे। मानता पूरी होने पर वहाँ चादर, फूल, फल, धन, माला, प्रसाद, चढ़ाते थे। कहा जाता है कि जब शेख़ निज़ामुद्दीन औलिया की माँ बीमार पड़ी तो उनसे किसी ने कहा कि किसी सन्त की दरगाह में जाकर फातिहा पढ़े तो निज़ामुद्दीन औलिया ने कहने के अनुसार किया तथा उनकी माँ ठीक हो गयी।[1]

लोगों का यह भी विश्वास था कि मृत्यु के बाद आत्माएँ भटका करती हैं और बोला करती हैं। ऐसा कहा जाता है कि जिस समय कबीर की मृत्यु हुयी उस समय कबीर के शव को लेकर हिन्दू और मुसलमान दोनों धर्मों के लोगों में आपस में झगड़ा होने लगा। हिन्दू कबीर के शव को जलाना चाहते थे और मुसलमान गाड़ना (दफनाना) चाहते थे। बात दोनों धर्मों के लोगों के बीच बढ़ गयी कि तलवार चलने की नौबत आ गयी पर कबीर की आत्मा यह कैसे सहन कर सकती थी कि दोनों धर्मों के बीच खून खराबा हो, क्योंकि कबीर ने अपने पूरे जीवन में हिन्दू मुसलमानों के बीच एकता स्थापित करने का प्रयास किया था। तभी कबीर की आत्मा ने आकाशवाणी की "कि लड़ो मत" कफन उठाकर देखो। लोगों ने जब कफन उठाकर देखा तो कबीर के शव के स्थान पर कुछ फूल रह गये थे। तब दोनों धर्मों के लोगों ने फूल को आपस में बाँटकर अपने अपने धर्मों के अनुसार उसका दाह-संस्कार किया।[2]

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 276, डॉ० रत्नचन्द्र शर्मा : मुगलकालीन सगुण भक्ति काव्य का सांस्कृतिक विश्लेषण, पृष्ठ 20[illegible] रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 11.

2. विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 18.

हिन्दू मुस्लिम दोनों धर्म को मानने वाले ज्योतिष की बातों पर बहुत अधिक विश्वास करते आ रहे हैं। सुल्तान, अमीर, प्रतिष्ठित व्यक्ति इन ज्योतिषियों की बतायी गयी बातों पर विश्वास करते थे। अगर इनकी बातें सच हो जाती थीं तो इन्हें धन-सम्पत्ति, इनाम दिया करते थे।[1] तैमूर ज्योतिष की बातों पर विश्वास नहीं करता था।[2] सुल्तान सिकन्दर लोदी ज्योतिष की बातों पर बहुत विश्वास करता था। जब सुल्तान उदित नगर के किले का घेरा डाले हुये था तब जाने से पूर्व ज्योतिष से शुभ मुहूर्त निकलवाकर गया।[3] सुल्तान इब्राहीम लोदी ज्योतिष की बातों पर बहुत विश्वास करता था। बाबर से लड़ने के लिये पानीपत के मैदान में जाने से पहले ज्योतिष से परामर्श लिया। ज्योतिषियों ने बताया कि विजय सुल्तान इब्राहीम की विजय होगी पर जब सुल्तान पराजित हुआ तब सारे ज्योतिष डर के मारे भाग गये।[4]

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 219.

2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 312.

3. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 327, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 221.

4. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 451, अहमद यादगार : तारीख़े शाही, पृष्ठ 94, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 451, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 24.

हिन्दू साधू-सन्तों, औघड़ों की चमत्कार शक्ति पर बहुत विश्वास करते रहे है। सूफ़ी सन्त झाड़-फूँक पर बहुत अधिक विश्वास करते थे।[1]

बच्चे को बुरी नजर से बचाने के लिये हाथ-पैर, माथे पर काजल का टीका लगाया जाता रहा है तथा हाथों में कालेमोती की माला पहनायी जाती रही है। छोटा बच्चा सोते समय डरे नहीं इसके लिये उसके सिरहने चाकू रखी जाती थी तथा चारपाई पर शेर का नाखून बाँध दिया जाता था। प्रत्येक खुशी के अवसर पर बलैया लेने की प्रथा थी और वर्तमान में भी है।[2]

इस प्रकार हम देखते हैं कि इन अन्ध-विश्वासों की भावनाओं ने भारतीय समाज को रूढ़िवादी, पलायनवादी, निराशावादी, दु:सहाय एवं साधु सन्तों पर आश्रित बना दिया है। इस अन्ध-विश्वास की भावना का शिकार समाज का सभी वर्ग हुआ। जब हम सामाजिक बुराइयों की ओर ध्यान देते हैं तो एक ओर मदिरापान, जुआ, व्यभिचार और विलासमय जीवन लोगों में दिखायी पड़ता है,

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 275, रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृ० 12, डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 55.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 277.

तो दूसरी ओर वेश्यागमन, दुराचार, चोरी, डकैती की झलक देखने को मिलती है। इस प्रकार से हम कह सकते हैं कि प्रत्येक देश और प्रत्येक काल में कुछ न कुछ सामाजिक बुराइयाँ अवश्य रहती है। ये बात अलग है कि उनका कम या ज्यादा होना उस समाज एवं काल की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है। पन्द्रहवीं एवं सोलहवीं शताब्दी के हिन्दू-मुस्लिम समाज के उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि दोनों ही समाजों में गतिशीलता थी तथा वातावरण के अनुसार अपने को समायोजित करने की शक्ति थी।

----------::0::----------

चतुर्थ अध्याय

सामाजिक सामन्जस्य एवम् पुनर्गठन के प्रयास

अ. भक्ति आन्दोलन

ब. सूफ़ीवाद

सामाजिक सामन्जस्य एवम् पुनर्गठन के प्रयास

अ. भक्ति आन्दोलन

पन्द्रहवीं शताब्दी में भारतीय समाज संक्रमण के दौर से गुज़र रहा था। हिन्दुओं और मुसलमानों को साथ-साथ रहते हुए दो शताब्दियों से अधिक हो गया था। प्रारम्भिक चरणों में दोनों सम्प्रदायों के बीच बड़ी उग्र कटुता रही। पन्द्रहवीं शताब्दी में उनमें एक दूसरे के प्रति कुछ समझ विकसित होने लगी थी। इस्लाम का प्रचार-प्रसार बढ़ता रहा और बहुत से हिन्दुओं को भी मुसलमान या तो बनाया जाता रहा या वे स्वेच्छा से इस्लाम स्वीकार करने लगे। विशेषकर निम्न जाति के हिन्दुओं ने प्रलोभन या दबाव के कारण धर्म-परिवर्तन किए। ऐसे लोग अपने पुराने सहधर्मियों के प्रति पूर्णतया उदासीन नहीं हो सकते थे। वे दोनों सम्प्रदायों के कट्टर तत्वों के बीच के एक ऐसे वर्ग के लोग थे जिनमें दोनों वर्गों को प्रभावित करने की शक्ति थी। कबीर एक ऐसे व्यक्ति थे, जो जन्म से हिन्दू किन्तु पालन-पोषण से मुसलमान जुलाहा थे। वास्तव में उनमें कट्टरता पैदा हो ही नहीं सकी क्योंकि उन्हें भिन्न संस्कारों से जीवनयापन करना पड़ा। पूरे सामाजिक-धार्मिक परिवेश को धीरे-धीरे बदलना ही था। मुसलमान अब न तो यहाँ से जाने वाले थे और न ही हिन्दू अब उन्हें भगा सकने में समर्थ थे।[1]

प्रशासनिक क्षेत्र में भी हिन्दुओं को निचले स्तर पर बराबर रखा गया। मुसलमान शासक और उनके अमीर केवल ऊपर से शासन करते रहे। उन्हें स्थानीय प्रशासन के लिये हिन्दुओं की बराबर मदद लेनी पड़ी। ऐसे में दोनों सम्प्रदायों के बीच की चौड़ी खाई धीरे धीरे कम होनी ही थी। फ़िरोजशाह तुग़लक और सिकन्दर लोदी जैसे शासकों ने कट्टरता की नीति अपनायी।[2] वे प्रशासनिक पहलू

---

1. ए०बी० पाण्डेय : द फर्स्ट अफगान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 253.

2. वही।

से भले ही कट्टर रहे हों, समय की धारा सामाजिक धार्मिक क्षेत्र में उदारवादी दृष्टिकोण अपनाए जाने के पक्ष में थी । मियाँ अब्दुल्लाह अजोधनी ने लोगों के अपने तरीके से ईश्वर की आराधना का अधिकार माना था । कुरूक्षेत्र मेला के सन्दर्भ में जो फतवा मियाँ अब्दुल्लाह अजोधनी ने जारी किया था उससे यही निष्कर्ष निकलता है कि इस कार्य में कुछ सामाजिक, धार्मिक, सुधारकों ने अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया । इसमें कबीर और गुरू नानक का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है ।[1] सूफ़ियों ने भी योगदान दिया । सूफ़ीवाद ने वैसे ही उदारवादी भावना भर दी जैसे भक्ति आन्दोलन ने हिन्दू समुदाय में । भक्तों और सूफ़ियों का योगदान प्रभावी सिद्ध हुआ । इन लोगों नें जनता को बहुत प्रभावित किया । इनके आगे प्रशासकीय कट्टरता एवं धर्मान्धता भी नहीं ठहर सकी ।

पन्द्रहवीं शताब्दी का हिन्दू समाज भक्ति आन्दोलन से अनुप्राणित था । मुसलमानों द्वारा सत्ता छीन लिए जाने से केवल शासन ही नहीं बदल गया था बल्कि एक भिन्न धर्म, संस्कृति एवं समाज ही भारत में आकर जम गया । हिन्दू समाज की दोनों उच्च जातियों, ब्राह्मण एवं क्षत्रिय वर्ग पर इसका गम्भीर असर पड़ा । निम्न जातियाँ तो सामन्तवादी युग से तथा राजपूत युग में सामाजिक, आर्थिक खामियों के कारण पहले से ही परेशान थीं । कहने का तात्पर्य यह है कि भारत में मुस्लिम शासन की स्थापना के पश्चात् हिन्दू समाज का राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, सभी क्षेत्रों में वर्चस्व समाप्त हो गया । समाज आध्यात्मिक सन्तोष के सम्बल को ढूँढ़ने लगा ताकि वह भौतिक दुःखों की ओर से अधिक परेशान न हो । समाज में बहुत सी कुरीतियाँ भी व्याप्त हो गयीं थीं । बाह्याडम्बरों पर जोर दिया जाता था । जाति-पाँति की विचारधारा उग्र थी । ब्राह्मणों के धार्मिक प्राधान्य के कारण निम्न वर्गीय हिन्दुओं की स्थिति अपने ही धर्म में शूद्रों की तरह ही थी । स्त्रियों की दशा

----

1. ए०वी० पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 253.

में गिरावट आ गयी थी । मूर्तिपूजा का ऐसा प्रचलन हो गया था कि इस्लाम के आगमन से हिन्दू समाज की कुरीतियाँ बहुत स्पष्ट हो गयीं थीं । मुसलमान वर्ग में न तो जातिवाद था और न ही कर्मकाण्डों पर जोर दिया जाता था । हिन्दू धर्म की कुरीतियों का निराकरण करना तथा हिन्दू समाज में भौतिक कष्टों को कम करने के लिए भक्ति भावना का प्रचार करना भक्ति आन्दोलन का एक प्रमुख लक्ष्य था । साम्प्रदायिक मेल-मिलाप के लिए भी कबीर और गुरू नानक जैसे सन्तों ने प्रयास किया ।

भक्ति आन्दोलन का जन्म दक्षिण भारत में हुआ । सातवीं शताब्दी से लेकर नवीं शताब्दी तक में आन्दोलन वैष्णव और शैव भक्ति की दो समानान्तर धाराओं के रूप में प्रवाहित होता हुआ आगे बढ़ा । इस्लाम का पदार्पण भी दक्षिण भारत में सर्वप्रथम सातवीं शताब्दी में हुआ । डॉ० ताराचन्द यह मानते हैं कि इस्लामी प्रभाव से भक्ति आन्दोलन का विकास हुआ । इसमें कोई सन्देह नहीं है । भक्ति आन्दोलन उत्तरी भारत में चौदहवीं शताब्दी में पहुँचा । रामानन्द इसके प्रमुख सन्त थे ।

सामाजिक धार्मिक सुधारक

रामानन्द :

रामानन्द का जन्म 1299 ई० में प्रयाग में कान्यकुब्ज ब्राह्मण परिवार में हुआ था । इनके निम्न शिष्य थे - अनन्तानन्द, पीपा, भावानन्द, सुखा एवम् नरहरी । इन उच्च वर्ण के शिष्यों के अलावा धनानामक जाट, सेना नामक नाई, रैदास नामक चमार और कबीर नामक एक मुसलमान भी था । उनकी दो शिष्याएँ थीं - पद्मावती एवम् सुरसीर । मध्ययुग में स्त्रियों को धार्मिक विचार-विमर्श और कार्यों में भाग लेना वर्जित था । परन्तु रामानन्द ने इस अवरोध को नहीं माना । रामानन्द का कथन था कि सब लोग एक ही परमात्मा के सेवक हैं । इसलिये सब को आपस में भाईयों की तरह मिल-जुल कर रहना

चाहिए ।[1] उनके एक शिष्य कबीर ने पन्द्रहवीं शताब्दी में सामाजिक, धार्मिक क्षेत्र में हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों को बहुत प्रभावित किया ।

कबीर के समय का राजनैतिक वातावरण :

कबीर के समय हिन्दू समाज दो कारणों से बहुत क्षुब्ध था । पहला कारण यह था कि मुस्लिम राज्य होने के कारण हिन्दुओं का तरह तरह से उत्पीड़न हो रहा था । दूसरा कारण यह था कि हिन्दू समाज अन्दर से जर्जरित हो गया था । उसमें कुरीतियों, ब्राह्याडम्बरों, कर्मकाण्डों, पुरोहितों, अन्ध-विश्वासों, जाति-पाँति इत्यादि का ऐसा धुन लग गया था कि उसकी शक्ति आन्तरिक रूप से भी कमजोर होने लगी थी । मुसलमानों ने तलवार के बल पर हिन्दुओं को दबाना चाहा । इससे हिन्दुओं के अन्दर मुसलमानों के प्रति घृणा की भावना भर गयी थी । अगर हिन्दू इस्लाम धर्म स्वीकार कर लेता था तो उसके साथ अच्छा व्यवहार किया जाता था अन्यथा बुरा ।[2] कबीर के उदय से पहले हिन्दुओं पर तरह तरह के अत्याचार हुए थे और बाद में भी होते रहे ।

तैमूर ने भारत पर आक्रमण करके हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों को बहुत कष्ट पहुँचाए । सिकन्दर लोदी ने हिन्दुओं का कड़ाई से दमन किया और कट्टर इस्लामी नीति अपनायी । हिन्दू धर्म एवं संस्कृति इतनी प्रबल है कि उसका अस्तित्व कभी न तो कोई मिटा सका है और न कोई मिटा सकेगा । हिन्दुओं के अन्दर अपने धर्म की भावना और बढ़ती गयी । मुसलमानों की कट्टरता भी धीरे धीरे कम होने

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 49, राधेश्याम: मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृ0 275.

2. रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 59.

लगी । उन्होंने भारत को अपना घर समझना प्रारम्भ कर दिया और हिन्दुओं के प्रति उनका दृष्टिकोण कुछ बदलने लगा[1] लेकिन यह बदलाव बहुत धीरे धीरे आया और बहुत कम सफलता के साथ आया ।

सामाजिक वातावरण :

मुस्लिम शासकों का राज्य स्थापित हो जाने से हिन्दू जनता के मन में जो पहले जैसा उत्साह और स्वाभिमान था वह खत्म हो गया । विलासिता में वृद्धि हो जाने के कारण हिन्दू और मुसलमान दोनों नैतिक दृष्टि से अर्धःपतित होने लगे थे । मदिरा का प्रचार बहुत अधिक हो गया था । इसके अलावा समाज में अनेक अन्ध-विश्वास प्रचलित हो रहे थे । हिन्दू जनता तो पहले से ही पराधीन होकर गौरवहीन हो गयी थी । हिन्दू जनता के सामने उनके देवताओं के मन्दिर और मूर्तियाँ खोदी जा रही थीं । हजारों हिन्दुओं की निरपराध हत्याएँ की जा रही थीं । उनके रुधिर की नदियाँ बह रही थीं । अब हिन्दू परिस्थितियों से निराश होकर ईश्वर के सहारे रह रहे थे । भक्ति की ओर उनकी आस्था बढ़ी क्योंकि जीवन के सभी मापदण्ड और उत्थान के सभी साधन और धार्मिकता के सभी आधार विनष्ट होते चले जा रहे थे । इन परिस्थितियों में निराशा, व्यग्रता, हीनता, उच्छृंखलता और व्यथा का साम्राज्य चारों ओर फैला हुआ था ।

ब्रह्मण बहुपठित तो थे पर उन्हें तत्व-ज्ञान नहीं था । योगी माया में लिप्त तथा धूर्त साधक-जन-निन्दा, आमोद-प्रमोद में लिप्त थे । मंत्र देने वाले गुरू अहंकारी हो गयें थे । जनता नितान्त पथ-भ्रष्ट हो गयी थी । हिन्दू और मुसलमान धर्म के वास्तविक रूप को भूलकर हिंसा में प्रवृत्त थे । दोनों वर्ग एक दूसरे

---

1. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 3-4.

से ब्रह्मा विषयक भेदभाव मानकर हिंसा में रत हो गये थे । हिन्दू पत्थरों की पूजा कर रहे थे और मुसलमान लोग पीर-मौलवियों के द्वारा बताये गये मार्ग पर आगे बढ़ रहे थे । साधु ब्रह्मचारी का रूप बनाये घूम घूम कर धन एकत्र कर रहे थे । वे सोने चाँदी के गहने पहनकर घोड़े पर चढ़कर घूमते थे ।[1] उनकी विवेक बुद्धि को असत्य ने आच्छादित कर रखा था । हिन्दू और मुस्लिम जनता अपने अपने धार्मिक नेताओं के बताये मार्ग पर चल रही थी । उस समय धर्म के नाम पर अधर्म, आचार के नाम पर अनाचार फैला हुआ था । जो कबीर जैसे उदार दृष्टिकोण वाले सुधारक के लिये असह्य था क्योंकि धर्म और साधना के क्षेत्र में खींचातानी चल रही थी ।

इसी समय कबीर जैसे उदारवादी व्यक्ति ने मानवता को व्यापक भावनाओं से पूर्ण और उदारता से युक्त एक नवीन धर्म का रूप प्रदर्शित किया जिसमें न जातीयता के आधार पर शोषण सम्भव था न असमानता के कारण घृणा की भावना की प्रधानता थी, न ही पत्थर की मूर्ति में भगवान के कैद होने की मान्यता थी,
यह मत निर्गुण मत था । इन्हीं कारणों से कबीर की साधना अन्तर्मुखी हो गयी थी इसी कारण इन्होंने अन्तर्साधना पर जोर दिया । इससे धर्म का स्वरूप भी परिवर्तित होता चला गया और निर्गुण पंथ का क्षेत्र निर्मित हुआ जिसे व्यवस्थित रूप से संचालित करने का श्रेय संत कबीर को जाता था । कबीर ने "बाह्य विधानों को त्यागकर आत्म साधना पर जोर दिया ।" कबीर का विचार है कि "यदि समाज में भेदभाव मिटा दिये जायें तो लड़ाई झगड़ा एवं बदला लेने की भावना खत्म हो जायेगी क्योंकि गाय चाहे जिस रंग की हो उसका दूध सफेद ही होता है । उसी प्रकार हिन्दू और मुसलमान, निर्धन और धनवान, सभी का खून लाल होता है ।" इन कवियों ने न

----

1. डॉ0 सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 80.

केवल सांस्कृतिक एकता की ओर ध्यान दिया बल्कि उन्होंने ब्रह्म की अभिन्न, अद्वितीय सत्ता की ओर भारत की जनता का ध्यान आकर्षित किया । इससे यह लाभ हुआ कि हिन्दू और मुसलमान के मध्य विद्यमान बाह्य विषयक भावना कुछ अंशों में समाप्त हो गयी ।[1]

<u>धार्मिक वातावरण</u> :

जिस समय कबीर का आविर्भाव हुआ उस समय उत्तरी भारत के समाज की धार्मिक स्थिति बड़ी विचित्र थी । कहने को तो उस समय हिन्दू, इस्लाम, बौद्ध, जैन, नाथयोगी, शाक्त, आदि प्रमुख धर्म ही प्रचलित थे किन्तु लोगों के बीच अनेक छोटे छोटे सम्प्रदायों का भी प्रचार हो रहा था जिसके कारण बाह्याडम्बर और पाखण्ड का बोलबाला बढ़ रहा था । इस धार्मिक अराजकता के युग में सर्वसाधारण के हृदय में सत्य एवं सदाचरण का भाव जाग्रत कर सच्ची शान्ति लाना एक बड़ी कठिन समस्या बन गयी थी । कोई एकमत नहीं था जिस पर सब विश्वास करते । हिन्दू धर्म अलग अलग खेमों में बँटा हुआ होने के कारण इस्लाम धर्म के आघात को रोक नहीं पा रहा था । अगर सभी धर्म के लोग एक होकर चलते तो मुसलमानों के धार्मिक अत्याचार न बढ़ने पाते ।[2]

----

1. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 103-104.

2. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 5,
   विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 115,
   परशुराम चतुर्वेदी : कबीर साहब सिद्धान्त और साधना, पृष्ठ 115.

ऐसी परिस्थितियों में कबीर और उनके अनुयायियों ने दोनों धर्मों के बीच एकता स्थापित करने का प्रयास किया । एक नया "सहजधर्म" चलाया जिसमें ऊँच-नीच का कोई स्थान नहीं था । इसमें न तो आडम्बर की भावना को स्थान दिया, न ही वितण्डावाद को स्थान दिया । इस धर्म को सभी ने अपनाया ।[1]

राम रहीम के विषय को लेकर भेद भावना बड़ी दीप्त हो गयी थी । हजारों निरीह व्यक्तियों का वध होता था । धार्मिक परिस्थितियों पर विचार प्रकट करते हुये डॉ० त्रिलोकी नारायण दीक्षित ने लिखा है कि "इस समय हिन्दू समाज और हिन्दू संस्कृति पर निरन्तर आक्रमण हो रहे थे । हिन्दू धर्म को नष्ट करने का प्रयत्न किया जा रहा था । इस गम्भीर शोचनीय परिस्थितियों में हिन्दुओं का धर्म संकट में पड़ा हुआ था । हिन्दुओं को देवताओं की पूजा करने की स्वतन्त्रता नहीं थी उन्हें अपने पुराने मन्दिर तक बनवाने की आज्ञा नहीं थी । दूसरी तरफ मूर्ति भंजक बलवान और ऐश्वर्यवान हो गये थे । मूर्ति भंजकों को सुख और ऐश्वर्य के पालने में झूलते हुये देखकर हिन्दुओं का मूर्तिपूजा से विश्वास उठता जा रहा था ।[2]

हिन्दू जनता को धार्मिकता का दण्ड भोगने के लिये जजिया देना पडता था,

---

1. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 5-6.

2. डॉ० त्रिलोकी नारायण दीक्षित : संत दर्शन, पृष्ठ 169-170.
   डॉ० ईश्वरी प्रसाद : ए शार्ट हिस्ट्री आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृष्ठ 3-4,
   डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 82.

जिसकी दर बहुत अधिक होती था ।[1] जजिया के सम्बन्ध में एस०आर० शर्मा ने लिखा है कि "जजिया जनता के ऊपर एक बड़ा बोझ था यह केवल बोझ ही नहीं था बल्कि यह देशवासियों को बराबर इस बात की याद दिलाता रहता था कि वह एक ऐसी प्रजा है जो विदेशी राजाओं के प्रति वफादार नहीं है ।" ज्यादातर मुसलमान बादशाह जजिया के अलावा हिन्दुओं से उनके धार्मिक स्थान पर आने जाने के लिये तीर्थयात्रा कर लिया करते थे ।[2] सरकारी नौकरी एवं उच्च पदों पर केवल अफगानों को ही रखा जाता था ।[3]

कबीर केवल साधक ही नहीं थे वरन वे युग-द्रष्टा और सृष्टा भी थे । उन्होंने अपनी उदार दृष्टि से उस समय की धार्मिक परिस्थितियों का वर्णन किया है और बताया कि "उस समय देश की धार्मिक स्थिति बड़ी विखण्डित थी । जनता की आस्था सत्य से हटकर असत्य में संलग्न हो गयी थी । मानवता पथभ्रष्ट हो गयी थी और मानव जीवन का कोई मूल्य नहीं रह गया था । राजनीति के इस झिलमिले वातावरण में मानव परिवर्तित होकर दानव सा हो गया है ।[4] मानव समाज

---

1. सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 82.

2. एस०आर० शर्मा : द रिलीजन पालिसी आफ मुगल एम्पायरर्स, पृष्ठ 2.

3. डॉ० ईश्वरी प्रसाद : द शार्ट हिस्ट्री आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृष्ठ 5, डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 83.

4. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 255, अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 119-120.

द्वैत के संकल्प-विकल्प में पड़ा हुआ बाह्याचारों में संलग्न था वह भक्ति के पथ से विचलित होकर माया के मोह में पड़ा हुआ था । इस सम्बन्ध में कबीर ने संतबानी-संग्रह भाग 2, में एक दोहा लिखा है जो निम्न है :-

छाड़ि दे मन बौरा डगमग ।
अब तो जरे मरे बनि आवै, लीन्हो हाथ सिंधौरा ।
प्रीति प्रतीति करो दृढ़ गुरू की, सुनौ सबद घनिघोरा ।
होई निसंक मगन है नाचें, लोभ मोह भ्रम छाड़े ।
सूरा कहा मरन से डरपै, सती न संचय माड़े ।
लोक लाज कुल की मरजादा, यही गले की फाँसी ।
आगे है पग पाछे धरिहो, होय जग में हाँसी ।
यह संसार सकल जग-मैला, नाम गहे लेहि सूँचा ।
कहै कबीर भक्ति मत छोड़ो, गिरत परत चढ़ु ऊँचा ।[1]

मनुष्य रंग-रास, वैभव और कनक-कामिनी के लोभ में पड़कर पथभ्रष्ट हो गया था । इस सन्दर्भ में संत बानी संग्रह भाग 2 में एक दोहा लिखा है -

इतना कियो करार काढ़ि गुरू बाहर कीन्हा ।
भूलि गयो वह बात, भयो माया आधीना ।
विषया बान समान देह जीवन मद माती ।
चलत निहारत छाँह, नमक के बोतल बाती ।
चोवा चन्दन लाइ के, पहिरे वसन रंगाम ।
गलिया गलिया झाकी मारै, पर तिरिया लखा मुसकाय ।[2]

---

1. कबीर : संतबानी संग्रह, भाग 2, पृष्ठ 20.
2. वही, पृष्ठ 21.

जैसे अबोध बच्चे गुड्डे गुड़ियों का खेल खेलकर अपने मन को बहलाते हैं उसी प्रकार तत्कालीन मानव समाज देवता, द्विज, भुइयाँ, भवानी की उपासना करते हैं ताकि उनके कष्ट दूर हों। वास्तव में सत् भक्ति या सत् धर्म उस समय विलीन हो गया था और जीवन असत् तम और कृत्रिमता से आवृत्त हो गया था।[1] तीर्थ व्रत, जप-तप आदि क्रियाओं में भटकता हुआ मानव अद्वैत ब्रह्म को भूल गया था।[2] समाज झूठे सुख को वास्तविक सुख मानकर उसी में रमा हुआ था। बाह्याचारों में उलझे हुए समाज को देखकर कबीर ने लिखा है कि -

"प्रिय का मारग सुगम है, तेरा चलन अबेड़ा।
नाच न जाने बापुरो, रहैं आंगना टेढ़ा॥"[3]

हिन्दू धर्म बाह्य प्रभावों और दोषों से तो अभिशप्त था साथ ही साथ आन्तरिक दोष भी उसे खोखला किये जा रहे थे। धर्म के पवित्र रूप को बाह्याचारों और असत्य ने इस प्रकार आच्छादित कर लिया था कि असत्य ही सत्य के रूप में प्रतिभासित सा प्रतीत होने लगा था। अन्ध-विश्वास ने सद्-विश्वासों का स्थान ग्रहण कर लिया था। सत्य अहिंसा त्याग का स्थान पशुबलि, नरबलि और हिंसा ने अपना लिया था। साधना के स्थान पर बाह्याचारों की प्रतिष्ठा हो रही थी।[4]

---

1. कबीर : संत वानी संग्रह, भाग 2, पृष्ठ 22.
2. वही, भाग 1, पृष्ठ 9.
3. वही, पृष्ठ 21-30.
4. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 79-80.

कबीर :

जब उत्तर भारत मुसलमानों के शासन के अन्तर्गत कराह रहा था तब कबीर ने भक्ति के शीतल निर्मल स्त्रोत में स्नान करके हिन्दू धर्म की परिभ्रांत आत्मा को शान्ति प्रदान करने का कार्य किया। कबीर कीभावना ने हिन्दुओं के हृदय में लगे घावों पर मरहम पट्टी का काम किया।[1] विविध बहिर्साक्ष्यों और अन्तर्साक्ष्यों के आधार पर विभिन्न विद्वानों ने कबीर की जन्मतिथि, नाम, जन्मस्थान, जाति, माता-पिता, गुरू, विद्याध्ययन, पारिवारिक जीवन, व्यवसाय, यात्रा, मृत्यु की तिथि, मृत्यु का स्थान आदि निर्धारण करने का प्रयास किया है परन्तु प्रत्येक विषय में विद्वानों में अनेक मतभेद हैं। भारतीय इतिहास चाहे वह साहित्य का हो, चाहे राजनीति का हो, सब विवादों से भरा हुआ है क्योंकि इस देश के कवियों ने अपने बारे में बहुत कम लिखा है जो कुछ संकेत इन विभूतियों ने दिया है वह उनके व्यक्तित्व के इर्द-गिर्द बुने गये किंवदन्तियों के जाल में उलझकर रह गये हैं।

कबीर का व्यक्तित्व भी इसी प्रकार किंवदन्तियों से घिरा हुआ है।

जन्म :

कबीर का जन्म कहाँ हुआ इस सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद हैं। शिवमूर्ति शर्मा का कथन है कि कबीरदास का जन्म 1398 ई0 में हुआ।[2] राधेश्याम ने 1492

----

1. के0एम0 पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृ0 152.

2. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृ0 7.

ई0 काशी में बताया है ।[1] आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव 1440 ई0 के आसपास बताते हैं ।[2] कबीर के जन्म के सम्बन्ध में कबीर-पंथ में एक छन्द आधृत है :-

चौदह सौ पचपन साल गये, चंद्रवार इक ठाठ ठए ।
जेठ सुदी बरसायत को पूरनमासी तिथि प्रगट भए ॥
घन गरजे दामिनि दमके बूँदे बरसें झर लाग गये ।
लहर तालाब में कमल खिलें तहँ कबीर भानु परकास भये ॥[3]

डॉ0 बाबू श्यामसुन्दर दास के अनुसार इस छन्द की रचना कबीर के शिष्य धर्मदास ने की थी किन्तु इसका कोई स्पष्ट प्रमाण उपलब्ध नहीं है । इस छन्द के अनुसार कबीरदास की जन्म-तिथि चंद्रवार ज्येष्ठ सुदी पूर्णिमा संवत 1455 ई0 होती है परन्तु इसे स्वीकार करने में कई कठिनाइयाँ हैं । सबसे बड़ी कठिनाई तिथि की गणना की शुद्धता में है । संवत् 1455 में ज्येष्ठ पूर्णिमा चन्द्रवार को नहीं पड़ता है इसलिये डॉ0 बाबू श्याम सुन्दर दास ने गए का अर्थ संवत् 1455 बीत जाने पर माना है ।[4]

संवत् 1456 में ज्येष्ठ पूर्णिमा मंगलवार को पड़ती है । चन्द्रवार सोमवार को नहीं था । चन्द्रवार को पूर्णिमा दिन के परवर्ती काल में थी । इससे यह पता चलता है कि मंगल को ही पूर्णिमा थी । एक अन्य कठिनाई "बरसायत" शब्द को

---

1. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 278.
2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 50.
3. रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 22, विजयेन्द्र स्नातक: कबीर, पृष्ठ 9.
4. बाबू श्याम सुन्दर दास : कबीर ग्रन्थावली, पृष्ठ 18.

लेकर है वह यह कि अगर इसका अर्थ वट सावित्री पर्व से लिया जाय तो यह पर्व ज्येष्ठ की अमावस्या को पड़ता है पूर्णिमा को नहीं । एक अन्य कठिनाई यह है कि छन्द की अन्तिम दो पंक्तियों में कबीर को अलौकिक व्यक्तित्व प्रदान किया गया है अत: यह तिथि भी संदिग्ध है ।[1] इसलिए कबीर की जन्मतिथि संवत 1456 मानी जानी चाहिए । "चन्द्रवार" शब्द को डॉ० पारसनाथ तिवारी ने सोमवार का द्योतक न मानकर "चन्द्रवार" नामक स्थान का द्योतक माना है जो लहरतारा से तीन मील की दूरी पर चाँदपुर गाँव का प्रतिनिधित्व करता है जहाँ पर कबीर का जन्म हुआ ।[2] अत: अन्य किसी प्रामाणिक साक्ष्य के अभाव में संवत 1455 की ज्येष्ठ पूर्णिमा को कबीर का जन्म माना जा सकता है ।[3]

जन्म-स्थान :

कबीर का जन्म किस स्थान पर हुआ इस बारे में कई मत प्रचलित हैं । जैसे क. कबीर का जन्म मगहर में हुआ, ख. आजमगढ़ जिले के बेलहरा गाँव में हुआ, ग. मिथिला एवं घ. काशी ।

मगहर जन्म स्थान के मानने के सम्बन्ध में कबीर ने गुरु ग्रन्थ साहिब में कहा है कि -

---

1. रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृ० 22-23, विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 9-10.

2. डॉ० पारसनाथ तिवारी : कबीर का जन्म स्थान "चन्द्रवार", सम्मेलन पत्रिका, भाग 4, पृष्ठ 30.

3. रुद्रदेव : मध्यकालीन सन्त-काव्य और सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन, (अप्रकाशित शोध प्रबन्ध), पृ० 53.

"पहिले दरसनु मगहर पाइयो पुनि कासी बसे आई ।"

डॉ० बड़थ्वाल ने अपनी कृति हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय में लिखा है कि कबीर का जन्म मगहर में हुआ जो आज भी प्रधानतया जुलाहों की बस्ती है ।[1] आजमगढ़ जिले के बेलहरा नामक गाँव में कबीर के उत्पन्न होने की बात बनारस डिस्ट्रिक्ट गजेटियर में लिखी है ।[2]

कबीर ने "ज्यों मैथिल सच्चा वासा त्योंहि मरण होय मगहर मेहा ।" कहकर अपने मैथिल वाल को स्वयं प्रमाणित किया है । इसके अलावा कबीर ने अपने शिष्य धर्मदास से कहा है - "सहजि भादव बीरते मेहा । एते सबद हम कह्यो विदेहा" इसमें विदेहा शब्द यह बताता है कि कबीर का जन्म मगहर में हुआ ।[3]

कबीर का जन्म काशी में हुआ क्योंकि कबीर ने अपनी वाणियों में स्वयं को काशी का जुलाहा कहा है :-

"तू ब्राह्मन मैं काशी का जोलहा, चीन्हि न मोर गियाना ।
तै सब मागे भूपति राजा, मोरे राम धियाना ॥"[4]

---

1. डॉ० बड़थ्वाल : हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय, पृष्ठ 45, रामचन्द्र तिवारी: कबीर मीमांसा, पृष्ठ 27, शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 8.

2. बनारस डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, पृष्ठ 181, शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 8.

3. रामचन्द्र तिवारी : वही, पृष्ठ 29, शिवमूर्ति शर्मा : वही, पृष्ठ 8.

4. पारसनाथ तिवारी : कबीर ग्रन्थावली, पद नम्बर 188, पृष्ठ 109, रामचन्द्र तिवारी : वही, पृष्ठ 29, शिवमूर्ति शर्मा : वही, पृष्ठ 8-9.

अभी तक किसी भी स्थान को निर्विवाद रूप से, कबीर की जन्मभूमि प्रमाणित नहीं किया जा सका है पर यह निश्चित है कि कबीर जुलाहे जाति के थे जो निम्न पद से दृष्टिगत होता है :-

क. तनना बुनना तज्यो कबीर । राम नाम लिखि लियौ सरीद ।[1]

ख. गई बुनावन याहो, घर छोड़िये जाइ जुलाहो ।[2]

कबीर ने कहीं कहीं अपने को कोरी जाति का बताया है । अपने को कोरी बताये जाने के सम्बन्ध में एक दोहा भी लिखा है । जो निम्न है :-

"जोलाहे घर अपना चीना, घट ही राम छिपाना ।
कहै कबीर कारगह तोरी, सूतै सूत मिलाये कोरी ।।"[3]

परन्तु इस दोहे में कबीर ने अपने को जुलाहा और कोरी दोनों जाति का बताया है । यह कैसे हो सकता है क्योंकि "जुलाहा" मुसलमान होते हैं और "कोरी" हिन्दू । डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने और विशद रूप में प्रस्तुत किया है कि कबीर बिहार व बंगाल के पूर्वी हिस्सों में रहने वाली जुगी जाति के थे । यह जाति न हिन्दू थी और न मुसलमान । इसका सम्बन्ध वर्णाश्रम धर्मविहीन नाथपंथी योगियों

----

1. डॉ० पारसनाथ तिवारी : कबीर ग्रन्थावली, पद 12, पृष्ठ 9, शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 9, विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 12-19.

2. रामकुमार वर्मा : संत कबीर पद 54, पृष्ठ 57.

3. डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी उद्धृत अंश शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 9-10, विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 19, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 255.

से था । कबीर पर नाथपंथी योगी का भी प्रभाव था । हम यह कह सकते हैं कि कबीर की जाति का प्रश्न अत्यन्त विवादास्पद है । अधिकतर विद्वानों ने उन्हें काशी का जुलाहा ही माना है । कबीर ने स्वयं अपने को जुलाहा और काशी का रहने वाला बताया है । इस सम्बन्ध में एक दोहा भी लिखा है :-

जिति जुलाहा मति को धीर, हरषि-हरषि गुण रमै कबीर ।
मेरे नाम को अमैद नगरी, कहै कबीर जुलाहा ।
तू ब्राह्मण मैं काशी का जुलाहा ।[1]

माता-पिता

कबीर स्वामी रामानन्द के आशीर्वाद से एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से उत्पन्न हुये थे । विधवा ब्राह्मणी ने लोक लाज के भय से लहरतारा नामक तालाब में कबीर को फेंक दिया । संयोगवश उधर से नीरू-नीमा नामक जुलाहा दम्पति निकले । उन्होंने बालक को उठा लिया और उसका पालन पोषण किया ।[2] दूसरा मत है कि नीरू और नीमा ने ही इन्हें जन्म दिया । कबीर उनके पुत्र हैं । तीसरा मत है कि कबीर एक ज्योति के रूप में काशी के लहरतारा तालाब में पुरइन के पत्ते पर बालक रूप में अवतरित हुये थे ।[3]

----

1. विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 12-20,

2. अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरिऔध" कबीर वचनावली, पृष्ठ 5, रामचन्द्र तिवारी: कबीर मीमांसा, पृष्ठ 30-32, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के सन्दर्भ में, प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 278, विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 11, के०एम० पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 153, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 255.

गुरू :

स्वामी रामानन्द कबीर के गुरू थे। कबीर बीजक के 77 शब्द में रामानंद का उल्लेख किया है :-

"आपन आस किये बहुतेरा । काहु न मर्म पावल हरि केरा ।
इंद्री कहाँ किये विस्त्राम । सो कहँ गये जे कहते राम ।
सो कहँ गये जो होत समाना । होय मृतक वह पदहि समाना ।
रामानंद राम रस भाते । कहै कबीर हम कहि कहि थाके ।"[1]

कबीर जब भजन गा-गाकर जनता को अपना उपदेश दे रहे थे तभी उन्हें पता चला कि विना किसी गुरू से दीक्षा लिये उपदेश मान्य नहीं होंगे । लोग उन्हें निगुरा कहकर चिढ़ाया करते थे क्योंकि लोगों का कहना था कि जिसने किसी गुरू से उपदेश नहीं ग्रहण किया वह औरों को क्या उपदेश देगा ? तब कबीर को गुरू बनाने की चिन्ता हुई । कबीर के समय स्वामी रामानंद काशी के सबसे प्रसिद्ध महात्मा थे । कबीर उनके पास गये और उनसे प्रार्थना की कि वे कबीर को अपना शिष्य बना लें पर मुसलमान होने के कारण रामानन्द ने कबीर को अपना शिष्य बनाने से इन्कार कर दिया । कबीर ने एक चाल चली । रामानन्द पंचगंगा घाट पर नित्य प्रात: काल ब्रह्ममुहूर्त में स्नान करने जाते थे । उस घाट की सीढ़ियों पर कबीर पहले से जाकर लेट गये । स्वामी जी जब स्नान करके लौटे तो अन्धेरे में उन्हें दिखायी नहीं पड़ा । रामानन्द का पाँव कबीर के सीने पर पड़ा, जिस पर स्वामी जी के मुँह से "राम-राम" निकला । कबीर ने तुरन्त स्वामी जी के पैर पकड़

---

1. डॉ० शुकदेव सिंह : कबीर बीजक, पृष्ठ 137, विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 13, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 255.

लिये और कहा कि आप राम-नाम का मन्त्र देकर आज मेरे गुरू हुए । रामानन्द ने कोई उत्तर नहीं दिया तभी से कबीर ने रामानन्द को अपना गुरू बना लिया । कबीर ने स्वयं कहा कि -

काशी में हम प्रगट भये हैं रामानन्द चेताए ।[1]

कबीर का दोहा यह बताता है कि रामानन्द उनके गुरू थे ।

पारिवारिक जीवन :

कबीर की पत्नी, पुत्र, पुत्री के सम्बन्ध में विवाद है । इस सम्बन्ध में कई मत प्रचलित हैं । एक मत के अनुसार कबीर एक त्यागी पुरुष थे, घर गृहस्थी से उनका कोई सम्बन्ध नहीं था -

"कबीर त्यागा ग्यान कर, कनक कामिनी दोई ।[2]

इसके विपरीत अनेक रचनाओं में उनका गृहस्थ जीवन व्यतीत करने का वर्णन मिलता है ।

कबीर की पत्नी का नाम लोई था । पुत्र का नाम कमाल और पुत्री का नाम कमाली था । ये इनके सगे लड़के लड़की नहीं थे बल्कि करामात के द्वारा मुर्दे से

---

1. विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृ० 12-13, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 255.

2. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 11.

जिन्दे किये हुए बच्चे थे ।[1] कमाल के अतिरिक्त एक अन्य पुत्र निहाल और पुत्री निहाली का उल्लेख मिलता है[2] गुरू ग्रन्थ साहिब की कुछ पंक्तियों में इनके बच्चे और पत्नी का उल्लेख मिलता है :-

"मेरी बहुरीआ को धनीआ नाउ । ले राखियो राम जनीआ नाउ ।
इन मुंडीअन मेरा धरू धुंधरावा । बिरवहि राम रमऊआ लावा ।
कहतु कबीर सुनहु मेरी माई । इन्ह मुंडीअन मेरी जाति गवाई ।[3]

एक अन्य पद से यह ज्ञात होता है कि कबीर की दो पत्नियाँ थीं । पहली "कुरूपा" और कुलक्षणी थी जबकि दूसरी रूपवती और सुलक्षणा थी । इस पद से स्पष्ट रूप से पता चलता है -

पहिली कुरूपि कुजाति कुलखनी साहुरै पेईऐ बुरी ।
अब की सरूपि सुजानि सुलखनी सहजे उदरि धरी ।
भली सरी मेरी पहिली बरी । जुगु जुगु जीवउ मेरी अबकी धरी ।

---

1. रामचन्द्र तिवारी : कबीर-मीमांसा, पृष्ठ 38, शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 11, विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 15-28, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 255.
2. रामचन्द्र तिवारी : वही, पृष्ठ 36, शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 12, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 279.
3. गुरू ग्रन्थ साहिब, राग आसा, पृष्ठ 484, रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 36, शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 11.

कहु कबीर जब लहुरी आई बड़ी का सुहागु हरिओ ।
लहुरी संगि भई अब मेरे जेठो अरउ धरिओ ॥[1]

धर्म :

एक बात और विवादग्रस्त है कि कबीर हिन्दू थे अथवा मुसलमान । कबीर एक ईश्वर में विश्वास रखते थे इसलिए आधुनिक मुसलमान लेखक उन्हें मुसलमान मानते थे पर यह मत सही जान नहीं पड़ता क्योंकि कबीर कुरान को नहीं मानते थे और न ही इस बात पर विश्वास करते थे कि मुहम्मद साहब सबसे महान अन्तिम पैगम्बर हैं जबकि सभी मुसलमान मुहम्मद साहब को अपना अन्तिम पैगम्बर मानते हैं । इससे पता चलता है कि कबीर हिन्दू थे । ऐसा कहा जाता है कि जब कबीर की मृत्यु हो गयी तो कबीर के शव को लेकर हिन्दू और मुसलमान दोनों के बीच विवाद उत्पन्न हो गया । विवाद इतना बढ़ा कि तलवारें चलने की नौबत आ गयी । कबीर जो हिन्दू मुसलमानों दोनों को जोड़ना चाहते थे वे यह कैसे सहन कर सकते थे क्योंकि हिन्दू इनके शव को जलाना चाहते थे जबकि मुसलमान दफनाना चाहते थे । तभी कबीर की आत्मा ने आकाशवाणी की "लड़ो मत. ! कफन उठाकर देखो ! लोगों ने देखा तभी शव कुछ फूल में परिवर्तित हो गया था । हिन्दू और मुसलमान दोनों नें फूल को आधा आधा बाँट लिया । हिन्दू ने उसे रस्मों के अनुसार जलाया और उनकी राख को काशी ले जाकर समाधिस्त किया । वह स्थान अब तक कबीर चौरा

----

1. गुरू ग्रन्थ साहिब, पद 32, राग आसा, पृष्ठ 483-484,
   रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 37.
   राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 227.

के नाम से प्रसिद्ध हैं। मुसलमानों ने अपने हिस्से के फूलों के ऊपर मगहर नामक स्थान पर ले जाकर कब्र बनवायी ।[1]

विद्याध्ययन एवं पर्यटन :

कबीर पढ़े लिखे न होकर एक बहुश्रुतसन्त थे । इस बात को वे स्वयं स्वीकार करते हैं कि,

"विधान परउ वाद नहि "लेखाऊ ।

इनके माँ-बाप नीरू और नीमा इतने गरीब थे कि वे कबीर की शिक्षा का प्रबन्ध नहीं कर पाये । कबीर ने सन्तों के सत्संग में ज्ञान प्राप्त किया । इस समय काशी हिन्दू और मुस्लिम शिक्षा का प्रमुख केन्द्र था । इन्होंने अनेक स्थानों का भ्रमण किया । जैसे - झूँसी, मानिकपुर, रतनपुर, मथुरा, जगन्नाथपुरी, वृन्दावन, बाँधवगढ़, जौनपुर के ऊर्जा नामक आदि स्थानों की यात्रा की, मानिकपुर में ये शेखतकी जैसे सूफी सन्त के पास गये । इन सभी स्थानों पर जाने का उद्देश्य ज्ञान प्राप्त करना था ।[2] कबीर पुस्तकों में लिखी गयी बातों पर विश्वास नहीं करते थे।

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 52-53, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 279, रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 41, विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 17-18, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 255.

2. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 13-14, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में, प्रशासन समाज और संस्कृति, पृष्ठ 278.

उन्होंने अक्षरज्ञान की निन्दा की । वे केवल प्रिय (ईश्वर) के नाम का एक ही अक्षर जानना चाहते थे । उनका विश्वास था कि इसी से मुक्ति मिलेगी पुस्तक पढ़ने से नहीं ।[1]

अनपढ़ होते हुये भी कबीर ने बहुत से पदों की रचना की । इन पदों में उनके उद्देश्य निहित हैं । कबीर की सबसे प्रमुख रचनाएँ बीजक, सबद, साखियाँ, मंगल, बसन्त, होली, रेखताल आदि के रूप में हैं ।[2]

कबीर की विचारधाराएँ :

धर्म और दर्शन के क्षेत्र में नवीन एवं मौलिक विचारधाराओं का पोषण करने वाले कबीर एक क्रान्तिकारी समाज सुधारक और युगद्रष्टा भी थे । उन्होंने समाज में फैली कुरीतियों, अन्धविश्वासों एवं बाह्याडम्बरों का घोर विरोध अपनी ओजस्विनी वाणी से किया क्योंकि उस समय का समाज परम्पराप्रचलित रूढ़ियों और दकियानूसी विचारधाराओं में डूबा हुआ था । यह समय जटिल जाति बन्धनों, वर्ग विभाजनों तथा धार्मिक विरोधों का युग था । समाज में अछूतों और निम्न वर्ग के लोगों को कोई स्थान नहीं दिया जाता था ।[3] कबीर ने इसे सर्वप्रथम मिटाने का

---

1. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 13.
2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 51, विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 62-175.
3. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 5-70, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में, प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 279, डॉ0 रत्न चन्द शर्मा : मुगल कालीन सगुण भक्ति काव्य का सांस्कृतिक विश्लेषण, पृष्ठ 69.

प्रयास किया । उन्होंने एक सामान्य धर्म का प्रवर्तन किया जिसका उद्देश्य मिथ्या-डम्बर का विरोध, वर्णव्यवस्था का विरोध, विलासिता से घृणा था । कबीर ने अपनी वाणी से दोनों जातियों की सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार किया । उनकी दृष्टि में सभी मनुष्य समान हैं न कोई छोटा है और न कोई बड़ा है ।

न कोई ब्राह्मण है न कोई शूद्र है न कोई मुल्ला है, न पण्डित है । कबीर ने स्पष्ट कहा है कि -

जाति-पाँति पूछे न कोई । हरि का भजै सो हरि का होई ।[1]

उनका विश्वास था कि समाज में सभी व्यक्ति बराबर हैं चाहे वह ब्राह्मण हो या शूद्र । जो लोग भेदभाव मानते हैं उनसे कबीर पूँछते हैं कि तुम किस प्रकार ब्राह्मण हो, किस प्रकार शूद्र, हम किस प्रकार घृणित रक्त हैं, तुम किस प्रकार पवित्र दूध हो । कबीर जाति-पाँति और मूर्तिपूजा के घोर विरोधी थे । मुसलमानों की नमाज, रमजान के उपवास और मकबरों तथा कब्रों पर जाने हज करने का भी विरोध किया । कबीर का विश्वास था कि न तो हिन्दुओं को मूर्ति की पूजा करने पर ईश्वर की प्राप्ति होगी और न ही मुसलमानों को जोर-जोर से चिल्लाकर नमाज पढ़ने से होगी । ये दोनों ही राह में भटके हुये हैं । कबीर कहते हैं -

अरे इन दोउन राह न पाई ।
हिन्दुन की हिन्दुआई देखी तुरुकन की तुरुकाई ॥

कबीर कहते हैं कि हिन्दू और मुसलमान दोनों धर्म के बाहरी रूप को लेकर झगड़ा कर रहे हैं पर धर्म के वास्तविक रूप को नहीं जानते हैं । इस सम्बन्ध में

---

1. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृ० 5-70.

उन्होंने एक दोहा लिखा है -

> कह हिन्दू मोहि राम पियारा, तुरूक कहै रहिमाना ।
> आपस में दोऊ लरि मूए, मरम न काहू जाना ॥[1]

कबीर का कहना है कि मन को स्थिर करने से ईश्वर मिल सकता है । कबीर पूजा अर्चना, तीर्थ, व्रत, तथा रोज़ा नमाज को बाह्याडम्बर समझते थे । तीर्थ और व्रत विष की बेलि है जो सारे संसार पर छायी हुयी है । इस सम्बन्ध में कबीर ने एक दोहा लिखा है कि -

> पीरां मुरादां काजियां मुलां अरू दरवेस ।
> कहाँ थे तुम्ह किनि कीये अकलि है सब नेस ॥
>
> कुराना कतेबां अस पढ़ि पढ़ि फिकरि या नहीं जाइ ।
> हुक दम करारी जे करै हाजिरां सूर खुदाई ॥[2]

कबीर ने एकेश्वर, प्रेम और भक्ति पर जोर दिया और बताया कि मानवता और ईश्वर के प्रति प्रेम ही धर्म का मूल आधार है । कोई भी धर्म भक्तिरहित नहीं हो सकता है ।[3] उन्होंने बताया कि राम, रहीम, कृष्ण, करीम, सब एक ईश्वर के

----

1. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 72.
2. डॉ० रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 137, डॉ० सावित्री शुक्ला : सन्त साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 80-81.
3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 51, शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 70-71, डॉ० रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 138, विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 126, डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 80.

भिन्न भिन्न नाम है ।[1] निम्नलिखित पद कबीर के विचारों को सुन्दर रूप देते हैं -

"जो खुदाय मसजिद बसतु है और मुलुक केहि केरा ।
तीरथ मूरत राम निवासी बाहर करे को हेरा ।
पूरब दिसा हरी को बासा पच्छिम अलह मुकामा।
दिल में खोज दिलहि में खोजौ इहै करीमा-रामा।
जेते औरत-मरद उपानी जो सब रूप तुम्हारा।
कबीर पोंगड़ा अलह-राम का सो गुरू पीर हमारा।।"[2]

कबीर हिन्दू व मुस्लिम धर्म में व्याप्त उन बातों का निराकरण करना चाहते थे जो आध्यात्मिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण नहीं थे ।[3] उनकी इस विचार-धारा को प्रकट करने वाले कुछ पद्य इस प्रकार हैं :-

"करसेती माला जपै, हिरदै बहै डंडूल ।
पग तो पाला में गिल्या, भाजणा लागी सूल ।।"[4]

मुसलमानों के पाखण्ड की निन्दा करते हुए कबीर कहते हैं :-

"कांकर पाथर जोर के मस्जिद लई बनाय ।
ता चढ़ि मुल्ला बाँग दे, क्या बहिरा हुआ खुदाय ।।"[5]

---

1. ताराचन्द, इन्फ्लूएन्स आफ इस्लाम ऑन इण्डियन कल्चर, पृ० 160.
2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृ० 51.
3. ताराचन्द : वही, पृ० 150.
4. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृ० 73.
5. शिवमूर्ति शर्मा : वही, पृ० 74.

कबीर ने हिन्दू धर्म के पाखण्डों और बाह्याचारों की निन्दा करते हुये दोनों धर्मों की भ्रान्तियों को दूर करते हुये बताया कि हिन्दू और मुसलमान का भेदभाव मनुष्य ने स्वयं बनाया है जबकि ईश्वर ने दोनों को समान कर धरती पर भेजा है ।[1] दोनों धर्मों के अनुयायियों का भ्रम मिटाते हुए कहते हैं :-

अरे भाइ दोइ कहाँ से मोहि बतावो ।
बिच ही भरम का भेद लगावो ॥
जोनि उपाइ रचि है धरनी, दीन एक बीच भई करनी ॥
राम रहीम जपत सुधि गई, उनि माला उनि तसबी लई॥
कहै कबीर चेत रे भोंदू, बोल निहारा तुरूक न हिन्दू ॥

कबीर का कहना है चाहे हिन्दू हो या मुसलमान दोनों एक धरती के निवासी हैं । इस सम्बन्ध में उन्होंने एक दोहा लिखा है :-

कोउ हिन्दू कोउ तुरूक कहावै एक जमीं पर रहिए ।[2]

कबीर का ये भी कहना है कि ईश्वर मन्दिर मस्जिद में नहीं रहता है । वह संसार के कण कण में विद्यमान है । कबीर हिन्दू और मुसलमान दोनों से एक ही प्रश्न पूँछते हैं कि -

"जो खोदाय मसीत बसत है, और मुलुक केहि केरा ?
तीरथ, मूरत राम निवासी, बाहिर केहिका डेरा?

----

1. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 256.

2. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 74-75.

कबीर ने हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियों के धार्मिक आडम्बरों की घोर निन्दा की ।[1] यह बताया कि दोनों एक ही खुदा के बन्दे हैं । कबीर प्रेम पर आधारित ऐसा धर्म चाहते थे जो सभी धर्मों एवं सम्प्रदायों के बीच सामन्जस्य स्थापित कर सकें ।[2]

इस समय हिन्दू समाज में भी ऊँच-नीच की भावना व्याप्त थी । ब्राह्मण शूद्रों को नीची निगाह से देखते थे । कबीर इसका तीखे शब्दों में आलोचना करते हैं कि :-

"एक बूँद एकै मल मूतर, एक चाम एक गूदा ।
एक जोति है सब उतपना, कौन ब्राह्मण कौन सूदा ॥"[3]

कबीर को हिन्दुओं में प्रचलित वर्ण-व्यवस्था और ब्राह्मणों के तज्जनित मिथ्याभिमान से घृणा थी । कबीर का कहना है कि "अगर सृष्टिकर्ता का उद्देश्य प्रचलित वर्ण-व्यवस्था में ब्राह्मणों को महत्त्व देना होता तो ब्राह्मणों की पहचान के लिए इनके ललाट पर तीन रेखाएँ बनाकर ही क्यों न उत्पन्न करता जो खून ब्राह्मणों की धमनियों में बहता है वही शूद्रों में भी ।"[4]

----

1. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 75-76, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव: मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 51, डा० रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 135, डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 80-81.
2. ताराचन्द : इन्फ्लूएन्स आफ इस्लाम आन इण्डियन कल्चर, पृष्ठ 150.
3. रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 67, कबीर ग्रन्थावली, पद 57, पृष्ठ 106.
4. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 38-39, विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 108.

कबीर का कहना है कि यह सारा जगत एक ही तत्व से बना है । सभी प्रकार का भेद मिथ्या है । मानव-मानव में भेद करना परम अज्ञान का द्योतक है । इसी कारण कबीर ने जाति-पाँति, छुआछूत, ऊँच-नीच और ब्राह्मण-शूद्र के भेदभाव का विरोध किया । इसी कारण इन्हें समाज सुधारक समझा जाता है । इन भेदों को दूर करने से ही एक अच्छे भेदभाव रहित समाज की रचना हो सकती है जिसमें ब्राह्मण, शूद्र, का भेद न होगा, ऊँच-नीच की भावना न होगी[1] क्योंकि कबीर का कहना है कि एक ज्योति सबमें व्याप्त है दूसरा और कोई तत्व नहीं है । परमात्मा ने एक बूँद से सारे जगत को बनाया है फिर मानव आपस में ब्राह्मण और शूद्र का भेद क्यों करता है । अगर हिन्दु और मुसलमान दो अलग अलग हैं तो इनमें जन्म लेने की प्रक्रिया में अन्तर होता । जिस प्रक्रिया से अन्य जातियों के लोग जन्म लेते हैं ठीक उसी प्रक्रिया से ब्राह्मण भी जन्म लेता । कबीर का कहना है कि अगर मुसलमान अन्य मनुष्यों से अलग होते तो माता के गर्भ में ही उनका खतना हो गया होता । इस सम्बन्ध में कबीर ने एक दोहा लिखा है :-

जो तू बाभन तुरकिनी जाया तौ भीतरि खतना क्यूँ न कराया ।

कबीर ने सबसे अधिक मन की पवित्रता या आन्तरिक शुद्धता पर बल दिया।[2] कबीर ने अमीर गरीब के भेदभाव का भी विरोध किया और बताया कि गरीब का आदर सम्मान कोई नहीं करता । धनी का सब करते हैं । जब गरीब अमीर के पास जाता है तो अमीर उसकी ओर ठीक से देखता तक नहीं है जब अमीर गरीब के

---

1. विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 16, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 256.

2. रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 135.

घर जाता है तो गरीब उसे बहुत मान-सम्मान, इज्जत देता है। गरीब अमीर होना ईश्वर का परिणाम है। निर्धन व्यक्ति वह है जिसके हृदय में भगवान का नाम नहीं है। इस सम्बन्ध में कबीर ने एक दोहा लिखा है कि :-

निर्धन आदर कोई न देई। लाख जतन करै ओहु चित न धरेई।
जौ निरधन सरधन कै जाई। आगे पीठा पीठ फिराई।
जौ सरधन निरधन कै जाई। दीया आदर लिया बुलाई।
निरधन सरधन दोनों भाई। प्रभु की कला न मेटी जाई।
कहि कबीर निर्धन है सोई। जाकै हिरदै नाम न होई।[1]

कबीर का कहना है कि अल्लाह या ईश्वर ने जिसके लिए जितना निश्चित किया है उसे उतना ही मिलेगा न राई भर कम होगा न तिल भर ज्यादा होगा।[2] व्यक्ति को सुख-दुःख अपने कर्मों के अनुसार मिलता है। हिन्दू मुसलमान दोनों को अहंकार रहित, तत्वदर्शी, हंस की तरह नीर-क्षीर विवेकी, चंदन की तरह शीतल, व्यवहार कुशल, आपस में मिलकर रहना चाहिए।[3]

---

1. डॉ० रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृ० 138.

2. डॉ० परशुराम चतुर्वेदी : कबीर साहब सिद्धान्त और साधना, पृ० 115.

3. डॉ० रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृ० 138-139.

<u>कबीर की भाषा</u> :

कबीर की कौन सी भाषा थी । इस पर विद्वानों में मतभेद है । बीजक के टीकाकार विचारदास का कथन है कि कबीर की भाषा ठेठ प्राचीन पूर्वी है ।[1] डॉ० रामकुमार वर्मा का कहना है कि कबीर के काव्य का व्याकरण हिन्दी रूप ही लिए हैं । कहीं कहीं पंजाबी का प्रभाव दिखायी देता है ।[2] बाबू श्याम सुन्दर दास का कहना है कि कबीर की भाषा पंचमेल खिचड़ी है क्योंकि कबीर के शब्द क्रिया पद ही नहीं हैं बल्कि उनमें कारक-चिह्नादि कई भाषाओं का मिश्रण है । क्रिया-पदों के रूप में अधिकतर ब्रजभाषा और खड़ी बोली के हैं । कारक चिह्नों में "से" "कै" "सत" "सा" आदि अवधी के हैं । कौ ब्रज का है । और थै राजस्थानी का । इसलिये कबीर की भाषा पंचमेल खिचड़ी है ।[3] डॉ० सुनीति कुमार चातुर्ज्या के अनुसार - कबीर की रचना में कहीं ब्रज भाषा, कहीं कोसली या पूर्वी हिन्दी, कहीं खड़ी बोली के शब्द हैं ।[4] डॉ० उदय नारायण तिवारी का कथन है कि कबीर के पुराने पद भोजपुरी भाषा में लिखे गये हैं ।[5] डॉ० माता प्रसाद गुप्त ने बताया कि कबीर की भाषा मुख्यत: खड़ी बोली है ।[6] पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने बताया कि कबीर की साखियों में "खड़ी बोली, सबदियों में ब्रजी, रमैनियों में अवधी या

---

1. विचारदास : कबीर साहित्य की परख, पृष्ठ 208 पर उद्धृत ।
2. डॉ० रामकुमार वर्मा : संत कबीर, पृष्ठ 22.
3. डॉ० बाबू श्याम सुन्दर दास : कबीर ग्रन्थावली, प्रस्तावना, पृष्ठ 67.
4. डॉ० सुनीति कुमार चातुर्ज्या : भारत की भाषायें, पृष्ठ 60.
5. डॉ० उदय नारायण तिवारी : हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास, पृ० 382.
6. डॉ० माता प्रसाद गुप्त : कबीर ग्रन्थावली, पृष्ठ 24.

पूर्वी, भाषा परिलक्षित होती है ।[1] पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन है कि भाषा पर कबीर का जबर्दस्त अधिकार था । वे वाणी के डिक्टेटर थे, जिस बात को जिस रूप में प्रकट करना चाहते थे उसे उसी भाषा में लिख देते थे ।[2]

"बोली हमरी पूरब की, हमे लखै नहिं कोय ।
हमको तो सोई लखे, धुर पूरब का होय ।"[3]

कबीर की भाषा सधुक्कड़ी, अर्थात् मारवाड़ी, भोजपुरी, राजस्थानी, पंजाबी, खड़ी बोली हिन्दी थी । कहीं पद में ब्रजभाषा और पूर्वी बोली का प्रभाव है । कबीर की कोई एक निश्चित भाषा नहीं थी । कबीर ने स्वयं कहा कि वे पढ़े-लिखे नहीं हैं । इसलिये व्यावहारिक प्रयोगों के आधार पर जितनी भाषा का उन्हें ज्ञान था उन सबका प्रयोग अपनी काव्य, कविता, दोहे में किया था ।[4]

कबीर की भाषा की दो मुख्य विशेषता थी : (क) वर्ण्य वस्तु को प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करने की क्षमता एवं (ख) कबीर के व्यक्तित्व की सफल व्यंजना ।[5]

----

1. पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र : हिन्दी साहित्य का अतीत, भाग 1, पृष्ठ 152,
2. पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी : कबीर, पृष्ठ 216.
3. डॉ० रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 160.
4. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 91, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 52, विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 174.

5. डॉ० रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 160.

कबीर के शिष्य :

आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने कबीर के निम्न शिष्य बताये हैं :- सन्त कमाल, सन्त कमाली, पद्मनाथ जी, रामकृपाल, नीर-क्षीर, ग्यानी, धर्मदासजी, हरिदास, तत्वा-जीवा, जागूदास, सूरतगोपाल, भागोदास आदि ।[1]

पंथ :

कबीर ने किसी पंथ की स्थापना नहीं की थी । कबीर की मृत्यु के बाद कबीर पन्थ की स्थापना हुयी । ये पन्थ निम्न नामों से प्रसिद्ध हुए - जैसे - राम कबीर पंथ, फतुहामठ, विद्दूपुर मठ, भगताही शाखा, कबीर चौरा शाखा, छत्तीस गढ़ी शाखा आदि । कबीर पंथ का प्रचार-उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात, उड़ीसा, बिहार आदि स्थानों पर हुआ ।[2]

कबीर के उपदेश एवं जनसाधारण पर उसका प्रभाव :

कबीर का मुख्य उद्देश्य हिन्दुओं में जाति-व्यवस्था और बाह्य धर्म आड़म्बरों का परित्याग कराना । हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच सद्भावना उत्पन्न

---

1. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी : उत्तरी भारत की संत परम्परा, प्रयाग, सं0 2021, पृष्ठ 264, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 229.

2. केदारनाथ द्विवेदी : कबीर और उनका पंथ, प्रयाग, 1965, पृ0 187, राधे श्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में, प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 280.

करना । प्रेम धर्म का प्रचार करना, जिसमें सभी जाति व धर्म के लोग समन्वीकृत किये जा सकें । उन सिद्धान्तों का विरोध करना जो एकता के विरुद्ध तथा मानव कल्याण के प्रतिकूल हों ।[1]

पर कबीर के उपदेश या विचारधारा का उच्च वर्ग के हिन्दू और मुसलमान पर प्रभाव नहीं पड़ा । उच्च वर्ग के हिन्दू और मुसलमान कबीर की विचारधारा से रुष्ट हुये क्योंकि कबीर ने मूर्ति-पूजा, बाह्याडम्बर, जाति-पाँति के भेदभाव, बहु-ईश्वरवाद, अन्ध-विश्वास व सामाजिक कुरीतियों का खुल्लम खुल्ला विरोध किया । ज्ञानाभिमानी पंड़ितों ने कबीर की बातों का जबरदस्त विरोध किया, कबीर को परेशान किया, इन्हें अपने हिन्दू धर्म से निकाल दिया ।[2] सिकन्दर लोदी भी कबीर से रुष्ट हुये । कबीर को दण्ड दिया था बाद में सिकन्दर लोदी भी कबीर की सादगी उच्च विचारों से प्रभावित हुये । क्योंकि कबीर के उपदेश तत्कालीन विचारकों के विचारों के समान थे ।[3] कबीर के सम्बन्ध में एक कहानी यह प्रचलित है कि दो ब्राह्मण भाई कबीर से इतने प्रभावित हुए कि उनके शिष्य बन गये । इनमें एक का नाम तत था दूसरे का जीव, ऐसा कहा जाता है कि कबीर के चरण धुले हुये पानी के स्पर्श से बरगद का सूखा पेड़ पुन: हरा हो गया । यह आश्चर्यजनक चमत्कार देखकर दोनों ब्राह्मण भाई कबीर के शिष्य बन गये ।[4]

---

1. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 279, ताराचन्द : एन्फ्लुयेन्स आफ इस्लाम आन इण्डियन कल्चर, पृष्ठ 150.
2. विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 129-130.
3. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 278-279, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 255.
4. विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 129-130.

हिन्दुओं में निम्न जाति के लोगों ने ही कबीर के उपदेश का स्वागत किया । केवल कुछ मुट्ठी भर मुसलमान थे जो कबीर के उपदेश को मानते थे और उसका अनुसरण करते थे ।[1] धीरे धीरे साम्प्रदायिकता का विष एकता में परिवर्तित होने लगा । दोनों धर्म के लोग मिलकर एक राह पर चलने लगे क्योंकि कबीर के वचनों में सत्य का बल था । जनता उनकी एक एक बात को आदर की दृष्टि से देखने लगी । कबीर तद्युगीन विघटित समाज के मसीहा बन गये । आने वाले युग ने कबीर से प्रेरणा ली । इस युग के कर्मठ चिन्तक गाँधी कबीर के नवीन संस्करण माने गये हैं ।[2] हम यह कह सकते हैं कि कबीर ने मध्य युग के विकृत समाज को अपनी अमृत वाणी का पान कराकर वर्गविहीन समाज का गठन किया, जिसमें भेदभाव का कोई स्थान नहीं था ।

<u>मृत्यु</u> :

कबीर की मृत्यु कब हुयी इस सम्बन्ध में कई तिथियों का उल्लेख मिलता है जो छन्दोबद्ध है :-

> संवत पन्द्रह सौ पछतरा किया मगहर को गवन ।
> माघ सुदी एकादशी, रलो पवन में पवन ॥

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 52, विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 129-130, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 279.

2. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 72-94.

इस तिथि के अनुसार कबीर की मृत्यु संवत 1575 को हुयी । उनके शिष्य बिजली खाँ ने मगहर में उनकी कब्र बनवायी और मगहर में ही हिन्दुओं ने उनकी समाधि बनवायी । मगहर बस्ती जिले का एक गाँव है । अन्य छन्द में निम्न तिथि दी गयी है :-

क. पन्द्रह सौ औ पाँच में, मगहर कीन्हो गौन ।
अगहन सुदी एकादसी में, मिलयो पौन में पौन ॥[1]

ख. पन्द्रह सौ उनचास में, मगहर कीन्हों गौन ।
अगहन सुदी एकादसी, मिलो पौन में पौन ॥

ग. संमत पंद्रासौ उनहतरा रहाई ।
सतगुरू चले उठि हंसा जाई ॥

इस उपर्युक्त तिथियों में पहली तिथि संवत् 1575 को बहुसंख्यक विद्वानों ने स्वीकार किया है । एक तो संवत 1551 ई० में सिकन्दर लोदी के काशी जाने और कबीर को दण्ड देने की बात भी कही गयी है दूसरे गुरू नानकदेव (संवत 1526-96) और कबीर की भेंट की संभावना को बल मिलता है तीसरे इससे यह भी स्पष्ट होता है कि कबीर की मृत्यु 120 वर्ष की आयु में हुयी थी । दूसरे दोहे में कबीर की मृत्यु तिथि संवत् 1505 बतायी है । तीसरे दोहे में संवत 1549 बतायी कि कबीर मगहर गये थे वहीं 3 साल रहे और संवत 1552 में वहीं कबीर की मृत्यु हो गयी । चौथे छन्द में कबीर की मृत्यु संवत् 1569 बतायी है ।[2]

---

1. रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 23, शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 9-15, विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 12-26.

2. रामचन्द्र तिवारी : वही, पृष्ठ 23-26, विजयेन्द्र स्नातक : वही, पृष्ठ 16.

इस प्रकार कबीर की मृत्यु तिथि के विषय में भी विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वान सं० 1575 वि० को उनकी निधन तिथि मानते हैं तथा अन्य सं० 1505 वि० को। अगर 1505 वि० को उनकी निधन तिथि को मान लिया जाय तो उस समय कबीर की अवस्था केवल 50 वर्ष सिद्ध होती है जो उपलब्ध दोहे से मेल नहीं खाती है। सं० 1575 वि० को परम्परागत निधन तिथि पर प्रश्नचिह्न लगाने का कोई ठोस आधार ज्ञात नहीं होता, उल्टे उसके समर्थन में सिकन्दर लोदी तथा वीर सिंह देव बघेल के समकालीन होने के ऐतिहासिक तथ्य भी उपलब्ध हैं। डा० पारस-नाथ तिवारी ने इस सम्बन्ध में एक अन्य महत्त्वपूर्ण तथ्य खोज निकाला है, जिससे सं० 1575 वि० को कबीर के देहावसान का समर्थन होता है। उनके अनुसार शिव-नाथ महापात्र कृत बघेल वंशावली में वीर सिंह देव बघेल को कबीर का शिष्य कहा गया है।[1]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कबीर की मृत्यु तिथि के सम्बन्ध में जितने मत प्रचलित हैं उनमें कोई पूर्णतया प्रामाणिक नहीं है पर कबीर दास की निश्चित जन्म एवं मृत्यु तिथियों का निर्धारण चाहे न हो सके पर यह सत्य है कि कबीर के व्यक्तित्व का विकास और प्रकाश पन्द्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और सोलहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के अन्तर्गत हुआ था।[2]

---

1. डा० पारसनाथ तिवारी : कबीर और वीर सिंह देव बघेल, सम्मेलन पत्रिका, भाग 56, सं० 1, पृष्ठ 5-6, आचार्य परशुराम चतुर्वेदी : उत्तरी भारत की संत परम्परा, पृष्ठ 160-161.

2. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देलही एण्ड आगरा, पृष्ठ 120.

नानक :

भक्ति आन्दोलनों के प्रवर्तकों में गुरु नानकदेव का नाम सर्वप्रमुख है । इनका जन्म 15 अप्रैल 1469 ई0 में पंजाब के तालबंडी नामक गाँव में [आधुनिक नानकाना] एक खत्री परिवार में हुआ था जो लाहौर के दक्षिण पश्चिम से 35 मील की दूरी पर आधुनिक पश्चिमी पंजाब के शेखुपुरा जिले में स्थित हैं । इनके पिता का नाम कालूचन्द और माँ का नाम तृपता था । नाना के घर जन्म लेने के कारण इनका नाम नानक रखा गया ।[1]

नानक ने अपनी शिक्षा 5 वर्ष की उम्र से सुल्तानपुरा से प्रारम्भ की । इन्होंने पंजाबी, संस्कृत, फारसी की शिक्षा प्राप्त की । सैय्यद हुसेन नामक मुसलमान ने इन्हें इस्लाम धर्म की सुन्नी सम्प्रदाय की अनेक बातें बतायीं । नानक का मन पुस्तकें पढ़ने और शिक्षकों की बातें सुनने में नहीं लगता था । वे एकान्त में बैठकर चिन्तन करना तथा सन्तों की संगत में बैठना अधिक पसन्द करते थे । सन्तों के सत्संग में आकर ही वे आध्यात्मवाद की ओर झुके । उनके माँ, बाप उन्हें पैतृक व्यवसाय में लगाना चाहते थे पर उनका मन नहीं लगा । उन्होंने कालान्तर में दौलत खाँ लोदी के यहाँ की नौकरी कर ली ।[2]

---

1. डॉ0 सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 173, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 280, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 323, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 256, रुद्रदेव : मध्यकालीन सन्त काव्य और सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन [अप्रकाशित शोध प्रबन्ध] पृष्ठ 68.

2. एल0पी0 शर्मा : वही, पृष्ठ 256-257, राधेश्याम : वही, पृष्ठ 280, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : सल्तनतकालीन भारत, पृष्ठ 323, आचार्य परशुराम : चतुर्वेदी : उत्तरी भारत की संत परम्परा, पृष्ठ 345, ताराचन्द : ए इन्फ्लुएन्स आफ इस्लाम ऑन इण्डियन कल्चर, पृष्ठ 166-167.

नानक ने गृहस्थ जीवन बिताया क्योंकि नानक का विचार था कि विवाहित जीवन आत्मिक उन्नति के मार्ग में बाधक नहीं है । नानक की पत्नी का नाम सुलखिन था । नानक के दो पुत्र थे । कालान्तर में इनका मन घर गृहस्थी से भर गया और देश भ्रमण पर निकल पड़े । नानक ने मक्का, मदीना, बगदाद, काबुल, काश्मीर, श्रीलंका और सिंघल तक की यात्रा की तथा अनेक सन्तों की संगत में आये।[1]

नानक हिन्दू और इस्लाम धर्म के समन्वय के पक्षपाती थे ।[2] नानक ने दोनों धर्मों की शिक्षा ली थी । नानक का पहला वचन जिसने लोगों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया वह था हिन्दुओं और मुसलमानों में कोई अन्तर नहीं है क्योंकि चारों ओर द्वेष एवं पाखण्ड दिखायी पड़ रहा था । नानक ने हिन्दू धर्म के बाह्याडम्बरों, जाति भेदभाव, ऊँचनीच की भावना, धार्मिक कट्टरता, अस्पृश्यता, बाह्याडम्बर आदि का विरोध किया और योगी, संन्यासी, वैष्णव, शैव, नाथपंथी सिद्धपीर की किसी न किसी रूप में आलोचना की । हिन्दू मुस्लिम एकता पर बल दिया । प्राणि मात्र के प्रति सहिष्णुता का उपदेश दिया । नानक ने हिन्दू और

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ323, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 256-257, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 280-281, विजयचन्द्र चतुर्वेदी : हिन्दी उपन्यास साहित्य (1947 तक) में इस्लाम तथा अन्य हिन्दू धर्मों का निरूपण (अप्रकाशित शोध प्रबन्ध) पृष्ठ 43, ताराचन्द : इन्फ्लुएन्स आफ इस्लाम आँन इण्डियन कल्चर, पृष्ठ 167.

2. ताराचन्द : इन्फ्लूएन्स आफ इस्लाम आँन इण्डियन कल्चर, पृष्ठ 168.

मुस्लिम विचारधारा का अनुसरण नहीं किया अपितु उनकी भूलों की ओर सबका ध्यान आकृष्ट किया ।[1]

नानक, वेद, कुरान को नहीं मानते थे । जाति-पाँति, ब्राह्मणों और मौलवियों की प्रमुखता रस्म, रिवाज, कर्मकाण्ड, व्रत, उपवास, तीर्थयात्रा, मूर्तिपूजा आदि का विरोध किया । वे एक निराकार ईश्वर में विश्वास रखते थे ।[2] जिसे वे सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान, अतुलनीय, अचिन्त्य और अगम्य मानते थे । नानक का कहना था कि ईश्वर के प्रति पूर्ण आत्मसमर्पण करने, उसका निरन्तर नाम जपने, सबके साथ नम्रतापूर्ण व्यवहार करने, सभी प्रकार के छल-कपट का त्याग करने से गुरू की आज्ञा का पालन करने से मनुष्य मुक्ति पा सकता है । नानक कर्म और पुनर्जन्म को नहीं मानते थे । वे ईश्वर की एकता, भक्ति , सत्कर्म और गुरू आस्था में विश्वास रखते थे । वे मुक्ति को मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य मानते थे । मुक्ति से उनका तात्पर्य आत्मा का परमात्मा में लीन हो जाना ।[3]

---

1. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 281, आचार्य परशुराम चतुर्वेदी : उत्तरी भारत की संत परम्परा, पृष्ठ 404, ए0बी0 पाण्डेय : द फर्स्ट अफगान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 277.

2. ताराचन्द : इन्फ्लुएन्स आफ इस्लाम ऑन इण्डियन कल्चर, पृष्ठ 170.

3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 54, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 257, आचार्य परशुराम चतुर्वेदी : उत्तरी भारत की सन्त परम्परा, पृष्ठ 405-406.

नानक का कहना है कि व्यक्ति को कर्म के अनुसार ही फल की प्राप्ति होती है पर मोक्ष की प्राप्ति कर्म से नहीं बल्कि ईश्वर की कृपा से मिलती है। नानक ईश्वर प्रेम और सत्संग के द्वारा ही मोक्ष प्राप्ति में विश्वास रखते हैं जो भक्ति करने पर मिलती है। नानक का कहना है कि ईश्वर का नाम बार-बार लेते रहने से मोक्ष मिल सकता है।[1] संसार को मिथ्या भी नहीं मानते वह भौतिक संसार के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं जबकि उसे अस्थायी और नष्ट हो जाने वाला मानते हैं। इसलिये नानक सबको आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर रहने के लिये कहते हैं। घर छोड़कर साधु बनने की सलाह नहीं देते हैं। नानक का विश्वास नैतिक जीवन, सज्जनता, करूणा, दान, सभ्यता, उदारता में अधिक था।[2]

आत्मा, परमात्मा और जीव को एक ही बताया कि चाहे इन्सान लाख प्रयत्न करे चिन्तन करे पर ईश्वर की धारणा कभी स्पष्ट नहीं हो पाती है। परमात्मा ही सत्य है वह चित आनन्द है। नानक ने कीर्तन, भजन, सत्संग, गुरू की आवश्यकता पर बल दिया। नानक का कहना है कि गुरू के मिलने पर ही मनुष्य अपने सांसारिक जीवन के अन्त तक आध्यात्मिक जीवन का आरम्भ होने का अनुभव करता है। नानक का विचार है कि गुरू सब शिष्य को सुख देता है। गुरू ही प्रभु है, वही नारायण है। गुरू के प्रासाद से ही परमपद की प्राप्ति होती है। गुरू के समान कोई दूसरा दाता नहीं है। परमात्मा ही एक मात्र सत्य है।[3]

----

1. ताराचन्द : इन्फ्लुएन्स आफ इस्लाम ऑन इण्डियन कल्चर, पृष्ठ 175.
2. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 257.
3. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सम्बन्ध में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 282, आचार्य परशुराम चतुर्वेदी : उत्तरी भारत की संत परंपरा, पृष्ठ 409.

नानक ने केवल हिन्दू मुसलमान ही नहीं बल्कि निम्न जाति के अछूतों को भी अपना शिष्य बनाया ।[1] अंगद नामक शिष्य को उन्होंने अपना उत्तराधिकारी बनाया । नानक ने जनमानस की भाषा में उपदेश दिये थे । इनके उपदेश में निर्गुण-सगुण भक्ति का समन्वीकरण था । नानक की विचारधारा का सभी धर्मों, मतों, सम्प्रदायों पर प्रभाव था ।[2]

नानक का इरादा कोई नवीन धर्म स्थापित करने का नहीं था । न ही उनके जीवनकाल में अलग से सिक्ख धर्म बना बल्कि हिन्दू धर्म की एक शाखा थी । नानक की मृत्यु के बाद उनके उत्तराधिकारियों के समय सिक्ख धर्म हिन्दू धर्म से अलग हो गया और एक नया धर्म बना जो सिक्ख धर्म कहलाया । नानक को इसका पैगम्बर माना जाने लगा । सिक्ख शब्द संस्कृत के शिष्य का बिगड़ा हुआ रूप है। 16वीं शताब्दी में सर्वसाधारण में प्रचलित पंजाबी भाषा में नानक के शिष्यों को सिख कहा जाने लगा ।[3]

---

1. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी : उत्तरी भारत की संत परम्परा, पृष्ठ 405-406, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 54.

2. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सम्बन्ध में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 282.

3. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 173, रुद्रदेव : मध्यकालीन सन्त काव्य और सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन, (अप्रकाशित शोध प्रबन्ध), पृष्ठ 68, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 54.

सिक्खों के चौथे गुरू रामदास ने अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर का सुप्रसिद्ध सरोवर बनाया। उनके उत्तराधिकारी गुरू अर्जुन ने नानक और अन्य गुरूओं की वाणियों का संकलन कर "आदिग्रन्थ" की रचना की। नानक के अनुयायी सिक्ख कहलाये। गुरू ग्रन्थ साहब उनका धर्म ग्रन्थ बना। अमृतसर सिक्ख धर्म का मुख्य केन्द्र और तीर्थस्थान बन गया।[1]

नानक के पद "आदि ग्रन्थ" में संग्रहीत मिलते हैं। डॉ० जयराम मिश्र ने गुरू नानक की वाणियों का संकलन "नानक वाणी" में किया है। उनके शिष्य अंगद ने उनकी रचनाओं का संग्रह करवाया था तथा गुरूओं की जीवनी लिखने की प्रथा चलायी। उनकी रचनाएँ गुरू ग्रन्थ साहब में मिलती है। ग्रन्थ साहब की रचना सं० 1661 ई० में हुई तथा उसके निर्माण का श्रेय गुरू अर्जुन देव को दिया जाता है। गुरूओं की रचनाएँ "महलों" में विभक्त है। महला 1 में गुरू नानक की, महला 2 में गुरू अंगद की, महला 3 में गुरू अमरदास की, महला 4 में गुरू रामदास की, महला 5 में गुरू अर्जुनदेव की रचनाएँ संग्रहीत हैं। सर्वाधिक रचनाएँ गुरू अर्जुनदेव की ही हैं। बाद के गुरूओं, गुरू हरगोविन्द, गुरू हरराय, गुरू हरकृष्ण राय की रचनाएँ ग्रन्थ साहब में नहीं मिलती हैं। गुरू तेग बहादुर की रचनाएँ ग्रन्थ साहब के महला 9 में संग्रहीत हैं। इनके गुरू गुरूगोबिन्द सिंह सिक्खों के अन्तिम गुरू थे जिनकी रचनाएँ दशम ग्रन्थ में संग्रहीत हैं।[2]

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 54-55.

2. रूद्रदेव : मध्यकालीन सन्त काव्य और सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन (अप्रकाशित शोध प्रबन्ध), पृष्ठ 68-69.

गुरू नानकदेव के अनन्तर गुरू अंगद, गुरू अमरदास, गुरू रामदास, गुरू अर्जुनदेव, गुरू हरगोविन्द, गुरू हरराय, गुरू हरकृष्णराय, गुरू तेग बहादुर, गुरू गोविन्द सिंह, वीरबन्दा बहादुर आदि ने सिक्ख धर्म के आदर्शों का प्रचार जनता में किया। धीरे धीरे सिक्ख धर्म का विकास अनेक सम्प्रदायों में जैसे उदासी सम्प्रदाय, सहजधारी, भगत पंथी, गुलाबदासी-सम्प्रदाय, निर्मला, नामधारी सम्प्रदाय, सथुराशाही सम्प्रदाय, निरंजनी सम्प्रदाय, मीना-पंथी, रामैया पंथी, हंदली सम्प्रदाय में हुआ। कबीर पंथ के बाद नानक पंथ सबसे व्यापक और बड़ा सम्प्रदाय है। नानक पंथ, संत मत के सभी सम्प्रदायों में सबसे अधिक सुसंगठित सजीव और व्यापक है।[1]

मृत्यु :

1538 ई० में गुरू नानक की मृत्यु हो गयी।[2]

चैतन्य :

जिस तरह पंजाब में गुरू नानक का बहुत प्रभाव पड़ा, उसी प्रकार उनके समकालीन चैतन्य (1486-1533) का प्रभाव बंगाल, बिहार और उड़ीसा में पड़ा।[3] चैतन्य का जन्म फरवरी 1486 ई० में बंगाल में स्थित नवद्वीप (आधुनिक नदिया) ग्राम में ब्राह्मण परिवार में हुआ था। चैतन्य का प्रारम्भिक नाम विश्वम्भर था।

---

1. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 173.

2. ए०बी० पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 276.

3. ए०बी० पाण्डेय : वही, पृष्ठ 282, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 59, ए०के० मजूमदार, चैतन्य, हिज लाइफ एण्ड डाक्ट्रिन, पृष्ठ 223.

उन्हें निमाई एवं गौरांग के नाम से भी जाना जाता था।[1] ये कृष्ण के भक्त थे। जनता इन्हें कृष्ण का अवतार भी मानती थी। इनका लक्ष्य भागवत भक्ति तथा कृष्ण भगवान के नाम का प्रचार करना, जो इन्होंने किया। चैतन्य कृष्ण के इतने भक्त थे कि कृष्ण भक्ति के आवेश में कभी कभी मूर्च्छित और समाधिस्त हो जाते थे। इन्होंने कभी किसी अन्य धर्म व साधकों की आलोचना एवं निन्दा नहीं की। चैतन्य की भक्ति में द्वैत और अद्वैत सिद्धान्तों का समन्वीकरण देखने को मिलता है।[2] उनके दार्शनिक मत का नाम 'अचिन्त्य भेदाभेद' है।

चैतन्य विश्व बन्धुत्व में विश्वास रखते थे। वे कृष्ण की भक्ति और उसकी लीला में आस्था रखते थे। चैतन्य का विचार था कि केवल कर्म से ही हरि दर्शन नहीं हो सकते हैं। ईश्वर की अनुभूति के लिए हरि का गुणगान करना बहुत जरूरी है। जाति-पाँति का विरोध किया, सभी जाति के लोगों को अपना शिष्य बनाया। समाज में प्रचलित अनेक कुरीतियों जैसे - पशुबलि, मांस भक्षण, मद्यपान का विरोध किया केवल आचरण की शुद्धता पर बल दिया।[3] 1510 ई० में चैतन्य ने सन्यास ले लिया और कृष्ण चैतन्य का नाम धारण किया। पर लोग इन्हें चैतन्य ही कहते थे। कुछ समय पश्चात् ये पुरी गये। पुरी से देश के दक्षिणी और पश्चिमी

----

1. ए०के० मजूमदार : चैतन्य, हिज लाइफ एण्ड डॉक्ट्रिन, पृष्ठ 108.
2. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 283-284, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 59-60, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 258.
3. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 283-284.

भागों की यात्रा की और पण्ढरपुर, सोमनाथ, द्वारका, मथुरा, वृन्दावन आदि स्थानों का भ्रमण किया । वृन्दावन में इन्होंने राधा-कुण्ड की खोज की ।[1] इन सब पवित्र स्थानों की यात्रा करने के बाद पुरी आ गये शेष जीवन यहीं व्यतीत किया । 1533 में पुरी में इनकी मृत्यु हो गयी ।[2] चैतन्य ने अपने विचारों को न किसी पुस्तक में प्रस्तुत किया ना ही किसी सम्प्रदाय की स्थापना की । उनके शिष्यों ने बाद में उनके विचारों का संकलन किया । उनके विचारों और जीवन के बारे में जानने का एक मुख्य स्त्रोत "चैतन्य-चरितम्" नामक ग्रन्थ है जिसको 16वीं सदी के अन्तिम वर्षों में कविराज कृष्णदास ने लिखा था ।[3]

चैतन्य के उपदेश और उनकी विचारधारा केवल बंगाल या उड़ीसा में ही नहीं अपितु देश के अन्य भागों में भी जनप्रिय हो उठी । इन्होंने जो उपदेश दिया इससे जनता बहुत प्रभावित हुयी । पीड़ित मानवता को उनका परमात्मा के प्रति प्रेम का सन्देश मरहम सा लगा और इसने यह सिद्ध कर दिया कि मानव हृदय राजनीतिक और सामाजिक विषमताओं के बीच भी ऊँचा उठ सकता है । इसने जीवन को स्फूर्ति, साहित्य को रचनात्मक शक्ति और मानव सम्बन्धों को पवित्रता प्रदान की ।

---

1. ए0के0 मजूमदार : चैतन्य, हिज लाइफ एण्ड डॉक्ट्रिन, पृष्ठ 208.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 60, ए0के0 मजूमदार : वही, पृष्ठ 214.

3. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 258.

बल्लभाचार्य :

इस समय के एक अन्य विद्वान् बल्लभाचार्य थे । इनकी गणना वैष्णव सम्प्रदाय की कृष्ण भक्ति शाखा के महान सन्तों में की जाती है । इनका जन्म बनारस में 1479 ई0 में हुआ था । ऐसा कहा जाता है कि जब यह बालक थे तभी इन्होंने चारों वेद, छ:शास्त्र, अठारह पुराण याद कर लिया था । अपने पिता के समय वे बनारस में रहे जब पिता की मृत्यु हो गयी तब सम्पूर्ण भारत का कई बार भ्रमण किया और फिर इलाहाबाद के निकट अरैल में रहने लगे । उन्होंने शुद्ध द्वैत दर्शन चलाया । वे चैतन्य के मित्र थे । जब चैतन्य पुरी से वृन्दावन जाने लगे थे तो वे अरैल होकर गये थे और यहाँ उस समय बल्लभाचार्य के अतिथि रहे थे । चैतन्य के पुरी लौट जाने के बाद एक बार बल्लभाचार्य ने पुरी जाकर चैतन्य से भेंट की थी ।[1] इससे प्रकट होता है कि दोनों में अच्छी मैत्री थी परन्तु दोनों का दार्शनिक विचार भिन्न था । चैतन्य कृष्ण के भक्त थे और 'अचिन्त्य भेदाभेद' के प्रणेता थे जबकि बल्लभाचार्य 'शुद्धाद्वैतवाद के मानने वाले थे । उन्होंने भी सगुण भक्ति का प्रचार किया । कृष्ण को आराध्य देव मानकर उन्होंने कृष्ण के वात्सल्य एवम् उनकी लीला में ही सत्, चित, आनन्द देखा ।[2] 1520 ई0 से कृष्ण-भक्ति पर उपदेश देना प्रारम्भ किया । ये कृष्ण की श्रीनाथजी के नाम से उपासना करते थे । कबीर,

---

1. ए0के0 मजूमदार : चैतन्य, हिज लाइफ एण्ड डॉक्ट्रिन, पृष्ठ 235.

2. ए0बी0 पाण्डेय : द फर्स्ट अफगान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 283-286, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज, और संस्कृति, पृष्ठ 282, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 57, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 257.

नानक की तरह ये भी विवाह को आध्यात्मिक उन्नति के मार्ग में बाधक नहीं मानते थे। बनारस की महालक्ष्मी नामक कन्या से विवाह किया। इनकी मृत्यु 1531 ई० में काशी में 52 वर्ष की उम्र में ही हो गयी।[1] बल्लभ के मतानुयायी साधारणतया उत्तरी भारत, राजपूताना, सौराष्ट्र, गुजरात, एवं बम्बई में पाये जाते हैं। उच्च वर्गीय तथा निम्न वर्गीय सभी प्रकार के व्यक्ति उनके मत के अनुयायी हैं।[2]

समीक्षा :

सभी भक्तों ने किसी विशेष सामाजिक, अथवा धार्मिक सम्प्रदाय से अपने आपको नहीं बाँधा, न ही किसी नवीन धर्म को आरम्भ करने का प्रयास किया। वे किसी भी धार्मिक कर्मकाण्ड में विश्वास नहीं रखते थे। बहुदेववाद का विरोध करते थे और एक ही ईश्वर के विभिन्न नाम जैसे - राम, कृष्ण, शिव, अल्लाह पर विश्वास रखते थे। मूर्तिपूजा जातिप्रथा, कर्मकाण्ड का विरोध किया। एक आराध्य देव की हार्दिक भक्ति पर जोर दिया। पुरोहितों की प्रधानता को नहीं माना। बताया कि केवल ईश्वर की भक्ति के द्वारा ही व्यक्तियों को मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है। सभी सन्तों ने अपने इन विचारों को भजन, दोहा, कविता तथा सरल उपदेशों के द्वारा जनसाधारण को समझाया। अपने विचारों को न केवल संस्कृत भाषा में प्रकट किया बल्कि विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं के द्वारा भी प्रकट किया।[3] यद्यपि इस सम्बन्ध में कुछ अपवाद भी हैं जैसे तुलसीदास, मीराबाई आदि।

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 57-58, एल० पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 257.
2. एन०के० देवराज : भारतीय दर्शन, पृष्ठ 637.
3. ए०बी० पाण्डेय : द फर्स्ट अफगान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 287, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 254.

हिन्दू मुस्लिम एकता लाने में भक्ति आन्दोलन कहाँ तक सफल हुआ इस पर एक से अधिक विचार हो सकते हैं । आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव के अनुसार भक्ति आन्दोलन हिन्दू मुस्लिम एकता स्थापित करने में असफल रहा । उनके अनुसार न तो तुर्क, अफगान शासकों ने राम और सीता पर आधारित धर्म स्वीकार किया न ही मुस्लिम जनता ने ।[1] डाक्टर श्रीवास्तव का उपर्युक्त विचार व्यावहारिक, आदर्शवादी ज्यादा लगता है । आई0एच0 कुरेशी ने इस सन्दर्भ में अधिक तार्किक विवरण दिया है जिससे यह स्पष्ट होता है कि हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच आपसी सद्भाव की स्थापना हो रही थी । कबीर का उदाहरण देते हुए आई0 एच0 कुरेशी लिखते हैं कि "कबीर का एक मुसलमान के रूप में पालन पोषण हुआ था किन्तु उन्होंने एक हिन्दू को अपना आध्यात्मिक गुरू बनाया था । चैतन्य जो कि महान वैष्णव सुधारक थे कई मुसलमानों को अपने मत में दीक्षित कर लिया था ।[2] सुल्तानों की धार्मिक सहिष्णुता का एक बड़ा प्रमाण तो स्वयं भक्ति आन्दोलन ही है । यदि धार्मिक सहिष्णुता न होती तो इतना बड़ा धार्मिक आन्दोलन जिसके कारण हिन्दू धर्म एक महान आध्यात्मिक शक्ति बन गया, सफलतापूर्वक कैसे अपना कार्य कर सकता था । कट्टर से कट्टर मुसलमान शासकों के समय भी सुल्तानों में इतनी सहनशक्ति तो थी ही कि वे शंख बजते हुए सुन सकते थे और मन्दिरों के घण्टे बजाने में कहीं रोक नहीं लगी । नये मन्दिर बनने पर अवश्य रोक लगी थी । भक्ति आन्दोलन ने तो मूर्तिपूजा का खण्डन भी किया । अतः इसका समाज पर बहुत प्रभाव पड़ा । हिन्दू मुस्लिम एकता की भावना को इस आन्दोलन ने अधिक प्रभावशाली ढंग से मुखरित किया था ।

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : द सल्तनत आफ देलही, पृष्ठ 335.

2. आई0एच0 कुरेशी : द एड्मिनिश्ट्रेशन आफ द सल्तनत आफ देहली, पृष्ठ 221-222.

ब 1398 ई0 से 1526 ई0 के मध्य सूफीवाद का प्रभाव :

गुरू नानक और कबीर के द्वारा जिस प्रकार भक्ति आन्दोलन हिन्दुओं को प्रभावित कर रहा था उसी प्रकार कुतबन, मंझन और जायसी जैसे सूफी सन्तों का भी जनता पर व्यापक प्रभाव पड़ रहा था ।

कुतबन :

सुल्तान हुसैनशाह शर्की के समकालीन सूफी सन्त कुतबन थे । कुतबन हुसैन शाह के दरबारी कवि थे । 1503 ई0 में इन्होंने मृगावती की रचना की थी । मृगावती कथा जो लौकिक प्रेम की कथा है जिसमें ईश्वर के प्रति अलौकिक प्रेम का संकेत किया है । कथा का सार इस प्रकार से है । कंचनपुर के राज्य की राजकुमारी मृगावती पर चन्द्रगिरि के राजा का पुत्र मोहित हो जाता है । वह प्रेममार्ग में योगी बनकर निकल पड़ता है । अनेक कष्ट झेलने के बाद वह राजकुमारी को प्राप्त करता है । यह ग्रन्थ अवधी भाषा में लिखा गया है । इसमें छन्द, दोहा, चौपाई है । इसकी कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :-

रूकमति पुनि वैसहि भरगई । कुलबन्ती सत से सति भई ।
बाहर वह भीतर वह होई । घर बाहर को रहै न जोई ॥[1]
विधि कर चरित न गावै आनू।जो सिरजा सो जाहि निआनू ॥[1]

---

1. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 386, श्याम मनोहर पाण्डेय : मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृष्ठ 65, श्री सुकुमार सेन : इस्लामी बंगाल साहित्य, पृष्ठ 8 ।उद्धृत श्रीनिवास बत्रा हिन्दी और सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन, पृष्ठ 78.

मलिक मुहम्मद जायसी :

शेरशाह के समकालीन जायसी हुए । जायसी ने अपना प्रसिद्ध काव्य पद्मावत लिखा ।[1] ये सूफ़ी योग और वेदान्त से बहुत अधिक प्रभावित थे । इन्होंने अपना काव्य फारसी लिपि में लिखा किन्तु भाषा हिन्दी रही ।[2] मलिक मुहम्मद जायसी का जन्म 1495 ई0 में उत्तर प्रदेश के रायबरेली जिले के अन्तर्गत जायस में हुआ था जिसका वर्णन इन्होंने स्वयं किया है ।

भा अवतार मोर नौ सदी ।
जायस नगर मोर अस्थानू ॥

इनके पिता का नाम शेख़ मुमरेज था । ऐसा कहा जाता है कि ये चिश्ती सम्प्रदाय के सुप्रसिद्ध सूफ़ी सन्त शेख़ निज़ामुद्दीन औलिया की परम्परा के शेख़ अशरफ जहाँगीर के शिष्य थे । कुछ विद्वानों का मत है कि शेख़ मुहीउद्दीन के शिष्य थे । शेरशाह ने न केवल इन्हें अपने दरबार में आश्रय दिया बल्कि इन्हें सम्मान भी दिया। इन्हें अमेठी के राजा नरेश रामसिंह, भोजपुर व गाजीपुर के महाराज जयन्तदेव का भी सहयोग मिला था ।

इनकी प्रमुख रचनाएँ आखिरी कलाम, पद्मावत, अखरावत, हैं । इसके अलावा अन्य अनेक ग्रन्थों अखरावत, सिखरावत, चन्द्रावत, इतरावत, महरानामा, मेटकावत, चित्रावत, कहरावत, मुराईनामा, मकहरनामा, पोस्तीनामा, होली नामा, इत्यादि की भी रचना की थी किन्तु अभी तक इनकी केवल तीन रचनाएँ आखिरी कलाम,पद्मावत, अखरावत ही प्राप्त हुई है ।[3]

---

1. आई0एच0 कुरेशी : एडमिनिस्ट्रेशन आफ द सल्तनत आफ देलही, पृष्ठ 187.
2. ए0बी0 पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 280.
3. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 386-387.

मंझन :

मंझन ने मधुमालती की रचना की थी । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने मधु-मालती की रचना का काल पद्मावत की रचना के पूर्व वि०सं० 1550 और 1595 के बीच रखा है । कारण यह है कि इसकी खण्डित प्रतियाँ ही प्राप्त हुयी थीं जिसमें तिथि विषयक समस्या का समाधान निश्चित होकर नहीं किया जा सकता है किन्तु अब इसके दो संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं - एक सन् 1957 ई0 में दूसरा सन् 1961 ई0 में । इस प्रकार इसकी रचना की तिथि 1545 ई0 बताई है ।[1] अभी तक इनकी केवल एक रचना मधुमालती उपलब्ध हुई है । निम्न पंक्तियों से इसका आभास मिलता है :-

सन् नौ सौ बावन जब भाए । सबै बरख कुल परिहर गए ।
तब उस जी उपजी अभिलाषा । कथा एक बांधो बरू भाषा ।[2]

मंझन चुनार के रहने वाले थे जो उस समय जौनपुर राज्य में था । उनके गुरू शेख मुहम्मद गौस थे जो सतनामी सम्प्रदाय के थे ।[3]

कुतबन की मृगावती, मंझन की मधुमालती और जायसी का पद्मावत ऐसे ग्रन्थ हैं जिन पर हिन्दू मुस्लिम दोनों ही प्रकार का प्रभाव दिखाई पड़ता है इससे हिन्दू मुस्लिम सामंजस्य की स्थापना में योगदान मिला ।[4]

----

1. रामचन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास, काशी सं0 2003, पृष्ठ 98.
2. राधेश्याम : मध्ययुगीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 385-386.
3. रामचन्द्र शुक्ल : वही, पृष्ठ 98.
4. ए0वी0 पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 280, श्याम मनोहर पाण्डेय : मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, इलाहाबाद, पृष्ठ 65.

सूफ़ीवाद की प्रमुख विशेषता यह रही है कि वे अल्लाह के प्रति प्रेम में डूबे रहते हैं। वे अल्लाह से डरने के बजाय उससे प्रेम करते हैं। कई सोपानों को पार करने के बाद एक सूफ़ी उस अवस्था में पहुँचता है जहाँ अल्लाह से उसका शुद्ध प्रेम स्थापित हो जाता है और वह फना व बका की अवस्था में पहुँच जाता है।[1] सूफ़ी लोग भी भक्ति पर जोर देते हैं जिसे वे अल्लाह के प्रति प्रेम कहते हैं। वे इस भावनात्मक लगाव को उस प्रेम तक पहुँचाते हैं जहाँ अल्लाह से उनका सीधा भावनात्मक सम्पर्क स्थापित हो जाता है। अल्लाह के अलावा जो लोग दूसरों को पुकारते हैं वे उनकी पुकार का जबाब नहीं दे सकते हैं क्योंकि उन्होंने कुछ पैदा नहीं किया है। जबकि हर चीज अल्लाह ने पैदा की है। अल्लाह के अलावा कोई इलाह नहीं। उसके अलावा कोई रात को दिन और दिन को रात नहीं बना सकता है। जमीन पर चलने फिरने वाले प्रत्येक जीव की रोजी अल्लाह के जिम्मे है। अल्लाह जिसे चाहता है वे-हिसाब रोजी देता है। अल्लाह पूर्व और पश्चिम का स्वामी है। तथा जमीन और आसमान को पैदा करने वाला है। जमीन और आसमान की छिपी बातों को जानने वाला, हर वस्तु पर दृष्टि रखने वाला, सर्वज्ञ, अपार शक्ति का मालिक है।[2] बहुत से सूफ़ी सन्तों के अनेकों हिन्दू अनुयायी थे। बिना धर्म परिवर्तन किये भी हिन्दू लोग सूफ़ियों से आध्यात्मिक मार्गदर्शन लेते थे। इससे हिन्दू मुस्लिम सम्पर्क बढ़ा और दोनों के बीच की चौड़ी खाई को भरने में मदद मिली।

----

1. ताराचन्द : इन्फ्लुएन्स आफ इस्लाम ऑन इण्डियन कल्चर, पृष्ठ 78-79.

2. रुद्रदेव : "मध्यकालीन सन्त काव्य और सूफ़ी" काव्य का तुलनात्मक अध्ययन (अप्रकाशित शोध प्रबन्ध), पृष्ठ 128-130.

मीर सैय्यद इब्राहीम सुल्तान सिकन्दर लोदी के शासनकाल के अन्त में दिल्ली आए थे। ये पवित्र एवं धर्मनिष्ठ व्यक्ति थे। इन्होंने शेख़ बुरहानुद्दीन कादिरी सुल्तानी से शिक्षा ग्रहण की थी। इनकी मृत्यु 1546 ई0 में हुयी। दूसरे सूफ़ी सन्त शेख़ फ़िरोजाबादी थे। ये सुल्तान इब्राहीम लोदी के समय दक्षिण से दिल्ली आकर बस गए थे। सिकन्दर लोदी और बाबर के समकालीन एक सूफ़ी शेख़ कुद्दुस गंगोही थे, इनकी मृत्यु 1537 ई0 में हुयी। इन्होंने सिकन्दर लोदी और बाबर दोनों से आग्रह किया था कि वेजनता के साथ न्याय करें और जनता की दशा को सुधारने का प्रयास करें।[1]

1398 ई0 में गुलवर्गा में एक सूफ़ी बसे। इनका नाम ख्वाजा मुहम्मद गेसु-दराज था। ये शेख़ नसीरूद्दीन चिराग देहलवी के शिष्यों में से एक थे। इन्होंने 33 किताबें लिखीं हैं जिसमें खताये-रूल कुदस, असमाउल असरार[2] आदि हैं।

ये चिश्ती सम्प्रदाय के थे। चिश्ती सम्प्रदाय ने समानता और सामाजिक न्याय के लिए बहुत प्रशंसनीय कार्य किये थे। यहाँ पर तत्कालीन सभी सूफ़ी सन्तों की सूची देने का कोई मन्तव्य नहीं है। मन्तव्य केवल इस तथ्य के प्रकटीकरण से है कि सूफ़ियों का जनता पर कितना प्रभाव पड़ा। सोहरावर्दी सम्प्रदाय भी अच्छी तरह प्रतिष्ठित हो चुका था। शेख़ शरफुद्दीन यहिया मनेरी सोहरावर्दी सिलसिला की फिरदौसियाँ शाखा के सूफ़ी थे। इनकी मृत्यु 1380 ई0 में हुयी थी। फिरदौसियाँ का बिहार में बहुत प्रभाव पड़ा।[3]

---

1. युसुफ हुसैन : मेडिवल इण्डियन कल्चर, पृष्ठ 53.

2. वही, पृष्ठ 46.

3. वही, पृष्ठ 49.

शेख सरफुद्दीन यहिया मनेरी ने मानवता की सेवा पर बहुत बल दिया । इन्होंने मकतूबात में अपने विचारों का स्पष्ट उल्लेख किया है ।[1]

सूफ़ी सन्तों का प्रभाव भारतीय मुसलमान शासकों पर भी पड़ा । बहुत से सूफी और फकीर राज्य की ओर से संरक्षण पाते थे ।[2] दिल्ली सल्तनत के करीब करीब सभी सुल्तानों ने किसी न किसी सूफ़ी को अपना गुरू अवश्य बनाया । इन्हें विशेष मान सम्मान भी दिया । देहली पर सूफ़ियों का प्रभाव होने के कारण सूफ़ी मत का प्रसार उत्तरी भारत में होता रहा । बंगाल तक इन लोगों ने अपने मत का प्रचार किया । सूफ़ियों का प्रचार प्रसार इस कारण बढ़ा कि सूफ़ी साधकों ने अपने को इस्लाम धर्म से अलग नहीं किया, इनका दर्शन कुरान पर ही आधारित था ।[3]

अकबर के समय तक सूफ़ी मत प्रेम एवं भक्ति पर आधारित होकर सर्वमान्य हो चुका था । धीरे धीरे सूफ़ीवाद पर भारतीय नृत्य, संगीत, देवोपासना की भावना, योगियों के चमत्कारों आदि का समावेश होने लगा था । सूफ़ियों ने प्रेम की भावना और सत्पुरुषों के आदर्शों से ऐसा अनुरंजित किया कि इस्लाम की कट्टरता क्षीण होती गई । सूफ़ियों ने ऊँच नीच, छुआछूत, जातिपाँति के भेदभाव, बाह्याडम्बरों का खण्डन किया और यह बताया कि जीवन में प्रेम की भावना ही उच्च और प्रधान है । सूफ़ियों के दर्शन में प्रेम की भावना इतनी प्रबल और मधुर थी, कि जनता ने उसे बड़े हर्ष और प्रेम के साथ आत्मसात् किया ।[4] इससे समाज में

---

1. युसुफ हुसैन : मेडिवल इण्डियन कल्चर, पृष्ठ 53.
2. आई०एच० कुरेशी : द एडमिनिस्ट्रेशन आफ द सल्तनत आफ देहली, पृष्ठ 190.
3. ताराचन्द : इन्फ्लुएन्स आफ इस्लाम ऑन इण्डियन कल्चर, पृष्ठ 63.
4. डॉ० सावित्री शुक्ल : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 187-188.

सुधार होने प्रारम्भ हो गए । सूफियों की रचनाओं, पदों और गज़लों ने समाज संस्कार में भी सहायता की । सूफ़ी सन्तों की उक्तियाँ, स्पष्टवादिता और व्यंग्यों से भारतीय जनता के सामाजिक, धार्मिक और साधनात्मक दोष तो दूर हुये उनमें आशा का संचार भी हुआ[1] परन्तु उसमें सरसता के संचार और माधुर्य का प्रसार करने का श्रेय सूफ़ी प्रेमाख्यानकारों को ही प्राप्त है ।

बहुत दिनों तक साथ साथ रहते हुए हिन्दू और मुसलमानों में आपस में एक दूसरे के प्रति सहनशीलता और उदारता की भावना का विकास होने लगा । दोनों के हृदय में एक दूसरे के प्रति संवेदना का विकास हुआ । दोनों ने एक दूसरे की संस्कृति, रीतिरिवाजों, आचार-विचार और जीवन को निकट से देखना प्रारम्भ किया ।

सूफ़ी सन्तों ने जनमानस को भी प्रभावित किया । सभी वर्ग के लोगों को समन्वयता व एकता के सूत्र में बाँधे रखने का प्रयास किया । ये सूफ़ी सन्त जानते थे कि इस बहुजातीय व बहुधर्मी देश में न शासक शरीयत के अनुसार शासन कर सकते हैं और न शासित वर्ग उसका दैनिक जीवन में अक्षरश: पालन कर सकते हैं । राज्य की कठिनाइयाँ शरियत द्वारा दूर नहीं की जा सकती है बल्कि नए नए कानूनों व परिस्थितियों के अनुसार बनाई गई नीतियों के द्वारा ही दूर की जा सकती हैं । यहाँ के लोग एकेश्वरवाद से पूर्णरूप से प्रभावित थे । सूफ़ी सन्तों ने एक ऐसा कार्य किया जो शासक भी नहीं कर सकते थे । इन सन्तों ने जनता की भाषा में अपने सम्प्रदाय की विचारधारा का प्रचार कर हिन्दुओं और मुसलमानों को एकेश्वरवादी तथ्य का एहसास कराया ।

----

1. डॉ० सावित्री शुक्ल : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 189.

इन सन्तों ने धार्मिक भेदभाव को भी दूर करने का प्रयास किया । अपने उपदेश आध्यात्मिक ज्ञान और चमत्कार, नम्रता, उदारता एवं पवित्र जीवन द्वारा हिन्दू मुसलमानों के हृदय में बसी पारस्परिक द्वेष और कलह की भावना को दूर कर उन्हें एक साथ सद्मार्ग पर चलने के लिए प्रोत्साहित किया । सभी लोगों को समन्वयता एवम् भातृत्व का पाठ पढ़ाया और निसहाय, उत्पीड़ित और शोषित जनता का ध्यान आत्मबोध, आत्मज्ञान, बहुजन हिताय व बहुजन सुखाय की ओर आकर्षित किया ।[1] इस्लाम व उसके सिद्धान्तों का प्रचार किया । अपनी खानकाहों में शिक्षा देनी प्रारम्भ की । उर्स व शमा के माध्यम से हिन्दुओं और मुसलमानों को निकट लाए ।

सूफ़ियों ने समकालीन शासकों की नीतियों को प्रभावित किया । उनके आचरण को भी सन्तुलित बनाए रखने का प्रयास किया । शासक भी इन सन्तों से बहुत प्रभावित हुए । उनके आदर्शों का जनता पर बहुत प्रभाव पड़ा । जनता की इन सूफ़ी सन्तों पर इतनी आस्था थी कि शासक इन सूफ़ी सन्तों के माध्यम से ही उन्हें अपने नियंत्रण में रखने में सफल हुये । इन सन्तों के विचार एक युग द्रष्टा के विचारों से मेल खाते हुए थे । इन सन्तों ने न केवल राजनीति व समाज को प्रभावित किया बल्कि धर्म को भी प्रभावित किया और उसे नवीन दिशा प्रदान की । मध्यकालीन संस्कृति में इनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है । केवल नक्शबन्दिया सम्प्रदाय की विचारधारा जो कि रूढ़िवादी, हिन्दू शिया विरोधी, कठोर तथा तत्कालीन परिस्थितियों के विपरीत थी, को छोड़कर लगभग सभी सूफ़ी सम्प्रदायों ने जनमानस को प्रभावित कर एकता के सूत्र में बाँधने का प्रयास किया ।[2]

--------::0::-------

----

1. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 329.

2. वही, पृष्ठ 330.

पंचम अध्याय

सुल्तानों की धार्मिक नीति

सुल्तान के धार्मिक कर्तव्य

'तारीखे फखरूद्दीन मुबारकशाह' में फखरे मुदाब्बिर ने यह बताया है, कि एक सुल्तान को किन-किन धार्मिक कर्तव्यों का पालन करना चाहिए → सुल्तान को चाहिये कि वो ईद और शुक्रवार की नमाज के समय खुतबा पढ़े, इस्लाम द्वारा वर्णित विषयों की सीमाएं निर्धारित करे, दान पुन्य करने के लिए कर वसूल करे, धर्म की रक्षा के लिये युद्ध करे, मुसलमानों के बीच होने वाले मुकदमें तय करे, प्रजा की शिकायत स्वयं सुने, राज्य में किस प्रकार शान्ति रहे इसका प्रयास करे, राज्य में विद्रोह एवं शान्ति भंग करने वालों को दण्ड दे[1] अपने कोष से कुछ धन दान और धर्म के लिए खर्च करे।[2]

बरनी ने 'तारीख-ए-फ़िरोजशाही' में लिखा है कि सुल्तान को इस्लाम धर्म को सम्मान एवं बढ़ावा देना चाहिए, शरा का पालन करना चाहिए, शरा के विरूद्ध कोई काम नहीं करना चाहिए, कुफ्र, काफिरी,

---

1 इलियट एवं डाउसन: भारत का इतिहास, भाग 2 पृष्ठ 25। के0एस0 लाल: द ट्वाइ लाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 103, के0एम0 असरफ: हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और इनकी परिस्थितियॉ, पृष्ठ 16, तारीख़-ए-फखरूद्दीन: मुबारकशाह, पृष्ठ 13 उदधृत अंश - राधेश्याम: सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 69.

2 राधेश्याम: सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 69 ‡उदधृत अंश तारीख-ए-फ़िरोजशाही‡.

शिर्क़, बुतपरिस्ती को बन्द करना चाहिए, हिन्दुओं को मूर्तिपूजा नहीं करने देना चाहिए, हिन्दुओं को अपमानित, कलंकित तथा तुच्छ बनाने का प्रयास करना चाहिए, क्योंकि वे इस्लाम के घोर शत्रु हैं। ब्राह्मणों का समूल उच्छेदन कर देना चाहिए क्योंकि ब्राह्मण ही कुफ्र के नेता हैं। ब्राह्मण के कारण ही कुफ्र और शिर्क फैलता है। किसी भी हिन्दू को आदरपूर्वक जीवन व्यतीत नहीं करने देना चाहिए। मुसलमानों के बीच सदैव हिन्दुओं का तिरस्कार और अपमान करना चाहिए। हिन्दुओं को कभी चैन से नहीं रहने देना चाहिए। हिन्दुओं को किसी विलायत व अक्ता का हाकिम नहीं बनाना चाहिए।[2] उन नगरों में जहाँ इस्लामी राज्य हो, वहाँ पर सुल्तान के वैभव के कारण मुसलमान व्यभिचार, दुराचार, पाप तथा अपराध में ग्रस्त हो गये हों, तो उन्हें दण्ड देना चाहिए। अगर कोई अपराध करे और सुल्तान की आज्ञा न माने तो उसे विष दे देना चाहिए। सम्राट का पद शरा की आज्ञाओं का पालन करने वाले, ईश्वर से डरने वाले, धार्मिक जीवन व्यतीत करने वाले, तथा जो नियमित रूप से नमाज पढ़ते हों, उन्हें सौंपना चाहिए। दार्शनिकों को अपने ज्ञान का प्रसार करने की आज्ञा नहीं देना चाहिए, नाही उन्हें नगर में रहने देना चाहिए। सुल्तान को अधर्मियों, भ्रष्ट लोगों, तथा सुन्नी धर्म का विरोध करने वालों का आदर नहीं करना चाहिए, बल्कि उनका अपमान करना चाहिए, उन्हें राज्य में कोई ऊँचा पद नहीं देना चाहिए।

---

1 राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 69 (उद्धृत अंश तारीख़-ए-फ़िरोजशाही से)

2 राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 69-70 (उद्धृत अंश तारीख-ए-फ़िरोजशाही से)

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या कोई भी सुल्तान व्यावहारिक रूप से इन धार्मिक कर्तव्यों का पालन कर सका है। फ़िरोजशाह तुग़लक एवं सिकन्दर लोदी के शासनकाल में इस दिशा में अधिक उत्साह था। सामान्यतया सभी सुल्तानों ने इस्लाम धर्म की रक्षा करने का प्रयास किया। जो लोग इस्लाम धर्म का विरोध करते थे उन्हें खुले आम दण्ड दिया जाता था।[1]

सल्तनत काल में मुस्लिम शासकों ने अपने धर्म के प्रति न केवल पूरी निष्ठा रक्खी बल्कि उनके सिद्धान्तों का कड़ाई से पालन करने का प्रयास किया। समय-समय पर उन्हें समझौते भी करने पड़े। स्थानीय जनता के सहयोग की वे सर्वथा अनदेखी नहीं कर सकते थे। हिन्दुस्तान अरब नहीं है। यहॅा की अधिकांश जनसंख्या हिन्दू ही है। अतः यह स्वाभाविक ही था, कि प्रशासनिक सुविधा के लिये सुल्तान अपनी-अपनी क्षमता, अभिरूचि व परिस्थितियों के अनुसार शरीयत का पालन करवाते। यही कारण है कि विभिन्न सुल्तानों की धार्मिक प्रवृत्तियों में थोड़ा बहुत अन्तर दिखाई पड़ता है। कोई उदारवादी प्रतीत होता है तो कोई कट्टर प्रतीत होता है। कुछ शासक सामान्य भाव से धार्मिक नीति का अनुपालन करते हैं। जिसमें न आवश्यकता से अधिक कट्टरता है और न अपेक्षित उत्साह की कमी है।[2]

---

1 राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 70.

2 द देलही सल्तनत : भारतीय विधा भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 615

15 वीं शताब्दी में राजनीतिक, आर्थिक मसलों ने इतना अधिक उद्वेलित कर रक्खा था कि सिवाय सिकन्दर लोदी के हमें किसी अन्य सुल्तान की नीतियों में धर्मान्धता व कट्टरता का पुट कदाचित् नहीं दिखाई पड़ता है। तैमूर ने (1398-1399 ई0) में भारत पर आक्रमण करके भयंकर तबाही भारत पर लाद दी थी। उसने न केवल आर्थिक व राजनीतिक रूप से कष्ट पहुँचाये, बल्कि धार्मिक दृष्टिकोण से भी जनमानस पर परोक्ष रूप से प्रभाव डाला। उसकी तलवार के शिकार हिन्दू और मुसलमान दोनों हुये थे। उसने जब गाँव के गाँव जला दिये थे तो उसमें हिन्दू घर भी जले और मुस्लिम घर भी। असंख्य लोगों यहां तक कि स्त्रियों और बच्चों तक को भी दास बनाया गया। विपत्ति के इस भयंकर उल्कापात ने हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों की आंखें खोल दी। अभी तक वे दोनों आपस में लड़ते-झगड़ते रहे थे लेकिन अब उनमें एक दूसरे के प्रति समादर की भावना विकसित होने लगी थी। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि मिश्रित संस्कृति की अवधारणा के पीछे कतिपय अन्य तत्व भी उत्तरदायी थे जैसे - बहुत अधिक समय तक हिन्दुओं और मुसलमानों को साथ-साथ रहते हुये[1] एक दूसरे के प्रति पड़ोसी की भावना विकसित होना तथा कलुषित भावना का हृदय से धीरे-धीरे निकल जाना, मुसलमानों का यह समझ लेना कि हिन्दुस्तान को पूरी तरह से इस्लामी देश नहीं बनाया जा सकता है , हिन्दू धर्म का अस्तित्व मुस्लिम

---

1 द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन, द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 615-16.

आक्रमणों व प्रचारों के बावजूद अडिग बना रहना, तलवार के बल पर धर्म परिवर्तन की नीति का सफल न होना, इत्यादि इत्यादि। फिर भी हम देखते हैं कि उत्तर तैमूर कालीन समय में धार्मिक प्रवृत्तियों में कुछ बदलाव जिसकी दिशा उदारता व व्यापकता की ओर थी निश्चित रूप से आनी प्रारम्भ हो जाती है। एक ओर भक्ति आन्दोलन के महान सन्तों जिनमें कबीर व गुरूनानक का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है, ने इस दिशा में कार्य किया तो दूसरी ओर सूफी सन्त जिसमें चिश्ती सम्प्रदाय, का विशेष रूप से ज़िक्र किया जा सकता है, ने इस दिशा में कार्य किया। इसका प्रभाव सुल्तानों की नीतियों पर पड़े बिना नहीं रह सकता था। केवल सिकन्दर लोदी इस श्रेणी में नहीं आता है।[1]

हिन्दुओं को मुसलमान बनाने के प्रयास :

सुल्तानों ने अपनी हिन्दू प्रजा को भूमि का लालच देकर तथा दबाव डालकर मुसलमान बनाने का यथा सम्भव प्रयास किया। इसका प्रथम कारण यह था कि वे जानते थे कि जब तक मुसलमानों की जनसंख्या में वृद्धि नहीं होती तब तक प्रशासन को हिन्दुओं के विरोध का सामना करना पड़ेगा। दूसरा कारण यह था कि मुसलमानों को अपना राज चलाने के लिए एवं सेना में भर्ती के लिये हिन्दुओं की आवश्यकता थी। इस

---

1 द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 615-616.

कारण मुस्लिम शासकों ने हिन्दुओं को धन, जागीर, भूमि, राज्य में पद देने का लालच देकर अपनी ओर मिलाने का प्रयास किया।[1]

इस्लाम के मानने वाले अल्लाह की सत्ता में विश्वास रखते हैं। वे मूर्ति पूजा के कट्टर विरोधी थे। वे मूर्तियों को तोड़ना अपना गौरव समझते थे। मुसलमान, धर्मों के समन्वय और सामन्जस्य को लेशमात्र महत्व नहीं देते थे। इस्लाम का उद्देश्य सम्पूर्ण विश्व को अपने रंग में अनुरंजित करना था। जो काफ़िर इस्लाम स्वीकार कर लेते थे उनके साथ ऊँच-नीच का भेद भाव नहीं किया जाता था जबकि हिन्दू धर्म भेद-भाव के अभिशाप से ग्रस्त था। इस्लाम धर्म में हर व्यक्ति सामाजिक और धार्मिक दृष्टि से समान स्थिति का अधिकारी माना जाता है।[2] मुसलमानों के सम्पर्क में जब हिन्दू आये तब उन्हें अपने धर्म और समाज की विषमताओं का परिज्ञान हुआ। उन्होंने देखा कि इस्लाम में हर व्यक्ति धार्मिक दृष्टि से समान है जबकि हिन्दू जाति पग-पग पर भेद-भाव के कारण दुःखी और शोषित है। हिन्दुओं में, वे हिन्दू जो निःसहाय गरीब, दरिद्र, अछूत थे, जिन्हें हिन्दू धर्म में कोई स्थान नहीं प्राप्त था, जैसे - चमार, डोम, इन्हें जनता घृणा की दृष्टि से देखती थी। वे अपनी सामाजिक दशा सुधारना चाहते थे और समाज में इज्जत

---

1 राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ - 183.

2 डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ - 181.

सम्मान पाना चाहते थे, इस कारण बहुत से हिन्दुओं ने इस्लाम धर्म ग्रहण कर लिया।[1]

जिम्मी के रूप में हिन्दू

हिन्दू धर्म का परित्याग कर इस्लाम धर्म को स्वीकार कर लेने मात्र से ही वे अछूतों की हीन स्थिति से ऊपर उठ जाते थे। इसी कारण मुसलमानों को अपने धर्म का प्रसार करने का खूब समय मिला। जैसे-जैसे इस्लाम धर्म का विकास होता गया वैसे-वैसे हिन्दू धर्म अपने को नए वातावरण के अनुकूल ढालता गया। कुछ लोग कट्टरता की रक्षा करके अपने धर्म को परिष्कृत रखने के प्रयास में जुटे रहे तो कुछ लोग उदारवादी दृष्टिकोण का अवलम्बन लेते हुए स्वयं मूर्तिपूजा, अन्धविश्वास आदि को कुरीति समझने लगे। एक वर्ग बिना किसी परवाह के अपने पारम्परिक तरीकों पर चलता रहा।[2]

जिस समय तैमूर ने आक्रमण किया उस समय हिन्दू अग्नि, मूर्ति और बैल की पूजा बड़े धूमधाम से करते थे।[3] उलमा की दृष्टि में हिन्दू भले ही काफिर माने गये हों लेकिन शासकों ने काफिरों की भी रक्षा की।

---

1 राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ-183.

2 द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 617.

3 इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ - 287.
इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 11-250, 251.

इसके बदले में जजिया वसूल किया। हिन्दुओं को तलवार की धार के पार उतार देना न तो सम्भव था और न ही अभीष्ट। फिर भी मुसलमान शासक हमेशा इस्लाम की उन्नति चाहते थे। इसे वह अपना परम कर्तव्य समझते थे।[1] सुल्तान सिकन्दर लोदी ने हिन्दुओं को धन तथा राज्य में उच्चपद देने का लालच देकर इस्लाम धर्म ग्रहण करवाया था। किन्तु अलाउद्दीन खिलज़ी और मुहम्मद तुगलक आदि राजनीतिक विचारों के सुल्तानों ने इस्लाम धर्म का प्रचार करने एवं हिन्दुओं को मुसलमान बनाने तथा राज्य में उच्चपद देने का लालच नहीं दिया। हिन्दुओं तथा बौद्धों को नये मन्दिर बनवाने एवं पुराने मन्दिरों की मरम्मत करवाने की आज्ञा नहीं दी, उदाहरण के लिये जब चीन के सम्राट ने अपना राजदूत दिल्ली भेजा और बौद्ध मन्दिरों के जीर्णोद्धार की आज्ञा मांगी जिन्हें कराचल पर आक्रमण के समय सुल्तान के सैनिकों ने नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था तो मुहम्मद तुगलक ने उसे मरम्मत करवाने की आज्ञा नहीं दी और कहा कि "इस प्रकार की प्रार्थना को स्वीकार करना मेरे धर्म के खिलाफ है"। इस प्रकार हम देखते है कि उदार सुल्तानों ने भी हिन्दुओं को नये मन्दिर बनवाने और पुराने मन्दिरों का जीर्णोद्धार कराने की आज्ञा नहीं दी थी।[2]

हिन्दू जिम्मी कहलाते थे[3] जिसका तात्पर्य यह है कि वे जजिया

---

1 डॉ० सवित्रि शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ - 181.

2 आर्शीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 37.

3 द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 617-23.

देने पर एक सीमित रूप से अपने धर्म का अनुसरण कर सकते थे। बदले में राज्य उनकी रक्षा का जिम्मा लेता था। इस प्रकार हिन्दू द्वितीय श्रेणी के नागरिक की भांति थे। शासक वर्ग का होने के नाते मुसलमान प्रथम श्रेणी के नागरिक थे। जजिया बहुत अधिक होता था, धनी हिन्दू से 48, मध्यम श्रेणी के हिन्दुओं से 24 और निर्धन से 12 चांदी के सिक्के जजिया के रूप में लिये जाते थे। सन्यासी, भिक्षु, अन्धे, स्त्री, बच्चे, अपाहिज, बूढ़े, इस कर से मुक्त थे। जजिया अधिक होने के कारण बहुत से हिन्दुओं ने इस्लाम धर्म ग्रहणकर लिया। यद्यपि हिन्दू जजिया देते थे, पर उन्हें सार्वजनिक रूप से पूजा, उपासना, व्रत और अपने धर्म का प्रचार करने की अनुमति नहीं थी। अपने विचारों को व्यक्त करने की भी स्वतन्त्रता नहीं थी। हिन्दुओं पर अब कानूनी अयोग्यताएं लाद दी गयी थीं, उदाहरण के लिये, न्याय करते समय मुसलमानों के विरूद्ध मुकदमों में उनके प्रमाणों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता था।[1]

सरकारी नौकरी तथा नागरिक अधिकारों के उपयोग के सम्बन्ध में हिन्दुओं पर अनेक प्रतिबन्ध लगाये गये थे। उनके साथ मुसलमानों के समान व्यवहार नहीं किया जाता था। हिन्दू मन्दिरों को नष्ट करना और मूर्तियों को तोड़ना सिकन्दर लोदी के समय भी जारी था। यदाकदा कुछ आपत्तिजनक घटनाएं होती रहती थीं जैसे - मुसलमान ब्राह्मणों के

---

1 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति पृष्ठ - 37-38, द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 618.

बेटों को जबरदस्ती पकड़ लेते थे, उनके माथे पर से तिलक पोंछ कर गौ के मांस से भरी टोकरी रख देते थे। हिन्दुओं को मुसलमान अपनी बस्ती में घुसने नहीं देते थे। मुसलमान बालक अगर छोटा भी होता था तब भी वह हिन्दू पर आतंक फैलाता था। हिन्दू किसानों को और व्यापारियों को, मुसलमान किसानों और व्यापारियों की अपेक्षा दुगुना कर देना पड़ता था।[1] हिन्दुओं को उनके तीर्थ-स्थानों पर जाने से रोका जाता था, अगर वो जाते थे तो उनसे तीर्थयात्रा कर लिया जाता था।

सुल्तान गरीब हिन्दुओं को दान में कुछ नहीं देते थे। अस्पतालों से हिन्दुओं को दवा नहीं दी जाती थी जबकि गरीब मुसलमानों को अस्पतालों से मुफ्त में दवा दी जाती थी। मुसलमान के बच्चों की शिक्षा के लिये राज्य में जगह-जगह मकतब एवं मदरसे खोले गये थे। हिन्दुओं के पाठशालाओं और विद्यालयों को राज्य की ओर से कोई मदद नहीं दी जाती थी। हिन्दुओं के मन्दिरों और मूर्तियों को तोड़ना आम बात हो गयी थी।[2] अजमेर, अयोध्या, बनारस आदि स्थानों पर आज भी टूटे हुये मन्दिर, भवन एवं मूर्तियों के अवशेष जैसे - मूर्तियों के सिर, हाथ, पैर आज भी खण्डित और नष्ट भ्रष्ट अवस्था में है। सुल्तानों ने

---

1 राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 183, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 239.

2 द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 617 एल0पी0शर्मा: भारत का इतिहास, पृष्ठ 239.

मन्दिर को तोड़वाकर उसका समान मस्जिदों में लगवाया क्योंकि हिन्दू मन्दिर कलात्मक बने होते थे। हिन्दुओं को शब्द और व्यवहार दोनों ही प्रकार से जिम्मी और काफ़िर समझा जाता था।[1]

शिया सम्प्रदाय :

चूंकि ये शासक पक्के सुन्नी थे इसलिये शिया तथा इस्लाम के अन्य विरोधी सम्प्रदायों का कट्टर विरोध करते थे। सनातनी इस्लाम से विरोध रखने वाले सभी विचारों का नाश करने की उनकी बलवती इच्छा रहती थी। वे इस्लाम धर्म के अन्तर्गत सभी प्रकार के विरोध का अन्त करना चाहते थे, इसलिये इन सुल्तानों ने करमाथी , शिया, महदवी आदि सम्प्रदायों का निर्दयतापूर्वक दमन किया और उनके धार्मिक रीति-रिवाजों को कुचला, उनके नेताओं को यातनाएं दी, जब कहना नहीं माना,तब उनका वध किया। सुन्नी सम्प्रदाय के लोग शिया सम्प्रदाय के लोगों से बहुत नफरत करते थे। सुल्तान फ़िरोजशाह तुग़लक तो शिया सम्प्रदाय का इतना अधिक विरोधी था कि उनकी धार्मिक पुस्तकों को सार्वजनिक रूप से जलवा दिया करता था,उन्हें राजकीय नौकरी पर नहीं रखा, किसी भी सुल्तान ने ईरानी शियाओं को महत्वपूर्ण एवं उत्तर-दायित्व पदों पर नहीं नियुक्त किया। इसी कारण शिया लोग सदैव सुन्नी शासकों से घृणा करते थे।[2]

---

1 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 295-96.

2 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 298.

हिन्दू धर्म प्रचार पर प्रतिबन्ध

इस्लामी राज्य के अन्तर्गत हिन्दुओं को यह अधिकार नहीं था कि वे अपने धर्म का प्रचार ऐसा करें कि जिससे मुसलमानों का क्रोध जागृत हो जाय। उन्हें किसी मुसलमान को हिन्दू बनाने की भी छूट नही थी।[1] इस्लाम मुसलमानों को हिन्दू बनने की और इस्लाम स्वीकार कर लेने वाले हिन्दुओं को पुनः हिन्दू हो जाने की अनुमति नहीं देता था। मुसलमानों को इस्लाम से विमुख करने वालों को मृत्यु दण्ड दिया जाता था। हिन्दुओं में अगर किसी हिन्दू को उसकी जाति से एक बार भी निकाल दिया जाता था तो उसे पुनः हिन्दू धर्म में लौटने की अनुमति नहीं थी। इसलिये मुसलमानों से अलग रहने के लिये उन्होंने अपने धार्मिक नियमों और विधानों को कठोर बना लिया था। हिन्दुओं में अनेक जातियां और उपजातियां बन गयी थीं। उनमें छोटे और बड़े का भेदभाव अपनी चरम सीमा पर पहुंच गया था। इसी कारण हिन्दू समाज में उच्च जाति के लोग निम्न जाति के लोगों को घृणा की दृष्टि से देखा करते थे।[2]

अगर कोई हिन्दू इस्लाम धर्म स्वीकार कर लेता था और उसके बाद फिर वह इस्लाम धर्म त्याग कर हिन्दू धर्म स्वीकार करना चाहता था तो उसे मृत्यु दण्ड दिया जाता था। सिकन्दर

---

1 द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 618.

2 डॉ० ईश्वरी प्रसाद : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 40.

ने हजारों हिन्दुओं को मुसलमान बना लिया था जिन्होंने अपना धर्म परिवर्तन नहीं किया उन्हें राज्य से निकाल दिया था। बंगाल के जलालुद्दीन [1414-1430 ई0] ने भी सैकड़ों हिन्दुओं को जबरजस्ती मुसलमान बना लिया था और जो बाकी बचे रहे थे उन पर खूब अत्याचार किया था। दिल्ली के सुल्तानों में फ़िरोजशाह तुग़लक और सिकन्दर लोदी भी ऐसे ही शासक थे जिन्होंने हिन्दुओं पर कड़े अत्याचार किये और बहुत से हिन्दुओं को मुसलमान बना लिया।[1]

जो हिन्दू इस्लाम धर्म स्वीकार कर लेते थे उन्हें मुसलमान के रूप में कुछ सुविधाएं दी जाती थीं, लेकिन वे पुराने मुसलमानों की तुलना में कम प्रतिष्ठित समझे जाते थे। उनकी गिनती भारतीय मुसलमान के रूप में होती थी। विदेशी मुसलमान श्रेष्ठ समझे जाते थे।[2] हिन्दुओं की स्थिति के बारे में के0 एम0 पणिक्कर ने लिखा है कि "मुसलमान विजेताओं द्वारा पाराक्रांत क्षेत्रों के हिन्दुओं में उदासीनता छा गयी थी। राजनीतिक सत्ता मुस्लिम शासकों के हाथ में होने के कारण कोई भी जाति गौरव और आत्म-सम्मान अनुभव नहीं करती थी राजनीतिक पद उनसे कोसों दूर थे। वे ऊँचे पदों से वंचित थे। शासक वर्ग उनके साथ समानता का बर्ताव नहीं करता था और उनपर विभिन्न प्रकार के कर लगाये जाते थे।

---

1 डॉ0 ईश्वरी प्रसाद : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 40.

2 रामचन्द तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 11.

इस्लाम धर्म परिवर्तन करने के लिये उन्हें अनेक प्रलोभन दिये जाते थे। जो हिन्दू इस्लाम का आलिंगन करने को तैयार हो जाते थे उनके लिए सब कुछ सुलभ था"।[1]

धार्मिक नीति

तुगलक वंश की धार्मिक नीति में अपनी पहचान स्थापित करने वाले शासकों में मुहम्मद बिन तुग़लक और फ़िरोजशाह तुग़लक का नाम प्रमुखता से आता है। एक उदारवादी था तो दूसरा धर्मान्ध। परवर्ती तुग़लक शासकों की अपनी तरह तरह की अनगिनत समस्याएं थी जिससे वे धार्मिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में कोई योगदान नहीं दे सके। न वे शरीयत का कड़ाई से पालन करवाने की दिशा में सोचने के लिए समय पाये और नाही उनमें ऐसी कोई विशेष योग्यता थी कि वे मुहम्मद बिन तुगलक या फ़िरोजशाह तुग़लक बनते। सैय्यद शासकों ने पारम्परिक धार्मिक नीति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं किया। वे भी साधारण स्तर के ही शासक थे। अधिकतर शान्ति व्यवस्था के मामलों में उलझे रहे।

बहलोल लोदी

बहलोल लोदी अपने धर्म में पूरी निष्ठा रखता था किन्तु अपने पुत्र एवं उत्तराधिकारी सिकन्दर लोदी की तरह धर्मान्ध नहीं था।[2] वह

---

1 के0एम0 पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 134-35.

2 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : द सल्तनत ऑफ देलही, पृष्ठ 236.

बड़ा पवित्र जीवन व्यतीत करता था, खुदा से बहुत डरता था, ख्वाहिश, आरजू और बुरी चीजों से दूर रहता था।[1] वह कभी शरा के विरुद्ध कोई कार्य नहीं करता था। गरीब अमीर बड़े-बूढ़े, जवान सबके साथ बड़ा सौजन्यपूर्ण व्यवहार करता था[2]। वह पाँचों समय की नमाज जमाअत के साथ पढ़ता था। रणक्षेत्र में शत्रु की सेना को देखकर शीघ्र ही घोड़े से उतरकर अल्लाह से इस्लाम धर्म एवं मुसलमानों की रक्षा के लिये प्रार्थना करता था।[3]

दोपहर की नमाज के समय वह उलमा की संगत में बैठा करता था या कुरान पढ़ने तथा सामूहिक रूप से प्रार्थनाएं करने में अपना समय

---

1 ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद: तबक़ाते अकबरी - 299 अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1 पृष्ठ 201. अबुल हमी : तारीख-ए-फरिश्ता, 538 हबीब निज़ामी: दिल्ली सल्तनत, भाग 1 पृष्ठ 585.

2 इलियट एवं डाउसन: भारत का इतिहास, भाग 4 पृष्ठ 330, अब्दुल हमी: तारीख-ए-फरिश्ता, पृष्ठ 538 शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताकी: वाक़ेआते मुश्ताकी पृष्ठ-9 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग - 1, पृष्ठ 97 हबीब निज़ामी: दिल्ली सल्तनत, भाग-1, पृष्ठ 585.

3 अब्दुल्लाह: तारीख़े दाऊदी - पृष्ठ 11 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग -1, पृष्ठ 245 शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताकी: वाक़ेआते मुश्ताकी, पृष्ठ 10, अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 245-97. आशीर्वादी लाल : दिल्ली सल्तनत - पृष्ठ 232.

व्यतीत करता था। रात की नमाज पढ़ने के बाद ही हरम में जाता था। बहलोल लोदी मुसलमान सूफी सन्तों, विद्वानों, उल्माओं का बड़ा आदर करता था और प्रचुर मात्रा में धन दान दिया करता था[1] सूफी सन्तों के मजारों पर दर्शन करने और दुआये माँगने भी जाया करता था। जब जौनपुर के सुल्तान हुसैन ने दिल्ली पर आक्रमण किया तो बहलोल लोदी ने विजय प्राप्त करने के उद्देश्य से कुतुब आलम ख्वाज़ा कुतबुद्दीन के शुभ मकबरे में जाकर रात भर नंगे सिर खड़े होकर विजय प्राप्ति के लिए दुआँ माँगता रहा। तभी सूर्योदय के पूर्व एक व्यक्ति परोक्ष रूप से प्रकट हुआ उसने सुल्तान बहलोल के हाथ में एक डण्डा दिया और कहा कि " जा ये थोड़ी सी भैसें जो आ गयी है उन पर इसकी सहायता से सवारी कर" अन्त में बहलोल विजयी हुआ।[2]

बहलोल लोदी ने केवल अफ़गानों को ही उच्च पदों पर नियुक्त किया था।[3] हिन्दुओं के साथ भी बहलोल लोदी ने मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध

----

1 ए0वी0पाण्डेय: मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 49, हबीब निज़ामी: दिल्ली सल्तनत भाग-1, पृष्ठ 585, ए0एल0 श्रीवास्तव, द सल्तनत ऑफ देलही, पृष्ठ 236.

2 शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी: वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ -11, अनुवादक सैय्यद अतहर-अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ-97, अहमद यादगार: तारीख़े शाही, पृष्ठ-16 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 314-15.

3 अब्दुल हलीम: हिस्ट्री ऑफ लोदी सुल्तान देहली एन्ड आगरा, पृष्ठ 52 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 232.

बनाये रखा। भारी संख्या में हिन्दू जमींदारों को अपना सहयोगी बनाया जैसे रायकरन, रायप्रताप, रायवीरसिंह, रायत्रिलोकचन्द्र, रायधंघू, को अपना विश्वास पात्र बनाया। जिसमें रायकरन उसका विशेष प्रेमपात्र था। इसके अलावा ग्वालियर के राजा कीर्तिसिंह और मानसिंह से बहलोल लोदी के मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध थे। बहलोल लोदी ने एक हिन्दू महिला के साथ विवाह किया और विशुद्ध अफगान रक्तधारी पुत्र-पौत्रों के होते हुये भी हिन्दू महिला से उत्पन्न पुत्र को अपना उत्तराधिकारी बनाया था।[1]

सिकन्दर लोदी

सुल्तान सिकन्दर लोदी बड़ा ही धार्मिक, एवं पवित्र जीवन व्यतीत करने वाला विद्वान, एवं सच्चा आलिम था। वह हमेशा मज़हब और शरा के नियमों का पालन करता। अपना अधिकांश समय आलिमों और विद्वानों के साथ व्यतीत किया करता था। सिकन्दर लोदी ने अपने सम्पूर्ण शासन काल में इस्लाम को बड़ा सम्मान दिया[2], उलूम और फलूम को बढ़ावा दिया, और सरपरस्ती दी।[3]

---

1 हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग-1, पृष्ठ 585. ए0वी0पाण्डेय: मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ - 49.

2 अब्दुल हयी: तारीख-ए-फरिश्ता, 551. ख्वाज़ा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, 320 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 215.

3 अब्दुल हयी: तारीख-ए-फरिश्ता, 551.

सिकन्दर की धार्मिक नीति एक धर्मान्ध मुसलमान की सी थी। वह इस्लाम धर्म का कट्टर पक्षपाती था। हिन्दुओं को उससे घृणा थी जबकि स्वयं एक सुनार स्त्री का पुत्र था। शासन चलाने में उल्माओं की राय लिया करता था।वह उलमा के प्रभाव में था।[1] इसी के अनुसार शासन सम्बन्धी कार्य किया करता था। हिन्दुओं पर अत्याचार किया और मूर्तिपूजा को देश में खत्म करना चाहा। सिकन्दर का अपने धर्म के प्रति इतना अधिक उत्साह था कि एक बार उसने आदेश दे दिया कि मथुरा के समस्त मन्दिर तोड़ दिये जायें।[2] उसके इस एक आदेश से समस्त मन्दिर गिरा दिये गये। उसके चिन्ह भी कही शेष नहीं रहने दिया। क्योंकि मथुरा का मन्दिर कुफ्र का केन्द्र था। हिन्दू इस मन्दिर में पूजा करते थे। मन्दिर की मूर्तियों को तुड़वाकर उसके टुकड़े कसाइयों को मांस तौलने के लिये दे दिया। मन्दिर के स्थान पर सराय, बाजार और मस्जिद तथा मदरसे बनवाये। मथुरा में जो नदी थी वहाँ हिन्दू स्नान करते थे, नदी पर स्नान करने पर पाबन्दी लगा दी। वहाँ पर पुलिस अधिकारी को इस कारण नियुक्त किया ताकि वे वहाँ किसी हिन्दू को स्नान न करने दे। उस नदी के किनारे कोई हिन्दू न तो अपना सिर मुंडवा सकता था न ही दाढ़ी बनवा सकता था। ये सिकन्दर का सख्त आदेश था। अगर कोई हिन्दू अपना सिर एवं दाढ़ी मुडवाना चाहता

---

1 द देहली सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 608.

2 अब्दुल हलीम : हिस्ट्री ऑफ लोदी सुल्तान देहली एन्ड आगरा, 118.
ए0बी0 पाण्डेय: द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 250.

था तो कोई भी नाई काटने को तैयार नहीं होता था।[1]

एक कहानी प्रचलित है कि एक हिन्दू तीर्थ यात्री ने मथुरा में एक मुसलमान को रिश्वत दिया, कि वह उसे नदी में स्नान करने दे। तब मुसलमान ने कहा कि वो पागल बन जाये। जब वह पागल बन गया तो मुसलमानों ने उसके सारे कपड़े उतार दिये रस्सी में उसे बांधकर कोड़े मारा, फिर नदी में फेंक दिया ताकि इसका दिमाग ठीक हो जाये। हिन्दुओं को एक नीला कपड़ा अपने कन्धे पर बॉधना पड़ता था ताकि यह पता चले कि वे हिन्दू हैं।[2]

---

1 इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग-4, पृष्ठ 339. अब्दुल्लाह : तारीख़े-दाऊदी, पृष्ठ 37 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, पृष्ठ-260, ख्वाज़ा निज़ामुद्दीन अहमद: तबक़ाते अकबरी, 336.337 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूल कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 227-28, अबुल हलीम: हिस्ट्री ऑफ लोदी सुल्तान देहली एन्ड आगरा, 118. एल0 पी0शर्मा: भारत का इतिहास, 187-88, शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी: वाक़ेआते मुश्ताक़ी, 14 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 102. ईश्वरी प्रसाद : ए शार्ट हिस्ट्री ऑफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, 221.

2 अब्दुल हमी: तारीख-ए-फरिश्ता, 551. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद: तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 320 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 215.

सिकन्दर लोदी ने बाल्यावस्था में जब वह शाहजादा था तब उसने सुन रक्खा था कि थानेश्वर ‡कुरूक्षेत्र‡ में एक कुण्ड है जहाँ हिन्दू एकत्र होकर स्नान करते थे। सिकन्दर वहाँ जाकर सबको मार डालना चाहता था। सुल्तान सिकन्दर के एक दरबारी ने सलाह दी कि ऐसा करने से पहले किसी विद्वान से परामर्श करना अधिक अच्छा होगा। तब सुल्तान सिकन्दर ने विद्वानों को एकत्र किया और उनके मुखिया से जिसका नाम मियाँ अब्दुल्ला था और जो अजोधनी का रहने वाला था सुल्तान ने इस बारे में प्रश्न किया कि इस स्थान पर क्या है? ‡थानेश्वर में‡ है। तब अब्दुल्ला ने कहा कि "वहाँ एक तालाब है जिसमें काफिर लोग करीब 1,000 वर्षों से स्नान करते आ रहे हैं। तब सुल्तान ने पूछा कि "ये लोग कब से ऐसा करते आये हैं?" अब्दुल्लाह ने उत्तर दिया " यह प्राचीन प्रथा है"। तब सुल्तान ने पूछा कि पहले के मुसलमान सुल्तान क्या करते आये हैं। इसके विषय में शरा का क्या नियम है। तब अब्दुल्ला ने उत्तर दिया कि उसके पहले के शासकों ने हिन्दुओं को कभी नहीं सताया। तब अब्दुल्ला ने सुल्तान से कहा कि "प्राचीन मन्दिर को तोड़ना बहुत अनुचित होगा और उसको चाहिये कि इस तालाब में हिन्दुओं को स्नान करने से न रोके। इस कुण्ड में प्राचीन काल से स्नान करने की प्रथा चली आ रही है तब शहजादे ने कटार निकाली और अब्दुल्ला की हत्या करने का संकल्प करते हुये कहा कि -"तुम काफिरों का पक्ष लेते हो"। मैं पहले तुम्हें समाप्त करूँगा और फिर कुरूक्षेत्र में काफिरों का वध करूँगा। मियाँ अब्दुल्ला ने कहा, प्रत्येक व्यक्ति का जीवन ईश्वर के अधीन है। उसके आदेश के बिना कोई मर नहीं सकता हैं। जो कोई भी व्यक्ति किसी

आत्याचारों के सामने प्रवेश करता है तो उसे पहले ही मृत्यु के लिये तैयार होकर आना चाहिए।[1] फिर जो कुछ शरा में लिखा है उसे मैंने आपसे कह दिया और सत्य बात कहने में कोई भय नहीं। फिर जब आपने मुझसे पूछॉ तो मैंने पैगम्बर के उपदेशों के अनुसार उत्तर दे दिया। यदि आप उसका आदर नहीं करते तो पूछॅने से क्या लाभ"। सुल्तान सिकन्दर लोदी क्रोधित होकर थोड़ा शान्त हुआ और सुल्तान ने अब्दुल्ला से कहा कि "यदि तुम मुझे यह कार्य करने की अनुमति दे देते तो इसमें कई हजार मुसलमानों की स्थिति अच्छी हो जाती"। मियॉ अब्दुल्लाह ने उत्तर दिया "कि मुझे जो कुछ कहना था वह मैंने कह दिया अब्दुल्लाह ने उत्तर दिया "तुम मेरे इरादों को जानते हो जो कुछ मैं कहता हूँ वह प्रगत्भता से प्रेरित होकर कहता हूँ या तो तुम सलाह मानो या परेशान होते रहो" तब सुल्तान सभा से उठा और चलागया। पर अब्दुल्लाह अपने स्थान पर खड़ा रहा। तब सुल्तान ने अब्दुल्लाह से कहा कि कभी-कभी मिला करों फिर उसे भी जाने की अनुमति दी।[2] सुल्तान ने थानेश्वर में हिन्दुओं की

---

1 अब्दुल्लाह : तारीखे़ दाऊदी, पृष्ठ 29-30. अनुवादक सैययद अतहर अब्बास रिज़वी:उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 255-56.

2 शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताकी: वाक़ेआते मुश्ताक़ी-16 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 108 अब्दुल्लाह: तारीखे़ दाऊदी- 30 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत भाग-1, पृष्ठ 255-56, इलियट एवं डाउसन: भारत का इतिहास भाग-4, पृष्ठ 333-34, हबीब निज़ामी: दिल्ली सल्तनत भाग-1, पृष्ठ 596, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव: दिल्ली सल्तनत -235, अहमद यादगार: तारीखे़ शाही, पृष्ठ 31 - अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत भाग-1, पृष्ठ 322.

धार्मिक परम्पराओं में हस्तक्षेप किया और कहा कि इस्लाम ऐसे हस्तक्षेप की अनुमति नहीं देता। परन्तु जब सिंहासन पर बैठा तो उसके मूर्तिभंजक धर्मोत्साह ने नगर कोट के मन्दिर को तुड़वा दिया जिसने समस्त संसार वालों को मार्ग भ्रष्ट कर दिया था। मूर्ति को तोड़कर कसाइयों को मांस तौलने को दिया। मन्दिर के स्थान पर विभिन्न व्यवसाय करने वाले जैसे कसाईयों, बावर्चियों, तथा शीरा बनाने वालों की दुकानें खुलवा दी।[1]

शरीयत को मानकर उसने हिन्दुओं को नये मन्दिर बनवाने और पुराने मन्दिरों की मरम्मत करवाने की भी आज्ञा नहीं दी थी। न केवल हिन्दुओं के मन्दिर सैनिक अभियान के समय ही तोड़े गये, बल्कि शान्तिकाल में भी मन्दिर गिराये गये थे और मूर्तियों को तोड़ा गया था। इस कारण कुछ हिन्दुओं ने मूर्तियों को भूमि के नीचे छिपा दिया था। सिकन्दर ने मथुरा मन्दैल, उत्तगिर, नरवर चन्देरी आदि स्थानों

---

1 ख्वाज़ा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी - 336. अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत भाग-1, पृष्ठ 228. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग - 4, पृष्ठ 339. अब्दुल्लाह: तारीखे़ दाऊदी 37-38. अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत भाग-1, पृष्ठ 260-261. अहमद यादगार: तारीखे़ शाही - 47 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत भाग-1, पृष्ठ 33। आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 235. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग-1, पृष्ठ 596.

के भी मन्दिर गिरवाये थे।[1] 1505 ई0 को जब धौलपुर को विजय किया तब वहाँ पर मन्दिरों को गिरवाकर मस्जिदें बनवाई, ग्वालियर को जब विजय किया तब वहाँ के मन्दिरों को गिरवाकर वहाँ पर भी मस्जिदें बनवाई। जौनपुर में जो-जो मन्दिर बने थे उसे भी तोड़ने का आदेश दिया जब उल्माओं ने मना किया तब माना।[2]

उसके सम्पूर्ण शासन काल में किसी हिन्दू की इतनी हिम्मत नहीं थी कि कही पर मन्दिर का निर्माण करे और मूर्ति की पूजा करे और नदी में नहाने का साहस करे।[3] उसने कुफ्र की प्रथायें जो खुल्लम खुल्ला

---

1 अहमद यादगार : तारीखेशाही - 47 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 331. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताकी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी : हस्तलिखित प्रति - 15. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत - पृष्ठ 235. अब्दुल हलीम: द हिस्ट्री ऑफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा - 118.

2 एल0पी0 शर्मा: भारत का इतिहास - 188.

3 अहमद यादगार: तारीखे शाही - 47 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 331. मुहम्मद कबीर बिन शेख़ इस्माईल : अफ़सानमे शाहान 38 अ अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी :उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग - 1 - 382.

सम्पन्न होती थी उसे पूर्णतया बन्द करवा दिया था। सिकन्दर लोदी ने सालार मसऊद   का जुलूस तथा बहराइज का जुलूस जो प्रत्येक वर्ष निकाला जाता था उसे बन्द करवा दिया और शीतला देवी की पूजा बन्द करवा दी जो अन्धविश्वास के कारण चेचक की देवी मानी जाती थी।

मुसलमान स्त्रियों को सन्तों के मजारों और मकबरों पर जाने से मना करवा दिया।[1] जबकि स्वयं मजारों पर दर्शन करने जाता था। 1496 ई0 को शेख़ शरफ मुनौरी की मज़ार जो बिहार में थीं उसका दर्शन करने गया था[2] सुल्तान ने मुहर्रम के दिनों में ताज़िया निकलना बन्द करवा दिया था। वह समस्त मुसलमान बादशाहों के साथ भाई जैसा व्यवहार करता

---

1 अब्दुल्लाह : तारीखे़ दाऊदी 38 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 261. ख्वाज़ा निज़ामुद्दीन अहमद: तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 336 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत भाग-1, पृष्ठ 227. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग-4, पृष्ठ 340. एल0पी0 शर्मा: भारत का इतिहास, पृष्ठ 187 हवीव निज़ामी : दिल्ली सल्तनत भाग-1, पृष्ठ 595-96. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताकी : वाक़ेआते मुश्ताकी: 15 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत भाग- 1, पृष्ठ 104. अब्दुल हलीम: हिस्ट्री ऑफ लोदी सुल्तान देहली एवं आगरा, पृष्ठ 121.

2 ख्वाज़ा निज़ामुद्दीन अहमद: तवक़ाते अकबरी पृष्ठ 320 अनुवादक - सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1 पृष्ठ 215. अब्दुल हलीम: हिस्ट्री ऑफ लोदी सुल्तान देहली एन्ड आगरा, पृष्ठ 121.

था। एक दूसरे के पास पत्र भेजा करता था।[1]

सुल्तान सिकन्दर लोदी ने इस्लाम धर्म को बढ़ावा देने के लिए राज्य भर में मस्जिदें बनवाई, वहाँ एक मेहतर, एक इमाम, एक पाठक को नियुक्त किया। इन सबको समय-समय पर वेतन दिया जाता था[2] और आदेश दिया कि प्रत्येक नगर में इस्लाम धर्म की प्रथाओं का पालन हो। प्रत्येक मुहल्ले की मस्जिदों में पाँचों समय की नमाज़ पढ़ी जाये।

इस आदेश से प्रत्येक मुहल्ले में इस्लाम धर्म की प्रथाओं का पालन होने लगा। प्रत्येक मुहल्लें की मस्जिद में पाँचों समय की नमाज़ अदा की जाने लगी।[3] सुल्तान स्वयं पाँचों समय की नमाज जमाअत के साथ पढ़ता

---

1 शेख़ रिज़्जकुल्लाह मुश्ताकी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी पृष्ठ 15 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत भाग-1, पृष्ठ 104.

2 इलियट एवं डाउसन: भारत का इतिहास, भाग-4, पृष्ठ 338. ख्वाज़ा निज़ामुद्दीन अहमद: तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 336 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 228. अब्दुल हमी: तारीख़-ए फरिश्ता, पृष्ठ 551.

3 अब्दुल्लाह: तारीख़े दाऊदी पृष्ठ 37, अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिजवी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 261, शेख़ रिज़्जकुल्लाह मुश्ताकी: वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 14, अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 102-103.

था[1] इसके अलावा वह अत्यधिक नवाफिल पढ़ता था। तहज्जुक पाश्त, और इशराक की नमाज़ कभी नहीं त्यागता था।[2] जुमें की नमाज़ पढ़ने मस्जिद में अवश्य जाता था[3] इस्लाम को बड़ी उन्नति प्राप्त हो गई थी। मस्जिदों में अब रौनक रहने लगी थी। प्रत्येक घर चाहे वह अमीर का हो या किसी साधारण व्यक्ति का, इल्म की चर्चा हुआ करती थी।[4]

---

1 शेख़ रिज़्जकुल्लाह मुश्ताकी : वाक़ेआते मुश्ताकी,पृष्ठ,10 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 98. मुहम्मद कबीर विन शेख़ इस्माईल: अफ़सानये शाहान,पृष्ठ38 अ अनुवादक सैय्यद अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 382.

2 मुहम्मद कबीर बिन शेख़ इस्माईल: अफ़सानये शाहान: 38 अ ।अनुवादक। सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 382. अब्दुल्लाह: तारीख़े दाऊदी 37 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ. 261.

3 मुहम्मद कबीर बिन शेख़ इस्माईल: अफ़सानये शाहान,पृष्ठ28 अ अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 375.

4 शेख़ रिज़्जकुल्लाह मुश्ताकी : वाक़ेआते मुश्ताकीपृष्ठ4 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, पृष्ठ 103, अब्दुल्लाह: तारीख़े दाऊदी - 37 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत भाग 1, पृष्ठ 261.

यात्री तथा विद्यार्थी मस्जिद और जमाअत खानों में सुख और शान्ति से रहते थे। अमीर और सिपाही विद्याध्ययन और ईश्वर की उपासना में व्यस्त रहते थे।[1] सुल्तान सिकन्दर लोदी के शासन काल में अगर कोई हिन्दू इस्लाम धर्म स्वीकार कर लेता था, तो उसे इस्लाम धर्म की शिक्षा दी जाती थी। नमाज़ पढ़ना सिखाया जाता था। सुल्तान की सेवा में उसे उपस्थित किया जाता था। सुल्तान विलायत में उसे स्थान देता था, उसे वस्त्र, धन, जमीन, अन्य उपहार भी प्रदान करता था यदि वो अपने घर जाना चाहता था तो उसे आने-जाने का खर्च दिया जाता था अगर वह राज्य में रहकर नौकरी करना चाहता था तो उसके तन्के निश्चित कर दिये जाते थे जो उसे हर महीने वेतन के रूप में दिये जाते थे। जो हिन्दू विद्रोह करता था उसे राज्य का शत्रु समझकर या तो उसे विलायत से निकाल दिया जाता था या उसकी हत्या करवा दी जाती थी।[2]

सिकन्दर लोदी के शासन काल में एक चोर था। जिसने एक

----

1 शेख़ रिज़्लकुल्लाह मुश्ताकी: वाक़ेआते मुश्ताकी,पृष्ठ,14 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 102-03.

2 शेख़ रिज़्ज़कुल्लाह मुश्ताकी: वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 26 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1,पृष्ठ,113. इलियट एवं डाउसन: भारत का इतिहास, भाग-4, पृष्ठ 217-18 . डॉ0 रत्न चन्द्र शर्मा: मुगल कालीन सगुण भक्ति काव्य का सांस्कृतिक विश्लेषण, पृष्ठ 69. डब्लू0 एच0 मोरलैण्ड: मुस्लिम भारत की ग्रामीण व्यवस्था, पृष्ठ 104.

घोड़ा चुराया था। उसे 7 वर्ष जेल में बन्द रखा गया। 7 वर्ष बाद सुल्तान ने उससे पूछा कि " यदि वह इस्लाम स्वीकार कर ले तो उसे मुक्त कर दिया जायेगा" तब चोर ने कहा, "कि यदि दास को 7 दिन उपरान्त भी इस्लाम स्वीकार करने का आदेश होता तो वह इस्लाम स्वीकार कर लेता अब तो 7 वर्ष बीत गये है वह स्वयं अपनी इच्छा से मुसलमान होता है।" तब सुल्तान ने आदेश दिया कि बन्दीगृह से निकाला जाये फिर उसे बन्दीगृह से निकाला गया। इस्लाम की शिक्षा दी गयी उसका खतना कराया गया नमाज़ पढ़ना सीखाया गया, उसे सुल्तान ने वस्त्र तथा 15 तन्के दिया और कहा कि अगर जाना चाहे तो मार्ग व्यय दिया जाय अगर न जाना चाहें तो उसे इतने ﴾15 तन्के﴿ हर महीने प्राप्त होते रहेंगे।[1] चोर ने जाने से इन्कार कर दिया। सुल्तान हिन्दू धर्म का इतना कट्टर विरोधी था कि अगर कोई व्यक्ति इस्लाम धर्म की निन्दा करता और हिन्दू धर्म को श्रेष्ठ बताता था तो उसे सुल्तान मृत्यु दण्ड दिया करता था उसका उदाहरण निम्न है।

सुल्तान सिकन्दर लोदी के समय लोधन नामक एक ब्राह्मण था जो कनेर नामक गॉव का निवासी था। एक दिन उसने मुसलमानों के समक्ष यह बात कही कि "इस्लाम भी उतना ही सच्चा धर्म है जितना स्वयं उसका हिन्दू धर्म[2] उसके इस कथन का चारों ओर बड़ा शोर हुआ। यहॉ

---

1 अब्दुल्लाह: तारीखे़ दाऊदी,पृष्ठ,38, अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 260.

2 अब्दुल हलीम: हिस्ट्री ऑफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा - 119-20. इलियट एवं डाउसन: भारत का इतिहास, भाग-4, पृष्ठ 353.

तक कि ये बात उलमाओं के कानों तक पहुंच गयी। लखनौती के निवासी काज़ी प्यारा और शेख़ बुद्ध ने एक दूसरे के विरूद्ध फ़तवे दिये। उन्होंने ऐसा फ़तवा दिया जिसका इस मामलों से मिलान नहीं होता था। तब इस जिले के फ़ौजदार आज़म हुमायूँ ने उस ब्राह्मण, काज़ी और शेख़ बदर को सुल्तान की सेवा में सम्भल भेजा। क्योंकि सुल्तान को धार्मिक प्रश्नों की बहस करने में बड़ा मजा आता था। सुल्तान ने प्रत्येक दिशा से प्रतिष्ठित आलिमों को बुलाया। जिसमें मुख्य थे - मियॉ क़ादन बिन शेख़ खुजू, मियॉ अब्दुल्लाह बिन अलहदाद तुलम्बी, सैय्यद मुहम्मद बिन सईद खाँ, ये लोग दिल्ली से आये थे। तथा सरहिन्द से मुल्ला कुतुबुद्दीन मुल्ला अलहदार, तथा सालेह आये। और कन्नौज से सैय्यद अमान मीरान सैयिद अरखन आये। बहुत से आलिम जो हमेशा सुल्तान के साथ रहते थे वो निम्न थे - सैय्यद सदुद्दीन कन्नौज़ी, मियॉ अब्दुर्ररहमान, मियॉ अज़ीजुल्लाह भी वाद-विवाद के लिए उपस्थित हुये। अन्त में वाद-विवाद के बाद यह तय हुआ कि उसे बन्दीगृह में डालकर इस्लाम की शिक्षा दी जाय, यदि वह इस्लाम स्वीकार न करे तो उसकी हत्या कर दी जाय। लोधन ने इस्लाम स्वीकार न किया इस कारण बाद में उसकी हत्या कर दी गई।[1] सुल्तान ने उपर्युक्त आलियों को ईनाम देकर उनके स्थानों पर

---

1 ख्वाज़ा निज़ामुद्दीन अहमदः तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 323 अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वीः उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग-1, पृष्ठ 217-18. इलियट एवं डाउसनः भारत का इतिहास, भाग-4, पृष्ठ 353-54. डॉ0 रत्न चन्द शर्माः मुगल कालीन सगुण भक्ति काव्य का सांस्कृतिक विश्लेषण, पृष्ठ 69. अब्दुल हलीमः हिस्ट्री ऑफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 119-20.

भेज दिया।

सिकन्दर लोदी एवं कबीर

कबीर ने हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों को एक ही ईश्वर की सन्तान बताकर तथा निराकार ईश्वर की उपासना करने का एक ऐसा प्रयास किया जिससे कि दोनों सम्प्रदायों में कटुता की भावना खत्म हो जाये। सिकन्दर लोदी का कबीर से धार्मिक विचारों के मामले में गहरा मतभेद था। उसने कबीर को उत्पीड़ित करना प्रारम्भ किया। एक कहानी मिलती है कि बेड़ियों में जकड़कर कबीर को नदी में फेंक दिया गया। परन्तु जिस कबीर को मायामोह की श्रृंखला न बांध सकी उसे जंजीर कैसे बांध सकती थी। वे तैरते हुये नदी के किनारे आ गये। फिर एक काज़ी ने कबीर को धधकते हुये अग्निकुण्ड में डलवाया। पर कबीर के प्रभाव से आग बुझ गयी, कबीर के दिव्य देह पर आग की आंच तक न आयी, फिर कबीर को मारने के लिए एक मस्त हाथी छोड़ा गया। वो भी कबीर के पास आकर उन्हें मस्तक नवाता हुआ वापस आ गया।[1] अब्दुल हलीम के अनुसार इससे यह प्रतीत होता है कि यह कहानी निराधार है किसी भी फारसी इतिहासकार ने इसका उल्लेख नहीं किया है।[2]

---

1 विजयेन्द स्नातक : कबीर पृष्ठ,16 डॅा० सविित्री शुक्ला: संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि,पृष्ठ,38-39 परशुराम चतुर्वेदी : कबीर साहब सिद्धान्त और साधना,पृष्ठ,115.

2 अब्दुल हलीम: हिस्ट्री ऑफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा,पृष्ठ,120.

चूंकि एक हिन्दू(सुनार) मां के गर्भ से जन्म लेने के कारण अफ़गान सुल्तान को नापसन्द करते थे इसलिये उसने मुसलमानों का समर्थन पाने तथा इस्लाम के प्रति अपनी निष्ठा दिखाने के लिये कठोर धार्मिक नीति अपनाई। वह अपने सहपाठियों को यह दिखाना चाहता था कि "मैं पक्का मुसलमान हूँ। किसी भी दृष्टि से उन लोगों से नीचा नहीं हूँ जो शुद्ध अफगान रक्त से उत्पन्न हैं।" इस कठोर धार्मिक नीति अपनाने के कारण जनता के एक विशाल वर्ग की सहानुभूति खो बैठा था।[1]

इतिहासकार टाइटस ने लिखा है कि इस्लाम का प्रसार करने के लिये सिकन्दर ने एक दिन में 1500 हिन्दुओं की हत्या करवा दी थी[2] जहाँ कहीं कोई हिन्दू विद्रोह करता था उन्हें दण्ड देता था। वहाँ के मन्दिरों को गिरवाकर मस्जिदें बनवा देता था। जो कोई हिन्दू उसकी आज्ञा का पालन नहीं करता था उसका वध करवा देता था।[3]

सुल्तान सिकन्दर लोदी सृजक और संग्रहक दोनों था। उसने

----

1 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 235. डॉ0 सवित्री शुक्ला: संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि,पृष्ठ38.

2 टाइटस : इण्डियन इस्लाम, पृष्ठ 11-12.

3 डॉ0 सवित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 39-79, त्रिलोकी नारायण दीक्षित : संत दर्शन, पृष्ठ 167.

मन्दिरों को तुड़वाया और मस्जिदें, विद्यालय, सराय बनवाये। पर सुल्तान महमूद गजनवी की तरह तोड़ने में किसी जाति विशेष का ध्यान नहीं रखता था। उसका दुश्मन होना ही उसकी बड़ी अयोग्यता थी। उसने धौलपुर के बागों को जड़ से उखड़वा दिया था जो कि 14 मील के कोष में फैले हुये थे। ग्वालियर, धौलपुर, कनताप, रीवॉ में बहुत तहस नहस किया। उसने शर्की राज्य की राजधानी जौनपुर को खूब लूटा।[1] ऐसा कहा जाता है कि उसने जौनपुर में मस्जिदों की दीवारों में जिसमें से जमी भी शामिल थी उसमें बारूद भरवा दी ताकि उसको ध्वस्त किया जा सके। परन्तु जब मुसलमान विद्वानों ने उसे मना किया कि वे खुदा के घर को तबाह करने में उसका साथ नहीं देंगे, तब वह मान गया।

सुल्तान के चरित्र का सबसे बड़ा कलंक उसकी धर्मान्धता थी। सैनिक यात्राओं के दौरान हिन्दू मन्दिरों का विध्वंस करना और उसके स्थान पर मस्जिदें खड़ी करना, उसने एक नियम बना लिया था। हिन्दू धर्म को कुचलने और इस्लाम धर्म का उत्थान करने के लिये उसने हर सम्भव प्रयत्न किया। उसकी अधीनता में दिल्ली सल्तनत इस्लाम के प्रचार का उतना ही सक्रिया साधन बन गया, जितना कि फ़िरोज तुग़लक के समय में था। इसलिये हम कह सकते हैं कि उसकी धार्मिक नीति मूर्खतापूर्ण एवं अत्याचारपूर्ण थी, इससे उसकी हिन्दू प्रजा अप्रसन्न हो गयी थी। स्वयं उसकी सत्ता की जड़ें खोखली हो गयीं।[2]

----

1 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 239.

2 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 239.

परन्तु दूसरी तरफ हम देखते हैं कि उसके शासन काल में हिन्दुओं ने फारसी पढ़ना आरम्भ कर दिया था। उसने हिन्दुओं को राज्य में काफ़ी संख्या में विभिन्न पदों पर नियुक्ति किया था। सिकन्दर लोदी ने राजा मैदचन्द तथा उसके पुत्र शलिवाहन से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित किया था किन्तु स्वयं शालिवाहन ने सुल्तान के साथ अपनी कन्या का विवाह करने से इन्कार कर दिया। तब उसने उसको एकदम बरबाद करने की चेष्टा की। जब तक उसकी शक्ति दुर्बल नहीं कर दी तब तक चैन नहीं लिया। उसने राजा मान और विनायकदेव के प्रति उदारता का व्यवहार किया किन्तु ज्योंही सुल्तान ने अपनी सेना का संगठन कर लिया और अपनी शक्ति दृढ़ कर ली वैसे ही उसने विनायकदेव को निकाल बाहर कर दिया और राजा मान से आजीवन युद्ध करता रहा।[1] अस्तु इससे यह प्रगट होता है कि हिन्दू अनुगतों एवं मित्र राज्यों के प्रति उसका व्यवहार उतना उदार नहीं था जितना कि उसके पिता का रहा था। जब उसने अरैल, जौनपुर, नखर, मंडरैल, अवंतगढ़ को विजय किया तो उसने वहां के मन्दिरों को तुड़वाकर उसके स्थान पर मस्जिदें बनवाईं। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि उसका युद्ध करने का कारण राज्य विस्तार व धर्म प्रचार दोनों ही बातें थीं।

आधुनिक इतिहासकारों में डॉ० के० एस० लाल ने लिखा है कि 15 वीं शताब्दी के अन्त और 16 वीं शताब्दी के आरम्भ तक भारत का धार्मिक वातावरण बदल चुका था। हिन्दू और मुसलमान दोनों धर्म के लोग एक दूसरे के निकट आ चुके थे। भक्ति आन्दोलन प्रारम्भ हो चुका था।

---

1 ए० बी० पाण्डेय: मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 50-51.

जो ईश्वर की समानता पर बल दे रहा था और लोगों के मध्य धार्मिक सहिष्णुता का विचार फैला रहा था। ऐसी स्थिति में सिकन्दर लोदी के धार्मिक कट्टरता के कुछ कार्य बहुत बुरे माने गये हैं। अन्यथा सिकन्दर लोदी का व्यवहार अन्य मुसलमान शासकों की तुलना में अधिक धर्मान्धता का ना था। डॉ० के० एस० लाल के तर्क को स्वीकार करते हुये भी यह कहना अनुपयुक्त नहीं है कि सिकन्दर लोदी ने धर्मान्धता के कार्य किये थे। वे कार्य अपने युग की प्रवृत्ति के विरुद्ध होने के कारण अप्रिय भी समझे गये। ऐसी स्थिति में अपने युग के सहिष्णुता के वातावरण में धार्मिक कट्टरता का परिचय देना एक बहुत बड़ी भूल ही नहीं बल्कि एक दुराग्रह था इस कारण सिकन्दर लोदी को धर्मान्धता के दोष से मुक्त नहीं किया जा सकता है।[1]

अब्दुल हलीम ने बहुत तार्किक निष्कर्ष निकालते हुये लिखा है कि धर्मान्धता और असहिष्णुता उसकी एक मात्र खामियां थी। लेकिन ये सन्देहास्पद है कि उसके द्वारा जारी किये गये हिन्दू विरोध नियमों को मथुरा के बाहर कड़ाई से लादा गया हो। असहिष्णुता उस युग की विशेषता थी और विश्व में 20 वीं शताब्दी में भी धार्मिक सहिष्णुता सीधे तौर पर नही है।[2] अब्दुल हलीम का यह निष्कर्ष सत्य प्रतीत होता है। सिकन्दर लोदी के काल में कबीर का होना ही इस तथ्य की पुष्टि

---

1 डॉ० के०एस० लाल: द ट्वाइलाइट ऑफ दी देहली सल्तनत, पृ.
एल०पी०शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 188.

2 अब्दुल हलीम : हिस्ट्री ऑफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 131.

करता है कि सिकन्दर लोदी पर जितना धर्मान्ध होने का आरोप लगाया गया है वह सत्य नही है।

सिकन्दर लोदी ने अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए तथा विजयों और प्रशासनिक सुदृढ़ता के लिये जहाँ भी आवश्यक हुआ और जितना आवश्यक हुआ, धर्मान्ध या कट्टर होने का स्वांग किया।[1] निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि सिकन्दर लोदी के समय हिन्दुओं की दशा उतनी अच्छी नहीं थी जितनी उसके पिता के समय थी।

इब्राहीम लोदी

इब्राहीम लोदी की धार्मिक नीति उदार थी। इब्राहीम ने राजा विक्रमादित्य के साथ मित्रतापूर्ण व्यवहार बनाये रक्खा। इसी कारण विक्रमादित्य ने इब्राहीम के पक्ष से युद्ध करते हुये अपने प्राण गवांये थे।[2]

डॉ० आशीर्वादी लाल ने मौलाना सुलेमान नकवी और मुहम्मद नाजिम के विचारों का उल्लेख करते हुए लिखा है कि सुल्तानों ने धार्मिक असहिष्णुता तथा धार्मिक अत्याचारों की नीति का अनुसरण नहीं किया। उनका कथन है कि मन्दिर और मूर्तियां केवल युद्धों के दौरान तोड़ी गयी थी और हिन्दू मन्दिरों को मस्जिदों में परिवर्तित किया गया था,

---

1 ए० वी० पाण्डेय: द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 252.

2 ए० वी० पाण्डेय: मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 52-53.
इलियट एवं डाउसन: भारत का इतिहास, भाग-4, पृष्ठ 305.

वह उनका अपमान नहीं था। मूर्तियों को नष्ट करने का उद्देश्य हिन्दुओं को एक ईश्वर में विश्वास दिलाना था। हिन्दुओं को यह बताना था कि ईश्वर एक है और उसकी मूर्ति बनाना पाप है। मन्दिर और मूर्तियों को तोड़ने का दूसरा कारण आर्थिक था। हिन्दुओं ने सुन्दर सुन्दर कलात्मक मन्दिर बनाये थे और उसमें सोने चांदी की मूर्तियां रखवाई थी। उसमें अत्यधिक धन खर्च किया। हिन्दू मन्दिरों में संचित धन होने के कारण मुसलमानों में लालच की भावना पैदा हो गयी थी। इस कारण इन्होंने मन्दिरों को तोड़ा और लूटा, धार्मिक भावना के कारण मन्दिर नहीं तोड़े गये।[1]

कुछ हिन्दू जो आर्य समाजी हैं वे भी मूर्ति की पूजा करने का विरोध करते हैं। मध्ययुग के मुसलमानों ने इन्ही सिद्धान्तों का अनुसरण किया जिसका आर्य समाजी आज प्रचार कर रहे हैं। हमें मिनहाज-उस-सिराज, जियाउद्दीन बरनी, शम्से सिराज-अफीफ और यहिया बिन अहमद सिहरिन्दी आदि तत्कालीन लेखकों के अतिशयोक्तिपूर्ण कथनों पर विश्वास नहीं करना चाहिए, जिन्होंने धार्मिक अत्याचारों, मन्दिरों, मूर्तियों को तोड़ने आदि का वर्णन अपने ग्रन्थों में किया है। क्योंकि ये वर्णन भारत के बाहर के मुसलमानों के लिये लिखे गये थे। इन इतिहासकारों ने केवल प्रतिष्ठा और प्रचार के कारण सुल्तानों के धार्मिक कार्यों को बढ़ा चढ़ाकर लिखा था।[2]

--------::0::--------

---

1 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 297.

2 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 297.

षष्ठम् अध्याय

आर्थिक दशा

अ. ग्रामीण समुदाय

ब. नगरीय समुदाय

स. आयात-निर्यात की स्थिति

आर्थिक दशा

देश की सम्पन्नता और आर्थिक समृद्धि से आकर्षित होकर ही, तैमूर ने भारत पर आक्रमण किया था । तैमूर के आक्रमण से देश की आर्थिक स्थिति बहुत बिगड़ गयी । देश की शस्यश्यामला भूमि विनाश, रक्तपात, नरसंहार एवं महामारी के प्रकोप से ग्रसित हो गयी । तैमूर के आने व जाने के मार्ग के सभी क्षेत्र वीरान हो गए थे । खेती उजड़ गयी थी । अन्नाभाव से अकाल पैदा हो गया था । महामारी भी लोगों को असमय ही काल के गाल में ढकेल रही थी । हिन्दू, मुसलमान, अमीर, गरीब सभी का जीवन अस्त-व्यस्त हो गया था । सभी कष्ट में थे ।[1] काफी समय तक यह स्थिति नहीं सुधरी । 1424 ई0 में भी हिन्दुस्तान के नगरों में घोर अकाल पड़ गया था । पैदावार अच्छी नहीं हुयी । किसानों की आर्थिक दशा बहुत बिगड़ गयी ।[2]

अ. बहलोल लोदी

तारीखे दाउदी के लेखक, अब्दुल्लाह ने अपनी कृति में लिखा है कि सुल्तान बहलोल लोदी के समय जनता की आर्थिक दशा सुधरने लगी थी ।[3] सुल्तान ने दैनिक आवश्यकता की सभी वस्तुओं का मूल्य कम करवा दिया था क्योंकि सैय्यद शासकों

---

1. यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे मुबारकशाही, पृष्ठ 173. अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 3.

2. यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे मुबारकशाही, पृष्ठ 203, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 29.

3. अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 104 (अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 305.)

के समय अकाल के कारण जनता की आर्थिक स्थिति बहुत अधिक खराब हो गयी थी।[1]

सुल्तान बहलोल लोदी के शासनकाल में जनता अत्यन्त ईमानदार थी। गरीब से गरीब व्यक्ति किसी दूसरे की सम्पत्ति लेने की इच्छा नहीं रखता था।[2] इसका उदाहरण निम्न है :- "कहा जाता है कि "बन्दगी मीरान सैयिद हम्ज़ा रसूलदार" हौजे ख़ास अलाई के समीप जो सीरी के कोट के निकट था, वहाँ जा रहा था। उसे ऊँचाई पर एक स्थान दिखायी पड़ा। वहाँ एक प्राचीन क़ब्र बनी थी। जो कई स्थानों पर टूट गयी थी। उस क़ब्र में उसने देखा कि सोने के मुहरों की एक थैली है जो मिट्टी में मिल गयी है और मुहरों के ऊपर मिट्टी जम गयी है। मीरान ने अपने मन में सोचा कि "यदि कोई दरिद्र इधर से निकले तो मैं इन मुहरों को दिखाकर उसे दे दूँ।"[3] अचानक एक वृद्ध और शक्तिहीन लकड़हारा लकड़ी का गट्ठर लादे हुये धूप में नंगे पाँव आया और उस ऊँचाई के समीप छाये में बैठ गया। मीरान ने कहा कि "इस व्यक्ति से अधिक और कोई दरिद्र नहीं होगा।" उसने वृद्ध से कहा कि "यदि ईश्वर तुझे कुछ दे देगा तो उसे तू लेगा या नहीं।" तब उस वृद्ध ने कहा कि "यदि हलाल का होगा तो स्वीकार कर लूँगा।" मीरान ने कहा कि "हलाल का भोजन बड़ा कठिन है।" उसने कहा कि "संभवतः तुम इन

----

1. अब्दुल हयी : तारीख-ए-फरिश्ता, पृष्ठ 538.

2. शेख़ रिज्क़ुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 203, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 194.

3. शेख़ रिज्क़ुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 203, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 194-195.

वस्तुओं के विषय में कह रहे हो जो कि कब्र के भीतर दृष्टिगत हो रही है ।" मीरान ने कहा कि "हाँ" उसने उत्तर दिया कि मैं 7 वर्ष से इसे देख रहा हूँ । मेरा निवास स्थान यही है । मेरे हृदय में कभी यह बात नहीं आयी और मुझे ईश्वर ने इस बात से बचाये रखा । हे मित्र ! धैर्य, साहस तथा सन्तोष सबसे बड़ी चीज है जिसे यह प्राप्त हो जाये, उन्हें किसी अन्य वस्तु की चिन्ता नहीं रहती है । इससे यह स्पष्ट होता है कि बहलोल लोदी के समय लोगों की आर्थिक दशा ठीक थी ।[1]

सिकन्दर लोदी के समय की आर्थिक दशा :

सुल्तान सिकन्दर लोदी के शासन काल में अनाज की पैदावार अच्छी होने के कारण अनाज सस्ता था । सभी चीजें अन्य सामान - सोना चाँदी भी सस्ती थी । सभी लोग उससे लाभ उठा रहे थे क्योंकि अनाज पर से जकात नामक चुंगी हटा दी गयी थी । अन्य असह्य एवं कष्टप्रद व्यापारिक नियन्त्रण भी हटा दिया गया था । इस कारण कम वेतन पाने वाला व्यक्ति भी आराम की जिन्दगी गुजार रहा था ।[2] किसी व्यक्ति को किसी प्रकार का कोई कष्ट नहीं था । यहाँ तक

----

1. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 203, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 194-195.

2. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 15, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 104, अहमद यादगार : तारीख़े शाही, पृष्ठ 48-49, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 332, निज़ामुद्दीन अहमद: तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 230, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 215-216, वन्दना पाराशर : बाबर भारतीय सन्दर्भ में, पृष्ठ 102, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 339, ए०बी० पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़ग़ान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 227.

कि फकीर तथा अत्यन्त दरिद्र लोग भी रास्ते में आते जाते लोगों से कुछ नहीं माँगते थे क्योंकि लोगों के पास धन इतना था कि इन गरीबों के माँगने से पूर्व अमीर लोग उन्हें अपनी इच्छा से काफी धन दे दिया करते थे। एक बहलोली में व्यक्ति दिल्ली से आगरा आ जा सकता था।[1] अगर किसी फकीर की मृत्यु हो जाती थी तो उसके पास से हज़ारों और लाखों की धन सम्पत्ति प्राप्त होती थी जो सुल्तान उसके उत्तराधिकारियों को दे दिया करता था। अगर उसका कोई उत्तराधिकारी नहीं होता था तो उसका समस्त धन फकीरों में बाँट दिया जाता था।[2] न केवल निम्न वर्ग की आर्थिक दशा अच्छी थी बल्कि व्यापारी, व्यवसायी, मध्य वर्ग के सभी लोगों के, उच्च वर्ग के सभी लोगों की दशा अत्यन्त अच्छी थी। समस्त प्रजा बड़े आराम, सन्तोष, सुख सम्पन्नता का जीवन व्यतीत कर रही थी। राज्य में चारों ओर सड़कों में इतनी अधिक शान्ति रहती थी कि यात्रा करते समय चाहे दिन हो या रात उन्हें अपना सामान चोरों डाकुओं के चुराये एवं छीने जाने का भय नहीं रहता था। चोरी, डकैती का कहीं नामोनिशान नहीं था। विद्रोही और

----

1. गजेटियर, पृष्ठ 400.

2. अब्दुल हलीम : द लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 128, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 235, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 335, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 226, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 340, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 63, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 279.

काफिर आज्ञाकारी बन गये थे। अगर कोई शासन का विरोध करता था तो उसकी हत्या कर दी जाती थी और उसे विलायत से निकाल दिया जाता था।[1]

सुल्तान सिकन्दर लोदी के राज्यकाल में समस्त प्रजा को जितनी समृद्धि प्राप्त थी उतनी अन्य सुल्तानों के राज्यकाल में खजाने में अत्यधिक धन होने के कारण भी इतनी समृद्धि नहीं प्राप्त थी। उसके राज्यकाल में पवित्रता, धर्मनिष्ठता, ईमानदारी और सदाचार की इतनी उन्नति हो गयी थी कि समस्त साधारण तथा विशेष व्यक्तियों में शिष्टता, नेकी, सदाचार और अपने धर्म के प्रति अत्यधिक निष्ठा उत्पन्न हो गयी थी कि सर्फ, नहो, फ़िकह के अतिरिक्त अन्य किसी बात की कोई चर्चा एवं प्रचार नहीं करता था। लोगों में सत्यता एवं सदाचार की प्रधानता थी।[2] एक नया उत्साह, नया जीवन था, जिसमें छोटे बड़े सब एक दूसरे का बड़ा आदर और सम्मान करते थे। एक दूसरे के साथ विनम्र व्यवहार करते थे। इसी कारण सभी इतिहासकारों ने सिकन्दर लोदी के राज्य में जो समृद्धि थी, उसकी भूरि भूरि प्रशंसा की थी। कारण यह था, कि सुल्तान हर दिन बाजार में बिकने वाली वस्तुओं की मूल्य सूची मंगवाता था। अगर कोई दुकानदार बाजार में मूल्य से अधिक दाम पर सामान बेचता था तो उसे दण्ड दिया जाता था। इसी कारण समस्त प्रजा शान्ति, सुरक्षा और समृद्धि के पालने में झूला झूल रही थी, क्योंकि

----

1. अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 37, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 260, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 339-342, शेख रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 13-14, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 102-103.

2. अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी : पृष्ठ 41, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 263-264.

मुहम्मद तुग़लक के बाद उत्तरी भारत को एक स्थायी सरकार मिली थी ।[1] समस्त राज्य में बिना कृषि के एक हाथ अथवा एक तस्व भूमि भी नहीं रह गयी थी । खेत बहुत अच्छी तरह बोये-जोते जाते थे । कोई किसी से बेगार नहीं लेता था । कोई भी व्यक्ति किसी के घर से मूल्य अदा किये बिना चारपाई या बर्तन नहीं लेता था जिसे जिस चीज की आवश्यकता होती थी वह पैसा देकर ही लेता था ।[2] यदि किसी नौकर को उसका मालिक वेतन नहीं देता था तब वह बादशाह के पास जाकर अपनी फरियाद करता था तब बादशाह उसका निर्णय कर उसका वेतन उसके मालिक से दिलवा देता था ।[3] सिकन्दर लोदी जब तक जीवित रहा उसका राज्य

----

1. अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 128, डब्ल्यू0एच0 मोरलैण्ड : मुस्लिम शासन की ग्रामीण व्यवस्था, पृष्ठ 104, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 595, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 341.

2. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 14, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 102, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 359, डब्लू0एच0 मोरलैण्ड : मुस्लिम शासन की ग्रामीण व्यवस्था, पृष्ठ 104, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 560.

3. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 14, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 102.

सुव्यवस्थित रहा और अनाज सस्ता रहा । व्यापारी, कृषक, शिल्पकार तथा अन्य सभी प्राणी बड़े सुख का जीवन निर्भय होकर व्यतीत कर रहे थे ।[1]

<u>इब्राहीम लोदी</u> :

सुल्तान इब्राहीम लोदी के शासन काल की आर्थिक दशा अच्छी थी । अनाज, वस्त्र तथा समस्त वस्तुयें काफी सस्ती थीं ।[2] अब्दुल्लाह ने अपनी कृति तारीखे दाऊदी में लिखा है कि केवल सुल्तान अलाउद्दीन के राज्यकाल के अन्त में चीजें सस्ती थीं । वह भी लाखों प्रयत्न, हत्याकाण्ड, कठोर दण्ड के कारण । यद्यपि सुल्तान सिकन्दर लोदी के शासन काल में भी चीजें सस्ता थीं किन्तु सुल्तान इब्राहीम लोदी के राज्यकाल के समान नहीं थीं । एक बहलोली में 10 मन अनाज, 5 सेर घी तथा 10 गज कपड़ा मिलता था । बहलोली एक पैसे का वजन 1 तोला, 8 माशा, 4 रत्ती था । इस अल्पमूल्यता का कारण यह था कि इस समय काफी

----

1. शेख़ रिज़कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 13, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 102, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 359, मुहम्मद कबीर बिन शेख़ इस्माईल : अफ़सानये शाहान, पृष्ठ 38, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 382.

2. एच0जी0 केन : ए स्केचल आफ द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, पृष्ठ 59, ए0बी0 पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 227.

वर्षा हुयी थी जिससे कृषि को काफी उन्नति प्राप्त हो गयी थी । विलायत की सम्पन्नता एक से 10 गुना बढ़ गयी थी ।[1]

इतनी अधिक उन्नति होने के कारण सुल्तान ने आमिलों, अमीरों तथा मालिकों को आदेश दिया कि प्रजा से न तो नगद धन लें न किसी प्रकार का कर लें । इन अमीरों को जागीरों से अपार अनाज प्राप्त होता था पर इन्हें नगद धन की आवश्यकता होती थी इसलिये लोग जिस मूल्य पर अनाज खरीदना चाहते थे अमीर उसी दाम पर अपना अनाज बेच दिया करते थे पर इसका प्रभाव यह हुआ कि सोना चाँदी अप्राप्य हो गया । सुल्तान इब्राहीम के राज्यकाल की अल्पमूल्यता ईश्वर का एक बहुत बड़ा वरदान थी ।[2]

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 128, अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा पृष्ठ 253, अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 104, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 305, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 435, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 318, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 475-476, इकबाल अहमद जौनपुरी : शर्की राज्य जौनपुर का इतिहास, पृष्ठ 185.

2. अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 105, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 305, इलियट एवं डाउसन: भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 363, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत का इतिहास, पृष्ठ 323, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 262.

बाबर का कथन है कि "इब्राहीम लोदी के समय भारतवर्ष की आर्थिक दशा बहुत अच्छी थी । देश धन से भरा हुआ था ।" बाबर ने जब पानीपत के युद्ध में इब्राहीम लोदी को पराजित किया और समस्त हिन्दुस्तान में अपना अधिकार स्थापित कर लिया तब उसे आगरा के खज़ाने से इतना अधिक धन, सोना-चाँदी, हीरा मोती प्राप्त हुआ कि उसका अनुमान लगाना असंभव था । बाबर ने 12 मई 1526 ई0 को एक दरबार का आयोजन किया और प्राप्त की गयी समस्त धनराशि अपने परिचित लोगों में बाँट दी तथा विभिन्न देशों के लोगों को इनाम एवं उपहार में भी धन एवं सम्पत्ति दी ।[1] अपनी बेगमों को उपहार में निम्न वस्तुयें दी । सुल्तान की पातुर तथा सोने की रकाबी, जवाहरात, लाल, मोती, याकू, हीरे, जमर्रूद ‡मणि‡ फीरोज ‡हरित मणि‡, जबरजद ‡पुखराज‡ ऐनुलहर ‡एक प्रकार की मणि‡ अशर्फी, तरह तरह के कपड़े उपहार स्वरूप दिये । इसके अलावा बाबर ने दाइयों, अन्त:पुर की देखभाल करने वाली स्त्रियों को, अनगाओं को, आगायाओं एवं समस्त शुभचिन्तकों को भी सुन्दर सुन्दर वस्त्र, हीरे, जवाहरात, अशर्फियाँ, शाहरूखियाँ प्रदान कीं । तीन दिन तक बाबर बाग एवं दीवानखाने में खुशी मनाता रहा । सभी लोगों ने मुगल सम्राट बाबर को शुभकामनाएँ दीं । ईश्वर से उसकी आयु के लिए दुआ माँगी ।[2] बाबर को इब्राहीम के खजाने से एक हीरा प्राप्त हुआ था वह इतना कीमती थी कि जौहरियों ने उसका मूल्य पूरे संसार के $2\frac{1}{2}$ दिन के व्यय के बराबर आँका था ।[3] बाबर ने उसे हुमायूँ को उपहार स्वरूप दिया तथा 70 लाख तन्के जो 350 हजार रूपयों के बराबर था वह भी दिया ।

----

1. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 350-363.

2. वही, पृष्ठ 363-364.

3. वही, पृष्ठ 636.

बाबर ने मुहम्मद सुल्तान मिर्जा को चहार कब्रा, जड़ाऊँ पेटी तथा 2 लाख रूपये दिये । पानीपत के युद्ध के समय बाबर के साथ जो अमीर, मिर्जा, सैनिक, व्यापारी तथा अन्य आदमी थे उन्हें उसने उनकी श्रेणी के अनुसार धन दिया तथा समरकन्द, खुरासान, काशगर तथा एराक में अपने मित्रों तथा सम्बन्धियों को उपहार भेजा । मक्का, मदीना, करबलाये मुअल्ला, नजफे अशरफ, मशहदे मुकद्दस एवं खुरासान तथा समरकन्द में जो जो मजारें थीं उनमें धन, आर्थिक सहायता के लिये भेजा तथा वहाँ के गरीबों को धन दिया । काबुल के प्रत्येक स्त्री, पुरूष, दास, छोटे-बड़े बच्चे, धनी, निर्धन सब को एक-एक शाहरूखी जो एक मिस्काल चाँदी के बराबर होता था उसे भिजवाया ।[1] बाबर ने इतना धन बाँटा कि उसका नाम कयामत तक संसार में याद किया जायेगा ।[2]

हिन्दुस्तान के बादशाहों ने जो सम्पत्ति इतने दिनों में इकट्ठा की थी, बाबर ने उसे अल्प समय में खर्च कर दिया । इससे उस समय की आर्थिक स्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है कि देश की आर्थिक दशा अत्यन्त अच्छी थी । देश सोना-चाँदी, हीरा-मोती से परिपूर्ण था ।[3]

---

1. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 202.

2. वही, पृष्ठ 350-363.

3. वही, पृष्ठ 637.

<u>किसानों की दशा</u> :

उत्तर तैमूर कालीन परिस्थितियों में काफी समय तक किसानों की दशा सन्तोषजनक नहीं थी । आक्रमण व प्राकृतिक विपदाओं से तो किसान समय-समय पर त्रस्त रहता ही था प्रशासन की ओर से भी उसे तरह-तरह से उत्पीड़न का शिकार होना पड़ता था । किसानों से भू-राजस्व, गृहकर, चराई-कर आदि लिया जाता था। इस प्रकार कुल मिलाकर उनसे उनकी कमाई का एक तिहाई भाग कर के रूप में ले लिया जाता था । राज्य की ओर से कर का भार इतना अधिक था कि वे सुख, आराम का जीवन नहीं व्यतीत कर पाते थे । उन्हें शासकों के खेतों पर बेगारी भी करनी पड़ती थी ।[1] उनके पास खाने पहनने को हमेशा यथेष्ट अन्न, वस्त्र, नहीं होते थे परन्तु वे कष्ट उठाने के इतने आदी हो गये थे कि अगर उन्हें मोटा अन्न भी पेट भर मिल जाता था तो वे प्रसन्न हो जाते थे ।[2]

किसानों के प्रमुख शत्रु थे राजकर्मचारी, प्राकृतिक शक्तियाँ या विपदाएँ एवं जंगली जानवर । राज्य कर्मचारी किसानों पर बड़ा अत्याचार करते थे । किसानों से कर तो अधिक लेते थे पर राजकोष में कम जमा करते थे । प्रकृति विपदा भी किसानों के पक्ष में नहीं होती थी । बाढ़ आने, वर्षा अधिक होने, ओले गिरने, सूखा पड़ने, दुर्भिक्ष आदि के आने पर खेती बहुत अधिक नष्ट हो जाती थी । 1424 ई0 में हिन्दुस्तान में घोर अकाल पड़ा जिससे पैदावार अच्छी नहीं हुयी तथा खेती नष्ट हो गयी । यातायात के साधनों का अभाव होने के कारण भी जनता को

---

1. ए0वी0 पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 219.

2. यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे मुबारकशाही, पृष्ठ 203, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 29.

आर्थिक कष्ट उठाना पड़ता था ।

जंगली जानवर भी किसानों के बड़े दुश्मन थे।जहाँ खेती होती थी वहाँ घने जंगल होते थे जिनमें गैंडा, भैंसा, सुअर, हिरन, हाथी, नील गाय आदि । जंगली जानवर अधिक संख्या में घूमा करते थे । खेतों को अपने पैर से कुचल देते थे और खेत चर जाते थे । इनके आक्रमणों से किसानों को बहुत हानि उठानी पड़ती थी । इन जानवरों को मारने की राज्य की ओर से अनुमति नहीं थी क्योंकि सम्राट इनका शिकार किया करते थे । इन सब कारणों से किसानों की दशा और खराब हो जाती थी ।

आर्थिक कष्ट होने के कारण समाज में इन किसानों की सुख-शान्ति भंग हो गयी थी । परस्पर ईर्ष्या, घृणा और लोभ का ताड़व, नृत्य चारों ओर फैला हुआ था। जनता की गाढ़ी कमाई का धन राजवर्ग की विलासिता की पूर्तियों में खर्च हो जाता था । हिन्दू जनता की आय का आधा भाग केवल उन्हें हिन्दू होने के नाते करके रूप में देना पड़ता था ।[2] शायद तब भी किसानों का शोषण जमींदार और जागीरदार द्वारा किया जाता था । जहाँ से 7 लाख की आय होती थी, वहाँ से सिकन्दर लोदी के शासनकाल के प्रथम वर्ष में जागीरदारों और जमींदारों ने 9 लाख की आय की, दूसरे वर्ष 11 लाख की आय की और तीसरे वर्ष 14 लाख की आय की ।[3]

----

1. ए०वी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 257.

2. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 70.

3. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 254, इलियट एवं डाउसन, भाग 4, पृष्ठ 453.

तकाबी :

कानूनी संहिताओं एवं प्रशासनिक आदेशों में राजस्व अधिकारियों को यह आदेश दिया गया था कि जरूरतमन्द किसानों को बीज, पशु, खाद्य पदार्थों आदि खरीदने के लिये राज्य की ओर से ﴾शाही खजाने﴿ तकाबी ﴾धन कर्ज﴿ दी जाये। तकाबी गाँव के मुखिया, चौधरी या पटेल अथवा वंशानुगत अधिकारी द्वारा दिया जाता था । ये लोग ही किसानों को ऋण देते थे और वसूल भी करते थे । इससे एक ओर किसानों को लाभ हुआ तो दूसरी ओर नुकसान । ये स्थानीय अधिकारी किसानों को धन तो उधार देते थे पर ब्याज अधिक लगाकर वसूल करते थे । आधा राजकोष में जमा करते थे और आधा अपने पास रख लेते थे । इससे कृषकों की दशा और खराब हो गयी । वे हमेशा ऋण के बोझ से दबे रहते थे । ये तकाबी - किसानों को । रूपये पर 2 आना के हिसाब से प्रतिमाह या प्रति फसल के लाभ ﴾ब्याज﴿ के रूप में देना पड़ता था । गन्ने के खेत पर प्रति 2 बीघा पर 2 रूपये ब्याज देने पड़ते थे ।[1]

प्रशासन की ओर से जो कर लगाये गये थे वे अधिक नहीं थे । लोग करों के भार से परेशान नहीं थे बल्कि प्रशासन के कठोर बर्ताव से वे अधिक दु:खी थे । कर वसूल करने वाले अधिकारी जनता पर बड़ा अत्याचार करते थे । मनमानी कर वसूल करते थे उस समय कोई व्यापारी प्रत्यक्ष कर देने को तैयार नहीं होता था इसलिए अक्सर व्यापारियों और प्रशासन के बीच झगड़ा चलता रहता था ।

----

1. घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 232.

व्यापार एवं वाणिज्य

15वीं शताब्दी में व्यापार और वाणिज्य तथा उद्योग का विकास सामान्य रूप से होता रहा । मुस्लिम शासन के दौरान विजेताओं और शासकों ने समय समय पर जनता का आर्थिक शोषण किया और सारा धन पानी की तरह खर्च किया । के०एम० पणिक्कर ने लिखा है कि, "इसका तात्पर्य यह भी नहीं कि मुस्लिम विजय से देश के वाणिज्य और व्यापार में भारी फेर बदल हो गया था या वह हिन्दुओं के हाथ से निकलकर मुसलमानों के हाथ में चला गया था । मुस्लिम आक्रान्ता कोरे सैनिक थे और उनके आक्रमण सैनिकों के साहसिक कार्य मात्र थे । वे व्यापार को तुच्छ दृष्टि से देखते थे और उन्हें समुन्नत भारतीय व्यापार पद्धति की हुंडी और उधार प्रणाली समझ तक में नहीं आती थी । इसमें सन्देह नहीं कि उस समय सरकार और अधिकारीवर्ग दोनों ने व्यापारी वर्ग का भीषण शोषण-दोहन किया, किन्तु भारत का बनिया आज की भाँति तब भी सामाजिक ढाँचे का आवश्यक अंश बना रहा ।

सुल्तानों, अमीरों, अधिकारियों तथा सैनिकों सभी का जीवन स्तर सुख-सुविधामय था । उनकी भाँति-भाँति की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए व्यापार और उद्योग फलते फूलते रहे । राज्य की ओर से भी कारखाने चलाये जाते थे । तमाम कलात्मक वस्तुओं और आभूषणों का निर्माण होता था । सैनिकों की की आवश्यकता की वस्तुयें भी बनायी जाती थीं । यहाँ के कलाकारों के कला-कौशल की प्रशंसा बाबर ने भी की है । बाबर ने लिखा है कि यहाँ हर प्रकार के असंख्य कारीगर हैं । एक निश्चित जाति एक कार्य विशेष को पुश्तैनी आधार पर

----

1. के०एम० पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 133.

करती चली आ रही है । इस कारण वे अपनी कला में बहुत पारंगत हो गये हैं । बाबरनामा के अनुसार शराब बनाने वाले, सुनार, लोहार, बढ़ई, तेली, नाई, मोची, संगीतकार इत्यादि अनेक वर्ग के लोग अपने अपने क्षेत्र में पारंगत थे ।[1]

आगरा में प्रत्येक श्रेणी के लोगों के रहने, उनके काम करने के लिए अलग-अलग बस्तियाँ बनी थीं जैसे सैनिकों के लिए अलग बस्ती, बड़े अमीरों की अलग, सचिवों की अलग बस्ती, काज़ियों आलियों को अलग बस्ती, शेखों सूफियों, सन्तों, फकीरों के लिए अलग बस्ती तथा व्यापारियों, शिल्पकारों, के लिये अलग बस्ती थीं । प्रत्येक बस्ती में अलग-अलग श्रेणी के लोग रहते थे । उनके अलग अलग श्रेणी के अनुसार मकान, बाजार, मस्जिद, मीनार, स्नानागार आदि बने थे । प्रत्येक बस्ती पृथक आत्म-निर्भर नगर के समान थी ।[2]

अधिकांशतः मुस्लिम आबादी नगरीय क्षेत्रों में रहती थी । बहुत कम लोग कृषि करते थे और ग्रामीण क्षेत्रों में रहते थे । प्रशासन के सभी उच्च पदों पर मुसलमान विराजमान थे । उच्च पदस्थ अमीरों का एक विशेष वर्ग ही बन गया था जिसे उच्च वर्ग कह सकते हैं । विभिन्न पेशों में लगे हुए थे । जैसे वे शिल्पी, दुकानदार, हस्तकार, हकीम, लिपिक व सुन्दर लिखाई करने वाले इत्यादि । वे छोटे बड़े उद्योग धन्धों में लगे हुए थे । घोड़ों के व्यापारी बहुत प्रसिद्ध थे । निम्न वर्ग के लोगों में उनकी गिनती की जा सकती है जो अपेक्षाकृत कम प्रतिष्ठित थे जैसे कसाई, कब्र खोदने वाले, भिश्ती, धोबी, काष्ठकार, नाई, दर्ज़ी, मशालची इत्यादि ।[3]

---

1. बाबर : बाबरनामा, अनुवादक श्री केशवकुमार ठाकुर, पृष्ठ 365.
2. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लककालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 310-311.
3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 26-27.

भारत का प्राचीन काल से ही विदेशों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध रहा था समुद्री मार्ग द्वारा चीन, मलाया, ईरान और अरब के साथ व्यापार, वाणिज्य किया जाता था । 1498 ई० में वास्कोडिगामा ने भारत के कालीकट बन्दरगाह पर कदम रखा । फलत: यूरोप के साथ भी समुद्री मार्ग से व्यापार, वाणिज्य होने लगा । स्थल मार्ग द्वारा मध्यएशिया, ईरान, तिब्बत और भूटान के साथ भारत के व्यापारिक सम्बन्ध थे । भारत विदेशों के घोड़े, ऊँट और खच्चर खरीदता था ।[1] 15वीं शताब्दी में उत्पादन और व्यापार सामान्य रूप से चल रहा था । आन्तरिक एवं बाह्य व्यापार तैमूर के आक्रमण के पश्चात् कुछ समय तक कुण्ठित रहे थे फिर ज्यों ज्यों शान्ति, व्यवस्था लौटने लगी, सामान्य स्थिति होती गयी । भारत की समृद्धि का राज ही उसका व्यापारिक मुनाफा था जैसा कि आम तौर पर होता है । उत्पादन व उपभोक्ता की स्थिति में अन्तर था । उत्पादन कार्य में लगे हुए लोगों को सामान्य जीवन अथवा गरीबी का जीवन बिताना पड़ता था और बड़े बड़े अमीर तथा धनी मानी लोग उपभोक्ता थे । उदाहरण के लिए कपड़ा बुनने वाला जुलाहा को लें । वह बड़े परिश्रम से अच्छे अच्छे कपड़ें बुनता था लेकिन स्वयं किसी प्रकार तन ढंकने के लिए साधारण वस्त्र पहनता था ।[2]

व्यापार के क्षेत्र में हिन्दू व्यापारियों का वर्चस्व था । वे बहुत धनी थे । दिल्ली सल्तनत की तैमूर के उपरान्त बिगड़ी हुयी दशा के कारण आर्थिक बर्बादी हुई थी । अत: सल्तनत का बाह्य व्यापार बुरी तरह प्रभावित हुआ । बाह्य व्यापार

---

1. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 66, राधेश्याम:सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 412.

2. डॉ० सावित्री शुक्ला : वही, पृष्ठ 66-67, के०एस० लाल : द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 277

के मामलों में गुजरात, बहमनी और विजयनगर साम्राज्य अग्रणी थे । भारत के मालाबार तट पर पुर्तगालियों का आवागमन हो गया था ।[1] [1498 ई0] लेकिन इससे भी दिल्ली सल्तनत का कोई सरोकार नहीं था । 15वीं शताब्दी में दिल्ली सल्तनत समुद्र तट से वंचित था । अत: बहुमूल्य वस्तुओं का आयात गुजरात, बंगाल और दक्षिण के बन्दरगाह के माध्यम से ही होता था ।[2] बाबर ने लिखा है कि कई देशों के साथ भारत का व्यापार और वाणिज्य स्थल मार्ग से होता था और इसमें भारत को बहुत लाभ होता था । बाबर के अनुसार "हिन्दुस्तान और खुरासान के बीच की सड़क पर दो बड़ी बाजारें हैं । काबुल और कन्धार से हिन्दुस्तान में प्रतिवर्ष 15 या 20 हजार कपड़े की गाँठें कारवाँ के द्वारा लायी जाती हैं। गुलाम, सफेद कपड़े चीनी, दवायें और मसालें, हिन्दुस्तान की मुख्य वस्तुयें हैं जो वहाँ ले जायी जाती थी। दिल्ली में बहुत से विदेशी व्यापारी रहते थे । भारतीय व्यापारियों को व्यापार से खूब लाभ होता था और खूब सोना चाँदी कमाते थे । यही कारण है कि तैमूर की लूट के पश्चात् भी लूटे गये क्षेत्रों में कुछ समय के बाद पुन: सोने चाँदी तथा अन्य बहुमूल्य रत्न उपलब्ध होने लगे । सोने और चाँदी की उपलब्धता से बाबर बहुत अधिक प्रभावित हुआ था ।[3]

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 412.

2. वही, पृष्ठ 412.

3. बाबर : बाबरनामा, अनुवादक : श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ - 364-365.

बाबर द्वारा हिन्दुस्तान का वर्णन :

बाबर ने अपनी आत्मकथा बाबरनामा में लिखा है कि "हिन्दुस्तान एक बहुत ही धन धान्य से सम्पन्न सुखी एवं सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण देश है । यहाँ पर धर्म का बोलबाला है । कानून को पूरा सम्मान दिया जाता था । यहाँ के सुल्तानों ने इस्लाम धर्म को बढ़ावा दिया । धार्मिक सैनिकों की तलवार के द्वारा यह देश निष्कंटक बन गया । तलवार के बल से इसको जीता गया । इसी कारण अधार्मिक कार्य करने का लोगों को साहस नहीं होता था । जो लोग बलवान थे उन्हें पैरों के नीचे कुचल दिया जाता था, ताकि सुल्तान के बराबर सिर न उठा सकें । लोग कर बराबर दिया करते थे । मूर्तिपूजा करने पर प्रतिबन्ध था । जज़िया न देने वालों का वध कर दिया जाता था । यह कुरान का नियम था अगर ऐसा न किया जाता तो हिन्दुस्तान का नाम निर्मूल हो जाता ।[1] यहाँ के सुल्तान इतने अच्छे अच्छे महलों में शान शौकत से रहते थे कि संसार के किसी भी देश के सुल्तान इतने शान शौकत से नहीं रहते थे । यहाँ के निवासी बुद्धि के बड़े तेज होते हैं । यहाँ के लोगों में संयम सन्तोष की अत्यधिक भावना है । वे अपना सब कुछ बलिदान करने को हरदम तैयार रहते थे । ये लोग ईश्वर की दृष्टि से जो काम अच्छा समझते थे, वही किया करते थे । ईश्वर पर बड़ा विश्वास करते थे ।[2]

यहाँ के भौगोलिक वातावरण के बारे में बाबर ने बताया कि तीन प्रकार के मौसम होते हैं गर्मी, जाड़ा और बरसात । गर्मी के दिनों में गर्मी अधिक पड़ती

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 394, उद्धृत अंश बाबरनामा से ।

2. वही, पृष्ठ 414, उद्धृत अंश बाबरनामा से ।

है पर इतनी अधिक नहीं कि लोग सहन न कर सकें। गर्मी के दिनों में बड़ी धूल भरी आँधी चलती है जिससे वातावरण बड़ा गन्दा हो जाता है। गर्मियों में जब पानी बरसने का समय होता है तो हवा उत्तर की ओर से चलने के कारण बहुत तेज चलती है। साथ में धूल तथा मिट्टी इतनी अधिक उड़ती हैं कि कोई एक दूसरे को देख नहीं सकता पर हवा बड़ी नम होती है। ठण्ड तथा गर्मी का मौसम यहाँ का आनन्ददायक होता है।[1]

हिन्दुस्तान की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि हिन्दुस्तान संसार का सबसे बड़ा एवं अच्छा देश है। यहाँ पर सोने चाँदी की बड़ी बड़ी खाने हैं जिसके कारण सोना बहुत अधिक मात्रा में पाया जाता था।[2]

वर्षा ऋतु का वर्णन करते हुये बाबर ने बताया कि वर्षा ऋतु में हवा बड़ी सुहावनी चलती है। कभी कभी दिन में 15-20 बार पानी बरस जाता है। यहाँ की जमीन बराबर न होने के कारण जब पानी बरसता था तो कहीं कहीं इतना पानी भर जाता था कि जैसे नदी तालाब बन गया हो, कहीं कहीं एकदम पानी बरसने के बाद सूखा हो जाता था।[3] वायु बहुत सुखप्रद हो जाती है। ऐसी

----

1. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 199, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 167-168, बाबर:बाबरनामा, अनुवादक : श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 345.

2. इलियट एवं डाउसन : भाग 3, पृष्ठ 426, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : वही, बाबर : वही, पृष्ठ 364, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 286.

3. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 199, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 168.

अच्छी और कोमल ठण्डक हो जाती है कि इससे बढ़कर कोई चीज नहीं हो सकती। सबसे बड़ी खराबी यह है कि हवा में बड़ी नमी आ जाती है। पानी बरसने के कारण शिकार नहीं खेला जा सकता है। नम हवा चलने के कारण तीर-कमान, कवच पुस्तकें, फर्नीचर, कपड़े सब पर नमी का बुरा असर पड़ता है।[1]

फुतुहुस्सलातीन के लेखक इसामी का भी कथन है कि "हिन्दुस्तान इतना सुन्दर देश है कि स्वर्ग भी इसे देखकर ईर्ष्या करता है। यहाँ वायु इतनी सुहावनी चलती है जैसे स्वर्ग में चलती है। पग-पग पर यहाँ नहरें बहा करती हैं। इसका जल पीने से मनुष्य अमर हो जाता है। इसकी पतझड़ से बहार का जन्म होता है फूल तथा मेवे यहाँ बहुत उत्पन्न होते हैं। यहाँ की मिट्टी से गुलाब के फूल की महक आती है। यहाँ का जल अमृत के समान है जिसे पीकर वृद्ध युवक हो जाता है और मुर्दे के प्राण वापस आ जाते हैं जो लोग अरब, सिन्ध, ईराक से एक बार हिन्दुस्तान आ जाते हैं फिर वापस दुबारा अपनी मातृभूमि जाने का नाम नहीं लेते हैं। यहीं पर निवास करना चाहते हैं।[2]

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 168, के०एम० अशरफ: हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 286.

2. इसामी : फुतूहुस्सलातीन, पृष्ठ 603, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लक कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 138.

बाबर ने यह भी बताया कि हिन्दुस्तान का सबसे बड़ा गुण यह है कि यहाँ पर हर कला को जानने वाले असंख्य कारीगर रहते हैं जो पीढ़ी दर पीढ़ी एक ही काम करते रहते हैं। इन कलाकारों की अलग अलग जातियाँ थीं जो अपनी जाति के अनुसार ही कार्य करते थे। जैसे बढ़ई लोग बढ़ई का काम, ब्राह्मण धार्मिक शिक्षा देने का काम, सुनार-सोने का काम, वैश्य-कृषि का काम आदि करते थे। आजर बाईजान, फारस, हिन्दुस्तान तथा अन्य देशों के 200 पत्थर काटने वाले रोजाना काम करते थे। आगरा में 680 व्यक्तियों ने पत्थर काटकर आगरा का निर्माण किया। आगरा, सीकरी, बयाना, धौलपुर, ग्वालियर तथा कोल के भवनों के निर्माण (1491) में पत्थर काटने वाले रोज़ाना कार्य करते थे।[1]

आलोचना :

एक ओर बाबर ने जहाँ हिन्दुस्तान की विशेषता बतायी है वहीं दूसरी ओर हिन्दुस्तान की आलोचना भी की है। बाबर ने बताया कि हिन्दुस्तान सुन्दर नहीं बसा है। समस्त नगर एक ही तरह के बसे हैं। यहिन्दुस्तान के नगर और प्रदेश अत्यन्त कुरूप हैं।[2] यहाँ के निवासी देखने में सुन्दर नहीं लगते हैं और

---

1. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 200-48, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 168-169, बाबर : बाबरनामा, अनुवादक: श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 365, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 286.

2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 167, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 48. बाबर : बाबरनामा : अनुवादक : श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 348, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 286.

न ही व्यवहार कुशल हैं । ये लोग किसी के घर आते-जाते नहीं हैं । यहाँ के लोगों में शिष्टाचार की कमी है और इनके व्यवहार में उदारता नहीं है । इन लोगों को यह ख्याल नहीं कि मित्रों के साथ में बैठने में क्या आनन्द आता है और आजादी से एक दूसरे से मिलने पर क्या मजा आता है । इन लोगों को नयी चीजों का आविष्कार करने एवं नयी चीजें खोजने की बुद्धि नहीं है । ये मशीनों का आविष्कार करना नहीं जानते हैं और न ही कला-कौशल का ज्ञान है । मकानों को कैसे बनायें कि सुन्दर लगे इसका इन्हें ज्ञान नहीं है । स्थापत्य कला का भी इनको ज्ञान नहीं है ।[1]

जानवरों के बारे में बाबर ने बताया है कि न तो यहाँ अच्छे घोड़े हैं और न ही कुत्ते । यहाँ पर अच्छे फल पैदा नहीं होते हैं । न अच्छे अंगूर और न ही अच्छा खरबूजा पैदा होता है, न अच्छे किस्म का मेवा उत्पन्न होता है । बाबर का कथन है कि गर्म देश होने के कारण गर्मी के दिनों में न तो ठण्डा पानी मिलता है न ही बर्फ ।[2] बाबर ने यह भी बताया कि यहाँ बाजारों में अच्छा खाना नहीं मिलता है । यहाँ पर न तो हम्माम है न मदरसे न शमा, न मशाल और न ही शमा दान है । शमा तथा मशाल की जगह पर यहाँ गन्दे-गन्दे लोग अपने बायें हाथ में एक छोटी सी तीन पाँव की लकड़ी लिये रहते हैं । उसके एक किनारे पर मोमबत्ती की नोक के समान एक वस्तु लगी रहती है । इसमें अंगूठे के बराबर

----

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 168.

2. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 48, 197-198, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 168, बाबर : बाबरनामा : अनुवादक : श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 262-263, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 286.

एक मोटी सी बत्ती लगी रहती है और ये व्यक्ति अपने दाँये हाथ में एक तुम्बा सा लिये रहते हैं। उसमें एक पतला सा छेद रहता है जब बत्ती को जलाना होता था तो उस पतली धार से तेल बत्ती के ऊपर टपका दिया करते थे और उसे जला दिया करते थे। जब अमीरों, बादशाहों आदि को उत्सव में लाइट की जरूरत होती थी तो ये लोग हजारों की संख्या में व्यक्ति बत्ती लेकर खड़े हो जाते थे जिससे रोशनी हो जाती थी।[1]

हिन्दुस्तान में ज्यादा लोग हिन्दू हैं जिन्हें बाबर काफिर कहता था। ये पुनर्जन्म में विश्वास रखते थे। हिन्दुस्तान के समस्त आमिल, कारीगर तथा श्रमिक हिन्दू हैं। बाबर ने निम्न वर्ग तथा कृषकों के बारे में बताया कि "ये लोग ज्यादातर नंगे रहते थे केवल नीचे के हिस्से को ढंकने के लिये एक कपड़े का टुकड़ा बाँधते थे जो लंगोट कहलाता था। इस कपड़े को नाभि के नीचे दोनों टांगों के बीच से लेते हुये पीछे कमर में बाँध लेते थे। स्त्रियाँ भी लुंगी (साड़ी) पहनती थीं। इसका आधा भाग कमर के नीचे तथा आधा भाग कमर के ऊपर के हिस्से को ढ़ंकता था।"[2]

---

1. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 48-198, बाबर : बाबरनामा: अनुवादक श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 363-364, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 286.

2. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 199, बाबर : वही, पृष्ठ 362, के०एम० अशरफ : वही, पृष्ठ 202, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 254-255, डा० युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 123, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 136, बाबर : बाबरनामा अनुवादक श्रीमती बेवरिज, पृष्ठ 242, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 192.

किसान कच्ची मिट्टी की बनी झोपड़ी में रहते थे जिसका फर्श कच्चा होता थी, गोबर से लीप लेते थे। छत छप्पर की बनी होती थी। विशाल भवन और चहारदीवारीयुक्त शहर का उनके सामूहिक जीवन की योजना में कोई स्थान नहीं था। ये पक्की मिट्टी के बर्तनों में खाना बनाते एवं खाते थे। खुले फर्श पर पुआल बिछाकर सो जाते थे, खाने में ये बाजरे की रोटी, चावल, दाल सम्भव हुआ तो कुछ मट्ठा, प्याज, मिर्च की चटनी इनका प्रिय भोजन था। 2 बार भोजन करते थे।[1] कृषक ताड़ी या कोई सस्ती देशी शराब पीते थे।[2] अच्छे वर्ग के कृषकों और गाँव के मुखिया के घर बहुत बड़े-बड़े सुविधाजनक बने होते थे। उनके घरों के बाहर एक चबूतरा, एक कमरा, एक भीतर कमरा, बड़ा आँगन, एक बारान्डा बना होता था। कभी कभी मकान दो मंजिल के बनाये जाते थे। दीवारें मिट्टी की बनी होती थीं। छत, छप्पर, फूस, कुछ लकड़ी के शहतीरों पर आधारित करके छाते थे। सम्पन्न लोगों के घर निजी फूलों या ताड़ के बगीचों के बीच बनाये जाते थे। ये घर मिट्टी के चबूतरे पर लकड़ी या बांस के खम्भों, बांस की खपच्चियों की टट्टियों को जोड़कर बनाए जाते थे। छत फूस और छप्पर की बनी होती थी। घर में रसोईघर और स्नानघर नहीं बनते थे। नहाने के लिए कुएँ पर जाना पड़ता था।[3]

बाबर ने बताया कि यहाँ की भूमि ज्यादातर समतल है। इस कारण बरसात में पानी बरसने से नदियों तथा नालों में इतना पानी भर जाता था कि

---

1. के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 202.
2. वही, पृष्ठ 202.
3. वही, पृष्ठ 201-202.

पार करना मुश्किल हो जाता था। बाबर ने यह भी बताया कि यहाँ बड़े बड़े काँटेदार जंगल हैं। परगने के निवासी इसी में छिपे रहते हैं और विद्रोह कर देते हैं। और कर भी नहीं देते थे। यहाँ के लोग कुओं से पानी लेकर अपना जीवन निर्वाह करते थे। या तो तालाबों में वर्षा का पानी एकत्र हो जाता था और उसे इस्तेमाल करते थे। किन्हीं किन्हीं स्थानों पर ही नदियाँ तथा जलाशय हैं।[1]

हिन्दुस्तान के पुरबे, नगर तथा गाँव क्षण भर में आबाद तथा क्षण भर में बर्बाद हो जाते थे। बड़े-बड़े नगर में रहने वाले लोग जो कई वर्षों से वहाँ रहते चले आ रहे थे अगर वे वहाँ से हटना चाहते थे तो बड़ी जल्दी वहाँ से भाग जाते थे। अगर यहाँ के लोगों को कोई जगह आबाद करनी होती थी तो बड़ी जल्दी आबाद कर देते थे।[2] क्योंकि इन्हें पक्की दीवारें नहीं बनानी पड़ती थी। घास, बांस की झोपड़ी बना लेते थे। खेती करने के लिये इन्हें नहर खोदने की जरूरत नहीं पड़ती थी। वर्षा के पानी से खेती करते थे। हाँ पीने के पानी के लिये कुआँ तथा तालाब अवश्य खोद लेते थे।[3]

---

1. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 171, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 167-168, बाबर : बाबरनामा : अनुवादक : श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 349.

2. के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 200.

3. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 171-172, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 200.

बाबर ने अपनी टिप्पणी में केवल कठिनाइयों का वर्णन किया है उसे काबुल की याद आती रही होगी। जहाँ तक बाबर ने बताया कि यहाँ मदरसे नहीं थे वह गलत लिखा है। फ़िरोज तुग़लक ने अपने शासनकाल में अनेकों मदरसे बनवाये थे। चूँकि बाबर का हिन्दुस्तान में ज्यादातर सम्पर्क अफ़गानों से रहा जिन्होंने बाबर के साथ विश्वासघात किया इसी कारण बाबर ने निन्दा की। इसके अलावा बाबर जब आगरा पहुँचा तब लोग भयभीत होकर भाग गये। इसलिये बाबर तथा उसके सैनिकों को खाने के लिए अन्न नहीं मिला और न ही घोड़ों के लिए चारा मिला। चूँकि गाँव वालों को इन मुगलों से शत्रुता थी, उनके प्रति घृणा की भावना थी इस कारण इन लोगों ने उत्पात, चोरी, डकैती करनी शुरू कर दी। इसी कारण बाबर ने बताया कि यहाँ के लोग मिलनसार एवं व्यवहारकुशल नहीं हैं। चूँकि बाबर गर्मी के मौसम में आगरा आया था इस कारण यहाँ के लोग लंगोटी पहने दिखाई पड़े।[1]

कृषीय एवं गैर कृषीय उत्पादन :

भारतवर्ष अति-प्राचीनकाल से एक कृषि-प्रधान देश रहा है। घरेलू कार्यों और शिल्प कार्यों में लगे हुए लोगों को छोड़कर साधारणतया सब लोग खेती करते थे।[2]

हिन्दुस्तान में साधारणतया दो फसले पैदा होती थीं : (क) खरीफ की फसल एवं (ख) रबी की फसल। जब गर्मी के दिनों में पानी बरसता था तो खरीफ की

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 198.
2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 321, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परि-स्थितियाँ, पृष्ठ 117-121.

फसल बोयी जाती थी । यह फसल 60 दिन में पककर तैयार हो जाती थी । उसके बाद उसकी कटाई कर ली जाती थी । खरीफ की फसल में मुख्यत: ज्वार, मटर, मूंग, लोबिया, मोठ आदि पैदा होता था ।

खरीफ की फसल के बाद रबी की फसल बोयी जाती थी । रबी की फसल खरीफ वाले खेत में ही बोयी जाती थी । रबी की फसल - जौ, मसूर, गेहूँ थी ।[1]

इस देश में कई प्रकार का अनाज जैसे - गेहूँ, चावल, मटर, जौ, मसूर, उर्द कपास, तिल, लोबिया आदि पैदा होता था । कड़ा, मानिकपुर, इलाहाबाद के आस पास सबसे अच्छी किस्म का चावल, गन्ना, गेहूँ होता था ।[2] जो दिल्ली भेजा जाता था ।

जौ का सबसे अधिक उत्पादन गुजरात में होता था । इसके अलावा कड़ा, मानिकपुर और उसके निकटवर्ती प्रदेशों में भी जौ की खेती होती थी ।[3] ज्वार और बाजरा की खेती अजमेर, गुजरात, खानदेश में अधिक होती थी । इलाहाबाद में ज्वार एवं बाजरे की खेती नहीं होती थी । तिलहन का उत्पादन इलाहाबाद से मुल्तान तक के क्षेत्र में होता था । सन् और जूट की फसल बंगाल में होती थी ।[4]

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 321, एल0 पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 248.
2. एल0पी0 शर्मा : वही, 248, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 122.
3. एल0पी0 शर्मा : वही, घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक आर्थिक तथा राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 280.
4. घनश्याम दत्त शर्मा : वही ।

चावल की पैदावार सबसे अधिक आसाम, बंगाल, उड़ीसा, पूर्वी तटवर्ती क्षेत्र तमिल प्रदेश आदि में सबसे अधिक चावल पैदा होता था किन्तु बिहार, अवध, इलाहाबाद, खानदेश में भी थोड़ा चावल पैदा होता था। गुजरात के दक्षिण तटवर्ती प्रदेशों में अच्छी किस्म के चावल का उत्पादन होता था। लाहौर में खेतों को सिंचाई नदियों से की जाती थी जिसके कारण वहाँ अच्छी किस्म का चावल पैदा होता था क्योंकि चावल के लिये अधिक पानी की आवश्यकता होती थी।[1] कड़ा मानिकपुर और उसके निकटवर्ती प्रदेशों में तथा सिरसुती में भी बड़ी उत्तम किस्म का चावल उत्पन्न होता था[2] जो दिल्ली भेजा जाता था। बंगाल में सबसे घटिया किस्म का चावल पैदा होता था।[3]

फलों में मुख्यतः अंजीर, अंगूर, आम, अनार, केला, आड़ू, चकोत्तरा, नींबू, नारंगी, जामुन, कसेरू, कटहल, तेन्दू, बेर, काले शहतूत, तरबूजा, पीली तथा हरी ककड़ी, खरबूजा, नाशपाती, सेब, महुआ, लाहा, नगजक, ईमली आदि थे। समुद्र के किनारे हरा नारियल उत्पन्न होता था। भारतवर्ष में सबसे अधिक केला और आम

---

1. घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 279, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 287.

2. इब्नबतूता : द रेहला आफ इब्नबतूता, पृष्ठ 23-40, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 122, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 248.

3. घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 279.

पैदा होता था ।[1] सिकन्दर लोदी ने बताया कि जोधपुर में जैसा अनार पैदा होता था वैसा फारस में नहीं होता था ।[2]

यहाँ पर गन्ना दो तरह का उत्पन्न होता था । सफेद गन्ना और काला गन्ना । काले रंग का गन्ना अन्य किसी देश में नहीं उत्पन्न होता था ।[3] गन्ने से गुड़, चीनी बनाया जाता था ।

जहाँ तक सब्जियों का प्रश्न है — सब्जियों में शलजम , गाजर, लौकी, मिर्चा, बैंगन, अदरख, कद्दू, प्याज, चुकन्दर, पुदीना, सोया उत्पन्न होता था ।

सभी प्रकार के मसाले उत्पन्न होते थे । जैसे लौंग, जायफल, दालचीनी, इलायची, कबाब चीनी, जावित्री, बालछड़ आदि । काली मिर्च सबसे अधिक बंगलौर

----

1. बाबर : बाबरनामा : अनुवादक : श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 358, घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन, सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 281, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 287, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 332, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 123, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 248.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 323, के0 एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 138.

3. अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 45, अनुवादित अंश : के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 123.

में और केसर काश्मीर में होता था ।[1] अदरख, गरम मसाला सबसे अधिक गुजरात में पैदा होता था । शहद का उत्पादन सबसे अधिक होता था । मोम,शहद केवल सुल्तान के महलों में मिलता था । अन्य लोगों को मोम का इस्तेमाल करने की अनुमति नहीं थी ।[2]

ताड़ी के पेड़ लगाये जाते थे । ताड़ी मादक द्रव्य था । इसे लोग नशे के लिये पिया करते थे । इस समय भांग एवं अफीम का पैदावार नहीं होती थी, क्योंकि इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता है । सुपाड़ी पान अवश्य पैदा होता था ।[3] हिन्दुस्तान के सभी भागों में शराब अवश्य बनायी जाती थी । बंगाल में सब प्रकार की तीव्र मदिरा तैयार की जाती थी ।[4]

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 324, घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 281, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 124, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 248.
2. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुगलककालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 312, के0 एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परि-स्थितियाँ, पृष्ठ 139.
3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 323, एल0 पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 248.
4. के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 126.

तम्बाकू और चाय का उत्पादन इस समय नहीं होता था । इसका कोई उल्लेख उपलब्ध नहीं है । 17वीं शताब्दी के अन्त में काफी का प्रचार बढ़ा ।[1]

नील का उत्पादन हिन्दुस्तान में बहुत अधिक मात्रा में किया जाता था । सबसे अच्छी किस्म की नील बयाना में उत्पन्न होती थी । अहमदाबाद के पास खरखेज में भी उच्च किस्म की नील उत्पन्न होती थी किन्तु खरखेज से अच्छी किस्म की नील सिन्ध प्रदेश के सेहवान नामक स्थान में होती थी । बयाना तथा खरखेज में नील इतनी अधिक मात्रा में पैदा होती थी कि इसकी फसल 2 वर्ष में 3 बार काटी जाती थी । बयाना, दोआब, खरखेज एवं सेहवान में लगभग 18 लाख पौण्ड प्रतिवर्ष नील का उत्पादन होता था । तेलंगाना में मध्यम श्रेणी की नील पैदा होती थी । ये मध्यम श्रेणी की नील बंगाल से लेकर खानदेश तक के बीच में पड़ने वाले सभी प्रदेशों में होती थी ।[2]

---

1. घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 281.

2. घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन, सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 280, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 133, एल0 पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 248.

गैर कृषीय उत्पादन :

गाँव में रहने वाली जनता पशुओं को बड़ी संख्या में पालती थी। वे मुख्यत: गाय, भैंस, भेड़-बकरियों को पालती थीं। इसके दूध से मक्खन, दूध, दही, बनाकर बेचकर अपना एवं अपने परिवार का पालन पोषण करती थीं। ये जानवर बहुत ही कम दामों में खरीदे एवं बेचे जाते थे। पंजाब के अजोधन जिले में पाकपाटन गाँव में एक ऐसा घी बेचने वाला व्यक्ति था। उसका दावा था कि घी, दूध बेचकर उसने इतना धन एकत्र कर लिया है कि 40-50 दासियों को खरीद सकता है।[1]

ग्रामीण जनता बहुत बड़ी संख्या में भेड़ों को पालते थे। उनसे ऊन तैयार करते थे। गाय, भैंस, बकरी का ना केवल दूध, दही बनाकर बेचते थे बल्कि उसका मांस भी बेचा करते थे।[2]

14वीं शताब्दी से पूर्व भारतवर्ष में रेशम के कीड़ों को नहीं पाला जाता था किन्तु 14वीं शताब्दी के बाद से यहाँ के लोगों ने रेशम के कीड़ों को पालना शुरू किया। ताकि उससे कपड़ा बनाया जा सके। रेशम का उत्पादन बंगाल, आसाम, काश्मीर एवं पश्चिम के तटीय क्षेत्र में होता था। सबसे अधिक रेशम का उत्पादन बंगाल में

---

1. राधेश्याम : सल्तनत कालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 324, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 124, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 249.

2. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 325, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 129.

होता था । बंगाल से 31 लाख अथवा 24 लाख पौण्ड के मूल्य का रेशम बाहर भेजा जाता था ।[1]

यहाँ पर सोने, लोहे, पारे, शीशे की कई खानें थीं ।[2] दक्षिण तथा गोण्डवाना में हीरे की खानें थीं । हीरा पहाड़ों पर भी पाया जाता था । सोना हिमालय से निकलने वाली नदियों से भी प्राप्त होता था । राजस्थान में ताँबे की खानें थीं । नमक सम्भार की झील में होता था । कोह-ए-जूद नामक स्थान पर नमक की तमाम पहाड़ियाँ थीं जहाँ से बहुत अधिक मात्रा में नमक प्राप्त होता था ।[3]

लोहा औजार बनाने के काम में आता था । लोहे की बहुत बड़ी बड़ी खानें थीं जहाँ से उत्तम प्रकार का लोहा प्राप्त होता था । लोहे की ज्यादातर खानें ग्वालियर से लेकर दक्षिण तक फैली हुयी थीं । दक्षिण भारत से बहुत अधिक मात्रा में लोहा मध्यपूर्वी एशिया में भेजा जाता था ।[4]

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 325, घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 282, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 129-130.
2. के0एम0 अशरफ : वही, पृष्ठ 133.
3. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 325-326.
4. के0एम0 अशरफ : वही, पृष्ठ 133.
   राधेश्याम : वही, पृष्ठ 326.

बाजार एवं मण्डियाँ :

देश के सभी शहरों में बड़ी, छोटी बाजारें एवं मण्डियाँ लगा करती थीं । अलग अलग सामानों की अलग अलग बाजारें लगा करती थीं । जैसे कपड़े की बाजार, पशु-पक्षी के खाद्यानों की, घोड़ो, दासों, दासियों, अनाजों, बर्तनों, अस्त्र-शस्त्रों की बाजारें आदि । बाजारों में सामान थोक तथा फुटकर दोनों भावों में बेचा जाता था । शहर तथा कस्बे में मण्डियाँ लगती थीं ।[1] व्यापार कई स्तरों पर होता था । विभिन्न ग्रामों के मध्य, गाँव और कस्बों के बीच, कस्बों और कस्बों के बीच तथा कस्बों और शहरों के बीच व्यापार परोक्ष रूप से होता था क्योंकि कोई भी गाँव पूर्णरूप से आत्म-निर्भर नहीं होता था । अनेक वस्तुएं उसे दूसरे गाँव से मँगवानी पड़ती थी । गाँव में पैदा हुआ सामान बेचने के लिए कस्बों में आता था । कस्बों से शहरों में आता था फिर शहरों के मध्य अन्तर्प्रादेशिक स्तर पर व्यापार होता था । आन्तरिक व्यापार विभिन्न स्तरों पर कारवानियाँ, फेरी वाले, बंजारों, थोक व्यापारियों, दलालों, दुकानदारों के मध्य होता था ।[2] दासों की बाजार दिल्ली, गुजरात, बंगाल, दक्षिण के बीदर और देवगिरि, बरन, बदायूँ, मण्डौर में लगती थी । गरीब लोग अपने बच्चों एवं स्त्रियों को बाजारों में बेंच दिया करते थे । इन बाजारों से लोग दासों को खरीदा करते थे ।[3]

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 417.

2. राधेश्याम : मध्यकालीन भारतीय इतिहास के सन्दर्भ में - प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 333-334.

3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 418.

दिल्ली में जामा मस्जिद के निकट कपड़े की बाजार लगती थी । सुल्तान सिकन्दर लोदी रोज बाजार में बिकने वाली वस्तुओं के मूल्य की सूची मँगवाता था और उसकी जाँच करता था कि दुकानदार लोगों को अधिक दामों पर समान तो नहीं बेच रहे हैं । अगर कोई अधिक दाम पर सामान बेचते पकड़ा जाता था तो सुल्तान उसे दण्ड देता था, कभी कभी उसे विलायत से निकाल देता था ।[1]

वस्तुओं का मूल्य :

वस्तुओं का मूल्य कई बातों पर निर्भर करता था जैसे, कि अकाल, यातायात के साधनों का अभाव, व्यापारियों की रक्षा, सामान्य एवं असामान्य स्थिति, माल का अधिक या कम मात्रा में पैदा होना आदि । अकाल, दुर्भिक्ष पड़ने पर वस्तुओं का मूल्य अपने आप कम हो जाया करता था, राजनीतिक अशान्ति के कारण भी वस्तुओं के मूल्य में फर्क पड़ता था । 1399 ई० में भारतवर्ष पर जब तैमूर ने आक्रमण किया उसके बाद उत्तरी भारत में 1424 ई० में अकाल पड़ गया जिससे आर्थिक जीवन अस्त-व्यस्त हो गया । वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि हो गयी ।[2]

तारीख-ए-दाउदी के लेखक अब्दुल्लाह ने अपनी कृति में लिखा है कि बहलोल लोदी के राज्यकाल में सभी वस्तुयें इतनी सस्ती हो गयी थी कि उतनी सस्ती वस्तु अन्य किसी शासक के राज्यकाल में नहीं थी । अलाउद्दीन खिलजी के शासन काल में

----

1. अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 112.

2. यहिया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी : तारीखे मुबारकशाही, पृष्ठ 203, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 29.

वस्तुयें हत्या एवं कठोर दण्ड के कारण सस्ती हो गयी थीं ।[1]

सिकन्दर लोदी के शासन काल में सामान सस्ता हो गया था । क्योंकि सिकन्दर लोदी रोज बाजार में बिकने वाली वस्तुओं की मूल्य सूची मंगवाता था । अगर कोई व्यापारी या दुकानदार अधिक दामों पर सामान बेचता था तो उसे दण्ड दिया जाता था ।[2]

सुल्तान इब्राहीम लोदी के शासन काल में एक बहलोली में 10 मन गेहूँ, 5 सेर घी, 10 गज कपड़ा मिलता था । इब्राहीम लोदी के शासन काल में वर्षा बहुत हुई । इस कारण सामान सस्ता हो गया था । इससे कृषि की उन्नति हुई । प्रत्येक विलायत की सम्पन्नता 10 गुना बढ़ गयी थी, इस कारण सुल्तान इब्राहीम लोदी ने आदेश दिया था कि सभी अमीर व मालिक अनाज या जो कुछ भी भूमि से उत्पन्न हो उसके अलावा कोई वस्तु कर के रूप में न लें । किसानों से लगान नगद धन न लेकर अनाज के रूप में लिया जाये । इस प्रकार जागीरों से बहुत अधिक मात्रा में अनाज प्राप्त होता था ।[3]

---

1. अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 104-105, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 305.

2. अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 128, डब्लू०एच० मोरलैण्ड : मुस्लिम भारत की ग्रामीण व्यवस्था, पृष्ठ 104, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 341, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 595.

3. अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 104-105, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 305, सैय्यद इकबाल अहमद जौनपुरी : शर्की राज्य जौनपुर का इतिहास, पृष्ठ 185, इलियट एवं डाउसन :(P.T

यातायात के साधन :

स्थल यातायात के मुख्य साधन बैलगाड़ी, घोड़े, ऊँट, टट्टू, खच्चर, गधे, हाथी, रथ, पालकी आदि थे। बैलगाड़ी का प्रयोग न केवल सवारी ढोने बल्कि माल ढोने के काम में भी लाया जाता था।[1] घोड़ा, रथ, हाथी की सवारी उच्च वर्ग के लोग किया करते थे। सुल्तान सिकन्दर लोदी हाथी पर बैठकर जाता था।[2] कुछ अमीर ऊँट के ऊपर रखी पालकी में बैठकर यात्रा करते थे। ऊँट और भैंसों का प्रयोग माल ढोने के भी काम में लाया जाता था।[3] गधे और खच्चर का प्रयोग

.. भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 475-476, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 435, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 128.

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 68, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 416, के0एस0 लाल : द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 217. , के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृ0 147.

2. अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 24, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 319, राधेश्याम : सल्तनत कालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 415, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास: भारत का सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 68-69, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 349.

3. अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 24, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 319, राधेश्याम : सल्तनत कालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 414.

केवल माल ढोने के काम में लाया जाता था । गधे की सवारी करना बड़ा घृणित एवं अपमानजनक कार्य समझा जाता था । अगर किसी को अपमानित करना होता था तो उसे गधे पर बैठाकर पूरे शहर में घुमाया जाता था । गधे का प्रयोग धोबी कपड़ा ढोने के लिए सदियों से करते आए हैं । ईंट, फल, अनाज को ढोने के काम में भी गधों का इस्तेमाल किया जाता था । खच्चर पर कभी कोई फकीर तथा आलिम तक नहीं बैठता था ।[1]

पालकी, डोला, डोली भी स्त्री पुरुष दोनों लोगों के यातायात का प्रमुख साधन था । शाही परिवार तथा बड़े बड़े अमीरों की स्त्रियाँ पालकी में बैठकर यात्रा करती थीं ।[2] सुल्तान सिकन्दर लोदी का अमीर मसनदे आली मियाँ मुहम्मद फर्मुली डोले पर बैठकर शिकार करने जाया करता था ।[3]

स्त्रियाँ तनू (जो ताँगे के समान बनी होती थी) पर बैठकर भी यात्रा करती थीं । जब बहलोल लोदी इलमऊ अभियान पर जा रहा था तभी उसने आगरा

---

1. इब्नबतूता : द रेहला आफ इब्नेबतूता, पृष्ठ 441, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुगलक कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 254-313.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 69, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 415, शेख रिज़्कुल्लाह मुश्ताकी : वाक़ेआते मुश्ताकी, पृष्ठ 57-58, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 139-157, अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 53-54, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 334.

3. शेख रिज़्कुल्लाह मुश्ताकी : वाक़ेआते मुश्ताकी, पृष्ठ 78, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 157.

के समीप एक स्त्री को तनू पर बैठकर जाते हुये देखा था ।[1] पन्द्रहवीं शताब्दी के पूर्व इक्का तथा ताँगा की सवारी भी लोग करते रहे होंगे । पन्द्रहवीं शताब्दी में इक्का और ताँगा की सवारी का उल्लेख मिलता है ।[2] जल मार्ग से भी यातायात होता था । नावें व डेंगियाँ आन्तरिक क्षेत्र में आते-जाते थे लेकिन दिल्ली सल्तनत में नौ-सैनिक बेड़े का विकास नहीं हुआ था । नावें व डेंगियों से न केवल सामान ढोया जाता था बल्कि यात्रा भी की जाती थी ।[3]

उद्योग :

भारत एक कृषीय प्रधान देश रहा है । कृषीय अर्थव्यवस्था इसका मूल आधार रहा है । अनेकों कुटीर उद्योग धन्धे भी चलते रहे हैं । उत्तर तैमूर काल के उद्योगों पर दृष्टिपात करने से यह तथ्य प्रकट होता है कि सुल्तान, अमीर, अधिकारी व अन्य धनी मानी व्यक्ति जिन जिन वस्तुओं का प्रयोग करते थे तथा जो जो वस्तुएँ सैन्य इस्तेमाल में लायी जाती थीं उन सभी की आपूर्ति हेतु उद्योग धन्धे चल रहे थे । जिन वस्तुओं को स्थानीय बाजारों से नहीं प्राप्त किया जा सकता था उनका आयात किया जाता था । ज्यों ज्यों विलासिता की वस्तुएँ बढ़ती गई उद्योगों में भी वृद्धि होती गयी । ये उद्योग दो प्रकार के थे : क.

---

1. अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 24, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 319.
2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 415.
3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 69-70, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 414-416, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 46-102.

कृषि पर आधारित और ख. गैरकृषि पर आधारित । ये उद्योग छोटे बड़े दोनों तरह के थे। ये उद्योग पीढ़ी दर पीढ़ी चला करते थे । अगर किसी के परिवार का एक व्यक्ति रेशम का उद्योग करता था तो उसके बाद उसके बच्चे, बच्चों के बच्चे सब वही उद्योग करते थे । इससे उनमें कार्य करने की क्षमता बढ़ती थी । अनुभव होता था एवं योग्यता बढ़ती थी जिससे वे सामान बड़ा अच्छा बनाते थे । 1526 ई0 में जब बाबर भारतवर्ष आया तो उसे देखकर यह आश्चर्य हुआ कि लोग एक ही व्यवसाय पीढ़ी दर पीढ़ी करते थे ।[1] इससे इन लोगों को एक फायदा यह होता था कि व्यवसाय में उन्हें अधिक मेहनत नहीं करनी पड़ती थी और चीजों के बनाने के स्तर में कोई गिरावट नहीं आती थी । ये लोग जो भी वस्तु बनाते थे वे बड़ी आकर्षक एवं कलात्मक होती थीं ।

सूती वस्त्र :

सूती वस्त्र उद्योग भारत का सर्वप्रधान एवं असंदिग्ध रूप से विकसित उद्योग था जो देश के किसी एक क्षेत्र तक सीमित न था समूचा देश इस उद्योग में हाथ बँटा रहा था। सूती वस्त्र उद्योग का मुख्य केन्द्र बंगाल, गुजरात, बनारस, उड़ीसा, गोलकुण्डा, मसूलीपट्टम, मद्रास, मालवा, सूरत, पटना, दिल्ली, आगरा, लाहौर, मुल्तान, ठट्टा, बुरहानपुर आदि थे । जहाँ सूती वस्त्रों का उत्पादन होता था ।[2]

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 372, के0 एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 128.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 92, घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 290, डॉ0 सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की

गुजरात में सबसे अधिक कपास की पैदावार होती थी क्योंकि यहाँ की मिट्टी कपास के पैदावार के लिये उत्तम थी । बंगाल तथा गुजरात में सबसे अच्छे किस्म का सूती कपड़ा बनाया जाता था जो फारस, अरब, सीरिया में भेजा जाता था ।[1] वर्थमा जो 1503 ई0 में भारतवर्ष आया था उसका कथन है कि बंगाल में सबसे अधिक सूती वस्त्र बनाया जाता था जितना कि संसार के अन्य किसी शहर में नहीं बनाया जाता था ।[2] बर्थमा ने बंगाल में स्वयं वैराम, नामोन, लिजाती, चेतर, दौजर, सिनबफ, नामक किस्म के उत्तम वस्त्र अपनी आँखों से देखे थे ।[3] बंगाल में सिरवन्द नामक एक दुपट्टा बनता था जिसे यूरोप की स्त्रियाँ अपने सिर पर

.. सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 68, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 249, के0एम0 पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 187.

1. के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 130.

2. के0एस0 लाल : द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 278, राधेश्याम : सल्तनत कालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 377, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 131-132.

3. के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 132, वर्थमा : भाग 1, पृष्ठ 140,

उद्धृत राधेश्याम : सल्तनत कालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 377.

बाँधने के काम में लाती थीं । अरब और ईरान के व्यापारी इस कपड़े की पगड़ी बाँधते थे । यूरोप में सिरबन्द को बहुत पसन्द किया जाता था । बंगाल में सिनाबफ नामक एक कपड़ा बनाया जाता था अरब के लोग इस कपड़े की कमीज बनवाकर पहना करते थे ।[1] गुजरात और खम्भात में पटोला नामक रेशमी वस्त्र बनाया जाता था । उसकी गणना मूल्यवान वस्त्रों में की जाती था । गुजरात रेशमी वस्त्रों में सोने के तारोंसेकढ़ाई के लिए प्रसिद्ध था । बरनी ने कुछ रेशमी और सूती कपड़ों के नाम बताये हैं । जो निम्न हैं : खज देहली, खज कौल, मसरूमसोरी, उत्तम, बुरद उत्तम, दबाले लाल, साधारण कुरद, साधारण अस्तर, शीरीन बफत उत्तम, साधारण मलमल, बारीक मलमल, उत्तम सिलहती आदि ।[2] मध्य भारत में चन्देरी में सबसे बारीक कपड़ा बनाया जाता था ।[3]

पूर्वकाल की भाँति दरी, कालीन, चादर, तकिया, गिलाफ, पूजापाठ करने की दरियाँ भी बनायी जाती थीं[4] जिसकी बिक्री बहुत ज्यादा होती थी ।

विद्यापति ने अपनी कृति कीर्तिलता में उल्लेख किया है कि मोजे भी बनाये जाते थे ।[5]

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक दशा, पृष्ठ 377, के0एस0 लाल : द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 278, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 132.

2. बरनी : तारीख-ए-फ़िरोजशाही, पृष्ठ 310, राधेश्याम : वही, पृष्ठ 376.

3. के0एम0 पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 187.

4. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 378, के0एम0 अशरफ : वही, पृष्ठ 133.

5. विद्यापति : कीर्तिलता, पृष्ठ 27, राधेश्याम : वही, पृष्ठ 378.

<u>ढाके की मलमल</u> :

ढाके की बनी मलमल अपनी बारीकी के लिये सारे संसार में मशहूर थी ।[1] मलमल इतनी महीन होती थी कि इसकी बनी पूरी एक पोशाक एक अंगूठी के बीच से निकल जाती थी । सोनार गाँव में सबसे उत्तम प्रकार का मलमल बनायाजाता था जिसके एक टुकड़े की कीमत 4 हजार रूपये तक होती थी । इसके अलावा अन्य उत्तम प्रकार के मलमल तैयार किये जाते थे जैसे मलमल खास, सरकार-ए-आली, आब-ए-रमान, शबनम, गंगाजल आदि । दिल्ली में अच्छे किस्म की मलमल के एक थान की कीमत 100 टंका तक होती थी । दक्षिण में खासा और लखनऊ में चीकन नाम का विशेष कपड़ा तैयार किया जाता था । भरौंच का तफ्ता नामक कपड़ा सारे देश में प्रसिद्ध था ।[2] दिल्ली में छीटदार रजाई विशेष प्रकार से तैयार की जाती थी । जौनपुर और आगरा में सूती कपड़ा और दरी उत्तम प्रकार का बनायी जाती थीं।[3] लखनऊ में दरियाबन्दी और मरकूल नामक एक विशेष प्रकार का कपड़ा बनाया जाता था । कालीकट में सिरोज के कपड़े बड़े बारीक बनाये जाते थे ।[4]

---

1. के०एम० पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 187.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 92, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 131, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 249.

3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 93.

4. वही ।

बैरमी एक प्रकार का सूती कपड़ा होता था जो देखने में बड़ा सुन्दर होता था। इसका एक थान सौ-सौ दीनार में मिलता था।
खज नामक रेशमी कपड़ा भी तैयार किया जाता था। ये 5 रंगों का तैयार किया जाता था। सलाहिया शीरीन बाफ और शान बाफ नामक कपड़ा भी तैयार किया जाता था। लिनेन नामक रूमी कतान भी तैयार किया जाता था।[1] रेशमी मलमल गुजरात के अन्य भागों में बनायी जाती थी।[2]

रेशम उद्योग :

रेशम के कीड़े बंगाल में पाले जाते थे।[3] रेशम के कपड़े मुख्यत: पटना, काश्मीर, बनारस, मुर्शिदाबाद, कासिम बाजार में बनाये जाते थे। रेशम की बुनाई का अच्छा काम गुजरात में होता था। गुजरात का पटोला सुप्रसिद्ध था। इसके अलावा गुजरात, किमखाब, बदला कुर्ता, वस्त्रों में कढ़ाई के लिए प्रसिद्ध था। काबे में अच्छे डिजाइन के कपड़े मलमल, सारिन, टफेटा, मोटे गलीचे बनाये जाते थे। कैम्बे (खम्भात) में एक विशेष किस्म का रेशमी वस्त्र तैयार किया जाता था जिस पर अलाउद्दीन ने नियंत्रण लगा दिया था कि इसे केवल अमीर वर्ग ही

----

1. इब्नबतूता : रेहला आफ इब्नबतूता, पृष्ठ 2, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुगलककालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 257-258.

2. अशरफ, के०एम० : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 133.

3. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 130-131, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृ० 249.

पहनेगा । दिल्ली तथा कोल में रेशम में सूत मिलाकर कपड़ा तैयार किया जाता था ।[1] वाराणसी में सूती, रेशमी कपड़ों पर जरी का काम बहुत अच्छा होता था।[2]

<u>वस्त्रों पर रंगाई एवं छपाई उद्योग</u> :

वस्त्रों पर रंगाई एवं छपाई के उद्योगों का भी तेजी से विकास हुआ । यहाँ पर नील की खेती पहले से होती थी । नील का प्रयोग कपड़ों में रंगाई के काम में लाया जाता था ।[3] नील का सबसे अधिक उत्पादन लाहौर से लेकर अवध तक में होता था । दिल्ली सूती वस्त्र रंगने में विशेष रूप से बांधनू की रंगाई के लिए मशहूर था । गुजरात, खरखेज तथा गोलकुण्डा में रंगाई अच्छी होती थी । वस्त्रों पर रंगाई का महत्त्वपूर्ण काम आगरा, लखनऊ, अहमदाबाद, मछलीपट्टम, बंगाल, ढाका और कासिम बाजार में होता था । मछलीपट्टम की छींट बहुत प्रसिद्ध थी।[4]

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 93, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 377, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 316, रामचन्द्र तिवारी : कबीर-मीमांसा, पृष्ठ 10, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 130-132.
2. के०एम० पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 187.
3. के०एम० अशरफ : वही, पृष्ठ 133.
4. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 94, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 379, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 316, रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 10, के०एम० पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 187.

ऊन उद्योग :

ऊन उद्योग भारतीय उत्पादन का एक छोटा सा अंश था । अकबर ने इसे प्रोत्साहन दिया किन्तु यह उद्योग उन्नतिशील अवस्था में पहुँचकर भी इतना विकसित न हो सका कि इसके उत्पादन का निर्यात किया जा सकता । भेड़ पहाड़ी तथा मैदानी दोनों जगहों में पाले जाते थे । भेड़ के बालों से ऊन तैयार किया जाता था ।[1] ऊन काबुल, काश्मीर, जौनपुर, अलवर, अमृतसर, बुरहानपुर और पश्चिमी राजस्थान आदि स्थानों में ऊन ज्यादा तैयार किया जाता था । काश्मीर के बने ऊन एवं उसके बने स्वेटर एवं शाल, कम्बल प्रसिद्ध थे । सबसे अच्छी ऊन तिब्बत से आती थी । ऊनी शाल सबसे अधिक लाहौर, काश्मीर, आगरा, पटना, में बनाये जाते थे । फतेहपुर सीकरी में अच्छी किस्म की दरियाँ बनायी जाती थी । बहुत ही अच्छी किस्म का ऊन, फर, विदेशों से यहाँ आता था ।[2] इसका प्रयोग केवल कुलीनवर्ग ही करता था ।

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 375, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 93, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 316, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 129, के0एम0 पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 187.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 93-94, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 129.

रस्सी उद्योग :

बंगाल और दक्षिण के समुद्रतटीय किनारों पर नारियल अधिक पैदा होता था । नारियल की जटा से रस्सी बनायी जाती थी ।[1]

धातु उद्योग (लोहा इस्पात) :

धातु उद्योग बहुत ही प्राचीन उद्योग था । लोहार धातुओं को पिघलाकर उसे ढालकर तरह-तरह की मूर्तियाँ, बर्तन, हथियार, बनाया करते थे । यहाँ लोहे ताँबे की अनेक खानें थीं । प्रशासन की प्रकृति सैनिक होने के कारण अनेक प्रकार के हथियार तलवार, बर्तन, तीर, भाले, ढाल, कवच, अस्त्र-शस्त्र, घोड़े के पैरों की नाल, चाकू, तोप, कैंची, तरह तरह के बर्तन बनाये गये । जिससे धातु उद्योग को प्रोत्साहन मिला ।[2] बनारस, ग्वालियर, लाहौर, मुल्तान, गुजरात, सियालकोट की बनी लोहे की तलवारों की माँग अरब और फारस में अधिक थी ।[3] गुजरात में छुरे, धनुष, तीर बनायी जाती थी । सियालकोट तथा मेवाड़ की तोड़ेदार बंदूक सर्वोत्तम होती थी[4] जिससे लोहे की खपत ज्यादा बढ़ी । अहमदाबाद अस्त्र-शस्त्र उत्पादन का एक बहुत बड़ा केन्द्र था ।[5]

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 379.
2. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 379-380, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 316, रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 10, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृ0 134.
3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 94, राधेश्याम : वही, पृष्ठ 379.
4. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 95.
5. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 380.

सोना चाँदी उद्योग :

बनारस, दिल्ली, गुजरात और आगरा में सोने चाँदी के आभूषणों और बर्तनों में बड़ी सुन्दर नक्काशी की जाती थी। इन नक्काशी को देखकर तैमूर इतना अधिक प्रभावित हुआ कि इनमें से कुछ कारीगरों को अपने साथ समरकन्द ले गया था। राजा, अमीर, साधारण लोग तरह तरह के आभूषण पहना करते थे जिससे स्वर्ण उद्योग को बढ़ावा मिला। सोने चाँदी के बर्तनों में सबसे सुन्दर जड़ाऊ का काम बीदर में होता था।[1] बर्तनों में पानदान, अबखोरा, रकाबा, छोटे बड़े प्याले, हुक्के, मोमबत्तीदान में नक्काशी की जाती था। गुजरात में सन्दूकों और कलम-दान में सुन्दर नक्काशी की जाती थी। गरीब लोग ताँबे के आभूषण पहना करते थे। ताँबे तथा पीतल का सबसे अधिक सामान बनारस, लखनऊ तथा दिल्ली में मिलता था। ताँबा अधिकतर उत्तर भारत के बिहार के सिंहभूमि जिले में मिलता था। ताँबे की खानें रामपुर, नारनौल में थीं।[2]

ईंट पत्थर का उद्योग :

ईंट बनाने और पत्थर ढालने का उद्योग प्राचीन काल से चला आ रहा है। इसका विकास दिन पर दिन बढ़ता चला जा रहा है। ईंट एवं पत्थरों का प्रयोग

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 95, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 316, के० एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 134-135, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 249.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 96.

भवनों, स्तूपों, मन्दिरों, बिहारों, धर्मशालाओं, दुर्गों, मस्जिदों, मकबरों, कुण्डों, बावलियों, बारादरियों आदि को बनवाने के काम में लाया जाता था क्योंकि यहाँ के शिल्पकार बड़े कुशल थे। जितने कुशल यहाँ के शिल्पकार थे उतने देश के किसी भाग में नहीं थे।[1] बाबर ने स्वयं अपनी आत्मकथा "तुजुके बाबरी" में भारतीय शिल्पकारों की बड़ी प्रशंसा की थी। बाबर ने 680 पत्थर काटने वालों को आगरा, सीकरी, बयाना, धौलपुर, ग्वालियर में इमारत बनाने के कार्य में लगाया था।[2]

मियाँ वलिद बिल्लौर से पत्थर खरीदता था। पालिश करने वालों को पत्थर पालिश करने के लिए दे दिया करता था फिर उन पत्थरों की चीजें बनवाकर बेचा करता था। इससे उसका खर्च चलता था।[3]

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 316, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 381, के0एम0 अशरफ: हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 135-36, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 249.

2. बाबरनामा : बाबर, अनुवादक : केशव कुमार ठाकुर, पृ0 365, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 136.

3. शेख रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़े आते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 194, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 188.

शीशा उद्योग :

भारत में शीशे की खानें थीं । शीशा उद्योग के प्रमुख केन्द्र सतारा, आगरा, बिहार, गुजरात, चित्तौड़, पूर्वी गोदावरी, पश्चिमी गोदावरी, कोल्हापुर, शोलापुर, बीदर, बेलारी, गोरखपुर, अहमदनगर आदि थे । शीशे की प्याली, बोतल, हुक्के, तश्तरियाँ, ढक्कन, पीकदान, गुलदस्ते, दर्पण, ऐनक, आदि चीजें बनायी जाती रही हैं ।[1]

खपड़ा उद्योग :

खपड़ों का प्रयोग घर की छतों को बनाने के काम में आता था । रंगीन महल, 1430 ई0 में बना, बीदर में महमूद गावा का मदरसा 1472 ई0 में बना । दबीर मस्जिद (1509 ई0) में बनी । इसके अलावा आगरा और दिल्ली में अनेक भवन, मदरसे बनाये गये जिसकी छत खपड़े से छायी गयी थी ।[2]

जहाज उद्योग :

जहाज का प्रयोग एक जगह से दूसरी जगह आने जाने एवं सामान ढोने के काम में लाया जाता था । सूरत, श्रीनगर, लाहौर, आगरा, मुल्तान,

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 96, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 133.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 96.

<u>शीशा उद्योग</u> :

भारत में शीशे की खानें थीं । शीशा उद्योग के प्रमुख केन्द्र सतारा, आगरा, बिहार, गुजरात, चित्तौड़, पूर्वी गोदावरी, पश्चिमी गोदावरी, कोल्हापुर, शोलापुर, बीदर, बेलारी, गोरखपुर, अहमदनगर आदि थे । शीशे की प्याली, बोतल, हुक्के, तश्तरियाँ, ढक्कन, पीकदान, गुलदस्ते, दर्पण, ऐनक, आदि चीजें बनायी जाती रही हैं ।[1]

<u>खपड़ा उद्योग</u> :

खपड़ों का प्रयोग घर की छतों को बनाने के काम में आता था । रंगीन महल, 1430 ई0 में बना, बीदर में महमूद गावा का मदरसा 1472 ई0 में बना । दबीर मस्जिद (1509 ई0) में बनी । इसके अलावा आगरा और दिल्ली में अनेक भवन, मदरसे बनाये गये जिसकी छत खपड़े से छायी गयी थी ।[2]

<u>जहाज उद्योग</u> :

जहाज का प्रयोग एक जगह से दूसरी जगह आने जाने एवं सामान ढोने के काम में लाया जाता था । सूरत, श्रीनगर, लाहौर, आगरा, मुल्तान,

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 96, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 133.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 96.

वजीराबाद, इलाहाबाद, मछलीपट्टम, पुलीकट, बस्सेन, गोआ, भरोच, डिंडनासारी ढाका, चटगाँव, बंगाल की खाड़ी के नौ प्रांगण के अतिरिक्त कच्छ, खम्भात आदि नगरों में काफी बड़े आकार के जहाज बनते थे। इन स्थानों में न केवल जहाज बनाये जाते थे बल्कि नाव, पालकी, रथ भी बनाये जाते थे क्योंकि यहाँ लकड़ी बड़ी उत्तम किस्म की मिलती थी।[1]

कागज उद्योग :

सल्तनतकालीन प्रशासन कागजी प्रशासन था क्योंकि जैसे[2] प्रशासन का विस्तार होता गया वैसे वैसे कागज की आवश्यकता बढ़ती गयी क्योंकि कागज का प्रयोग शाही फरमानों को लिखने, आय-व्यय का हिसाब-किताब लिखने, भू-राजस्व का हिसाब लिखने, शासन सम्बन्धी आदेशों को लिखने, पुस्तकों को लिखने आदि के लिये कागज की आवश्यकता बढ़ी। इससे कागज के उद्योगों का विकास बहुत तेजी से बढ़ा। कागज बनना सबसे पहले चीन में शुरू हुआ। चीन के लोग शहतूत के वृक्ष से कागज तैयार करते थे। अरब और समरकन्द के लोग कागज कपड़े के टुकड़े से बनाते थे। धीरे धीरे करके हिन्दुस्तान के अन्य भागों में कागज बनना प्रारम्भ हो गया।[2]

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 97, के०एम० पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 187.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 382, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 316, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 137, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 249.

चीनी यात्री महुआँ (1389-1409 ई0) जो 1409 में भारतवर्ष आया था उसने बताया है कि बंगाल में वृक्ष की छाल से सफेद चमकीला कागज बनाया जाता था।[1] कागज बनाने के मुख्य केन्द्र पटना, दिल्ली, लाहौर, आगरा, अवध, अहमदाबाद, राजगीर, गया, शहजादपुर, सियालकोट आदि थे। सबसे अच्छी किस्म का कागज काश्मीर में उपलब्ध होता था। विभिन्न प्रकार के कागज विभिन्न प्रयोजन के लिये प्रयोग में लाये जाते थे। शोभायुक्त कागज का प्रयोग शाही फरमानों के लिखने के काम में लाया जाता था। टिकाऊ एवं मजबूत कागज का प्रयोग समाचारपत्रों, सौदागरों तथा दलालों द्वारा लिखने के लिये तथा पढ़ने लिखने के काम में लाया जाता था। कापी किताबों में कवर चढ़ाने के लिये मोटे और मजबूत कागज का प्रयोग किया जाता था।[2]

<u>चमड़ा उद्योग</u> :

चमड़े का प्रयोग, जूता, चप्पल, घोड़े के लिये रास व जीन, लगामें, तलवार के लिये मियान, मशक, पानी निकालने के लिए चमड़े के मोट, कुरान में चढ़ाने के लिए जिल्द, पर्स आदि बनाने के प्रयोग में लाया जाता था। सिंध में चमड़े का

----

1. महुआँ : उद्धृत।

   राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 382.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृ0 98.

सबसे अच्छा सामान बनाया जाता था । गुजरात में चमड़े की चटाई बनायी जाती थी जिस पर सोने चाँदी के तारों से पशु-पक्षी की आकृति बनायी जाती थी । गुजरात में चमड़े की बनी वस्तुएँ अरब भेजी जाती थी ।[1] बंगाल में चमड़े के झोले बनाये जाते थे । उसमें चानी भरकर जगह जगह भेजी जाती थी । यहाँ का पका हुआ चमड़ा अरब भेजा जाता था ।[2]

चीनी उद्योग :

इस काल में भी चीनी उद्योग का बहुत अधिक विकास हुआ था क्योंकि चीनी की खपत बहुत अधिक थी । भारतवासी मीठा अधिक खाते थे । चीनी गन्ने से तैयार की जाती थी । गन्ना लाहौर से आगरा के समस्त क्षेत्र, बंगाल, अजमेर, मालवा, बिहार, औरंगाबाद आदि जगहों में बहुत अधिक पैदा होता था । अच्छी किस्म की चीनी दिल्ली, बरार, लाहौर, बयाना, कालपी, आगरा में तैयार की

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 98, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 382, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 316, के0 एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ पृष्ठ 139.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 382, के0 एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 139.

जाती थी ।[1] बंगाल चीनी उद्योग का सबसे बड़ा केन्द्र था ।[2]

मिट्टी के बर्तन का उद्योग :

मिट्टी के बर्तन जयपुर, ग्वालियर, अयोध्या, बनारस, लखनऊ, काश्मीर, दिल्ली आदि स्थानों में अधिक बनाये जाते थे । मिट्टी के बर्तन, खिलौने, सम्राट और साम्राज्ञी के चित्र, भिश्ती, अथवा जलवाहक के चित्र बनाये जाते थे । भगवान की मूर्ति नहीं बनायी जाती थी क्योंकि शासक इसका विरोध करते थे । ये सब चीजें देश भर में बनायी जाती थीं ।[3] इन बर्तनों में चमकीली पालिश एवं कलात्मक डिजाइन बुरहानपुर, बैलोर, कुम्भाकोनम, मदुरई के कुम्हार करते थे ।[4]

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 98-99, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 372-373, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 249.

2. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 138.

3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 99, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 316.

4. रामचन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 10.

नशीली वस्तुओं का उद्योग :

शराब एवं नशीले पदार्थों जैसे भांग, तम्बाकू, चरस, गांजा का उद्योग (उत्पादन) प्राचीन काल से होता चला आ रहा था । इस काल में भी शराब, जौ, चावल, महुआ और शक्कर से बनायी जाती थी । भांग, तम्बाकू पैदा की जाती थी । इसके अलावा ताड़ के फलों से ताड़ी निकाली जाती थी । इसमें एक प्रकार का नशा होता था इस कारण लोग इसे पीते थे । नारियल और खजूर के पानी से भी शराब बनायी जाती थी ।[1]

सुगन्धित द्रव्य :

सुगन्धित द्रव्य जौनपुर, कन्नौज, गाजीपुर, असम, लाहौर, बेलसर, कैबे में तैयार किया जाता था । बनारस में सबसे अधिक सुगन्धित द्रव्य बनाया जाता था ।[2] नौसेरी अपने सुगन्धित तेलों के लिए प्रसिद्ध था । ये तेल और कहीं नहीं बनाया जाता था ।[3] इत्र और सुगन्धित द्रव्य का प्रयोग समारोह में छिड़कने के लिये स्वयं शासक, अमीर वर्ग वस्त्रों पर लगाने के लिये अधिक करते थे ।

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 373, के० एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 125.

2. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 373.

3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 99.

मियाँ वलीद एक कुशल कारीगर था । वह हर महीने एक या दो मन ऊद (अगर) खरीद कर उसकी अगरबत्तियाँ बनवाता था । तरह-तरह की सुगन्धित अगरबत्तियाँ उसके घर रहती थीं । व्यापारी जितने प्रकार की सुगन्धित वस्तुएँ लाते थे उसकी सूचना मियाँ वलीद को दे देते थे । मियाँ वलीद को जो चीजें पसन्द आ जाती थीं वे व्यापारी से खरीद लेता था फिर वह अपने साथियों को बेंचने को दे देता था । वस्तु का वास्तविक मूल्य वह स्वयं ले लेता था । बेंचने वालों को मुनाफा देता था ।[1]

बाँस/लकड़ी उद्योग :

भारत में लकड़ी का उत्पादन बहुत अधिक होता था क्योंकि यहाँ घने जंगल अधिक थे । इन पेड़ों से बांस भी बनाये जाते थे । इन बाँसों से झोपड़ी, स्टूल, टोकरी, मेज, कुर्सी, पलंग, सोफा, आलमारी आदि चीजें बनायी जाती थीं ।[2]

लाख उद्योग :

लाख सबसे अधिक गुजरात, बंगाल, उड़ीसा में पैदा होता था । लाख का प्रयोग खिलौने बनाने, कड़े बनाने, तथा कैलिको पेंटिंग में किया जाता था ।[3]

---

1. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 194, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 187-188.
2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 100, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 137, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृ0249.
3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 100.

मूँगा मोती :

मूँगा, मोती का उद्योग भी प्रचलित था । मूँगे की अगूठियाँ बनायी जाती थीं । मूँगे का ज्यादातर काम बंगाल और गुजरात में होता था । सबसे उत्तम किस्म का मूँगा गुजरात में ही मिलता था । ये मूँगे गुजरात से विदेशों में भेजे जाते थे। गुजरात मोतियों के लिये भी प्रसिद्ध था ।[1]

हाथी दाँत उद्योग :

पूर्वकाल की भाँति इस समय भी हाथी दाँत की अनेक वस्तुयें जैसे आभूषण - कड़े, चूड़ी, कंगन, शतरंज के पट्टे, शतरंज की मुहरें, कन्धे, खिलौने आदि बनाये जाते थे ।[2] उस पर सोने से पच्चीकारी की जाती थी । ये सब चीजें भारत के अनेक बड़े नगरों में भेजी जाती थीं । सुल्तान सिकन्दर लोदी के शासनकाल में मियाँ ताहा नामक एक व्यक्ति था वह सभी कलाओं का ज्ञाता था । सुल्तान सिकन्दर लोदी उसकी कलाकारी देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ करता था और उसकी प्रशंसा हमेशा किया करता था । मियाँ ताहा ने हाथी दाँत से कागज का एक पन्ना बनाया था और सुल्तान के लिये हाथी के दाँत का एक मुकुट बनाया था और नील कमल की

----

1. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 136, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृ०381.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 100, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 381, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 136, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 249.

भाँति एक कान में पहनने वाली बाली बनायी थी । उसके भीतर भौंरे के रहने के लिये स्थान बनाया था । जब स्त्री कर्णफूल को अपने कानों में पहनकर अपना सिर हिलाती थी तो कर्णफूल में से भौंरा बाहर निकलकर पहनने वाली स्त्री के आँखों के सामने नाचने लगता था और जब स्त्री सिर हिलाना बन्द कर देती थी तो वह भौंरा पुन: कर्णफूल के अन्दर जाकर बैठा जाता था ।[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस समय भी विभिन्न कुटीर उद्योग थे किन्तु ये उद्योग बहुत विकसित अवस्था में नहीं थे क्योंकि शासक और व्यापारी वर्ग ने इन उद्योगों के विकास और उत्पादन में रुचि तो ली थी किन्तु उसको कोई संरक्षण नहीं प्रदान किया था । किसी भी शासक और अमीर ने इन उद्योगों को बढ़ाने के लिये धन नहीं दिया इसलिये इन उद्योगों के मालिकों को अनेक आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा । उद्योगपतियों के हाथों में पैसा अधिक न होने के कारण वे अपने उद्योगों को बहुत अधिक आगे नहीं बढ़ा सके । इससे उत्पादन में कमी आ गयी दूसरी तरफ हम देखते हैं कि उन नवीन उद्योगों का विकास इस कारण भी नहीं हो पाया क्योंकि लोग पुश्तैनी व्यवसाय करते थे । उन्होंने नवीन व्यवसाय को करने की चेष्टा नहीं की और न ही नई-नई विधि से उत्पादन करने का तरीका अपनाया। वे अपनी पुरानी विधि से ही उत्पादन करते थे इससे उद्योगों का अधिक विकास नहीं हो पाया ।

----

1. अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 56, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 274.

स- आयात :

हिन्दुस्तान का अभिजात वर्ग शान-शौकत का जीवन व्यतीत करना पसन्द करता था इसलिये उसे बहुमूल्य वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती थी । ये वस्तुयें विदेशों से आयात की जाती थीं । भारत का चीन, मलाया द्वीपसमूह तथा प्रशान्त महासागर के साथ व्यापार समुद्र मार्ग द्वारा होता था । भूटान, तिब्बत, अफगानिस्तान, ईरान तथा मध्य एशिया के अन्य देशों के साथ व्यापार स्थल मार्ग द्वारा होता था ।[1]

हिन्दुस्तान में अरबी नस्ल के घोड़े ईराक से मँगवाये जाते थे जिसका मूल्य भी बहुत कम होता था पर जब ये घोड़े हिन्दुस्तान में अधिक दिनों तक रह लेते थे तो चलने से इनके पैर खराब हो जाते थे । इसी कारण बाद में घोड़े मुल्तान, यमन, अदन, फारस के अनेक द्वीपों जैसे→कटीफ, लहसा, बहारैन, होरमुज, कुलहाक आदि द्वीपों से घोड़े, भारतवर्ष में आयात किये जाते थे । फारस की खाड़ी के दक्षिण और हुरमुखात के तट पर स्थित अनेक बन्दरगाह भारतवर्ष को प्रतिवर्ष घोड़े भेजते थे । सीरिया से भी घोड़े आयात किये जाते थे ।

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 316, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 146, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 249.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 420-421, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 147, राधेश्याम : मध्यकालीन भारतीय इतिहास के सन्दर्भ में - प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 334.

तुर्किस्तान में अजाक नामक स्थान से भारतवर्ष में सबसे अधिक घोड़े करीब एक बार में प्रतिवर्ष 7000 या इससे भी अधिक घोड़े आते थे। इसके अलावा घोड़े अदन, किमिया, होरमुज, अजाक से भी अच्छी नस्ल के घोड़े आयात किये जाते थे।[1] बहलोल लोदी सिंहासन पर बैठने से पूर्व विलायत से घोड़े लाकर हिन्दुस्तान में बेचा करता था।[2]

भारतवर्ष में सोना चीन, जापान, मलक्का, मिस्त्र, मध्य एशिया, अफगानिस्तान, तिब्बत, हिमालय के राज्यों, बर्मा आदि देशों से आयात किया जाता था। भारत में चाँदी प्रचुर मात्रा में थी क्योंकि सभी देश यहाँ सिक्के लाते थे और बदले में वाणिज्य वस्तुयें ले जाते थे।[3] जबकि डॉ० आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव का कथन है कि "सभी देशों के व्यापारी भारत से निरन्तर सोना ले जाते थे और वहाँ से जड़ी-बूटियाँ और गोंद ले आते थे क्योंकि यहाँ सोना अत्यधिक मात्रा में पाया जाता था।[4]

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 105, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 147-150.
2. अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 3 अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 240, मुहम्मद कबीर बिन शेख़ इस्माईल: अफ़सानये शाहान, पृष्ठ 5अ, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 358.
3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 102-105, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक, तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 420, के०एम० अशरफ : वही, पृष्ठ 147.
4. डॉ० आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 316, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 425.

भारतवर्ष में कोरोमण्डल तट से तथा हिमालय के राज्यों से ताँबा, जस्ता, टिन, आयात होता था ।[1] मूँगा पेगू से आयात किया जाता था । रत्न फारस तथा अरब से तथा पारा लिस्बन से, शीशा यूरोप से आयात किया जाता था ।[2]

आगरा, आयात और निर्यात की विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का अत्यन्त प्रसिद्ध केन्द्र था । आगरा में बंगाल तथा पटना से कच्ची सिल्क आती थी । रेशमी कपड़े, मखमल, कढ़े हुए पर्दे, घर में सजाने की वस्तुयें, रेशम तथा जरी के कपड़े अलेक्जेण्डरिया, सिकन्दरिया ईराक, मजीद व चीन से आयात किये जाते थे । साटन यूरोप से और काश्मीर से ऊन आयात किया जाता था ।[3] मलमल यूरोप से तथा इस्पाहान से दरी आयात की जाती थी । ऊनी कपड़े अधिक मात्रा में यूरोप से आते थे ।[4]

----

1. घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 295.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 102.

3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 419, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 102-105, घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 295, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 147.

4. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 102-105.

भारतवर्ष नेपाल, भूटान, तिब्बत से कस्तूरी मँगवाता था । नेपाल, भूटान, व हिमालय के राज्यों तथा तिब्बत से तिब्बती गाय की दुम मँगवाता था । हिमालय के राज्यों, तिब्बत, नेपाल से सुहागा आयात करता था ।[1] मसालों में नेपाल से चिरैता, इलायची, बालचर, आयात किया जाता था । इसके अलावा मसाले चीन, इण्डोनेशिया से भी आते थें तथा मालाबार तट से काली मिर्च लायी जाती थी ।[2] दिल्ली के सुल्तान मलाया और कम्बोडिया की अगर लकड़ी तथा सुमात्रा की लोहबान का प्रयोग करते थे ।[3] मध्य एशिया, इस्पाहान और अफगानिस्तान से सूखे तथा ताजे फल, अम्बर, हींग, शराब, आयात किया जाता था । काबुल से भी फल आयात किया जाता था । हिमालय के राज्यों तथा तिब्बत से चीनी, लकड़ी, श्वेत चीनी, शहद, मोम आयात किया जाता था ।[4] उत्तर पश्चिमी क्षेत्रों से नमक तथा टिन, गलीचे, अफीम तथा मालाबार से काली मिर्च आयात की जाती थी ।[5]

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 104-105.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 420, घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 295, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 105, के0एम0 पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 193.

3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 420,

4. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 104-105.

5. घनश्याम दत्त शर्मा : वही, पृष्ठ 295.

भारत दास अफ्रीका के समुद्री तट से आयात करवाता था तथा हब्शी बंगाल, गुजरात तथा दक्षिण के राज्यों से मँगवाता था ।[1]

निर्यात :

भारतवर्ष में वस्तुओं का निर्यात जल एवं स्थल दोनों मार्गों द्वारा होता था । भारतवर्ष से निर्यात की जाने वाली वस्तुएँ निम्न थीं - जैसे अनाज, तेल, बीज, ज्वार, बाजरा, चावल, नील, गन्धक, चन्दन की लकड़ी, अफीम, कपूर, लौंग, नारियल, गैंडे, चीते की खाल, जस्ता, काली मिर्च, लहसुन, मोती, जूट, इत्र, तेल, हाथीदाँत का सामान, जायफल, कपड़ा, जूट, जरी के काम के वस्त्र आदि वस्तुएँ थीं ।[2]

वस्त्र :

भारतवर्ष से सबसे ज्यादा सूती एवं ऊनी वस्त्र, चीन और इण्डोनेशिया भेजे जाते थे ।[3] इसके अतिरिक्त कपड़े, जावा, सुमात्रा, बोड़ा, मलाया, बोर्निया, अर्कान, पेगु, स्याम, बेटान, हालैण्ड, इंग्लैण्ड, जर्मनी आदि स्थानों में भेजे जाते थे।

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 421.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 401, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 317, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 427, राम चन्द्र तिवारी : कबीर मीमांसा, पृष्ठ 10, के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 148.

3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 426.

भारतवर्ष बर्मा को ऊनी कपड़े भेजता था ।[1] बंगाल के विभिन्न क्षेत्रों में बने सूती कपड़े पश्चिमी तटीय प्रदेशों में बड़ी अधिक मात्रा में भेजे जाते थे ।[2] इसके अलावा सूती कपड़े बंगाल, गुजरात और कोरोमण्डल से चीन भेजे जाते थे ।[3]

भारतवर्ष में उत्तम प्रकार की बनी हुई मलमल, अरब, फारस और मिस्त्र भेजी जाती थी । गुजरात के बने ऊनी कपड़े दक्षिण पूर्व एशिया और आगरा भेजे जाते थे। पुलीकट अपने छापेदार कपड़े के लिये प्रसिद्ध था । पुलीकट के छापेदार कपड़े गुजरात, तथा मालाबार भेजे जाते थे । लाहौर में सबसे अच्छी दरी बनायी जाती थी ।[4]

बर्थमा [1503-1508 ई0] का कथन है कि बंगाल और सम्भल के बने रेशमी वस्त्र और सूती वस्त्र फारस, तातारी, सीरिया, अरब और अफ्रीका भेजे जाते थे ।[5]

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 101, के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 149.
2. घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 294-295.
3. के0एम0 अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 148, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 426.
4. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 101.
5. बर्थमा : टेवेल्स आफ बरथमा, पृष्ठ 212.

इसके अलावा रेशमी वस्त्र जो सूरत, बनारस, बंगाल, अहमदाबाद में बनते थे, ये यूरोप, बर्मा, मलाया भेजे जाते थे ।[1]

लकड़ी :

भारतवर्ष से टीक की लकड़ी फारस की खाड़ी तथा अरब सागर के देशों में भेजी जाती थी । इस लकड़ी का प्रयोग जहाज बनाने, खम्भे, बीम तथा हल में किया जाता था

पत्थर :

भारत का इण्डोनेशिया से व्यापार समुद्री मार्ग द्वारा होता था । गुजरात के बहुत से मुसलमान व्यापारी इण्डोनेशिया जाकर बस गये थे । इससे गुजरात के लोगों का इण्डोनेशिया के लोगों के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया था । गुजरात के बने पत्थर जो गुजराती शिल्पकारों की अद्भुत कला के प्रमाण माने जाते थे, ये पत्थर इण्डोनेशिया भेजे जाते थे । इन पत्थरों को इण्डोनेशिया के लोग कब्रों पर लगाते थे ।[2]

गोंद बंगाल, उड़ीसा और धार में बनायी जाती थी और फारस निर्यात की जाती थी ।[3] अफीम बिहार, मुल्तान, मालवा में उत्पन्न होती थी और इसे बर्मा,

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 101.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 426.

3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 101.

बरार, राजपूताना, खानदेश, केरल निर्यात किया जाता था ।[1] तम्बाकू को अराकान और मोचा में निर्यात किया जाता था ।[2]

गेहूँ का सबसे अधिक उत्पादन हिंडुआन, बयाना, पंचूना, बिसौर, खानवा में होता था । यहाँ से गेहूँ भारत के सभी बन्दरगाहों तथा फारस की खाड़ी तथा दक्षिण अरब को भेजा जाता था ।[3]

चीनी :

भारतवर्ष में गन्ने की खेती बहुत अधिक होती थी । गन्ने से चीनी तैयार की जाती थी । चीनी फारस, काबुल, फ्रांस भेजी जाती थी ।[4] इसके अलावा बंगाल से चीनी, कोरोमण्डल तथा मालाबार के बन्दरगाहों को तथा कोकण एवं गुजरात भेजी जाती थी ।[5]

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 102, घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 295.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 102.

3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 109, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 427.

4. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 102.

5. घनश्याम दत्त शर्मा : वही, पृष्ठ 294-295.

शोरा, लोहा, इस्पात, हींग, आँवला, दवाएँ, सेलखड़ी, संगमरमर, अंगूर, लोहा, चमड़े का सामान तथा लकड़ी का सामान एवं ऊनी शालें तथा शीशे का बना सामान यूरोप भेजा जाता था ।[1]

चावल :

चावल बंगाल में सबसे अधिक उत्पन्न होता था । बंगाल से चावल बटाविया, कोरोमण्डल, केप—कामरिन, कराँची आदि देशों को भेजा जाता था ।[2] 16वीं शताब्दी के प्रारम्भ में बंगाल का तटवर्ती प्रदेशों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध होने के कारण बंगाल से चावल मालाबार के बन्दरगाहों को तथा कोंकण और गुजरात भेजा जाता था ।[3]

उड़ीसा में फल के सबसे अधिक बाग थे । यहाँ पर भेड़ें इतनी अधिक थीं कि उसे खरीदने वाला बड़ी मुश्किल से मिल पाता था । 15वीं शताब्दी में रूस से एक विदेशी यात्री आया था उसका नाम निकिता था । उसका कहना था कि यहाँ पर भोज्य पदार्थ इतने सस्ते थे कि देखकर आश्चर्यचकित रह गया ।[4]

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 102.

2. वही, पृष्ठ 101-108.

3. घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 294-295.

4. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 124.

मालाबार मसालों के लिये प्रसिद्ध था । इब्नबतूता ने मालाबार को मिर्च उपजाने वाला क्षेत्र कहा है । मालाबार में मिर्च के अलावा नारियल, सुपारी बहुत अधिक मात्रा में उत्पन्न की जाती थी ।[1] चीन में काली मिर्च की बड़ी माँग थी । ये दोनों चीजें भारतवर्ष से चीन भेजी जाती थीं ।[2]

बहुत प्राचीन काल से भारतवर्ष का संसार के अन्य देशों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध था । इस समय भी भारतीय माल की माँग विदेशों में बहुत थी । निर्यात की जाने वाली वस्तुओं के निकास द्वार सिंध में देबल, गुजरात में खम्भात, भड़ौच, बहमनी राज्य में थाना, चोल, दभोल, विजय नगर में मंगलूर, मालाबार में कालीकट क्यूलोन तथा केप में कोमोरिन व्यापार का एक महान केन्द्र था ।

थल मार्ग से भारत का मध्य एशिया, अफगानिस्तान, ईरान, मुल्तान, क्वेटा मार्ग, खैबर के दर्रे, काश्मीर आदि देशों से व्यापार होता था ।[3]

इस प्रकार आयात और निर्यात की जाने वाली वस्तुओं को देखते हुये यह अनुमान लगाया जा सकता है कि भारत का विभिन्न देशों से व्यापारिक सम्बन्ध था। समस्त देशों के व्यापारी भारतीय बन्दरगाहों में आते थे तथा उपयोगी वस्तुएँ जड़ी-बुटियाँ, सोना, रेशम आदि चीजें ले जाते थे ।

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 124.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 426.

3. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 423, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 249.

बाबर का कथन है कि हिन्दुस्तान और खुरासान मार्ग के मध्य में काबुल और कन्धार में दो बड़े-बड़े बाजार थे। हिन्दुस्तान से काबुल और कन्धार में प्रतिवर्ष 15000 से 20000 रूपये के कपड़े जाते थे और वहाँ से यहाँ सफेद वस्त्र, मिश्री, चीनी, दवाई, मसाले बेचने के लिये लाये जाते थे। बाबर का यह भी कहना है कि भारतवर्ष में सोने और चाँदी की अनेक खानें थीं जबकि विदेशी विजेता सुल्तान महमूद गजनवी, तैमूर आदि आक्रमणकारी असीमित मात्रा में धन सोना चाँदी अपने साथ ले गया था। इसके बावजूद भारतवर्ष में सोने चाँदी की कमी कभी नहीं रही। इसका कारण बताते हुये डॉ० के०एस० लाल ने कहा है कि जो आक्रमणकारी यहाँ से धन लूटकर ले जाते थे उसे वे व्यापार के द्वारा पुनः स्वदेश वापस ले आते थे।[1]

---------::0::---------

---

1. के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 283-284, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 422.

सप्तम अध्याय

सुल्तानों की आर्थिक नीति

आर्थिक नीति

भू-राजस्व व्यवस्था एवं विभिन्न कर :

(1399 ई० से 1526 ई० तक) वित्त नीति सुन्नी विधिविज्ञों की हनीफी शाखा के वित्त सिद्धान्तों पर आधारित थी । भू-राजस्व राज्य की आय का सबसे महत्त्वपूर्ण साधन था और युद्ध में प्राप्त लूट के धन के बाद उसी का स्थान था ।

दिल्ली के सुल्तानों ने कृषि व्यवस्था की ओर काफी ध्यान दिया । मुहम्मद बिन तुग़लक ने एक नया विभाग "अमीर-ए-कोही" बनाया था जिसका कार्य बंजर भूमि को उर्वर बनाकर कृषि योग्य भूमि का विस्तार करना था किन्तु यह विभाग सैय्यद शासकों तक चलता रहा । अबुल हलीम ने लिखा है कि यह एक स्थायी विभाग बन गया और सम्भवत: लोदी काल में भी विद्यमान था ।[1] अमीर-ए-कोही के अन्य कार्य थे - नहरों का रख रखाव व विस्तार करना, अकाल की अवस्था में राहत कार्य करना, तथा नक़्द तक़ावी व बीज को बंटवाना ।[2] इस विभाग की उपलब्धियाँ कितनी थीं यह कहना कठिन है । तत्सम्बन्धित आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं किन्तु यह तथ्य स्वयं में महत्त्वपूर्ण है कि ऐसा कोई विभाग था, जिसे कृषि की चिन्ता थी ।

----

1. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ़ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 228, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 47.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, पृष्ठ 47, राधेश्याम : मध्यकालीन भारतीय इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 47.

भूमि :

भू राजस्व व्यवस्था के अन्तर्गत राज्य की भूमि तीन प्रकार की होती थी क. ख़ालसा, ख. जागीर ग. मदद-ए-माश या समूर थल ।[1]

क. ख़ालसा भूमि :

यह भूमि केन्द्रीय सरकार या सुल्तान की भूमि मानी जाती थी । ख़ालसा भूमि का प्रबन्ध सीधा केन्द्रीय सरकार द्वारा होता था । ख़ालसा भूमि से भू-राजस्व करने के लिये राज्य की ओर से अलग आमिल नियुक्त किये जाते थे जो कि केन्द्रीय प्रशासन के संरक्षण और निर्देशन में काम किया करते थे । आमिल की सहायता के लिये शाहना, मलिक या अमीर नियुक्त किये जाते थे । ख़ालसा भूमि की आय पर केवल शासक का अधिकार होता था ।[2]

ख. जागीर :

फ़िरोजशाह तुग़लक के समय बड़े बड़े अमीरों और अधिकारियों को वेतन के बदले में उतनी आय के क्षेत्र जागीर के रूप में दे दिये जाते थे । यह प्रथा वास्तव में इल्तुतमिश के समय से किसी न किसी रूप में चली आ रही थी । फ़िरोज़शाह के उत्तराधिकारियों के समय जागीरदार बहुत शक्तिशाली हो गये थे । यह प्रथा सैय्यद और लोदियों के शासन काल में भी चलती रही । अमीरों, सैनिकों, भू-राजस्व से

---

1. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ़ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 244.

2. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में - प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 48, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 289, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 234.

सम्बन्धित अधिकारियों, सरकार व परगना के अधिकारियों तथा सैनिकों को वेतन के बदले जागीरें दी जाती थीं ।[1] जागीरें वंशानुगत न होकर केवल जागीरदार के जीवन काल के लिए अनुमन्य होती थीं । विद्रोह करने पर जागीरें छीन भी ली जाती थीं।[2]

खिज्रखाँ ने इक्ताओं को "शिकों" में बाँटा था । खिज्रखाँ ने अपने सैनिकों को प्रसन्न रखने के उददेश से उन्हें उनकी जागीर से अलग नहीं किया था । इसके बावजूद अमीर बराबर विरोध और विद्रोह करते रहे । इस कारण प्रत्येक वर्ष सुल्तान और उसके सरदारों को राजस्व वसूल करने के लिये सैनिक अभियान पर जाना पड़ता था । जागीरदार जब विरोध करने की स्थिति में होते थे तब किले में बन्द हो जाते थे और लड़ाई लड़ते थे। अगर जीत जाते थे तब राजस्व नहीं देते थे। जब पराजित होते थे तब राजस्व देते थे। अगर विरोध करने की स्थिति में नहीं होते थे तब बिना युद्ध किये राजस्व दे दिया करते थे ।[3]

अफगानों के शासन काल में तो पूरा राज्य ही जागीर के रूप में बँट गया था । इस समय केवल अफगानों को ही जागीरें दी जाती थीं । इस काल में जागीरदार बहुत शक्तिशाली हो गये और कभी कभी विद्रोह का झण्डा भी खड़ा करने लगे।[4]

---

1. आई०एच० कुरेशी : द एडमिनिस्ट्रेशन आफ सल्तनत आफ देलही, पृष्ठ 130, अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 245.

2. अब्दुल हलीम : वही, पृष्ठ 245, वी०एन० पुरी : हिस्ट्री आफ इण्डियन एडमिनिस्ट्रेशन, पृष्ठ 157.

3. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 174-175.

4. आई०एच० कुरेशी : वही, पृष्ठ 130.

जागीरों के प्रलोभन से ही बहुत से अफ़ग़ान भारतवर्ष आये । बहलोल लोदी ने अपने अफ़ग़ान अमीरों को प्रसन्न रखने के लिये इन्हें बड़ी संख्या में जागीरें दी थीं[1] क्यों-कि अफ़ग़ान ही उसकी शक्ति के स्त्रोत थे । सल्तनत का कुछ भू-भाग ख़ालसा के रूप में सुरक्षित रहता था । अधिकांश भू-भाग जागीरदारों के द्वारा शासित होता था न कि नगद वेतन पाने वाले अधिकारियों के द्वारा । अफ़ग़ान काल में जागीरदारों की शक्ति बहुत बढ़ी होने के कारण वे अपने अपने क्षेत्र में प्राय: स्वतन्त्रतापूर्वक ही आचरण करते थे । इब्राहीम लोदी के समय तो पंजाब, बिहार, जौनपुर आदि इलाकों में विद्रोही बन गये थे ।[2]

सुल्तान सिकन्दर लोदी भी अपने अमीरों को जागीरें दिया करता था । ये जागीरदार अपने राज्य की एक निश्चित धनराशि भू-राजस्व के रूप में दिया करते थे । पैदावार के अनुसार लगान का निर्धारण नहीं होता था । सिकन्दर लोदी ने अपने समय के जागीरदारों को एक विशेष सुविधा यह दी थी कि जागीरदार को जो कुछ भी निर्धारित लगान के अतिरिक्त अपनी जागीर से आय प्राप्त होती थी वह सुल्तान नहीं लेता था बल्कि जागीरदार अपने पास अपने निजि खर्च के लिए रखते थे । सिकन्दर लोदी के इस निर्णय ने यह स्पष्ट कर दिया कि लोदी कालीन जागीरदार मुग़लकाल के जागीरदारों से अच्छी स्थिति में थे क्योंकि मुगलकाल में जागीरदारों की जो अतिरिक्त आय होती थी वह बादशाह की आय समझी जाती थीं । सिकन्दर लोदी के समय जागीर के अलावा विद्वानों, कलाकारों, साधुओं तथा अन्य ग़रीब लोगों को, "वक़्फ़" दिया जाता था जिससे वे अपना जीवन व्यतीत कर सकें ।[3]

---

1. ए०वी० पाण्डेय : द फ़र्स्ट अफ़ग़ान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 225.

2. वी०एन० पुरी : हिस्ट्री आफ़ इण्डियन एडमिनिस्ट्रेशन, भाग 2, पृष्ठ 50.

3. डब्लू०एच० मोरलैण्ड : मुस्लिम भारत की ग्रामीण व्यवस्था, पृष्ठ 96-97, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 340, घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 128-129, अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ़ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 244-245.

सिकन्दर लोदी ने विद्रोहियों को जागीरें छीनने तथा उन्हें एक जगह से दूसरे जगह स्थानान्तरित करने की प्रथा अपनायी थी ।[1] सिकन्दर लोदी ने जागीरदारों को स्थानीय प्रभुत्व नहीं बनने दिया और जागीरदारों को खानदानी भी नहीं बनाया ।[2] सिकन्दर लोदी के समय जागीरों के हिसाब किताब की कड़ाई से जाँच की जाती थी ।[3] सिकन्दर लोदी ने भूमि एवं जागीर की देखभाल करने के लिये आमिल नामक पदाधिकारी की नियुक्ति की थी। ये आमिल भूमि पाने वाले के तौकी (फ़रमान) में यह लिख देते थे, कि इन लोगों को भूमि में इमलाक तथा वज़ारफ़ (दान स्वरूप भूमि प्रदान की गयी है) को छोड़कर दी गयी है।[4] तथा आमिल उसे यह बता देते थे कि उस स्थान की आर्थिक आय क्या है और उससे उसे कितना अंश केन्द्रीय सरकार को कर के रूप में देना है । विशेषकर सिकन्दर लोदी के समय में जिन लोगों को जागीर दी जाती थी उन्हें यह बता दिया जाता था कि किस किस क्षेत्र में कितनी माफी भूमि है और कितना किसानों को कर देना है । जब तक केन्द्रीय सरकार को किसान कर देता था तब तक जागीर पर उसका अधिकार रहता था। जब कर देना बन्द कर देता था तो जागीर उससे वापस ले ली जाती थी । इसके अलावा अगर उसके ऊपर खज़ाने का दोष प्रमाणित हो जाता था, तो उसे न केवल नौकरी से निकाल दिया जाता था बल्कि भविष्य में उसे कभी सरकारी नौकरी नहीं दी जाती थी । इसी कारण सभी जागीरदारों की कड़ाई से जाँच की जाती थी ।[5]

---

1. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ़ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 245.
2. वी०एन० पुरी : हिस्ट्री आफ़ इण्डियन एडमिनिस्ट्रेशन भाग 2, पृष्ठ 50,
3. ए०बी० पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़ग़ान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 219, वी०एन० पुरी : वही, पृष्ठ 160.
4. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 14, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 103
5. अवध बिहारी पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 42, वी०एन० पुरी : वही, पृष्ठ 50.

जिस समय सुल्तान की सवारी निकलती उस समय अगर कोई फ़रियादी फ़रियाद लेकर सवारी के सामने आता तो सुल्तान तुरन्त पूँछता कि ये किसका दामाद है। वहाँ उपस्थित वकील फ़रियादी का हाथ पकड़कर सुल्तान के सामने लाते सुल्तान उसकी फ़रियाद सुनकर उसे सन्तुष्ट करता ।[1]

वाक़े-आते मुश्ताक़ी के लेखक शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी का कथन है कि सिकन्दर लोदी ने अपने शासन काल में जागीर देने के सम्बन्ध में कुछ नियम बना रखे थे। जब एक बार किसी को जागीर प्रदान कर देता था तो जब तक जागीरदार से कोई बड़ा अपराध नहीं हो जाता था तब तक उसमें परिवर्तन नहीं करता था। जब तक जागीर प्राप्त करने वाला व्यक्ति जीवित रहता था तब तक उस जागीर से उत्पन्न चीज़ों का उपयोग करता था। जब जागीरदार से कोई बड़ा अपराध हो जाता था तब जागीर वापस ले लेता था किन्तु उसके प्रति कृपा तथा उसकी श्रेणी में कमी नहीं करता था ।[2] यदि सुल्तान किसी के विषय में यह आदेश दे देता कि उस व्यक्ति को 1 लाख तन्के की जागीर दे दी जाय और वहाँ से 10 लाख तन्के प्राप्त होते हैं और कोई व्यक्ति सुल्तान से इस विषय में चुगली कर देता तो सुल्तान उससे कहता कि "इस व्यक्ति ने जागीर स्वयं प्राप्त की है अथवा मेरे आदेश से ? उत्तर मिलता कि सुल्तान के आदेश से प्राप्त हुई है इस पर सुल्तान उसको जवाब देता जो कुछ उसके भाग्य में था वह उसे प्राप्त हो गया ।"[3]

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 340.
   शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़े-आते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 14, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 172.
2. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वही, पृष्ठ 131, अनुवादक : वही, पृष्ठ 173.
3. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वही, पृष्ठ 50, अनुवादक : वही, पृष्ठ 133.
   इलियट एवं डाउसन : वही, पृष्ठ 340, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृ0 38.
   अनुवादक : सैयद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 133.

इसी प्रकार मलिक बदरुद्दीन भीलम को एक बार 7 लाख तन्के की जागीर किसी परगने में प्रदान की गई। इस परगने से 9 लाख तन्के प्राप्त हुए। मलिक ने निवेदन किया कि "इस परगने की जागीर 7 लाख तन्के की थी अब 9 लाख प्राप्त हुए हैं। अगर सुल्तान का आदेश हो तो मैं (अतिरिक्त आय) उसे दे दूँ।" सुल्तान ने आदेश दिया कि "इसे अपने पास रखो।" दूसरी फ़सल में 12 लाख तन्के पैदा हुए, उस मलिक ने पुनः इस विषय में निवेदन किया। सुल्तान ने आदेश दिया कि "इसे भी अपने पास रखो।" अन्य फ़सल में 15 लाख तन्के पैदा हुए, उसने पुनः निवेदन किया। सुल्तान ने आदेश दिया कि "यह सब तेरा है! बारबार क्यों इस विषय में सूचना देता है।"[1]

1496 ई0 में जब अकाल पड़ा तो सिकन्दर लोदी ने एक फ़रमान द्वारा अनाज पर से देय ज़कात को रोक दिया ताकि अकाल द्वारा पड़ी कठिनाई का सामना किया जा सके।[2]

सिकन्दर लोदी के समय जब कोई व्यक्ति बादशाह के पास नौकरी माँगने के लिए आता था तो बादशाह सर्वप्रथम उससे उसके पूर्वजों के विषय में पूछता था तब उसके पूर्वजों की प्रतिष्ठा के अनुसार उसे जागीर देता था और आदेश देता था कि इस जागीर से अपने सामान की व्यवस्था करें।[3]

----

1. अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 38, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 133, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 340.

2. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ़ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 250.

3. बन्दना पाराशर : बाबर, भारतीय सन्दर्भ में, पृष्ठ 104.

इब्राहीम लोदी :

इब्राहीम लोदी के समय जागीरदार अपनी जागीर अपने पुत्र या जिसे अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहते थे उसे दे सकते थे। जैसे हसन सूर ने अपने पुत्र फरीद को दी थी। इब्राहीम के समय सब छोटे जागीरदार बड़े जागीरदार के अधीन होते थे जबकि बाबर के समय सब छोटे बड़े जागीरदार बाबर के प्रति उत्तरदायी थे और इन जागीरदारों को अपनी जागीर अपने पुत्र या उत्तराधिकारी को देने का अधिकार नहीं था।[1]

मदद-ए-माश :

यह वह भूमि होती थी जिसे सुल्तान किसी व्यक्ति से प्रसन्न होने पर दान के रूप में दिया करता था। इसे इनाम में दी गयी भूमि भी कहा जाता था। इस भूमि में भू-राजस्व तथा अन्य कोई कर नहीं लिया जाता था।[2] यह भूमि जीवन-पर्यन्त के लिये दी जाती थी। अगर सुल्तान आज्ञा देता था तो वंशानुगत हो जाती थी। इस तरह की भूमि राज्य के विद्वानों, धार्मिक व्यक्तियों, छोटे दरबारियों, पदयुक्त अधिकारियों आदि को दी जाती थी। ये लोग इस दान में पायी गयी भूमि पर अपने पास से बीज, पानी, खाद्य की व्यवस्था कर किसानों से खेती करवाते थे और किसानों से भू-राजस्व वसूल कर अपने पास रखते थे। उससे अपनी जीविका

----

1. डब्लू०एच० मोरलैण्ड : मुस्लिम भारत की ग्रामीण व्यवस्था, पृष्ठ 103-104.

2. राधेश्याम : मध्यकालीन भारतीय इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 48, घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 130, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 234.

चलाते थे। इस भूमि को मिल्क, मदद-ए-माश अथवा इनाम में दी गयी भूमि भी कहा जाता था।[1]

लोदी सुल्तानों की उदारता के कारण लोदी काल में इस प्रकार की भूमि में काफी वृद्धि हुई। कभी कभी तो पूरा परगना ही मदद-ए-माश के रूप में दे दिया जाता था। उदाहरण के लिए उल्लेखनीय है कि सुल्तान सिकन्दर लोदी ने अपने शासनकाल में ख़ाने ख़ाना फ़रमुली के पुत्र मियाँ सुलेमान फ़रमूली को इन्द्री का परगना दिया गया था।[2]

<u>मदद-ए-माश व ऐमा का प्रबन्ध</u> :

मदद-ए-माश व ऐमा[3] के लिये सुल्तान सिकन्दर लोदी ने यह आदेश दे दिया था कि "वे अमीर जिनके पास जागीर है, जो प्रत्येक परगने में वेतन पाते हैं। इस आशय का फ़रमान लिखा जाय कि "अमुक महल में इमलाक तथा वज़ायफ[4] को छोड़ कर जागीर का आदेश हुआ " केवल एक आदेश से सुल्तान सिकन्दर ममालिके महरूसा[5] की समस्त ऐमा को मुक्त कर दिया और किसी को भी नये फरमान की

----

1. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ़ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृ0 244, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृ0 336, एल0 पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृ0 234.
2. अब्दुल हलीम : वही, पृ0 244, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 331-332, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 224.
3. अलियों अथवा सहायता के पात्रों की भूमि
4. वृत्ति आलियों इत्यादि को सहायतार्थ दी जाने वाली भूमि
5. राज्य के वे भाग जो सुल्तान के अधीन थे।

आवश्यकता न थी । किसी अमीर के घर में स्वयं उसकी ओर से बन्दोबस्त न होता था अपितु प्रत्येक व्यक्ति अपने आमिल[1] के द्वारा अपनी भूमि का प्रबन्ध करता था और वह दीवाने विज़ारत में आकर हिसाब समझा लेता था । परगनों में कोई भी व्यक्ति किसी से कोई वस्तु बिना मूल्य अदा किये नहीं लेता था ।[2] इसके अलावा कुछ अन्य भूमि थी, जो निम्न थी ।

क. <u>अक्ता में दी गयी भूमि</u> :

यह वह भूमि थी जो मुक्तियों अथवा प्रान्तीय वलियों के अधिकार में थी । इस भूमि से मुक्ती अथवा कारकून आमिल, कोतवाल, मुक़द्दम, लगान वसूल करते थे और अपने शासन के व्यय को पूरा करने के उपरान्त बाक़ी धन सरकारी खजाने में जमा करते थे ।[3]

ख. <u>किसानों की भूमि</u> :

कृषकों की भूमि से कुल उत्पादन का करीब 1/4वाँ हिस्सा भू-राजस्व के रूप में लिया जाता था । प्रत्येक किसान की अपना अलग अलग भूमि होती थी । हर किसान अपने अपने खेतों पर स्वयं खेती करता था । इनके खेत एक नाप के नहीं होते थे क्योंकि किसान अमीर गरीब दोनों किस्म के थे ।[4]

---

1. कर वसूल करने वाले ।
2. अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 38, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 261.
3. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 48, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 289, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 234.
4. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, राधेश्याम : वही, पृष्ठ 47-48.

ग.   तृतीय वह भूमि होती थी जो अधीनस्थ हिन्दू राजाओं के अधिकार में होती थी जो प्रतिवर्ष राज्य को एक निश्चित धनराशि देते थे ।[1]

भू-राजस्व की दर :

तैमूर के आक्रमण के कारण सल्तनत की सीमा आन्तरिक विप्लवों व बाह्य आक्रमणों के कारण सिकुड़ गयी थी । प्रान्तीय शासक धीरे-धीरे स्वतन्त्र हो गये तथा हिन्दू जमींदार धीरे धीरे शक्तिशाली होते गये । सैय्यद शासकों को भू-राजस्व तलवार के बल पर एकत्र करना पड़ा । भू-राजस्व की दर कुल उत्पादन का 1/4 (चौथाई) ही रही ।[2]

सैय्यद वंश के पतन के बाद 1451 ई0 में सुल्तान बहलोल लोदी ने लोदी वंश की स्थापना की । लोदी वंश की स्थापना से राजनीतिक परिस्थितियों में सुधार होने लगा । सुल्तान बहलोल लोदी ने अक्ता प्रणाली को जारी रखा । अक्तादार कुल पैदावार को ध्यान में रखकर ही भू-राजस्व वसूल किया करते थे । बहलोल लोदी ने भू-राजस्व की दर 1/4 भाग रखी थी । भू-राजस्व अनाज के रूप में लेना प्रारम्भ किया ।[3]

सिकन्दर लोदी :

सिकन्दर लोदी ने किसानों को बहुत सुविधा दी थीं । सिकन्दर

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 289.
2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 363.
3. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 50.

लोदी किसानों से नगद धनके रूप में लिया करता था। जब 1495-1496 ई0 में अकाल पड़ा तो राज्य में अनाज की कमी हो गई जिससे दाम बहुत अधिक बढ़ गये तब जनता के कष्टों को कम करने तथा प्रजा को सुख-समृद्धि प्रदान करने के लिये साम्राज्य भर में अनाज पर ज़कात कर हटा दिया और व्यावारिक कर में कमी की शीघ्र ही इससे दामों में गिरावट आ गयी। कहा जाता है कि अनाज का दाम गिरने से अनाज तथा अन्य दूसरा सामान इतना सस्ता हो गया कि साधारण वेतन पाने वाला व्यक्ति भी सुख शान्ति का जीवन व्यतीत करने लगा।[1] इसके अलावा सुल्तान सिकन्दर लोदी ने "गज़े सिकन्दरी" नामक एक प्रामाणित माप प्रचलित करवाया, जो मुग़लकाल तक चलता रहा क्योंकि सिकन्दर लोदी कृषि के विकास में व्यक्तिगत रूप से रुचि लेता था।[2]

---

1. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 320 अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 215-216, वन्दना पाराशर : बाबर भीरतीय सन्दर्भ में, पृष्ठ 102, डब्लू0एच0 मोरलैण्ड: मुस्लिम भारत की ग्रामीण व्यवस्था, पृष्ठ 104, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 190, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 595 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 235, राधेश्याम : मध्य-कालीन भारत के इतिहास मे सन्दर्भ में - प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 50.

2. ए0वी0 पाण्डेय : द फ़र्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 225-226, डब्लू0एच0 मोरलैण्ड : वही, हबीब निज़ामी : वही, ख्वाजा निज़ामुद्दीन, वही, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 339, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 595, अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ़ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 249.

इब्राहीम लोदी :

इब्राहीम लोदी भू-राजस्व अनाज (गल्ले) के रूप में लिया करता था। नगद धन नहीं लेता था क्योंकि सोने चाँदी तथा सिक्कों की कमी हो गयी थी इसलिये नगद लगान लेना मुश्किल हो गया था। इस असुविधा को मिटाने के लिये अनाज लेना प्रारम्भ किया था। केवल दूर के सूबों से लगान सिक्कों के रूप में लिया जाता था। सोने चाँदी की कमी के कारण किसानों को अनेक विपदाओं का सामना करना पड़ा। उनकी दशा दयनीय हो गयी। इन्हें नगद धन प्राप्त करने के लिये अत्यधिक मनमाने ढंग से अनाज बेचना पड़ता था। इससे अनाज बहुत सस्ता हो गया क्योंकि नगद धन न लेने के कारण जागीरों से असीमित मात्रा में अनाज आने लगा था।[1] इससे साधारण से साधारण लोग आराम का जीवन व्यतीत करने लगे थे।

सुल्तान इब्राहीम लोदी के समय पूर्वी उत्तर प्रदेश व बिहार में फ़रीद ने अपने पिता हसन सूर की जागीर में भू-राजस्व प्रणाली में कुछ विशेष सुधार किये। फ़रीद ने बटाई, कनकूत, प्रथाओं के अनुसार भू-राजस्व की दर निश्चित की। अपने गाँव के स्थानीय अधिकारियों को आदेश दिया कि वे किसानों के हितों को ध्यान में रखकर ही कर का निर्धारण करें। उसने किसानों के साथ लिखित समझौता

---

1. ए०बी० पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़ग़ान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 228, डब्लू० एच० मोरलैण्ड : मुस्लिम भारत की ग्रामीण व्यवस्था, पृष्ठ 90, राधेश्याम सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 272, ए०बी० पाण्डेय: मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 43, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 50.

किया । सरकार की ओर से भूमि के लिये पट्टा लिखा जाता था कि अमुक भूमि किसान के पास कितने समय तक रहेगी और इसके बदले में कबूलियत द्वारा किसान भू-राजस्व के भुगतान के सम्बन्ध में अपना उत्तरदायित्व स्वीकार करता था । इस प्रकार फरीद ने किसानों से सीधा सम्बन्ध रखा । फरीद का मुख्य उद्देश्य अधिक से अधिक भू-राजस्व वसूल कर अपने पिता की जागीर की आय को बढ़ाना और किसानों के शोषण को रोकना था ।[1]

इस सम्पूर्ण काल में साम्राज्य की कुल जमा कितनी थी, यह कहना बड़ा मुश्किल है क्योंकि साम्राज्य की सीमा बराबर बढ़ती घटती रही । समकालीन इतिहासकारों ने कहीं भी साम्राज्य की वार्षिक जमा के आँकड़ों का वर्णन नहीं किया है ।[2]

परन्तु अब्दुल हलीम ने बताया कि किसानों का जमींदार और जागीर-दार बराबर शोषण किया करते थे। इसी कारण सिकन्दर लोदी के शासनकाल में पहले वर्ष में राज्य को आय 7 लाख हुयी, दूसरे वर्ष 11 लाख और तीसरे वर्ष 14 लाख हुयी थी । 1528 ई0 में भेड़ा से बिहार तक के प्रदेशों से राज्य को 52 करोड़ टंक की आय प्राप्त हुयी थी । बाबर ने सिकन्दर लोदी की माँ को एक परगना दिया था जिसकी आय 7 लाख दाम थी । कन्नौज का परगना जिसे बाबर ने मोहम्मद सुल्तान मिर्ज़ा को दिया था जिसकी आय 30 लाख थी । बिहार का परगना मोहम्मद जमान मिर्जा को दिया था जिसकी आय एक करोड़ 25 लाख थी।[3]

---

1. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में, प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 51.

2. वही ।

3. अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 252-253 श्रीमती बेवरिज बाबरनामा, भाग 2, पृष्ठ 520-521,

भू-राजस्व प्रशासन से सम्बन्धित अधिकारी :

सरकार ने वित्तीय प्रशासन एक दीवान के अन्तर्गत रखा थादीवानवसूला गया धन सीधे केन्द्रीय खज़ाने में भेजता था । इस प्रकार दीवान अपना कार्य प्रान्तपति से लगभग स्वतन्त्र होकर करता था ।[1] सरकार के दीवान की देखरेख में परगना के वित्तीय अधिकारी रहते थे । वह परगना के खज़ाने के हिसाब-किताब की जाँच भी करवाता था, ताकि कोई सरकारी धन का गबन न कर सके । दीवान के सहायक मुसिर्रित, मुसतौफी और बहुत से लिपिक होते थे । सरकार के अन्य अधिकारी इस प्रकार होते थे - वक्शी, काज़ी, कोतवाल, मुहतर्सिन आदि।[2]

परगना स्तर के प्रशासन पर बहलोल लोदी और सिकन्दर लोदी ने बहुत ज़ोर दिया था । परगना या शिक एक वित्तीय इकाई थी। इसके अन्तर्गत कई गाँव होते थे । परगना का अधिकारी शिकदार कहलाता था । भू-राजस्व की वसूलीमें भी शिकदार मदद करता था । परगना के अन्य अधिकारी इस प्रकार थे - आमिल, फ़ोतादार, दारोगा (खज़ाने का अधीक्षक) कारकुन, अमीन, कानून-गो, मुन्सिफ, थानेदार, पटवारी, बड़े परगनों में काज़ी भी रहते थे ।[3]

प्रत्येक सरकार किसान से सीधा कर नहीं लेती थी बल्कि चौधरी, मुकद्दम ( ), खूत, कानूनगो, पटवारी आदि स्थानीय राजस्व पदाधिकारियों द्वारा भूमि कर वसूल किया जाता था । पदाधिकारी किसानों से लगान वसूल करते थे और

----

1. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 235.

2. वही, पृष्ठ 236.

3. वही, पृष्ठ 236-237.

प्रत्येक उपक्षेत्र में (संभवत: शिक में) आमिल नाम का एक पदाधिकारी रहता था, जो इनसे राजस्व इकट्ठा करके राजकोष में जमा करता था । राजस्व की दर उपज के आधार पर नहीं निर्धारित की जाती थी बल्कि अनुमान से ही निश्चित कर दी जाती थी । इक्ता में राजस्व निर्धारित तथा वसूल करने का कार्य मुक्ती के हाथ में होता था ।[1] वह अपना भाग काटकर बचत को केन्द्रीय सरकार के कोष में जमा कर देता था । मुक्ती बहुत चालाक हुआ करते थे । वह स्वयं धन अधिक ले लेते थे । राजकोष में कम जमा करते थे । इसलिये वज़ीर की सलाह से सुल्तान ने प्रत्येक इक्ता के लिये ख़्वाजा नामक एक पदाधिकारी की नियुक्ति की थी जिसका काम राजस्व की वसूली की देखभाल करना तथा मुक्ती पर नियंत्रण रखना था । सुल्तान अपने गुप्तचरों द्वारा सब अधिकारियों के बारे में पता लगवाता रहता था । गुप्तचरों की उपस्थिति के कारण ख़्वाजा और मुक्ती के मध्य झगड़ा होने की संभावना कम रहती थी क्योंकि वे स्थानीय पदाधिकारियों के कामों की सीधी रिपोर्ट केन्द्रीय सरकार को दिया करते थे ।[2]

वे हिन्दू राजा जिन्होंने सुल्तान की अधीनता स्वीकार कर ली थी, अपने अपने राज्यों में पूर्ण स्वायत्तता का उपयोग करते थे उन्हें केवल सुल्तान को एक निश्चित कर देना पड़ता था । उनके अधिकार क्षेत्रों में रहने वाले किसानों को अपने जमींदारों को छोड़कर अन्य किसी अधिकारी से सम्बन्ध नहीं रहता था । वक़्फ़ अथवा इनाम के रूप में दी गयी भूमि मुफ्त और माफ़ीदारों की वंशानुगत सम्पत्ति हो जाती थी ।[3]

----

1. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 234.

2. वही, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 292.

3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 233-234.

वज़ीर, ग्रामों, परगनों और इक्तों की निकासी का हिसाब रखता था । जब किसी व्यक्ति को कोई जागीर दी जाती थी तब अर्थ विभाग के कर्मचारी उसे बता देते थे कि उस स्थान की वार्षिक आय क्या है और उसे उसमें से कितना अंश केन्द्रीय सरकार को देना होगा ।

इस प्रकार राज्य के कर्मचारियों का किसानों से प्रत्यक्ष सम्पर्क न था, बल्कि वे वंशानुगत और परम्परा से चले आ रहे थे ।

शासक सूबेदारों और अन्य पदाधिकारियों की आय व्यय के हिसाब की जाँच भी करवाते थे । हिसाब में गड़बड़ी करने वाले और धन का गबन करने वालों को कठोर दण्ड दिया जाता था । सिकन्दर लोदी ने अपने मुख्य अमीर मुबारक खाँ लोदी को जौनपुर का राजस्व वसूल करने के लिए भेजा उसने राजस्व ज्यादा वसूल किया पर राजकोष में धन कम जमा किया । इससे नाराज होकर सुल्तान ने उसे कठोर दण्ड दिया और राज्य का जो धन उसने ग़बन किया था, उसे राजकोष में जमा करने पर बाध्य किया ।[1]

दोष :

लगान व्यवस्था में कुछ दोष थे । क. भूमि की पैमाइश न करके अनुमान के आधार पर लगान निश्चित किया जाता था जिससे किसानों को हानि होती थी । लगान वसूल करने वाले अधिकारी किसानों से मनमाना लगान वसूल करते थे राजकीय कोष में धन कम जमा करते थे । ख. भूमि ठेके पर दे दी जाती थी, ठेकेदार किसानों से अधिक लगान वसूल करते थे । ग. किसानों को अनेक अन्य कर भी देने पड़ते थे जिससे किसानों पर कर का भार अधिक हो जाता था ।[2]

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 234.

2. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 235.

सिंचाई के साधन :

पूर्वकाल की भाँति इस समय के किसान भी कुओं, तालाबों, बावलियों तथा नहरों से पानी लेकर खेतों में सिंचाई करते थे ।[1] कुओं से पानी रहट द्वारा निकाला जाता था । रहट जिसमें एक चक्के के चारों ओर पानी के बर्तन लगे होते थे। उससे पानी निकाला जाता था ।[2] बाबर ने अपनी आत्मकथा बाबरनामा में लिखा है कि लाहौर, दीपालपुर, सरहिन्द तथा उसके समीपवर्ती क्षेत्र में तथा आगरा, चन्द्रवार जो आगरा के दक्षिण पूर्व में जमुना नदी के दाहिने किनारे में बसा है वहाँ तथा बयाना के सभी क्षेत्रों में रहट द्वारा खेतों में सिंचाई होती थी । रहट द्वारा सिंचाई निम्न विधि से की जाती थी- इसमें दो रस्सियों को गोलाई में, कुएँ तक पहुँचाने के लिये ले लिया जाता था। दोनों रस्सियों के बीच बीच में लकड़ियाँ बाँध दी जाती थीं। जिन दो रस्सियों में लकड़ियाँ तथा घड़े बँधे जाते थे उन्हें उस चरखी पर रख देते थे जो कुएँ पर रहती थीं । इस चरखी के धुरे से एक दूसरी चरखी जुड़ी रहती थी और उसके निकट ही खड़े धुरे पर एक अन्य चरखी होती थी इस चरखी को बैल घुमाता था । उस बैल के दाँत चरखी के दाँत से जुड़े रहते थे इस प्रकार वह चरखी जिस पर घड़े होते थे घूमती है जहाँ जल गिरता है वहाँ एक कठौता होता है और जल नालियों से होता हुआ प्रत्येक स्थान पर पहुँच जाता है । रहट के प्रयोग करने से कृषि में बहुत वृद्धि हुयी[3] पर इससे सिंचाई करने से किसानों को बहुत अधिक मेहनत करनी पड़ती थी ।

----

1. आई०एच० कुरेशी : द एडमिनिस्ट्रेशन आफ सल्तनत आफ देहली, पृष्ठ 126-127, बाबर : बाबरनामा अनुवादक श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 348.
2. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लककालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 314, वही, मुगलकालीन भारत, बाबर, पृष्ठ 170.
3. बाबर : वही, पृष्ठ 348, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : मुगलकालीन भारत, बाबर, पृष्ठ 25-105.

वैसे किसान सिंचाई के कृत्रिम साधनों की अपेक्षा मौसमी वर्षा पर अधिक निर्भर रहते थे वे सदैव भगवान से अच्छी वर्षा होने की कामना किया करते थे ।

बाबर ने बताया कि कहीं कहीं खेतों को सिंचाई डोल द्वारा की जाती थी । स्त्री तथा पुरुष डोल में पानी पीने तथा खेतों में सिंचाई करने दोनों के काम में लाया जाता था । लोग अपने अपने घरों में 7-7 हाथ गहरा गड्ढा खोदते थे। उसी से पानी आने लगता था, ये कुएँ ज्यादा गहरे नहीं होते थे। इसके अलावा वर्षा का जल भी पीने तथा घर गृहस्थी के काम में लाया जाता था। अपने अपने घरों में बड़े बड़े गड्ढे खोद लेते थे । जब पानी बरसता था तब उसमें एकत्र होता जाता था। इस पानी को भी इस्तेमाल में लाते थे ।[2]

बाबर का कथन है कि "हिन्दुस्तान का अधिकतर भाग समतल भूमि पर स्थित है । हिन्दुस्तान बहुत बड़ा देश है । यहाँ बहुत अधिक नगर तथा विलायतें हैं किन्तु किसी भी स्थान पर जल-धारायें नहीं हैं । कहीं कहीं नदियाँ अवश्य हैं यहाँ के खेतों तथा उद्यानों को ज़्यादा पानी की ज़रूरत नहीं पड़ती थी क्योंकि अधिकांश भूमि समतल है। चूँकि यहाँ पर वर्षा अच्छी होती थी, इस कारण खरीफ़ की फ़सल को अलग से पानी देने की ज़रूरत नहीं पड़ती थी बल्कि जब बरसात में पानी बरसता था तभी खरीफ़ की फ़सल बोई जाती थी । यह बड़ी विचित्र बात है कि रबी की फ़सल भी जल के बिना पैदा हो जाती थी । पेड़-पौधों को 1-2 वर्ष तक डोल अथवा रहट द्वारा सींच दिया जाता था फिर इन पेड़ों को पानी देने की ज़रूरत नहीं पड़ती थी ।[3]

----

1. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 71.
2. वही, तुग़लक़कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 314.
3. वही, बाबर, पृष्ठ 170.

(ब) <u>कर व्यवस्था</u> :

आय के 5 मुख्य साधन या स्त्रोत थे। उश्र, ख़राज, ज़कात, खम्स, जजिया।

1. <u>उश्र</u> :

यह मुसलमानों से लिया जाने वाला भूमिकर था। जिस भूमि पर प्राकृतिक साधनों से सिंचाई होती थी वहाँ से पैदावार का 10% भाग और जिस भूमि पर मनुष्यकृत साधनों से सिंचाई होती थी वहाँ से पैदावार का 5% भाग भूमिकर के रूप में लिया जाता था।[1]

2. <u>ख़राज</u> :

यह गैर मुसलमानों से लिया जाने वाला भूमिकर था।[2] इस्लामी क़ानून के अनुसार इसकी दर 1/10 से 1/2 तक होती थी।[3] आमतौर पर राज्य की माँग एक तिहाई होती थी। केवल अलाउद्दीन के समय भू-राजस्व उपज का 50% थी।[4]

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 287, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 233, आई0एच0 कुरैशी : द एडमिनिस्ट्रेशन आफ देलही सल्तनत, पृष्ठ 100-102.
2. आई0एच0 कुरैशी : वही, पृष्ठ 102.
3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, एल0पी0 शर्मा : वही, आई0एच0 कुरैशी: वही, पृष्ठ 103.
4. आई0एच0 कुरैशी : वही, पृष्ठ 118.

अलाउद्दीन खिलजी ने जमीन की नाप करवाकर लगान निर्धारण की प्रथा को पसन्द किया था । गयासुद्दीन तुग़लक ने बटाई प्रथा को मान्य किया । ऐसा लगता है कि तैमूर के आक्रमण के पश्चात् की डेढ़ शताब्दी में शेरशाह के पहले तक यत्र तत्र ज़मीन नापने की प्रथा प्रचलित थी किन्तु उस पर विशेष जोर नहीं दिया गया था । ज़मीन नापने की प्रथा का प्रचलन शेरशाह के पहले था । इसका एक प्रमाण यह मिलता है कि अपने पिता की जागीर के प्रबन्धक के रूप में उसने बटाई और मापन प्रथा में चुनाव करने का अधिकार किसानों को दिया था ।[1]

बहलोल लोदी ख़राज अनाज के रूप में लेता था ।[2] सुल्तान बहलोल लोदी ने जब ग्वालियर, धौलपुर और बारी को विजय किया तो इन प्रदेशों को उनके सुल्तानों के अधिकार में इस शर्त पर रहने दिया कि वे प्रतिवर्ष सुल्तान को ख़राज देंगे ।[3]

सुल्तान सिकन्दर लोदी ने ज़मीन नापने के लिए सिकन्दरी गज़ चलाया था । सिकन्दरी गज का चलाया जाना इस तथ्य का संकेत देता है कि ज़मीन नपवाने की प्रथा अप्रचलित नहीं थी । कहीं कहीं भू-राजस्व के बदले निश्चित धनराशि नगद अथवा अनाज के रूप में लेने की प्रथा प्रचलित थी (मुहसिबा) बटाई प्रथा (मुकासिमा) भी प्रचलित थी ।[4]

----

1. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ़ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 250.
2. आई0एच0 कुरेशी : द एडमिनिस्ट्रेशन आफ़ सल्तनत आफ़ देहली, पृष्ठ 107, अब्दुल हलीम : वही, पृष्ठ 251.
3. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 584.
4. अब्दुल हलीम : वही, पृष्ठ 250.

यह ज्ञात नहीं है कि अकाल पड़ने पर राज्य द्वारा क्या राहत कार्य किये जाते थे। 1496 ई0 का एक उल्लेख मिलता है कि जब अकाल पड़ गया तब सिकन्दर लोदी ने अनाज पर से ज़कात हटा ली थी।[1] सिकन्दर लोदी ख़राज नगद के रूप में लेता था।[2] वर्ष में दो बार भू-राजस्व का निर्धारण एवं उसकी वसूली की जाती थी - खरीफ़ और रबी। किसानों को भुगतान की रसीद भी दी जाती थी।[3]

3. खम्स :

शरियत के अनुसार अभियानों से प्राप्त लूट का धन, खानों अथवा भूमि में गड़े हुये धन सम्पत्ति की कुल कीमत का 1/5 भाग पर सुल्तान का अधिकार था। बाकी बचे हुये धन को सैनिकों में बाँट देना चाहिए। मुसलमान विधिवेत्ता इसी नियम के अनुसार चलते थे किन्तु सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी ने 4/5 भाग अपने लिये रखा और 1/5 भाग सैनिकों में बाँटा। मुहम्मद तुग़लक़ ने भी ऐसा किया जबकि फ़िरोज तुग़लक़ ने शरा के अनुसार 1/5 भाग राज्य के लिये रखा और बाकी 4/5 भाग सैनिकों में बाँटा जबकि सिकन्दर लोदी गड़े हुये खज़ाने में से अपने लिये कोई हिस्सा नहीं लेता था।[4]

----

1. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ़ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 251.
2. आई0एच0 कुरेशी : द एडमिनिस्ट्रेशन आफ़ सल्तनत आफ़ देलही, पृष्ठ 107, अब्दुल हलीम : वही, पृष्ठ 251.
3. अब्दुल हलीम : वही, पृष्ठ 250.
4. आई0एच0 कुरेशी : वही, पृष्ठ 100, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में - प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 52, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 233, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, वही, पृष्ठ 287.

सिकन्दर लोदी के शासन काल में सम्भल में एक व्यक्ति भूमि खोद रहा था । भूमि खोदते समय उसे ज़मीन के नीचे एक मटका मिला । जब मटका खोला गया तो उसमें 5 हज़ार सोने की मुहरें निकलीं । तब सम्भल के हाकिम मियाँ क़ासिम ने उससे सब धन ले लिया और सुल्तान को इस घटना की सूचना दी । सुल्तान सिकन्दर बड़ा ही प्रतापी, दानी, सदाचारी एवं साहसी बादशाह था । सुल्तान ने आदेश दिया कि जिस व्यक्ति को भूमि खोदते समय यह धन प्राप्त हुआ है वह उसे ही दे दिया जाये । तब मियाँ क़ासिम ने पुनः सुल्तान से निवेदन किया कि "बादशाह सलामत ! जिस व्यक्ति को यह धन प्राप्त हुआ है वह इतना धन पाने के योग्य नहीं है ।" तब मियाँ क़ासिम को सुल्तान ने पुनः फ़रमान लिखा और भेजा कि "हे मूर्ख ! जिस अल्लाह ने यह धन उसे दिया है अल्लाह उसे इस योग्य न समझता तो यह धन कैसे देता । सभी अल्लाह के दास हैं । अल्लाह भली-भाँति जानता है कि कौन धन पाने के योग्य है और कौन अयोग्य है । इसलिये समस्त धन जिसे भूमि खोदते समय मिला है उसे दे दिया जाये ।[1]

इसी तरह अजोधन में बन्दगी शेख़ मुहम्मद की भूमि में एक किसान हल चला रहा था । वहाँ उसे एक बहुत बड़ा पत्थर दिखायी पड़ा । किसान खेत में हल चलाना छोड़कर शेख़ मुहम्मद के पास गया । तब शेख़ कुछ लोगों को साथ लेकर घटना का पता लगाने के लिये गया । जब लोगों ने भूमि खोदनी प्रारम्भ की तो उन्हें एक पत्थर मिला । जब पत्थर हटाया गया तो पत्थर के नीचे एक कुआँ

----

1. अब्दुल्लाह : तारीख़े दाऊदी, पृष्ठ 42, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 265, अहमद यादगार : तारीख़े शाही, पृष्ठ 35, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 324-325.

मिला । शेख़ स्वयं उस कुएँ के अन्दर गया तो उसने देखा कि वह स्थान ख़ज़ाने से भरा हुआ है । शेख ने समस्त ख़ज़ाने का सामान स्वयं ले लिया । उस ख़ज़ाने में उसे कुछ सोने के बर्तन मिले जिस पर सुल्तान जुलकरनैन[1] का नाम लिखा था । तब सभी लोग इस बात से सहमत हो गये कि यह ख़ज़ाना जुलकरनैन का है । दीपालपुर की हुकूमत अलीखाँ नामक एक अमीर के अधीन थी । उन अलीखाँ ने शेख को पत्र लिखा और कहा कि यह विलायत मुझसे सम्बन्धित है । इस कारण जो धन मिला है वह मेरा है । तब शेख़ ने उत्तर दिया कि "यदि अल्लाह ने यह धन तुम्हारे भाग्य में लिखा था तो यह धन मुझे क्यों देता, इसलिये यह धन मेरा है क्योंकि अल्लाह ने मुझे प्रदान किया है इसलिये तुझे कुछ भी नहीं दिया जायेगा ।" तब अलीखाँ ने सुल्तान से यह बात कही कि "शेख़ मुहम्मद की भूमि में जो ख़ज़ाना प्राप्त हुआ है वह मेरा है । तब सुल्तान सिकन्दर ने कहा कि तुझे क्या, दरवेशों को क्यों कष्ट होता है ।" शेख मुहम्मद ने भी अपने कुछ आदमी को जिन बरतनों पर जुलकर नैन का नाम लिखा था बर्तनों सहित सुल्तान की सेवा में भेजा और निवेदन किया कि ये बर्तन प्राप्त हुए हैं तब सुल्तान ने कहा कि सभी अपने पास रख लो हमें भी अल्लाह को हिसाब देना है और तुम्हें भी, राज्य अल्लाह का है वह जिसे चाहता है उसे देता है ।[2]

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 343.

2. वही,

   अब्दुल्लाह : तारीखे़ दाऊदी, पृष्ठ 43, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 364-365.

   तारीखे़ शाही : अहमद यादगार, पृष्ठ 36, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 325.

4. <u>ज़कात</u> :

यह मुसलमानों से लिया जाने वाला धार्मिक कर था जो केवल धनवान मुसलमानों से ही लिया जाता था । यह उनकी आय का 2½ भाग होता था। इस धन को केवल मुसलमानों के हितों के लिये ही व्यय किया जाता था । जैसे मस्जिदों और कब्रों की मरम्मत, धार्मिक तथा दरिद्र लोगों पर यात्रा भत्ता आदि पर खर्च किया जाता था ।

ज़कात सोना, चाँदी, जानवरों आदि विभिन्न वस्तुओं पर लिया जाता था । ज़कात का अंकन सम्पत्ति के कुल मूल्य या उसके भार के हिसाब से लिया जाता था और उसका 1/40 वाँ भाग ज़कात के रूप में लिया जाता था । शर्त यह थी कि ज़कातदाता के पास यह सम्पत्ति कम से कम एक वर्ष तक अवश्य रही हो । दिल्ली के सभी सुल्तान ज़कात वसूल किया करते थे । फ़िक्र-ए- फ़िरोज़शाही में ज़कात के लिए एक अलग राजकोष का उल्लेख किया गया है जिससे यह पता चलता है कि उसी राजकोष में ज़कात की रकम जमा की जाती थी ।[1]

यह कर मुसलमानों पर उनकी धनपिपासा को दूर करने के लिये लगाया जाता था ताकि प्रत्येक मुसलमान अपनी सम्पत्ति का कुछ भाग दरिद्रों व गरीबों

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 287, अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ़ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 244, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 233, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 53,

आई0एच0 कुरेशी : द एडमिनिस्ट्रेशन आफ़ द सल्तनत आफ़ देहली, पृष्ठ 95-96.

को दान हेतु दे । सिकन्दर लोदी ज़कात सोना, चाँदी तथा विभिन्न जानवरों के रूप में लिया करता था । अन्य सुल्तानों ने खाद्यानों पर ज़कात लिया पर सिकन्दर लोदी ने खाद्यान्नों पर ज़कात नहीं लिया[1] बल्कि भूमि तथा आयात की गयी वस्तुओं पर मूल्य का 1/40वाँ भाग लिया । मुसलमानों को बराबर ज़कात देना पड़ता था । घोड़ों पर ज़कात 5 प्रतिशत प्रति घोड़े पर लिया जाता था।[2]

5. जज़िया :

जज़िया एक प्रकार का धार्मिक कर था जो हिन्दुओं से लिया जाता था इस्लामी क़ानून के अनुसार गैर मुसलमानों को (जिम्मी) पुकारा जाता था । हिन्दुओं को मुसलमान शासक के राज्य में रहने का अधिकार नहीं था । इस कर को देने के बाद ही वे राज्य में रहकर शासन का संरक्षण और जीवन की सुरक्षा प्राप्त कर सकते थे । कट्टर सुन्नी विधिविज्ञों के अनुसार गैर मुसलमानों को मुसलमानों के राज्य में रहने का अधिकार नहीं है किन्तु आधुनिक विद्वानों का मत है कि जज़िया धर्म निरपेक्ष कर था और गैर मुसलमानों पर इसलिये लगाया जाता था क्योंकि वे सैनिक सेवा से मुक्त थे । मुसलमानों को कम से कम सिद्धान्त: अनिवार्य रूप से राज्य की सैनिक सेवा करनी पड़ती थी । प्रारम्भिक मुसलमान विधिविज्ञों ने करों को दो वर्गों में विभक्त किया । धार्मिक कर एवं धर्म निरपेक्ष कर । जज़िया को उन्होंने धर्मनिरपेक्ष कर की कोटि में रखा । धार्मिक कर ज़कात और सदक़ा थे जो केवल मुसलमानों से लिये जाते थे । जज़िया मुसलमानों पर नहीं लगाया जाता था

---

1. आई. एच. कुरेशी : द एडमिनिस्ट्रेशन आफ सल्तनत आफ देलही, पृष्ठ 98.

2. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 244, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन - समाज और संस्कृति, पृष्ठ 53.

और न इसके सम्बन्ध में कोई ऐसा नियम था कि इससे होने वाली आय को धार्मिक कार्यों में ही व्यय किया जाये । यही कारण है कि मुस्लिम विधिविज्ञों ने उसे धर्मनिरपेक्ष करों की कोटि में रखा है किन्तु उपर्युक्त वर्गीकरण के अनुसार जज़िया को धर्मनिरपेक्ष कर कहना युक्तिसंगत नहीं है ।

जज़िया तुरूश का दण्ड अथवा अन्य किसी कर की भाँति धर्मनिरपेक्ष कर था यह कहना सत्य से बहुत दूर होगा ।[1]

जज़िया के लिये ग़ैर मुसलमानों को 3 भागों में बाँटा गया था और प्रत्येक वर्ग को क्रमश: 12, 24 और 48 दिरहम कर जज़िया के रूप में देने पड़ते थे । यानि निम्न वर्ग 10 तन्का, मध्यम वर्ग 20 तन्का तथा उच्च वर्ग 40 तन्का प्रतिव्यक्ति के हिसाब से प्रतिवर्ष कर के रूप में देते थे और इसके बदले में सम्राट की ओर से उनके जीवन तथा सम्पत्ति की रक्षा का आश्वासन मिलता था और वे सैनिक सेवा से मुक्त रहते थे ।[2]

जज़िया कर केवल उन्हीं ग़ैर मुसलमानों से लिया जाता था जो कि राज्य की सैनिक सेवा या किसी अन्य प्रकार की सेवा में प्रत्यक्ष या परोक्ष ढंग से न हो, उनसे लिया जाता था । इसके अलावा दुर्बल, असहाय, वृद्ध, बच्चे, विकलांग, अन्धे भिखारी, लंगड़े, फकीर, साधू, सन्त, पुरोहित, ईश्वर की उपासना, चिन्तन, मनन

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 288.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, एल. पी. शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 233-234.

राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 49-50, 53.

लगे हुये लोग इस कर से मुक्त थे। इसके अलावा जिन व्यक्तियों के पास आय का कोई साधन नहीं था वे भी इस कर से मुक्त थे।[1]

फिरोज़शाह तुग़लक़ के पूर्व के सुल्तान ब्राह्मणों, फ़क़ीरों, पुरोहितों से जज़िया नहीं लिया करते थे किन्तु फिरोज़ तुग़लक ने समानता के सिद्धान्त के अनुसार उलमा से विचार कर ब्राह्मणों से जो न सन्त थे न पुरोहित थे उनसे जज़िया लेना प्रारम्भ किया। इससे दिल्ली में शोर शराबा हुआ। अन्त में धनी व्यक्तियों ने ब्राह्मणों की ओर से स्वयं जज़िया देना स्वीकार किया। दिल्ली सल्तनत के इतिहास में यह पहला अवसर था जब जज़िया का विरोध किया गया। जज़िया उदारता से वसूल किया जाता था अन्यथा हिन्दू नाराज हो जाते थे।[2]

इन उपर्युक्त करों के अतिरिक्त मुसलमानों से वस्तु के मूल्य का $2\frac{1}{2}$ प्रतिशत और स्त्रियों से 5 प्रतिशत व्यापारिक कर लिया जाता था जो लोग घोड़ा रखते थे उनसे घोड़े का 5 प्रतिशत कर लिया जाता था। इसके अलावा मकान कर, चरागाह कर, सिंचाई कर मुद्रा की ढलाई कर, खानों से प्राप्त लोहा, शीशा, ताँबा, सोना, चाँदी, अभ्रक वस्तुओं पर भी कर लिया जाता था जो राज्य की आय का

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 288,
   एल.पी. शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 234, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 53.

2. आई.एच. कुरेशी : द एडमिनिस्ट्रेशन आफ़ द सल्तनत आफ़ देलही, पृष्ठ 97,
   एल.पी. शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 234,
   राधेश्याम : वही, पृष्ठ 53-54.

साधन था ।[1] ग़ैर मुसलमान व्यापारियों से आयात कर ज़कात का दुगुना लिया जाता था । इसके अलावा गड़े हुये मिले ख़ज़ाने पर कर लिया जाता था तथा जो लोग लावारिस मर जाते थे उनकी सम्पत्ति पर भी राज्य का अधिकार हो जाता था ।[2]

अन्य छोटे छोटे कर :

फ़िरोज़ तुग़लक के शासन से पूर्व अनेक कुछ, अवैध और न्याय प्रतिकूल कर, जनता से वसूल कर राजकोष में जमा किये जाते थे । जैसे मन्दवी वर्क (सब्ज़ी कर), दलालात-ए-बाज़ारहा (बाज़ार के क्रय-विक्रय पर दलाली कर), ज़रारी (कसाइयों से लिया जाने वाला कर), अमीरी तरब (मनोरंजन कर), गुलफ़रोशी (फूलों के विक्रय पर कर), ज़रीब-ए-तम्बोल (पान पर कर), चुंगी गल्ला (अनाज पर चुंगी), किताबी (पुस्तकें नकल करने वालों पर कर), निलगरी (नील पर कर), महीफ़रोशी (मछली बेचने पर कर), साबुनकरी (साबुन बनाने पर कर), रिस्मान फ़रोशी (रस्सी बेचने पर कर), रोग़नकारी (तेल बनाने पर कर), नुख़ुद बिरयान (भुने चने पर कर), तह-बाज़ारी (छपाई कर), अबा, क़िमारख़ाना (जुआ घरों पर कर), दादबकी (मुकदमों पर कर), कोतवाली (नगर में लगने वाला कर), इहतसाबी (मुहतसिब के कारण कर), करही (घरों पर कर), चराई (पशु की चराई पर कर),

---

1. एल.पी. शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 234.
   राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सम्बन्ध में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 54.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 288.
   राधेश्याम : वही, पृष्ठ 54.

मुसादेरात (विभिन्न प्रकार के जुर्माने) आदि ।[1] पर फ़िरोज तुग़लक ने इन करों को जो शरा के विरुद्ध थे हटा दिया और हिसाब की बहियों से उनके नाम निकलवा दिया और यह आदेश जारी किया कि जो कोई कर एकत्र करने वाला इन करों का संग्रह करेगा उसको दण्ड दिया जायेगा क्योंकि सुल्तान का कथन है कि धन अगर कोई व्यक्ति कारख़ाने के लिये समान ख़रीदता था तो उसका दाम देता था । राजकोष भरने से अच्छा है कि जनता सुखी रहे । इसी सम्बन्ध में फ़िरोज ने एक छन्द लिखा -

"मित्रों के हृदय को सन्तुष्ट रखना ख़ज़ाने से अच्छा है ।
ख़ज़ाने को रिक्त रखना लोगों को कष्ट पहुँचाने से अच्छा है"।।

जनता का हृदय दु:खी नहीं होना चाहिए बल्कि राजकोष भले ही खाली रहे । राजकोष रूपये कुरान के नियमों के अनुसार और कानून के अनुकूल रखना चाहिए । ख़राज जोती हुई भूमि की उपज का दसमांश लेना चाहिए, फिर ज़कात वसूल करना चाहिए । हिन्दुओं से और दूसरे गैर मुसलमानों से जज़िया लेना चाहिए इसके बाद लूट का पंचमांश और खानों के उत्पादन का पंचमांश वसूल करना चाहिए।[2]

---

1. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 52, सुल्तान फ़िरोजशाह : फ़ुतूहाते फ़ीरोजशाही, पृष्ठ 5-6, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लककालीन भारत, भाग 2, पृष्ठ 328-330, ख़्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 240, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लक कालीन भारत, भाग 2, पृष्ठ 350.

2. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 269, अफ़ीफ़ : तारीख़े फ़िरोजशाही, पृष्ठ 99-100, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लक कालीन भारत, भाग 2, पृष्ठ 65, 147-148.

सुल्तान फ़िरोज़ तुग़लक ने बेकार पड़ी हुई भूमि को जुतवाया । उसका लगान लिया । इस भूमि से जो कर प्राप्त होता था वह विद्वानों और धार्मिक लोगों पर खर्च किया जाता था इससे राजकोष का भार कम हो गया । इससे आय दो प्रकार से बढ़ गयी । शर्ब से नयी जोती हुई भूमि से । इससे सुल्तान की आय में 2 लाख टंक की वृद्धि हो गयी । दिल्ली सल्तनत के किसी भी सुल्तान को इतनी आय नहीं हुयी थी जितनी फ़िरोज़ तुग़लक को हुयी थी ।[1] फ़िरोज़ तुग़लक के पूर्व के सुल्तान ने गाँव, ज़मीनें, इमलाक की भूमि तथा अन्य ज़मीन जायजाद, स्वामियों से छीनकर सरकार ने अपने अधिकार में कर लिया था परन्तु फ़िरोज़ ने यह नियम बनाया कि जिन लोगों का समान छीन लिया गया है वह न्यायालय में प्रार्थना पत्र भेजे।अगर न्यायालय में यह निर्णय हो जायेगा कि सम्पत्ति उन्हीं की है तो उन्हें वह समान गाँव, ज़मीन वापस कर दिया जायेगा । इससे एक लाभ लोगों को यह मिला कि बहुत से लोगों को समान वापस मिल गया ।[2]

फ़िरोज़ के समय मुकाते आगीरों, मुहिस्सिबों तथा तौफ़ीर कराने वालों को, प्रान्तों की विलायतों तथा अक्ताओं के पास जाने नहीं दिया जाता था । ये लोग किसानों के साथ कठोरता का व्यवहार नहीं कर सकते थे । उपर्युक्त अधि-नियमों को दृढ़ता के साथ लागू करने के कारण विलायतें आबाद हो गयीं थीं । जंगली मरुभूमियों में खेती होने लगी । खेत, उद्यान तथा ग्राम एक दूसरे तक फैल गये। पिछले सुल्तानों के समय जो कृषकों की दशा हुयी थी उससे उनके हृदय में घृणा भर गयी थी वह निकल गयी । खराज तथा जज़िये के आधार पर कर वसूल होने के

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 215.

2. इलियट एवं डाउसन : वही, पृष्ठ 276.

फिरोजशाह : फुतूहाते फ़िरोज़शाही, पृष्ठ 20, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लककालीन भारत, भाग 3, पृष्ठ 337.

कारण किसी आमिल, मुतसर्रिफ तथा कारकुन वाली अथवा मुक्तों को कोई हानि नहीं होती थी। पदाधिकारियों को दीवाने विज़ारत के मुतालबों तथा हिसाब किताब होने के कारण उन्हें अब दण्ड नहीं भोगना पड़ता था। मुसलमान अब बन्दीगृह की श्रृंखलाओं में जकड़े जाने एवं मारे पीटे जाने और अपमानित होने से बच गये थे। यह विशेषता केवल फिरोज़शाह के राज्यकाल में थी। अन्य किसी सुल्तान को राज्यकाल में जनता को इतनी सुविधा नहीं दी गयी थी।[1]

आय के साधन :

राज्य को अनेक कार्यों पर धन खर्च करना पड़ता था जिसके लिये उसे धन की आवश्यकता पड़ती थी। ये धन उसे भू-राजस्व के रूप में मिलता था। कभी कभी भूमि में गड़ा हुआ धन भी मिलता था। जिन लोगों की सन्तान नहीं होती थी उसकी सम्पत्ति राज्य को मिल जाती थी। व्यापारिक वस्तुओं पर और घोड़ों पर 5 प्रतिशत से कर लिया जाता था। अगर किसी मुसलमान से घोड़े के लिये 5 प्रतिशत कर लिया जाता था तो हिन्दू लोगों को 10 प्रतिशत कर देना पड़ता था। आयात कर गैर मुसलमानों को मुसलमानों से दुगुना देना पड़ता था।[2]

---

1. बरनी : तारीखे फिरोज़शाही, पृष्ठ 574, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लक कालीन भारत, भाग 2, पृष्ठ 31-32.

2. आई. एच. कुरेशी : द एडमिनिस्ट्रेशन आफ द सल्तनत आफ देहली, पृष्ठ 98, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 289, एल. पी. शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 234, ए. बी. पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 135, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में, प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 51.

खनिज पदार्थों पर राज्य 1/5 भाग कर लेता था इसे खम्स कहते थे। अगर किसी व्यक्ति को कहीं से ख़ज़ाना मिलता था तो वह ख़ज़ाना तो वह स्वयं रख लेता था लेकिन उसमें से 1/5 भाग उसे राजकोष में जमा अनिवार्य रूप से करना पड़ता था। मुसलमान लोग किसी प्रदेश को जीत लेते थे वहाँ से जो सोना, चाँदी, सिक्के, शिलायें प्राप्त होती थीं उससे भी उन्हें उसका भी एक भाग राज्य को देना पड़ता था। इससे भी राज्य को काफ़ी धन प्राप्त होता था। इसके अलावा जिन लोगों के बच्चे नहीं होते थे, मर जाते थे तो उनकी सारी सम्पत्ति राज्य को मिल जाती थी। ये भी राज्य की आय का एक महत्त्वपूर्ण साधन था।[1] अगर सिकन्दर लोदी के शासनकाल में कोई व्यक्ति मर जाता था और उसका कोई उत्तराधिकारी नहीं होता था तो सुल्तान उसकी सारी सम्पत्ति फ़कीरों में बँटवा दिया करता था।[2]

इसके अलावा हर वर्ष सुल्तान को भेंट में बहुत सा धन प्राप्त हो जाता था। ये भेंट सुल्तान को राज्य के पदाधिकारी, अमीर, जनता, पड़ोसी शासक, जिनसे सुल्तान की मित्रता होती थी दिया करते थे।[3] ये लोग भेंट तथा उपहार

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 288, ए. बी. पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 136-137.

2. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी : वाक़ेयाते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 15, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 104.
अहमद यादगार : तारीख़े शाही, पृष्ठ 49, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 104.

3. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 51, आई. एच. कुरेशी : द एडमिनिस्ट्रेशन आफ़ द सल्तनत आफ़ देलही, पृष्ठ 131.

समय समय पर जैसे सुल्तानों के जन्मदिन, विजय-उत्सव, राजकुमारों का विवाह आदि उत्सवों पर दिया करते थे जिससे राज्य को आय होती थी । युद्ध में लूट कर जो धन सुल्तान पाते थे उसमें से एक निश्चित भाग उन्हें मिल जाता था । वे धन वह अपने और अपने परिवार पर खर्च करते थे । सुल्तान सिकन्दर लोदी को पड़ोस के शासक भेंट भेजा करते थे । कुछ अमीर लोग जब अपने प्रार्थनापत्र भेजते थे तो उन पत्रों के साथ भेंट दिया करते थे । ये रूपया सुल्तान अलग रखता था । उसे अपनी इच्छानुसार खर्च किया करता था ।[1]

राज्य के अपने कारखाने होते थे जिनमें वस्त्र, इत्र, श्रृंगार का सामान, उपहार के योग्य वस्तुएँ, फर्नीचर, युद्ध-सामग्री आदि तैयार किये जाते थे । इन सामानों का उपयोग न केवल राजमहलों के लोग करते थे बल्कि बाहर के लोगों को भी बेचा जाता था । इसमें राज्य को आय होती थी । सिक्कों से भी राज्य को आय होती थी । सुल्तान हिन्दुओं से जज़िया लिया करते थे जिससे आय होती थी । राज्य के भीतर सड़कों और नदियों का पानी प्रयोग करने पर चुंगी देनी पड़ती थी, माल की बिक्री पर बिक्री कर लगता था । इससे राज्य को आय होती थी[2]।

भूमिकर से राज्य को सबसे अधिक आय होती थी ।[2] अन्य कर भी आय के स्रोत थे । इनके नाम थे - उश्र, खम्स, जज़िया, ज़कात, तरकात इत्यादि ।[3] तमाम छोटे-छोटे कर भी थे जिनको स्थानीय स्तर पर वसूल किया जाता था ।

----

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 358-359, एल.पी. शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 234.
2. ए.बी. पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 136-137.
3. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में - प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 51.

ख़ालसा भूमि से जो धन प्राप्त होता था वह भी सुल्तानों के आय का साधन था। सैय्यद शासकों के पास बिल्कुल भी ख़ालसा भूमि नहीं था। सुल्तान बहलोल लोदा ने ख़ालसा क्षेत्र निर्धारित करने के स्थान पर प्रत्येक सरकार में कुछ परगने अपने लिये निर्धारित कर दिये थे। 1452-53 ई० में उसने 7 परगने अहमद खान मेवाती तथा 7 परगने दरियाव खान को दिये। इब्राहीम लोदी ने अपने लिये खण्डीला का परगना और जौनपुर की रियासत के कुछ परगने रख लिये थे इस प्रकार से लोदी सुल्तानों ने कभी भी विशाल भू-भाग अपने लिये ख़ालसा के रूप में निर्धारित नहीं किया। ख़ालसा के अन्तर्गत परगने विभिन्न सरकारों में फैले हुये थे। जिनकी व्यवस्था उन्हीं के अमीरों एवं अधिकारियों के द्वारा होती थी।[1]

सभी सुल्तान व्यापारियों से कर लिया करते थे जिससे राज्य को काफी आय होती थी। ये कर निम्न थे। दलालों से उनके दलाली करने पर कर लिया जाता था। कसाइयों से कर लिया जाता था। कसाइयों से हर गाय और भैंस के मारने पर,।। जीतल के हिसाब से कर लिया जाता था। अनाज बेचने वालों से पान बेचने वालों से, सब्जी बेचने वालों से, फूल बेचने वालों से, भुने हुये चने बेचने वालों से, नमक बेचने वालों से, चराई कर, बटाई कर, मकान कर, जज्ज़ारी कर, बनगानह, दूरीकर आदि कर लोगों से लिया जाता था जिससे राज्य को काफी आय होती थी।[2]

---

1. राधेश्याम: सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 89.
2. राधेश्याम : वहीं, पृष्ठ 398,

   आई. एच. कुरेशी : द एडमिनिस्ट्रेशन आफ़ द सल्तनत आफ़ देलही, पृष्ठ 98,

   आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 289.

व्यय की मुख्य मदें :

राजकोष का धन साधारणतया सुल्तान, सुल्तान के परिवार, सुल्तान की हज़ारों की संख्या में रहने वाली रानियों, उनकी सन्तानों, सैनिकों, धार्मिक कार्यों, दान करने, खलीफाओं को भेंट देने, विद्रोह को दबाने, सैनिकों पर[1] सिंहासनरोहण के उत्सव, राजकुमारों के विवाह, राजमहलों की सजावट आदि पर अपार धन व्यय किया जाता था । सर्वसाधारण मुसलमानों के लिये खानकाहें खुली हुयी थीं । इन खानकाहों में लोगों को भोजन तथा अन्य आवश्यक वस्तुयें दी जाती थीं। इसमें भी राज्य का काफ़ी धन व्यय होता था ।[2]

राजदरबार में जो कलाकार, कवि, संगीतज्ञ, चित्रकार, मूर्तिकार रहते थे उन पर धन व्यय किया जाता था क्योंकि बादशाह से लेकर सामन्त तक विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत करते थे । इसके अलावा शासक धन दूसरे राज्यों के शासकों को उपहार में देते थे । त्यौहारों पर प्रजा को इनाम दिया करते थे जिससे काफ़ी धन व्यय होता था । अमीरों, दरबारियों, मंसबदारों, काज़ियों तथा अन्य राजकर्मचारियों को वेतन देने पर भी धन खर्च होता था ।[3] सरकारी इमारतें, दुर्ग, मस्जिद, मक़बरे, बनवाने पर धन व्यय होता था । सरकारी कारख़ानों के लिए कच्चे माल

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 296, ए. बी. पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 138.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, पृष्ठ 296.

3. डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 45, डॉ० ईश्वरी प्रसाद : मध्ययुगीन भारत का संक्षिप्त इतिहास, पृष्ठ 236, एल.पी. शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 234.

को खरीदने पर व्यय, सड़कों, पुलों, सरायों, नहरों आदि को बनवाने और उसकी मरम्मत करवाने तथा कृषि के विकास पर राज्य का काफी धन व्यय होता था ।[1]

कारखाने :

दिल्ली के लगभग सभी सुल्तानों ने बड़े बड़े कारखाने खुलवाये थे क्योंकि सभी वर्ग के लोग विशेषकर धनी वर्ग के लोग आराम और विलासिता का जीवन व्यतीत करना चाहते थे । इसके लिये तरह तरह की चीजों की आवश्यकता पड़ती थी । ये चीजें बाहर के देशों से मँगवानी पड़ती थीं जिससे धन अधिक खर्च होता था । इसलिये कारखाने खोले गये । ये कारखाने दो तरह के खोले गये थे । क. पहले प्रकार के वे कारखाने थे जो राज्य की ओर से खोले गये थे । ख. दूसरे प्रकार के वे कारखाने थे जो सुल्तान, अमीरों ने अपने व्यक्तिगत पैसों से खुलवाये थे । इन कारखानों में हजारों की संख्या में कारीगर कार्य किया करते थे । इन्हें उचित वेतन दिया जाता था । इन कारखानों में खिलअतें, छत्र, पताकाएँ, ज़ीन, झूले, टोपी, जूते, पर्दों, कढ़ाईदार वस्तुएँ, दरी, कमरबन्द आदि चीज़ें बनायी जाती थीं। सोना चाँदी तथा कशीदा कारी आदि के काम के लिए अन्य कई प्रकार के कारखाने होते थे ।[2]

---

1. ए.बी. पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 138 आई. एच. कुरेशी: एडमिनिस्ट्रेशन आफ द सल्तनत आफ देलही, पृष्ठ 132-133.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 383, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 316.

सुल्तान सिकन्दर लोदी ने कारखानों को बहुत प्रोत्साहन दिया था। सिकन्दर के समय सैनिक, युवक साधारण जनता कारखानों में काम करते थे और उपयोगी वस्तुएँ बनाया करते थे।[1] विभिन्न शाही कारखाने जिसमें टकसाल भी शामिल थे। दरोगा के अन्तर्गत कार्य करते थे। दीवान का एक अधिकारी पूरे कारखाने की देखभाल करता था। अब्दुल हलीम ने भी मीर-ए-सामाँ या खान-ए-सामाँ के बारे में निश्चयात्मक रूप से कुछ नहीं लिखा है।[2]

(द) <u>सिक्के एवं तौल</u> :

किसी भी देश की आर्थिक दशा का ज्ञान उस काल के सिक्कों तथा बाँटों द्वारा अनुमान लगाया जा सकता है। सोने, चाँदी, ताँबे के सिक्के चलते थे। सोने चाँदी के सिक्के को तन्का तथा ताँबे के सिक्के को जीतल कहते थे। सोने के सिक्कों को मोहर भी कहा जाता था। 40 दाम का एक रूपया तथा 10 रूपये की एक मोहर होती थी। मोहर गोल और चौकोर दोनों तरह की होती थी। जिसे लाल जलाली भी कहते थे। इसके अतिरिक्त अनेक छोटे बड़े सिक्कों का उल्लेख मिलता है किन्तु वे सब साधारणतया व्यवहार में नहीं आते थे। एक सिक्का सहसा चलता था जिसका वजन 100 तोले से अधिक होता था और जो मूल्य में 100 मोहर के बराबर होता था। दाम से छोटा सिक्का जीतल कहलाता था जो दाम का 1/25 होता था।[3]

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 342.

2. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देहली एण्ड आगरा, पृष्ठ 229.

3. ए0वी0 पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 247.

सोने के सिक्के ढाले जाते थे और जब चाँदी अधिक मिलने लगी तो शुद्ध चाँदी के सिक्के ढाले जाने लगे। चाँदी अत्यधिक मात्रा में मिलने के कारण उसमें राँगा नहीं मिलाया जाता था। इससे सिक्के अधिक चमकीले और आकर्षक दिखाई पड़ते थे।

सुल्तान फ़िरोज तुग़लक के समय दो तरह के टंक {सिक्के} चलते थे। सोने का टंक {सिक्का} और चाँदी का टंक {सिक्का}। सोने के टंक को लाल टंक कहा जाता था। चाँदी के टंक को सफेद टंक। लाल लाख में एक हजार सोने के टंक होते थे और सफेद लाख में एक लाख चाँदी के टंक होते थे। एक स्वर्ण टंक तीन मिसकाल के बराबर होता था और चाँदी का टंक आठ हश्तकानी दिरहम के बराबर होता था। हश्तकानी दिरहम चार सुल्तानी दिरहम के बराबर होता था जिसे दुकानी भी कहा जाता था। एक सुल्तानी दिरहम शश्कानी दिरहम के तिहाई के बराबर होता था। यह हिन्दुस्तान में तीसरी प्रकार का चाँदी का सिक्का है। और हश्तकानी दिरहम के तीन चौथाई के बराबर माना जाता था। एक सिक्का दिरहम सुल्तानी के आधे के बराबर होता था और वह मकानी कहलाता था। इसका मूल्य एक जीतल के बराबर होता था। दूसरा दिरहम द्वाज दहकानी कहलाता था जो डेढ़ हश्तकानी के बराबर होता था।[1] एक और सिक्का चलता था जो शन्ज दहकानी कहलाता था। ये दो दिरहम के बराबर होता था। इस प्रकार से हिन्दुस्तान में 6 प्रकार के चाँदी के सिक्के चलते थे। दिरहम शन्ज दरवानी, हाज दहकानी, हश्तकानी, शश्कानी, सुल्तानी और मकानी आदि। दिरहम सुल्तानी सबसे छोटा सिक्का होता था। तीन प्रकार के दिरहम व्यापार के काम आते थे और सभी जगह चलते हैं पर सबसे अधिक प्रचलित सिक्का दिरहम

----

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 423, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लक कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 331.

सुल्तानी ही था । दिरहम सुल्तानी आठ फुलुस और जीतल चार फुलुस और दिरहम हश्तकानी बत्तीस फुलुस के बराबर होता था । हिन्दुस्तान में रितल भी चलता था जो $102\frac{2}{3}$ मिस्त्री दिरहम के बराबर होता था । चालीस सेर का एक मन होता था । हिन्दुस्तान के लोग अन्न नापने का तरीका नहीं जानते थे ।[1] इसके अलावा 48, 24, 25, 12, 10, 8, 4-1 जीतल के सिक्के चलते थे जो चिहतल कहलाते थे । चिहतल ओ हस्तगामो ‡48 जीतल के मूल्य की मुद्रा‡, बिस्तओ पंजगानी ‡25 जीतल के मूल्य की मुद्रा‡, बिस्तओ ‡24 जीतल के मूल्य की मुद्रा‡, बिस्तओ चाहारगानी, हाज-देहगानी ‡12 जीतल के मूल्य की मुद्रा‡, दहगानी ‡10 जीतल की मुद्रा‡, हस्तगानी ‡8 जीतल की मुद्रा‡, शश्गानी ‡6 जीतल की मुद्रा‡ और चक जीतल ‡1 जीतल की मुद्रा‡ कहलाता था । सुल्तान ने आधा जीतल और पाँव जीतल के भी सिक्के चलाये थे । आधा जीतल आधा कहलाता था और पाव जीतल बिख कहलाता था । आधा और पाव जीतल चलाने का कारण यह था कि अगर कोई गरीब आदमी बाजार में कोई चीज ख़रीदने जायेगा और उसने चीज़ ख़रीदी और दुकानदार को उसे आधा जीतल या पाव जीतल वापस करना होगा तो वह कैसे वापस करेंगे । जब आधा और पाव जीतल ही न होगा तो ख़रीदने वाले को हानि होगी । इससे बेचने और ख़रीदने वाले दोनों के मध्य झगड़ा होगा । इसलिये सुल्तान ने आधा और पाव जीतल चलाया ।[2] जो सिक्के ढाले जाते थे । सुल्तान उसकी ईमानदारी से जाँच करवाता था कि सिक्के में चाँदी-सोना कम तो

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 423-24, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लक कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 331.

2. इलियट एवं डाउसन : वही, पृष्ठ 254-55, अफ़ीफ़ तारीख़े फिरोज़शाही, पृष्ठ 344, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : वही, भाग 2, पृष्ठ 139-40.

नहीं मिला है। जब (6 जीतल का) शश्गानी नामक सिक्का चला तो दो व्यक्तियों ने सुल्तान से निवेदन किया कि शश्गानी में एक ग्रेन चाँदी कम है तब सुल्तान ने तुरन्त इसकी जाँच करवायी क्योंकि सुल्तान का कहना था कि अगर राज्य में बुद्धिमान मंत्री न होंगे तो राजकाज में बड़ी गड़बड़ी उत्पन्न हो जायेगी।[1]

सैय्यद शासकों के समय के जो सिक्के प्राप्त हुए हैं जिनका उल्लेख नेल्सन राइट ने कैटेलाग ऑव इण्डियन क्वाएन्स इन इण्डियन म्यूजियम कलकत्ता में किया है/उसमें लिखा है कि "मुबारक शाह के शासन काल में (1421-1433 ई0)जो सिक्के चलते थे वे मुख्यत: ताँबे के थे जिनका भार 97 ग्रेन से लेकर 167.5 ग्रेन तक का था। सिक्के केवल दिल्ली की टकसाल में ढाले जाते थे। इस कारण इन सिक्कों में "हज़रत-ए-देहली" तथा "दारुल मुल्क देहली" लिखा रहता था। इन सिक्कों के एक ओर "शाह मुबारक सुल्तान जरिवत, सुल्तान हज़रत-ए-देहली" या "मुबारकशाह सुल्तान" खुदा रहता था तथा दूसरी ओर "अमीरूल मोमनीन नायब अमीर" लिखा रहता था।[2] मुबारक शाह ने अपने सिक्कों पर से तुगलकों का नाम हटवा कर नायबे अमीरूल मोमिनीन खुदवाया।

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 3, पृष्ठ 255-256, अफ़ीफ़ : तारीखे फिरोज़शाही, पृष्ठ 345, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुगलक कालीन भारत, भाग 2, पृष्ठ 140.

2. नेल्सन राइट : कैटेलाग ऑव इण्डियन क्वाएन्स, पृष्ठ 25, इब्नबतूता : द रेहला आफ इब्नबतूता, पृष्ठ 59, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुगलक कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 158, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 478.

मुहम्मदशाह :

मुहम्मदशाह का शासनकाल 1434-45 ई0 तक रहा । मुहम्मदशाह ने अपने शासनकाल में सोने, मिश्रित धातु तथा ताँबे के सिक्के चलवाये । यह सिक्के दिल्ली की टकसाल से ही निकाले जाते थे । इन सिक्कों पर "हज़रत देहली" तथा "दारूल-मुल्क देहली" लिखा होता था । सोने के सिक्के का भार 17.8 ग्रेन था जिसमें एक ओर "फी ज़मन अल इमाम अमीरूल मोमनीन, अमीर खुल्द खलीफह" लिखा होता था तो दूसरे ओर "अलसुल्तान आज़म अबुल मुहम्मदशाह बिन फरीदशाह विन हज़रत" लिखा होता था । मुहम्मदशाह ने मिश्रित धातु के सिक्के दिल्ली से ही निकालें । इन सिक्कों पर "हज़रत देहली" लिखा होता था । इन सिक्कों का भार 126.5 से 139.5 ग्रेन तक होता था तथा इसके एक ओर सुल्तान "मुहम्मदशाह फरीदशाह खिज्रशाह व हज़रत देहली" तथा दूसरी ओर "अल खलीफा अमीरूल मोमनीन खल्द खलीफा" खुदा होता था ।[1] मुहम्मदशाह के शासनकाल में ताँबे के सिक्के जो चलाये गये उस ताँबे के सिक्के का भार 70.5 ग्रेन से लेकर 84 ग्रेन तक का बना होता था जिसमें एक ओर "मुहम्मदशाह सुल्तान" तथा दूसरी ओर "दारूल मुल्क देहली" अंकित होता था ।[2]

अलाउद्दीन आलमशाह :

सैय्यद वंश के अन्तिम शासक अलाउद्दीन आलमशाह ने अपने शासनकाल में (1445-51 ई0) मिश्रित धातु तथा ताँबे के सिक्के चलवाये । मिश्रित धातु के जो

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 478.

2. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 478,
   नेल्सन राइट : केटलाग ऑव इण्डियन क्वाएन्स, पृष्ठ 25.

सिक्के ढाले गये उसका भार 129.2 ग्रेन तथा ताँबे के सिक्के का भार 69.7 ग्रेन से लेकर 136 ग्रेन तक था । इन सिक्कों पर एक ओर "अल खलीफाह अमीरूल मोमनीन खल्द खलीफाह" तथा दूसरी ओर "सुल्तान आलम शाह बिन मुहम्मदशाह" लिखा था । अलाउद्दीन आलमशाह के समय जो ताँबे के सिक्के चलें उसका भार 69.7 ग्रेन से लेकर 136 ग्रेन तक था । और उन सिक्कों पर एक ओर "आलमशाह या आलम-शाह सुल्तान" तथा दूसरी ओर "अमीरूल मोमनीन नायब अमीर" या "दारूल मुल्क देहली" खुदा होता था ।[1]

बहलोल लोदी :

सुल्तान बहलोल लोदी ने 1451-1488 ई० तक शासन किया । बहलोल लोदी ने जीतल के स्थान पर ताँबे का एक सिक्का चलाया जिसे बहलोली कहा जाता था । बहलोली टंक का चालीसवाँ भाग होता था । यह 32 रत्ती या 56 ग्रेन था जो 5 ताँबे के सिक्के के बराबर माना जाता था ।[2] सिकन्दर लोदी ने इसका नया संस्करण चलाया जिसे सिकन्दरी कहते थे । यह बहलोली से दुगुने मूल्य वाला सिक्का था । इसके अलावा कम मूल्य वाले सिक्के भी जारी किये गये । एक सिक्का आधे बहलोली का था जो बहुत प्रचलित था । इब्राहीम लोदी ने एक सिक्का जारी किया जो 84 ग्रेन वजन का था यह ताँबे की डेढ़ तन्का के मूल्य के

---

1. नेल्सन राइट : केटेलाग ऑव इण्डियन क्वाएन्स, पृष्ठ 26, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 478.

2. चोपड़ा पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ 113, राधेश्याम : वही, पृष्ठ 478, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 585, घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थाएँ, पृष्ठ 257, ए. बी. पाण्डेय : वही, पृष्ठ 228.

बराबर था ।[1] इनके सिक्के मिश्रित धातु के थे । बहलोली और सिकन्दरी दोनों में चाँदी बहुत कम मात्रा में होती थी ।[2]

बहलोल लोदी के शासन काल में दो प्रकार के सिक्के चलते थे : क. मिश्रित धातु के सिक्के और ख. ताँबे के सिक्के । मिश्रित धातु के सिक्के का भार 56 ग्रेन से लेकर 147.5 ग्रेन तक होता था । इन सिक्कों पर एक ओर "फी जमन अमीर उल मोमनीन खल्द खिलाफत या अल खलीफा अमीर उल मोमनीन खल्द खिलाफत" तथा दूसरी ओर "अल मुतवक्किल अली अलरहम बहलोलशाह सुल्तान" व "हज़रत देहली" खुदा होता था । इन सिक्कों पर टकसाल का नाम "हज़रत देहली" लिखा होता था । बहलोल लोदी ने ताँबे के सिक्के भी जारी किये । इन ताँबों के सिक्के का भार 60.5 ग्रेन से लेकर 150 ग्रेन तक था । इन ताँबों के सिक्कों पर एक ओर "बहलोलशाह सुल्तान"[3] तथा दूसरी ओर "अमीर उल मोमनीन नायब अमीर" खुदा होता था । बहलोल लोदी ने ताँबे के सिक्के देहली और जौनपुर में ही चलवाये थे । दिल्ली में जो सिक्के चलवाये उन सिक्कों पर टकसाल का नाम हज़रत देहली या दारूल मुल्क देहली तथा जौनपुर की टकसाल का नाम शहर जौनपुर खुदा होता था । ताँबे के अधिकांश सिक्के देहली से ही जारी किये गये थे ।[4]

---

1. ए.बी. पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 228-229.
2. वही, पृष्ठ 229.
3. के.एम. अशरफ़ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 299, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 479.
4. के.एम. अशरफ़ : वही, पृष्ठ 299, राधेश्याम : वही, पृष्ठ 479, नेल्सन राइट : कैटेलाग ऑव इण्डियन क्वाइन्स, पृष्ठ 27.

जीतल, टका, धीरम, दीनार, दिरहम, अदली, बहलोली नामक सिक्के चलते थे। यह सभी सिक्के शाही टकसालों जो कि देहली, लखनौती, देवगिरि, सुल्तानपुर, सतगाँव, धार, तुगलकपुर, जौनपुर व आगरा में थी। इन शहरों की टकसालों से समय समय पर ये सिक्के जारी किये जाते थे।[1]

बहलोल लोदी ने जो बहलोली नामक सिक्का चलाया था उसके कारण दिल्ली सल्तनत के मुद्राशास्त्रीय इतिहास में उसका नाम अमर हो गया था। यह बहलोली नामक सिक्का अकबर के समय तक व्यापार विनिमय का माध्यम बना रहा।[2]

सिकन्दर लोदी :

सुल्तान सिकन्दर लोदी ने 1488-1517 ई० तक शासन किया। सुल्तान सिकन्दर लोदी ने ताँबे व मिश्रित धातु के सिक्के चलवाये। मिश्रित धातु के जो सिक्के चलवाये, इसके एक सिक्के का भार 17 ग्रेन से लेकर 144 ग्रेन तक था। इन सिक्कों पर एक ओर "फी ज़मीन अमीर उल मोमनीन खिल्दत ख़िलीफ़्ह" तथा दूसरी ओर "अलमुतवक्किल अलहरमन सिकन्दर शाह बहलोल शाह सुल्तान" खुदा रहता था। मिश्रित धातु के इन सिक्कों पर कहीं भी टकसाल का नाम अंकित नहीं होता था।[3]

---

1. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 55.
2. हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 285, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 95.
3. के०एम० अशरफ़ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ। जे. थामस एडवर्ड: द क्रानिकल्स आफ़ दि पठान किंग्स आफ़ देलही, पृष्ठ 44.

सिकन्दर लोदी ने ताँबे का टंका भी चलवाया । चाँदी का एक तन्का सिकन्दर लोदी के 20 ताँबे के टंके के बराबर होता था ।[1] सिकन्दर लोदी ने एक नया सिक्का चलवाया जिसे सिकन्दरी कहते थे जो दो बहलोलियों के बराबर माना जाता था । यह तुर्कों की कानी श्रृंखला में किसी वास्तविक अथवा काल्पनिक सिक्के के समान नहीं था । इसके अतिरिक्त कुछ छोटे मूल्य के सिक्के चलाये । इनमें से एक ब्रुकार्श्री के समान था जो बहलोली का आधा होता था । जो खूब प्रचलित था । ये सब सिक्के मिश्रित धातु के बने थे । इसमें चाँदी का हिस्सा इतना कम होता था कि बेचने पर कोई विशेष लाभ नहीं होता था ।[2]

इब्राहीम लोदी :

इब्राहीम लोदी ने 1517-26 ई० तक शासन किया । अपने शासनकाल केवल मिश्रित धातु के सिक्के जारी किये । मिश्रित धातु के सिक्के का भार 39.5 ग्रेन से लेकर 88.5 ग्रेन तक होता था । इसके एक ओर "फी ज़मन अमीर उल मोमनीन खिलदत खलीफाह" तथा दूसरी ओर "अलमुतवक्किल अली अलरहमन इब्राहीम सिकन्दरशाह सुल्तान" खुदा होता था । इब्राहीम लोदी ने सिक्कों पर खलीफा का नाम नहीं खुदवाया था ।[3]

---

1. घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीति संस्थाएँ, पृष्ठ 257, बरनी : तारीख़-ए-फ़िरोज़शाही, पृष्ठ 531, अनुवादक सैय्यद अतहर अब्बास रिजवी : तुगलककालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 5.
2. ए.बी. पाण्डेय : द फर्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 228-229.
3. नेल्सन राइट : नेल्सन राइट कैटेलाग ऑव क्वाएन्स, पृष्ठ 27, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 479.

लोदी काल की मुद्रा प्रणाली में सबसे बड़ा दोष यह था कि मुद्रायें बहुत कम संख्या में प्रचलित थीं। इब्राहीम लोदी के समय तो सिक्कों की बहुत अधिक कमी हो गयी थी।[1]

पूर्वकाल के समान इस काल में विभिन्न मूल्य के सिक्कों का विनिमय मूल्य धातु के मूल्य पर ही निर्धारित किया जाता था। इस काल में ताँबे व चाँदी का विनिमय मूल्य 80.1 के बराबर अर्थात् 288 ग्रेन ताँबा 2 रत्ती चाँदी 3.6 चाँदी के जीतल के बराबर था। इसी प्रकार से 14.4 ग्रेन चाँदी का टंका 72 ग्रेन के ताँबे के टंके 16 जीतल या 12 ग्रेन के ताँबे के 96 जीतल के बराबर होता था। मिश्रित धातु या त्रिधातु सिक्कों के विनिमय मूल्यों में विविध धातुओं के मूल्य का गहरा सम्बन्ध था। 96 रत्ती का 172.8 ग्रेन के सोने का टंका 172.8 ग्रेन के 10 चाँदी के टंकों के बराबर होता था।[2] गज़ेटियर आफ इण्डिया में लिखा है कि परवर्ती तुगलकों और उनके उत्तराधिकारियों को सैय्यदों और लोदियों के शासन काल के सिक्कों में कोई खास विशेषता नहीं थी। शेरशाह सूरी ने इसे तार्किक आधार पर नया स्वरूप प्रदान किया।[3]

---

1. ए.वी. पाण्डेय : द फ़र्स्ट अफ़गान एम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 229.

2. नेल्सन राइट : कैटेलॉग ऑव इण्डियन क्वाइन्स, पृष्ठ 80-83.

3. गजेटियर आफ इण्डिया, भाग 2, पृष्ठ 128

तोल :

बाबर ने हिन्दुस्तान की तोल के बारे में बताया कि हिन्दुस्तान के लोगों ने तोल की बड़ी अच्छी व्यवस्था की थी। जो निम्नवत् है :

8 रत्ती	=	1 माशा		
4 माशा	=	1 टंक	=	32 रत्ती
5 माशा	=	1 मिस्क़ाल	=	40 रत्ती
12 माशा	=	1 तोला	=	96 रत्ती
14 तोला	=	1 सेर		
40 सेर	=	1 मनबान (मन)		
12 मनबान	=	1 मनी		
100 मनी	=	1 मिनासा		

मोती तथा जवाहिरात टंके से तौले जाते थे।

हिन्दुस्तान के लोग संख्या का अच्छा ज्ञान रखते थे। जैसे -

100 हजार को वे लाख कहते हैं।
100 लाख को वे एक करोड़ कहते हैं।
100 करोड़ को वे एक अरब कहते हैं।
100 अरब को वे एक खरब कहते हैं।
100 खरब को वे एक नील कहते हैं।
100 नील को वे एक पदम कहते हैं।
100 पदम को वे एक संख कहते हैं।[1]

---

1. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : मुगलकालीन भारत, बाबर, पृ० 196-197.

अष्टम् अध्याय

सांस्कृतिक गतिविधियाँ

<u>सांस्कृतिक गतिविधियाँ</u> :

राजनीति के क्षेत्र में 15वीं शताब्दी विघटन एवं अधःपतन की शताब्दी थी फिर भी सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में काफी उपलब्धियाँ हुयीं । वास्तुकला और साहित्य के क्षेत्र में विकास हुये । बहुत से सुधारकों और कवियों ने अपनी शिक्षाओं एवं कृतियों के द्वारा समाज को एक नयी दिशा प्रदान की । सामाजिक, धार्मिक सुधारों की दृष्टि से इस शताब्दी में पर्याप्त वैचारिक मंथन दिखाई पड़ता है । कबीर और गुरू नानक जैसे युगपुरुष इसी शताब्दी में पैदा हुये थे ।

वास्तुकला के क्षेत्र में सैय्यद और लोदी सुल्तानों के समय काफी कार्य हुये । खिलजी और तुग़लक काल की गतिविधियाँ अपने आप में महत्त्वपूर्ण थीं । तैमूर के आक्रमण के समय वास्तु कला के क्षेत्र में जो विकासमान स्थिति थी उसे तैमूर ने करारा झटका दिया था ।[1] तैमूर के लौटने के बाद कुछ समय तक वास्तु के क्षेत्र में कोई उल्लेखनीय कार्य नहीं हुआ । मल्लू इक़बाल खाँ ने एक ईदगाह बनवाया । खिज्रखाँ और मुबारकशाह ने दो नगरों की स्थापना की । इनके नाम थे क्रमशः खिज्राबाद और मुबारकाबाद ।[2] मुबारकाबाद यमुना नदी के तट पर बसाया गया था । इन नगरों का शीघ्र ही लोप हो गया । क्योंकि आर्थिक कठिनाइयों के कारण

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 138.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, पृष्ठ 138,
   एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 177,
   के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 228.

इनका निर्माण अच्छा नहीं हुआ था । सैयूयद और लोदी काल में बनी इमारतों को दो सम्वर्गों में बाँटा जा सकता है ।[1]

<u>मकबरे और मस्जिदें</u> :

मक़बरे दो प्रकार के बने थे । अष्टभुजाकार और वर्गाकार । प्रथम प्रकार के मक़बरों में मुबारकशाह सैयूयद का मक़बरा, मुहम्मदशाह सैयूयद का मक़बरा और सिकन्दर लोदी का मक़बरा उल्लेखनीय है । अष्टभुजाकार मक़बरों की संरचना का प्रारम्भ फ़िरोज़शाह तुग़लक के वज़ीर ख़ाने-जहाँ तेलंगानी के मक़बरे से हुआ । इसका निर्माण 1368-69 ई0 में हुआ था । इसी विकासक्रम में उपर्युक्त मक़बरे बने । इस शैली की सबसे सुन्दर कृति बाद में शेरशाह सूर के मक़बरे में प्रकट हुयी । इसका महत्व ताजमहल से कुछ ही कम है । के0एस0 लाल ने लिखा है कि अकबर की कुछ इमारतों को भी इसने प्रेरणा प्रदान की थी ।[2] ऐसा प्रतीत होता है कि अष्टभुजाकार मक़बरे केवल शाही परिवार के लोगों के लिये बने । अमीरों तथा उच्च स्तरीय लोगों के मक़बरे वर्गाकार आधार पर बने हैं । बड़े खाँ का गुम्बद, छोटे खाँ का गुम्बद, बड़ा

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 138, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 265, राधेश्याम : मध्यकालीन भारतीय इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 434, के0एस0 लाल : द ट्वाइलाइट आफ् द सल्तनत, पृष्ठ 228, डॉ0 रामनाथ : मध्यकालीन भारतीय कलाएँ और उनका विकास, पृष्ठ 50-51.

2. के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ् द सल्तनत, पृष्ठ 228, डॉ0 रामनाथ : मध्यकालीन भारतीय कलाएँ और उनका विकास, पृष्ठ 51.

गुम्बद, शीर्ष गुम्बद, शिहाबुद्दीन ताज खाँ का गुम्बद, दादी का गुम्बद, पोली का गुम्बद इसी सम्वर्ग के हैं। ये सभी दिल्ली तथा इसके इर्द-गिर्द के क्षेत्र में 15वीं शदी में बने हैं।[1] कुछ और गुम्बद जैसे हिजरे का गुम्बद, नीली गुमटी आदि थे।

सिकन्दर लोदी के शासनकाल में कई मस्जिदें बनीं। इनमें से अधिकांश मस्जिदें मक़बरों से सम्बद्ध हैं और निजी किस्म की हैं जैसे मोठ की मस्जिद, पंचमुखी मस्जिद, खैरपुर मस्जिद, जमाला मस्जिद. किला-ए-कहना, बड़ा गुम्बद मस्जिद, ये सब एक ही संवर्ग की मस्जिदें हैं। मोठ की मस्जिद सिकन्दर लोदी के वज़ीर मियाँ भुआँ के द्वारा 1505 ई0 में बनवायी गयी थी।[2]

सिकन्दर लोदी 15वीं शताब्दी का सबसे महान निर्माता था। उसने सभी प्रमुख नगरों में मस्जिदें बनवायी। दिल्ली और आगरा के अलावा लाहौर, करनाल, हांसी और माकनपुर में मस्जिदें बनवायी।[3] प्रत्येक मस्जिद में कुरान पढ़ने वाले

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 139, के0एस0 लाल : ट्वाइलाइट आफ़ द सल्तनत, पृष्ठ 223, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 434, डॉ0 रामनाथ: मध्यकालीन भारतीय कलाएँ और उनका विकास, पृष्ठ 40.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, वही, के0एस0 लाल : वही, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 265, राधेश्याम : वही, पृष्ठ 435, डॉ0 राम-नाथ : वही, पृष्ठ 41-42.

3. के0एस0 लाल : वही, पृष्ठ 233.

खतीब, झाड़ू देने वालों को रखा । उनका वेतन निश्चित किया । सिकन्दर लोदी ने 1492-1493 ई० में एक नहर बनवायी । राजपूताना में उसने एक बावली बनवाई।

सुल्तान सिकन्दर लोदी ने 1504-1505 ई० में आगरा नगर बसाया था । सुल्तान सिकन्दर से पूर्व आगरा एक प्राचीन ग्राम था । हिन्दुस्तानियों का मत है कि आगरा राजा किशन के समय जो मथुरा में राज्य करता था उसका कोट था । राजा जिससे नाराज हो जाता था उसे आगरा के किले में बन्दी बना लेता था । जिस वर्ष सुल्तान महमूद गज़नवी की सेना ने हिन्दुस्तान पर आक्रमण किया तब आगरा शहर भी उसकी चपेट में आ गया और पूरी तरह नष्ट भ्रष्ट हो गया । हिन्दुस्तान का एक तुच्छ गाँव बनकर रह गया । सुल्तान सिकन्दर लोदी ने अपने राज्यकाल में आगरा को पुन: बसाया। वहाँ अनेक इमारतें, मस्जिदें, सरायें बनवायीं । आगरा को अपनी राजधानी बनाया जो हिन्दुस्तान का एक भव्य नगर बन गया ।[1]

सुल्तान सिकन्दर लोदी ने यमुना के पश्चिम में आगरा नामक नगर बसाया था और आगरा में ही यमुना के पूर्व में सिकन्दरा नामक गाँव बसाया था ।[2] ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद का कथन है कि 6 जुलाई 1505 ई० को आगरा में एक बड़ा भूकम्प

----

1. अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 40, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी: उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 263, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 341-342, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 458, के०एम० पणिक्कर : भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृष्ठ 128.

2. मुहम्मद कबीर बिन शेख इस्माईल : अफ़्सानये शाहान, पृष्ठ 29ब, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 376, राधेश्याम : वही, पृष्ठ 459.

आया था जिसके कारण अनेक सुन्दर सुन्दर बने भवन गिर गये ।[1] आगरे में बारादरी बनवायी और दिल्ली में अपने पिता बहलोल लोदी की कब्र (मकबरा) बनवायी । जो अभी तक मौजूद है । जिसे देखने के लिये आज भी विदेशी आते हैं ।[2] 1504 ई0 को सुल्तान ने मन्दरेल, 1505 ई0 को मंदरायल के दुर्ग को जीता । यहाँ के समस्त मन्दिरों को गिरवाकर उसके स्थान पर मस्जिदें बनवायीं । धौलपुर के किले का पुनः निर्माण कराया/वहाँ के मन्दिरों को तोड़कर मस्जिद बनवाया ।[3]

1506-1507 ई0 में उदितनगर को जीतकर वहाँ के समस्त मन्दिरों को गिरवाकर मस्जिदों का निर्माण करवाया ।[4] 1507-1508 ई0 में मालवा के अधीन नरवर के किले को जीता वहाँ पर मस्जिदें बनवायीं । 1508 ई0 में नरवर के किले

---

1. निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते-अकबरी, पृष्ठ 326, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 220, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 459.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 239, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 189.

3. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 5, पृष्ठ 81, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 325, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 219.

4. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 328, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 221.

की रक्षा के लिये नरवर के किले के चारों ओर एक दूसरा किला बनवाया ।[1] 1509 ई0 में सुल्तान ने आगरा से धौलपुर तक के प्रत्येक पड़ाव पर महल और मस्जिदें बनवायीं ।[2] धौलपुर में एक बाँध बनवाया, ग्वालियर में जहाँ-जहाँ मन्दिर थे, सब गिरवाकर मस्जिदें बनवायी ।[3]

इब्राहीम लोदी के समय ख्वाजा खिज़्रखाँ का मकबरा बना ।[4] इब्राहीम को राजनीतिक कठिनाइयों के कारण उसे वास्तु कला के क्षेत्र में अधिक ध्यान देने का

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 355, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 62, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 279, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 329-330, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 222-223.

2. ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 331, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 224.

3. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 354,
अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 60-61, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 277-278.
सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 274.

4. के0एस0 लाल : द ट्वाइलाइट ऑफ द सल्तनत, पृष्ठ 233.

अवसर नहीं मिला । इस अवधि में जौनपुर में काफी निर्माण कार्य हुआ । फिरोज़-शाह तुग़लक ने 1360 ई0 में इसे एक नगर के रूप में बसाया था और तभी से इसकी महत्ता बढ़ी । तैमूर के आक्रमण के कुछ समय पहले इसने स्वतन्त्रता घोषित कर दी । यहाँ का शर्की राजवंश वास्तुकला के क्षेत्र में काफी रूचि लेता था । दुर्भाग्य से बहुत सी इमारतों को सिकन्दर लोदी ने नष्ट कर दिया । ये घटना 1495 ई0 की है जब उसने हुसैनशाह को पराजित किया । यहाँ बची हुई इमारतों में अटाला मस्जिद, खालिश मुखलिश, लाल दरवाजा मस्जिद, झाझरी मस्जिद, जामा मस्जिद प्रमुख हैं ।[1]

अटाला मस्जिद का निर्माण 1373 ई0 के आसपास फ़िरोज़शाह तुग़लक के शासनकाल में प्रारम्भ हुआ । इसका निर्माण कार्य 1408 ई0 में पूरा हुआ जबकि वहाँ इब्राहीम शर्की का शासन था । इब्राहीम शर्की के ही शासनकाल में खालिश मुखलिश मस्जिद बनी । इब्राहीम शर्की ने 1430 ई0 में झाझरी मस्जिद : बनवायी[2] 'लाल दरवाजा मस्जिद' महमूदशाह और 'जामा मस्जिद' हुसैनशाह के शासनकाल में 1417 ई0 में बनी ।[3]

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 142, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 437.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, पृष्ठ 142, राधेश्याम : वही, पृष्ठ 437.

3. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 142-143, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सम्बन्ध में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 437.

ग्वालियर 1518 ई0 में दिल्ली सल्तनत में मिला लिया गया । यहाँ बड़ी सुन्दर इमारतें राजा मानसिंह (1486-1518 ई0) के शासनकाल में बनीं । यहाँ मुख्यत: किला और राजमहल बहुत सुन्दर हैं । इसकी प्रशंसा बाबर ने भी की है । अस्तु इस काल में दिल्ली के अलावा जौनपुर और ग्वालियर वास्तुकला के क्षेत्र में प्रमुख रहे । अन्य राज्यों जैसे बंगाल, मालवा, गुजरात, बहमनी और विजयनगर में भी इमारतें बनीं[1] लेकिन इन राज्यों का अध्ययन प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की परिधि में नहीं आता । ग्वालियर शैली हिन्दु वास्तुकला का उत्कृष्ट नमूना है ।

संगीत और चित्रकला :

इस अवधि में चित्रकला का विकास बहुत कम हुआ । मुग़ल काल के पहले चित्रकला धार्मिक कारणों से उपेक्षित रही । इस्लाम में जीवित प्राणियों की अनुकृति बनाना वर्जित बताया गया है । यही कारण था कि सल्तनत काल में चित्रकला का विकास नहीं हुआ ।[2] यद्यपि कुछ संकेत मिलते हैं कि चित्रकला सर्वथा उपेक्षित नहीं थी । ये संकेत भी 15वीं शताब्दी के पहले के हैं । हजार सितून के महल की चित्रकारी की प्रशंसा इब्नबतूता ने की है । फिरोज़ तुग़लक ने इमारतों पर चित्र बनाने की मनाही कर दी थी ।

संगीत का विकास तैमूर के आक्रमण के पहले काफ़ी हो चुका था । तैमूर के आक्रमण के कारण बहुत से संगीतकार ग्वालियर, जौनपुर और गुजरात के दूर दराज के

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 143-144, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 266.

2. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 269, के0एस0 लाल : द ट्वाइलाइट आफ़ द सल्तनत, पृष्ठ 241.

दरबारों में भाग गये । जौनपुर के इब्राहीम शर्की (1400-1436 ई0) और उसके पौत्र हुसैनशाह शर्की दोनों संगीत के प्रेमी थे । संगीत से उन्हें बड़ा प्रेम था । कहा जाता है कि हुसैनशाह शर्की ने ख्याल का आविष्कार किया ।[1]

ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर और उनकी रानी संगीत के महान प्रेमी थे । राजा मानसिंह ने संगीताचार्यों का एक विशाल सम्मेलन का आयोजन करवाया था जिसमें रागों का विधिवत् वर्गीकरण करवाया था । इसके आधार पर "मान कुतूहल" नामक एक बहुमूल्य ग्रन्थ लिखा गया जिसमें संगीत की सूक्ष्मतम बातों का विद्वतापूर्ण विवेचन किया गया था । मानसिंह ने ग्वालियर में शास्त्रीय संगीत की एक परम्परा की स्थापना की । इन्होंने शास्त्रीय संगीत के ग्रन्थ "राग-दर्पण" का फ़ारसी में अनुवाद करवाया था । राजा मानसिंह को शास्त्रीय संगीत की ग्वालियर शैली का संस्थापक माना जाता है । मध्यकालीन संगीत को ग्वालियर ने एक नया जीवन, नई चेतना और एक नया कलेवर दिया । राजा मानसिंह का इस दिशा में योगदान अभिनन्दनीय है ।[2]

मेवाड़ के महाराणा कुम्भा (1433-68) अपने समय के एक बड़े संगीतकार थे । इसी कारण इन्हें "अभिनव भारताचार्य" कहा जाता था । इन्होंने संगीत पर बड़े-बड़े ग्रन्थों की रचना की । जैसे - "संगीत राज", "संगीत मीमांसा" आदि । गीत

----

1. के0एस0 लाल : द ट्वाइलाइट आफ़ द सल्तनत, पृष्ठ 242, डॉ0 रामनाथ : मध्यकालीन भारतीय कलाएँ और उनका विकास, पृष्ठ 25, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 268.

2. के0एस0 लाल : वही, पृष्ठ 242, डॉ0 रामनाथ : वही, पृष्ठ 26, एल0पी0 शर्मा : वही, पृष्ठ 268.

गोविन्द पर उन्होंने रसिक-प्रिया नाम का एक टीका लिखा । संगीत रत्नाकर पर भी एक टीका की रचना की थी ।[1] सैय्यद शासकों में मुबारकशाह संगीत का प्रेमी था ।[2]

सुल्तान सिकन्दर लोदी (1487-1517 ई0) को संगीत सुनने का बड़ा शौक था । उसके दरबार में संगीत विद्या में कुशल लोग आते थे । मुल्लाओं के डर से वह प्रत्यक्ष रूप से संगीतज्ञों को कभी अपने सामने न तो बुलाता था न ही गाना गाने देता था किन्तु अपने किसी मित्र या सरदार के यहाँ संगीत सभाओं का आयोजन करवा-कर समीप के खेमे में बैठकर संगीत की सभा का रसास्वादन किया करता था । तथा मीरान सईद रोहुला और सईद-इब्न-रसूल ये दोनों सुल्तान के बड़े कृपापात्र थे । संगीतज्ञ इन्हीं के सामने गाया करते थे । सुल्तान को शहनाई सुनने का विशेष शौक था। शहनाई तो प्रत्येक रात्रि को 9 बजे से बजना प्रारम्भ होती थी । रात्रि के तीसरे प्रहर तक बजती थी । महल में अन्य वाद्य यन्त्र बजाये जाते थे जो निम्न थे - चांग, वीणा, तम्बूर, कानून । सुल्तान के प्रिय राग मालीकुर, कल्याण, कांगड़ा, हुसैनी थे । इसके अलावा अगर संगीतकार अन्य कोई राग बजाते थे तो उन्हें दण्ड दिया जाता था ।[3]

---

1. डॉ0 रामनाथ : मध्यकालीन भारतीय कलाएँ और उनका विकास, पृष्ठ 25.

2. एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 268.

3. एल0पी0 शर्मा : वही, पृष्ठ 189, डॉ0 रामनाथ : वही, पृष्ठ 26, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 341, (उद्धरित अंश तारीखे दाऊदी) ।

सुल्तान को गान विद्या में विशेष रूचि थी । सिकन्दर के समय में गान विद्या के एक सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ "लहज़त-ए-सिकन्दर शाही" की फारसी में रचना "उमर याहिया" ने की थी जो अरबी, फारसी, संस्कृत का विद्वान था । "लहज़त" संस्कृत में लिखे संगीत के ग्रन्थों जैसे - "संगीत रत्नाकर" और "संगीत कल्पतरू" पर आधारित है । उमर याहिया ने इसे सुल्तान को समर्पित किया जो इस बात का द्योतक है कि सिकन्दर लोदी जैसा कट्टर धर्मान्ध सुल्तान भी भारतीय संगीत का लोहा मानता था।[1]

शिक्षा :

प्रत्येक व्यक्ति में ज्ञान प्राप्त करने की असीम इच्छा होती है । ज्ञान एक ऐसी तृष्णा है जिसका न आदि है न ही अन्त । वही व्यक्ति सभ्य और सुसंस्कृत माना जाता है जो पढ़ा लिखा होता है क्योंकि शिक्षा के बिना व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास नहीं होता है[2] । शिक्षित व्यक्ति ही अपने ज्ञान, विश्लेषण और तर्क के द्वारा सत्य असत्य का भेद कर पाता है । इसलिये हिन्दू मुस्लिम दोनों समाज के धार्मिक वेत्ताओं, चिन्तकों, विचारकों आदि सभी लोगों ने शिक्षा के विकास की ओर अधिक से अधिक ध्यान दिया, ताकि सम्पूर्ण समाज के लोग शिक्षा ग्रहण कर सभ्य तथा सुसंस्कृत बनें ।

इस समय भी शिक्षा ग्रहण करना सबके लिये अनिवार्य नहीं था । जिसकी इच्छा होती थी वही पढ़ता था । शिक्षा का स्तर बहुत ऊँचा था । शिक्षण संस्थाओं में बड़े अनुशासन में रहकर कठिन जीवन व्यतीत करना पड़ता था । शिष्य अपना अधि-

---

1. डॉ० रामनाथ : मध्यकालीन भारतीय कलाएँ और उनका विकास, पृष्ठ 26,

एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 189.

-काश समय चिन्तन मनन एवं अध्ययन में व्यतीत करते थे ।[1] सल्तनत काल में शिक्षा एवं साहित्य का बराबर विकास होता रहा । इल्तुतमिश, बलबन और अलाउद्दीन खिलजी ने दिल्ली और आसपास में बहुत से मदरसे स्थापित किये । सुल्तान फ़िरोज़ तुग़लक के शासन काल में शिक्षा का बहुत अधिक विकास हुआ था । फ़िरोज़ तुग़लक के शासन काल में सल्तनत के विभिन्न क्षेत्रों में मदरसे स्थापित किये गये । व्यावसायिक शिक्षा कारख़ाने के माध्यम से दी जाती थी किन्तु तैमूर के आक्रमण के उपरान्त शिक्षा का विकास कुछ समय के लिये रुक गया क्योंकि विद्रोह के कारण लोगों की आर्थिक दशा खराब हो गयी थी । दिल्ली के अनेक विद्वान् और साहित्यकार प्रादेशिक राज्यों में चले गये । स्वतन्त्र राज्यों के शासकों और अमीरों ने इन्हें अपने राज्य में आश्रय दिया, उन्हें सारी सुख-सुविधा भी दी जिससे शिक्षा का विकास धीरे-धीरे फिर आरम्भ होने लगा । फ़िरोज़ के बाद मदरसे आदि के बारे में कोई जानकारी नहीं मिलती है ।

सैय्यद शासकों के शासन काल में राजनीतिक उथल पुथल के बावजूद फारसी साहित्य का अबाध गति से विकास होता रहा । सुल्तान मुबारकशाह के शासनकाल में यहिया बिन अहमद सिहरिन्दी ने फारसी के एक ग्रन्थ की रचना की । मुबारकशाह के नाम पर इसका नाम "तारीख़-ए-मुबारकशाही" रखा था ।[2]

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 320, राधेश्याम : सल्तनत कालीन सामाजिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 306.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, पृष्ठ 365, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 177, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 365.

सुल्तान बहलोल लोदी स्वयं बहुत शिक्षित व्यक्ति नहीं था परन्तु उसने शिक्षा की ओर विशेष रूप से ध्यान देकर बढ़ावा दिया । इस्लामी क़ानून का स्वयं गहन अध्ययन किया जिसके कारण वह न्याय करने के लिये प्रसिद्ध था । विद्वानों और शिक्षित व्यक्तियों को संरक्षण प्रदान किया । उनकी संगति में स्वयं भी बैठा करता था ।[1]

शेख़ रिज़्कुल्लाह ‡1491-1581ई0‡ ने कृष्ण प्रेम के गीत हिन्दी में लिखे थे । शीर्षक था "उजूब-जप-निरंजन"। अब ये पुस्तक उपलब्ध नहीं है । फ़िरोज़ तुग़लक के शासन काल में संस्कृत के बहुत से ग्रन्थ फ़ारसी भाषा में अनूदित हुये । 15वीं शताब्दी में यह प्रक्रिया चलती रही । काश्मीर के जैनुल आबदीन ‡1420-1470‡ ने अपने संरक्षण में महाभारत और राजतरंगिणी का फ़ारसी भाषा में अनुवाद कराया।[2]

सन् 1473 तथा सन् 1480 ई0 के मध्य में मालाबार बसु ने "भागवत पुराण" का बंगला में अनुवाद किया था ।[3]

सिकन्दरलोदी जब गद्दी पर बैठा तब उसने शिक्षा के विकास की ओर पूरा ध्यान दिया । उस समय तक राज्य में चारों ओर शान्ति स्थापित हो गयी थी ।

---

1. इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 342, भाग 5, पृष्ठ 76, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 311, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 232.

2. के0एस0 लाल : द ट्वाइलाइट आफ़ द सल्तनत, पृष्ठ 243-244

3. डॉ0 सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 55.

सिकन्दर लोदी स्वयं शिक्षित, विद्या का पोषक, महान कवि एवं साहित्यकार था। वह स्वयं फारसी भाषा में गुलरूखी (गुलरूख अपना तखल्लुस रखता था) उपनाम से कविताएँ लिखा करता था।[1]

सुल्तान सिकन्दर लोदी को कवियों के सत्संग में बैठने में बड़ा आनन्द आता था। उसने बहुत अधिक संख्या में लेखकों, विद्वानों, सन्त, आमिल, शेख आदि को अरब, ईरान से बुलाकर अपने दरबार (आगरे) में संरक्षण दिया। दानशीलता के कारण बहुत से विद्वान् अरब, मध्य एशिया, फारस से आये। प्रत्येक रात्रि को 70 विद्वान सिकन्दर लोदी की शैय्या के पास बैठकर शास्त्रीय और धार्मिक समस्याओं में विचार-विमर्श किया करते थे। इसी कारण दिल्ली शहर विद्वानों और फ़ारसी साहित्य का अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र बन गया था।[2]

---

1. अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 73, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 286, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 596, एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 188, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 365, के०एस० लाल : द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 244.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 305, मुहम्मद कबीर बिन शेख इस्माईल : अफ़सानये शाहान, पृष्ठ 38अ, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 382, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 339, डॉ० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 60, एल०पी० शर्मा : वही, पृष्ठ 188-189, के०एस० लाल : वही, पृष्ठ 244.

सिकन्दर लोदी को कविता लिखने एवं शेर, शायरी करने में विशेष रुचि थी। उसने 800-900 कविताओं की रचना की। अपनी कविता की रचना करके शेख जमाली को उपहार स्वरूप भेंट दिया करता था। उनसे राय भी लेता था। शेख जमाली सुल्तान का सहचर था। सुल्तान उसे बहुत पसन्द करता था। सुल्तान ने उसकी स्मृति में एक छन्द की रचना की। यह छन्द सुल्तान को बहुत पसन्द था जो निम्न है :-

हमारे शरीर पर तेरी गली के धूल का वस्त्र हैं,
वह भी दामन तक आंसू से टुकड़े- टुकड़े हैं ॥[1]

सिकन्दर लोदी ने अनेक मस्जिदें बनवायीं/उनमें धर्मप्रचारक और शिक्षक नियुक्त किया। उसने मस्जिदों को सरकारी संस्थाओं का स्वरूप प्रदान करके शिक्षा का केन्द्र बनाने का प्रयास किया। सिकन्दर लोदी ने प्रारम्भिक, आध्यात्मिक एवं उच्च शिक्षा की ओर विशेष रूप से ध्यान आकृष्ट किया क्योंकि उस समय अधिकांश अफगान अशिक्षित थे। वे मूलत: सैनिक थे। उन्हें सभ्य और शिक्षित बनाने के लिये, विशेष ध्यान दिया।[2] शेख अब्दुल हक मुहद्दिस का कथन है "कि सिकन्दर लोदी ने अरब, ईरान, फारस तथा मध्य एशिया से अनेक योग्य अनुभवी विद्वानों को दिल्ली

---

1. अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 73, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 286, अहमद यादगार : तारीखे शाही, पृष्ठ 47, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 331.

2. के0एस0 लाल : द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 245.

बुलाकर शिक्षा संस्थाओं में विभिन्न विषयों को पढ़ाने के लिये अध्यापक के पद पर नियुक्त कर सम्पूर्ण शिक्षण संस्थाओं की देखभाल करने का अधिकार सौंपा । उन्हें उचित वेतन और सम्मान दिया ।[1]

सिकन्दर लोदी ने शेख़ हुसैन ताहिर को मुल्तान से और शेख़ अज़ीज़ उल्लाह और शेख़ अब्दुल्लाह को तुलम्बा से दिल्ली बुलाकर अपने राज्य में प्रश्रय दिया । शेख़ अब्दुल्लाह को आगरे और शेख़ अज़ीज़ उल्लाह को सम्भल के मदरसे का प्रधानाचार्य नियुक्त किया ।[2] इन दोनों विद्वानों ने उस समय के पाठ्यक्रम में अधिक से अधिक विवेकपूर्ण विषयों को शामिल कर मुस्लिम शिक्षा का स्वरूप बदलने का प्रयत्न किया । शेख़ हुसेन ताहिर, बहलोल और सिकन्दर के शासनकाल का ऐसा विद्वान था जिसे लोग चलता फिरता विश्वकोश कहते थे ।[3] ऐसा कहा जाता है कि शेख़ अब्दुल्लाह जिस विधि से पढ़ाता था उसे सुल्तान बहुत अधिक पसन्द करता था । कभी कभी सुल्तान स्वयं मदरसे में जाकर अब्दुल्लाह के व्याख्यान को कक्षा में बैठकर ध्यान से सुनता था और यथोचित अभिवादन करके लौटता था ।[4] इस कारण आगरा का यह मदरसा

---

1. शेख़ अब्दुल हक़ मुहद्दिस अख़बार-उल-अख़ियार : अनुवादक युसुफ हुसैन, पृष्ठ 74. के०एस० लाल : द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 245, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 319, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 305.

2. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 188-189, के०एस० लाल : वही, पृष्ठ 245, राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 365.

3. के०एस० लाल : वही, पृष्ठ 245.

4. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, पृष्ठ 90.

हिन्दुस्तान में प्रसिद्ध हो गया था । सिकन्दर लोदी ने दिल्ली, आगरा, सम्भल, मथुरा, मारवाड़, नरवर में अनेक मदरसे स्थापित किये ।[1] इन मदरसों में सभी जाति, धर्म के लोग शिक्षा ग्रहण कर सकते थे । आगरा और सम्भल के मदरसे बहुत प्रसिद्ध थे ।

जैसा- कि के०एस० लाल ने लिखा है कि इस समय की शिक्षा पद्धति धर्मनिष्ठ थी । सभी मदरसों में धार्मिक शिक्षा दी जाती थी । मनकूलात (धार्मिक शिक्षा) पर विशेष ध्यान दिया जाता था ।[2] हिन्दुओं और मुसलमानों के अलग-अलग स्कूल होते थे । हिन्दू विद्वान अपनी धार्मिक पुस्तकों को पढ़ाते थे जैसे —> वेद, शास्त्र, व्याकरण और साहित्य । इसी तरह मुस्लिम मदरसों में इस्लामी शिक्षा दी जाती थी । जिसमें व्याकरण, साहित्य के अलावा हदीस, फिक और तफसीर पर विशेष बल दिया जाता था । युसुफ हुसैन ने भी यह माना है कि तत्कालीन शिक्षा पद्धति कट्टरता की प्रमुख गण थी ।[3]

सार्वजनिक शिक्षा का अभाव था । उच्च वर्ग के लोग या जिन्हें ज्ञानार्जन की उत्कृष्ट अभिलाषा होती थी वे ही शिक्षा ग्रहण करते थे । उच्च वर्ग और अमीरों के बच्चों को सभी प्रकार की शिक्षा घर पर ही दी जाती थी । इन्हें मदरसों,

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 90,
   राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 305, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 146.
2. के०एस० लाल : द ट्वाइलाइट आफ़ द सल्तनत, पृष्ठ 245.
3. के०एस० लाल : वही, पृष्ठ 245.

खानकाहों, दरगाहों में जाना नहीं पड़ता था क्योंकि घर पर कवियों, इतिहासकारों, शेख़, मशाहिकों, साहित्यकारों के संगत में रहने के कारण हर प्रकार की शिक्षा ग्रहण कर लेते थे ।[1]

राजकुमारों की शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया जाता था । उन्हें प्रारम्भ से ही अरबी, फारसी, सैनिक प्रशिक्षण, तीर चलाना, घुड़सवारी, कानून एवं न्याय (कि कैसे मुकदमे सुने जायँ) आदि की शिक्षा दी जाती थी । अनुशासन की विशेष शिक्षा दी जाती थी। शिक्षक इस बात का सदैव ध्यान रखते थे कि राजकुमारों के अन्दर कोई बुरी आदत न पड़े ।[2] राजकुमारों को व्यवहार और अदब की शिक्षा वेश्याओं के घरों में भेजकर दिलवायी जाती थी ।[3]

संस्कृत और फारसी के अलग अलग स्कूल होते हुये भी कुछ मुस्लिम विद्वानों ने संस्कृत सीखी और हिन्दू विद्वानों ने फारसी सीखी । अनेक विद्वानों ने फारसी भाषा में पुस्तकें लिखीं । बहुत सी संस्कृत की पुस्तकों का फारसी में अनुवाद किया गया । सिकन्दर लोदी के प्रधानमंत्री मियाँ भुआ ने औषधि ज्ञान और रोग चिकित्सा पर "अरगक महावेदक" नामक संस्कृत के एक आयुर्वैदिक ग्रन्थ का फारसी में 1512 ई0

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 311.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 100, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 342, अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 40, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 263.

3. डॉ0 सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 46-47.

में अनुवाद किया उसका नाम "तिब्बे सिकन्दरी" रखा। कहा जाता है कि सिकन्दर का यह ग्रन्थ संसार में एक बहुत बड़ा कारनामा सिद्ध हुआ। हिन्दुस्तान के चिकित्सकों की चिकित्सा शैली का यह ग्रन्थ आधार था। हिन्दुस्तान के हकीम इसी ग्रन्थ के आधार पर चिकित्सा करने लगे। इसलिये यह ग्रन्थ बहुत महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी है।[1] मुहम्मद बिन शेख हुसैननुद्दीन ने "फरहंगे सिकन्दरी" (तुहफा उस सहदाद) की रचना 1510 ई0 में की। सिकन्दर लोदी का दरबारी कवि जिसका नाम शेख जमाली कम्बू था ये बहुत बड़ा कवि और लेखक था। उसने कई रचनाएँ की जिसमें सियर-उल-अरीफिन, मासनवी मीर, मेहरूमाह और दीवान प्रमुख थीं।[2]

---

1. अब्दुल्लाह : तारीखे दाऊदी, पृष्ठ 40, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 263, अब्दुल हयी : तारीख-ए-फरिश्ता, पृष्ठ 554, शेख रिज्कुल्लाह मुश्ताकी : वाक़े आते मुश्ताकी, पृष्ठ 63-64, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 144, इलियट एवं डाउसन : भारत का इतिहास, भाग 4, पृष्ठ 342, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 239, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 304, एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 189, के0एस0 लाल : द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 247.

2. के0एस0 लाल : वही, पृष्ठ 247, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 596, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृ0 224, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृ0 108, चोपड़ा, पूरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृ0 156.

सिकन्दर लोदी ने शेख़ समाउद्दीन देहलवी से अरबी, व्याकरण पर "निजाम सर्फ" नामक ग्रन्थ का अनुवाद करवाया था ।[1] सिकन्दर लोदी के शासनकाल में सर्व-प्रथम हिन्दुओं में विशेषकर कायस्थों ने फारसी भाषा और साहित्य पढ़ना प्रारम्भ किया । अपने साम्राज्य में इन हिन्दुओं को काफी संख्या में विभिन्न पदों पर नियुक्त किया था ।[2] सिकन्दर लोदी ने न केवल अफगान अमीरों, सामान्य जनता, बल्कि सैनिकों के लिये भी शिक्षा ग्रहण करना अनिवार्य करवा दिया था ।[3]

15वीं शताब्दी में फारसी भाषा और साहित्य का काफी विकास हुआ । दर्शन, अध्यात्म, जीवनवृत्त, औषधिशास्त्र तथा कविताओं के क्षेत्र में काफी रचनाएँ हुईं किन्तु इस काल में ऐतिहासिक साहित्य नहीं लिखा गया । केवल याहिया बिन सिहरिन्दी की तारीखे़ मुबारकशाही ही 15वीं शताब्दी में लिखी गयी । इस ग्रन्थ में सैय्यद शासन के प्रारम्भ से लेकर 34 वर्षों तक का इतिहास लिखा हुआ है जो पूरे काल की झलक देने में असमर्थ है अरबी में जो कुछ रचनाएँ हुयीं वे कुरान और

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 311.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृ०ठ 90, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 596, फरिश्ता : तारीख-ए-फरिश्ता, भाग 1, पृष्ठ 187, के०एस० लाल : द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृ०ठ 246.

3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 305, ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद : तबक़ाते अकबरी, पृष्ठ 336, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 228.

हदीस पर आधारित थी । संस्कृत में धर्म और दर्शन के आधार पर कुछ पुस्तकें लिखी गयीं । रूद्रधर मिसारू मिश्र और वाचस्पति मिश्र बिहार के प्रसिद्ध लेखक थे । रूद्रधर ने धर्मशास्त्र पर कई रचनाएँ की थीं जिनमें शुद्धि-विवेक और श्रद्धा विवेक प्रमुख हैं । कुछ नाटक और काव्य भी लिखे गये । वामन भट्ट बाण ने "पार्वती परिणय" लिखा ।[1] गंगाधर ने "गंगादास प्रताप विलास" नामक काव्य लिखा । रामचन्द्र ने 1524 ई0 में अयोध्या में "रसिकरंजन" लिखा ।

फारसी भाषा एवं साहित्य का विकास न केवल दिल्ली, आगरा के शासकों व उनके अमीरों के संरक्षण में हुआ बल्कि दिल्ली सल्तनत के विघटन के उपरान्त जब बंगाल, जौनपुर, मालवा, गुजरात तथा दक्षिण में बहमनी तथा खानदेश में स्वतन्त्र राज्यों की स्थापना हुयी तो इन राज्यों के कवियों और साहित्यकारों ने फारसी साहित्य में अपना योगदान दिया । इन स्वतन्त्र राज्यों के शासकों ने देश-विदेश के विभिन्न भागों से विद्वानों को बुलाकर अपने दरबार में प्रश्रय दिया ताकि वे उन्मुक्त होकर साहित्य का सृजन कर सकें ।[2] 1454 ई0 में सैफुद्दीन अली यजदी ने जफरनामा की रचना फारसी में की थी ।[3]

---

1. के0एस0 लाल : द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृ0 २५७
   आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 365,
   एल0पी0 शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 177.
2. राधेश्याम : मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति, पृष्ठ 365.
3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 156.

15वीं शताब्दी में हिन्दी तथा अन्य क्षेत्रीय भाषाओं का विकास भी हुआ ।[1] विदेशियों और भारतीयों का सम्पर्क होने के कारण हिन्दुस्तानी भाषा विकसित हुयी थी । अमीर खुसरो इस भाषा के महान कवि थे । 13वीं शताब्दी में हिन्दुस्तानी या हिन्दवी भाषा दो धाराओं में आगे बढ़ी । एक धारा हिन्दी के रूप में सुदृढ़ हुयी और दूसरी धारा उर्दू के रूप में । 15वीं शताब्दी के आते आते हिन्दी ने एक निश्चित आकार प्राप्त कर लिया । 15वीं शताब्दी के सन्तों में कबीर, रामदास आदि के द्वारा इसका कलेवर विस्तृत हुआ ।[2] पूरे उत्तरी भारत में हिन्दी भाषा इस प्रकार प्रचलित थी कि यह आम लोगों के बोलचाल की भाषा थी । राजस्थान में राजस्थानी, पश्चिमी उत्तर प्रदेश में ब्रजभाषा और खड़ी बोली पूर्वी उत्तर प्रदेश में अवधी, बिहार में बिहारी भाषा, हिन्दी के विभिन्न रूपों में देखी जा सकती है । 1501 ई० में कुतबन ने मृगावती लिखी । यह अवधी भाषा में है ।[3]

उर्दू का विकास धीरे धीरे हुआ । उर्दू और हिन्दी का जन्म एक ही परिस्थितियों में हुआ किन्तु उर्दू ने फारसी से अधिक प्रेरणा ली जबकि हिन्दी ने संस्कृत से अधिक प्रेरणा ली ।[4] उर्दू को मुसलमानों ने अधिक अपनाया । हिन्दुओं की भाषा

---

1. के०एस० लाल : द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 252-253,

2. वही, पृष्ठ 253.

3. वही, पृष्ठ 253, ए०वी० पाण्डेय : द फर्स्ट अफगान अम्पायर इन इण्डिया, पृष्ठ 280, श्याम मनोहर पाण्डेय : मध्ययुगीन, प्रेमाख्यान, इलाहाबाद, पृष्ठ 65.

4. के०एस० लाल : वही, पृष्ठ 254, शोध प्रस्तुतकर्ता : रुद्रदेव : मध्यकालीन सन्त काव्य और सूफ़ी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन, पृष्ठ 68.

हिन्दी रही । हिन्दी और उर्दू में बहुत से शब्द सामान्य हैं । पंजाब में गुरू नानक ने गुरुमुखी में शिक्षाएँ दीं । अन्य क्षेत्रीय भाषाओं का भी विकास हुआ । मुगल सम्राट बाबर भी शिक्षा का महान प्रेमी था । वह शेर, शायरी, कविता, रूबाई लिखा करता था । अरबी, फारसी, हिन्दी, उर्दू का ज्ञाता था । बाबर ने 1501-1502 ई० में एक गजल लिखी जो बड़ी प्रसिद्ध हुई :-

"अपनी आत्मा के अतिरिक्त मैंने किसी भी मित्र को विश्वास-योग्य नहीं पाया ।
अपने हृदय के अतिरिक्त किसी को मैंने भरोसे के क़ाबिल न पाया ।।"[1]

बाबर ने 1519 ई० में अपनी कविता को "दीवान" के रूप में संकलित करवाया था । बाबर कविता द्वारा अपनी जीवन की कठिनाइयों को भुला देता था । जब बीमार पड़ जाता था तब कविता करके अपना मन बहलाया करता था । 22 अक्टूबर 1527 ई० को बाबर को बुखार आया और बीमार पड़ा तो उसने एक रूबाई की रचना की :-

"दिन के समय मेरे शरीर में ज्वर उग्र रूप धारण कर लेता है,
रात्रि के आगमन पर निद्रा मेरे नेत्रों को छोड़कर चली जाती है ।
मेरे दुःख एवं मेरे सन्तोष के समान में दोनों,
जब एक बढ़ता है तब दूसरी कम हो जाती है ।"[2]

---

1. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 30, बाबर : बाबरनामा, अनुवादक : श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 553.

2. बाबर : बाबरनामा : (अनुवादक) श्री केशव कुमार ठाकुर, पृष्ठ 131-132, सैयद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 30-31.

मुस्लिम शिक्षा पद्धति :

हिन्दू-मुसलमानों की शिक्षण विधियाँ एवं कालेज अलग-अलग थें। मुसलमान के बच्चों को जहाँ प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा दी जाती थी उसे मकतब कहा जाता था। ये मकतब मस्जिदों से सटाकर बनाये जाते थे। मकतबों को राज्य की ओर से कोई आर्थिक एवं वित्तीय सहायता नहीं दी जाती थी। तथा मकतब मुहल्लों, अध्यापकों एवं अमीरों के घरों में भी बनाये जाते थे। मदरसा उच्च शिक्षा का केन्द्र होता था। मकतब की शिक्षा पूरी करने के बाद विद्यार्थी मदरसे में उच्च शिक्षा ग्रहण करने जाते थे। मदरसे कहीं-कहीं राज्य बनवाता था। कहीं-कहीं धार्मिक व्यक्ति बनवाते थे। मदरसे बनवाने का प्रमुख उद्देश्य इस्लामी आदर्शों, नियमों एवं परम्पराओं का विकास करना एवं प्रचार करना एवं उसको अमल में लाना। मदरसे शिक्षा के प्रमुख केन्द्र होते थे। मदरसों से शिक्षा प्राप्त कर व्यक्ति राजकीय कार्य में, न्यायविभाग में, आमिल, मुफ्ती आदि बनने योग्य बन जाता था।[1]

मुसलमान अपने बच्चों को 5 वर्ष की उम्र से पहले ही मकतब में शिक्षा ग्रहण करने के लिये भेज दिया करते थे। मकतब में कुरान की शिक्षा के साथ-साथ फारसी पढ़ना-लिखना भी सिखाया जाता था। मुसलमानों में जब बालक 4 वर्ष 4 माह और 4 दिन का हो जाता था तो उसका "विसमिल्लाह खानी" संस्कार सम्पन्न किया जाता था।[2]

----

1. के०एस० लाल : द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 245, राधेश्याम : सल्तनत कालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 296, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 326.

2. राधेश्याम : वही, चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक, और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 145.

शिक्षा का उद्देश्य :

मुस्लिम शिक्षा का मुख्य उद्देश्य इस्लामी सिद्धान्त और दर्शन की जानकारी प्राप्त कर अपने ज्ञान को बढ़ाना, बालक में अनुशासन की भावना पैदा करना, एवं बालक के चरित्र का सर्वांगीण विकास करना था ।

जिस प्रकार हिन्दुओं में सर्वप्रथम बालक को ब्राह्मण "ॐ" लिखना सिखाता था उसी प्रकार मुसलमानों में मौलवी सर्वप्रथम बालक को "अलिफ" लिखना सिखाता था फिर अन्य अक्षर लिखना सिखाता था । जब बालक पढ़ना लिखना सीख जाता था तब उसे कुरान कण्ठस्थ कराया जाता था । इसके अलावा उन्हें अरबी-फारसी पढ़ना लिखना सिखाया जाता था ।[1] फिर साहित्य इतिहास, व्याकरण, गणित, नीतिशास्त्र, धर्म, पन्दनामा, आदमनामा, गुलिस्तां, आमी-कल-कवानीन, रूक्कात अमान, उल्लाह हुसैनी, बहारदानिश, सिकन्दरनामा आदि का ज्ञान करवाया जाता था । जो विद्यार्थी इसके बाद नहीं पढ़ना चाहते थे उन्हें मुंशी की पदवी दी जाती थी । जो विद्यार्थी आगे शिक्षा जारी रखते थे उन्हें उनके शैक्षिक स्तर के आधार पर मौलवी, मौलाना की उपाधि दी जाती थी ।[2]

मुस्लिम शिक्षा के मुख्य केन्द्र :

आगरा मुस्लिम शिक्षा का प्रमुख केन्द्र था । इसके अलावा मुल्तान, सिंध, लाहौर, दिल्ली, फतेहपुर सीकरी, बयाना, लखनऊ, ग्वालियर, थानेश्वर, सरहिन्द,

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 146, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 296.

2. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 296.

अजमेर, पटना, अहमदाबाद, दिल्ली, जालन्धर, फिरोजाबाद, जौनपुर, बिहार शरीफ, गुलबर्गा, बीदर, दौलताबाद, एलिचपुर, इलाहाबाद, बुरहानपुर, थट्टा, नारनौल, संभल भी शिक्षा के केन्द्र थे जहाँ पर अनेक मकतब और मदरसे खोले गये थे।[1] इसके अलावा काज़ी मियाँ उल्लास का मदरसा मीरवार बिहार सरीफ में बना था। शम्सुहक का मदरसा पटना जिले के बाराह के समीप वाजिदपुर नामक स्थान पर बना था। राजगीर में मुल्ला मन्सूर दानिशमन्द का और मुल्ला अब्दुस सायी का मदरसा बना है। फुलवर शरीफ नामक स्थान पर अमीर अताउल्लाह जैनावी का मदरसा बना है[2] जहाँ उच्च शिक्षा दी जाती थी।

सूफ़ी सन्त अपने खनकाहों में लोगों को शिक्षा दिया करते थे। ये खानकाहें धार्मिक शिक्षा के प्रमुख केन्द्र होते थे। हजारों की संख्या में लोग इन खानकाहों में शिक्षा प्राप्त करने के लिये आते थे।[3]

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 147, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 307, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 320, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 91.

2. के0पी0 साहू : सम आस्पेक्ट्स आफ नार्थ इण्डियन सोशल लाईफ, पृष्ठ 132.

3. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 307.

<u>अध्ययन के विषय</u> :

इस समय भी मुख्यत: साहित्य, काव्यशास्त्र, न्यायशास्त्र, धर्मशास्त्र, दर्शनशास्त्र, गणित, प्राकृतिक दर्शन, चिकित्साशास्त्र, तस्सुउफ, तर्कशास्त्र, व्याकरण, शब्द विज्ञान, साहित्य, आयुर्विज्ञान, पैगम्बरों का परिचम, इल्म-ए-कीरत, वसूल-ए-फिक अहदीस और सुलेख जैसे पारम्परिक विषयों की शिक्षा दी जाती थी । धातुविज्ञान, रसायनशास्त्र, गणित जैसे विषय कम पढ़ाये जाते थे । इसके अलावा उस समय लोग एक दूसरे से ज्ञान की बातें कम करते थे । केवल खगोलविद्या, आयुर्विज्ञान जैसे विषयों के अनुसंधान के लिए राजा और अमीर प्रोत्साहन देते थे । खगोल विद्या पर इस कारण अधिक ध्यान दिया जाता था क्योंकि जन्मकुण्डली बनाने, विवाह आदि अवसरों पर शुभ घड़ी निश्चित करने के लिए खगोलविद्या की आवश्यकता पड़ती थी ।[1]

<u>संस्कृत</u> :

बहुत कम मुसलमान संस्कृत पढ़ने में रूचि रखते थे । अलबरूनी के बाद किसी ऐसे विद्वान का उल्लेख नहीं मिलता है जिसने संस्कृत पढ़ी हो । सिकन्दर लोदी ने एक दो संस्कृत के ग्रन्थों का फारसी में अनुवाद अवश्य करवाया था किन्तु संस्कृत को बढ़ावा नहीं दिया था । ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिलता है जिससे यह सिद्ध हो सके कि दिल्ली के किसी भी सुल्तान ने अपने दरबार में कोई संस्कृत का विद्वान रखा हो ।[2]

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 148, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 295-305, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 320.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, पृष्ठ 320.

स्त्री शिक्षा :

समाज में पर्दा-प्रथा होने के कारण उच्च वर्गकीस्त्रियों की शिक्षा की ओर बहुत कम ध्यान दिया गया था । स्त्रियों के लिये अलग से कोई स्कूल कालेज नहीं खोले गये थे । वे प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही ग्रहण करती थीं । अमीर अपनी पुत्रियों को पढ़ाने के लिए घर पर ही ‖शिक्षिकाएँ‖ रख लिया करते थे । कुछ समकालीन चित्रों में राजकुमारियों को शिक्षकों से घरमेंपढ़ते हुए दिखाया गया है ।[1] कम उम्र में विवाह हो जाने के कारण वे उच्च शिक्षा ग्रहण करने से वंचित रह जाती थीं । घर पर ही उन्हें तीर चलाना, घुड़सवारी करना, वाद-विवाद आदि की शिक्षा दी जाती थी ।

मध्य वर्ग की स्त्रियाँ सामान्यत: पढ़ी लिखी होती थीं । वे संस्कृत, फारसी, हिन्दी तथा अन्य क्षेत्रीय भाषाओं का ज्ञान रखती थीं । वे अपने अपने धार्मिक ग्रन्थों का भी अध्ययन करती थीं । 16वीं शताब्दी के कवि और चण्डी मंगल के लेखक मुकुंद राय ने स्त्रियों की शिक्षा के बारे में और विधवाओं की शिक्षा के बारे में बताया है कि विधवाओं की शिक्षा पर विशेष जोर दिया जाता था । उनमेंसेकई पढ़ लिखकर शिक्षिका बन गयीं थीं । हती विद्यालंकार एक विधवा महिला थी जो बिहार में अध्यापिका थी। निम्न वर्ग की स्त्रियाँ पढ़ी लिखी नहीं होती थीं ।[2]

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 149, डॉ0 रत्न चन्द्र शर्मा : मुगलकालीन सगुण भक्ति काव्य का सांस्कृतिक विश्लेषण, पृष्ठ 185, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 313.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 149.

पुस्तकें :

इस समय भी छापेखाने का विकास नहीं हुआ था । इस कारण पुस्तकें सुलेखकों के द्वारा पाण्डुलिपि के रूप में तैयार की जाती थीं । चूँकि पुस्तकें हाथ से लिखी जाती थीं इस कारण वे बड़ी महँगी होती थीं । पुस्तकें चूँकि कम लिखी जाती थी इस कारण अध्यापक याददास्त पर अधिक बल देकर शिष्यों को सम्पूर्ण किताबों के पाठ कण्ठस्थ करवा दिया करते थे ।[1] इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इस समय भी साहित्य की काफी प्रगति हुयी थी परन्तु राजकीय प्रोत्साहन केवल मुसलमान विद्वानों को ही दिया जाता था जो फारसी भाषा में लिखते-पढ़ते थे । संस्कृत तथा अन्य प्रादेशिक भाषाओं के विद्वानों को कोई राजकीय प्रोत्साहन एवं संरक्षण नहीं दिया जाता था । जिन लेखकों को फारसी भाषा का ज्ञान था उन्होंने 3 किस्म के ग्रन्थ लिखे थे । इतिहास, धर्म और साहित्य । इतिहास पर सबसे अधिक ग्रन्थ लिखे गये थे जिससे उस समय के इतिहास का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त होता था ।[2]

पुस्तकालय :

जिस प्रकार आज आधुनिक युग में विद्यालयों एवं महाविद्यालयों के अन्दर पुस्तकालय बनाया जाता हैं उसी प्रकार उस समय भी मदरसों के साथ पुस्तकालय अवश्य बनाया जाता था । आज भी बहुत से खानकाहों में पुरानी पाण्डुलिपियों के संग्रह रखे हैं । बिहार के भागलपुर तथा फुलवारी शरीफ स्थिति खानकाहों में पाण्डु-

---

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 307, के0 एस0 लाल : द ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 245.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 109.

लिपियों के संग्रह रखे हैं ।[1] वाराणसी, मिथिला, तिरहूत आदि विद्यालयों में दर्शनशास्त्र, आयुर्विज्ञान, धर्मशास्त्र, इतिहास आदि विषयों की अधिकृत पुस्तकें, और पाण्डुलिपियाँ रहती हैं। दिल्ली का शाही पुस्तकालय सबसे बड़ा पुस्तकालय है ।[2]

शासकों के अपने निजी पुस्तकालय हुआ करते थे । सिकन्दर लोदी के प्रधानमंत्री मियाँ भुआँ ने चिकित्साशास्त्र का विशाल ग्रन्थ तिब-ए-सिकन्दरी तैयार करवाया था ।[3]

सुबह शाम दो बार कक्षाएँ चलती थीं । बीच में थोड़ी देर के लिये मध्यांतर होता था । पढ़ाई के लिये फीस नहीं ली जाती थीं बदले में छात्र शिक्षकों को उपहार दिया करते थे । शिक्षक छात्रों के रहने और भोजन की व्यवस्था भी करते थे । छात्र अपने शिक्षकों का बड़ा सम्मान करते थे । उनकी आज्ञा का पालन करते थे । जो शिक्षक बिना पुस्तक या नोट के पढ़ाते थे छात्र उनका बड़ा सम्मान करते थे । उस शिक्षक को कई पीढ़ियों तक याद किया जाता था ।[4]

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 150.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 151, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 320.

3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 153.

4. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 147, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, पृष्ठ 91.

हिन्दू शिक्षा पद्धति :

हिन्दुओं की शिक्षण संस्थाएँ 3 प्रकार की थीं जो निम्नवत् हैं :-

1. पाठशाला, 2. विद्यालय, एवम् 3. गुरू शालाएँ ।

पाठशाला :

पाठशाला से शिशु प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण करना शुरू करता था । सभी नगरों, कस्बों, बड़े बड़े गाँव में प्राथमिक पाठशालाएँ होतीं थी। ये पाठशालाएँ मन्दिरों में बनायी जाती थीं । प्रारम्भ में बालकों को गिनती, पहाड़े, गुणा, भाग, सिखाया जाता था फिर पैमानों का ज्ञान एवं बाँटों का ज्ञान कराया जाता था । विद्यार्थी लकड़ी की तख्ती पर चाक से लिखा करते थे । प्राथमिक पाठशाला में विद्यार्थी स्लेट, पेन्सिल का इस्तेमाल नहीं करते थे । ऊँची कक्षा के विद्यार्थी ही कागज और स्याही से लिखते थे ।[1]

विद्यालय :

विद्यालय उच्च शिक्षा के केन्द्र होते थे । विद्यालय में वेद, उपनिषद, भागवत, पुराण, गीता, संस्कृत भाषा एवं साहित्य, काव्य, व्याकरण, न्यायशास्त्र, वेदान्त, विभिन्न दर्शन, औषधि शास्त्र, ज्योतिष, इतिहास, भूगोल, संगीत, अलंकार शक्तियोग, मल्लविद्या आदि पढ़ाया जाता था परन्तु संस्कृति, भाषा और साहित्य, अध्ययन के मुख्य विषय होते थे । छन्द-सूत्र नामक पिंगल भी अध्ययन का एक प्रमुख

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 99,
डा० सावित्री शुक्ला : संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 60.

विषय था । इसके अलावा सिवा, जैमिनी, भारतमित्र, कालिदास का मेघदूत, कुमार संभव आदि विषय भी पाठ्यक्रम में शामिल थे ।[1]

गुरु शिष्यों को 5-6 वर्ष की आयु से शिक्षा देना प्रारम्भ कर देते थे । साधारणतया ये शिष्य 10-12 वर्ष तक अपने गुरूओं की सेवा किया करते थे । गुरू शिष्यों को शिक्षा पाठशालाओं में, इमारतों में या कभी कभी पेड़ों की छाया के नीचे बैठकर दिया करते थे । पढ़ाई प्रात:काल से लेकर दोपहर तक चलती थी । दोपहर को खाने के लिए एक घण्टा छुट्टी दी जाती थी । शिष्य शाम को ही घर वापस जाते थे । शिष्य ों से कोई फीस नहीं ली जाती थी । शिष्य गुरू की सेवा बड़े लगन से करते थे । त्यौहारों पर शिष्य गुरू को उपहार दिया करते थे । जो शिष्य पढ़ने लिखने में अपना मन नहीं लगाते थे उन्हें शारीरिक दण्ड दिया जाता था । कभी कभी गुरू शिष्य को कक्षा समाप्त होने के बाद एक दो घण्टे रोक लेते थे । यह भी एक प्रकार का दण्ड था जो दिया करते थे ।[2]

हिन्दू शिक्षा के मुख्य केन्द्र :

हिन्दू शिक्षा के मुख्य केन्द्र बनारस, प्रयाग, अयोध्या, श्रीनगर, थट्टा, तिरहुत, बिहार में मिथिला, , नदिया, काश्मीर, नालनदा, विक्रमशिला, गुजरात, मथुरा, वृन्दावन, मुल्तान, कामरूप, सरहिन्द आदि थे ।[3] बनारस

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 96-97.

2. वही, पृष्ठ 99.

3. वही, पृष्ठ 97, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 309.

अनादि काल से हिन्दुस्तान में शिक्षा का मुख्य केन्द्र रहा है । बनारस वेदान्त, संस्कृति, साहित्य और व्याकरण का प्रमुख केन्द्र था । इस कारण संसार के अनेक देशों से लोग शिक्षा ग्रहण करने यहाँ आया करते थे । न्याय और तर्कशास्त्र का अध्ययन करने के लिये विद्यार्थी मिथिला जाया करते थे क्योंकि मिथिला हिन्दू शिक्षा का दूसरा महान केन्द्र था ।[1] इसके अलावा शिक्षा गाँव के पाठशालों, टोल और मन्दिर के परिसद में भी दी जाती थी । यहाँ पर विद्यार्थी प्रारम्भिक शिक्षा से लेकर वेद, उपनिषद, महाभारत, गीता, पुराण तक का अध्ययन करते थे ।[2]

हिन्दू गणित में सबसे निपुण होते थे । गणित के प्रश्नों का समाधान वे मौखिक रूप से ही कर लेते थे । ब्राह्मण खगोल विद्या में बड़े कुशल थे । वे सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहण का मिनट-मिनट का सही अनुमान लगा लेते थे । वे मौसम विज्ञान के के भी विशेषज्ञ होते थे । ब्राह्मण अगर आँधी, तूफान, पानी बरसना होता था तो इसका पूर्व अनुमान लगा लेते थे ।[3]

हिन्दू शिक्षा का उद्देश्य :

हिन्दू शिक्षा मूलतः धर्म निरपेक्ष होती थी । हिन्दू शिक्षा का मुख्य उद्देश्य चरित्र का निर्माण करना, व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास करना, प्राचीन

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 309, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 97.

2. राधेश्याम : वही, पृष्ठ 311.

3. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 140.

संस्कृति की रक्षा करना, व्यक्ति को सामाजिक और धार्मिक कर्तव्यों के पालन के लिए प्रशिक्षित करना था ।[1]

अध्ययन के विषय :

सर्वप्रथम ब्राह्मण छात्र को संस्कृत के अक्षर से विद्यारम्भ करवाता था । फिर उसे अक्षर मिलाकर लिखना सिखाया जाता था । तत्पश्चात् व्याकरण, संस्कृत, पुराण, उपनिषद, वेद सभी पढ़ना लिखना सिखाता था ।[2] इस काल में भी कायस्थों ने फारसी भाषा के साहित्य का गहन अध्ययन किया था । फारसी भाषा आने के कारण उन्हें राज्यसेवा में नौकरी मिल गयी ।[3] हिन्दू राजकुमारों को 6 भाषाओं, 14 निदानों, महाकाव्यों और गीता, रामायण सभी की शिक्षा दी जाती थी । राजकुमारों को तलवार, खड्ग, कटार धनुष आदि चलाना सिखाया जाता था ।[4]

शिक्षण विधि :

पढ़ाने का तरीका मौखिक था । प्रारम्भ में छात्रों को तख्ती या जमीन

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 140.
2. वही, पृष्ठ 140-141.
3. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 311.
4. वही, पृष्ठ 311,
   कुतबन : मृगावती, पृष्ठ 101-102.

पर लिखना सिखाया जाता था । बाद में विद्यार्थियों को बांस या मरकट की कूची से तालपत्रों पर लिखना सिखाया जाता था । छात्रों को वृक्ष के नीचे बैठाकर पढ़ना सिखाया जाता था । गुरू स्वयं ऊँचे चबूतरे पर खड़े होकर या चटाई या मृगछाल पर बैठकर पढ़ाते थे ।[1]

नि:शुल्क शिक्षा :

गुरू शिष्यों को नि:शुल्क शिक्षा देते थे क्योंकि शिक्षा देना ही उनका धर्म माना जाता था । यद्यपि गुरू शिष्यों से शुल्क तो नहीं लेते थे पर जो शिष्य धन-सम्पन्न होते थे वे समय समय पर उपहार के तौर पर धनराशि दिया करते थे । इसके अलावा व्यापारी, अमीर, गुरू को धन दिया करते थे ।[2]

दण्ड :

छात्रों को गलती करने पर कठोर दण्ड दिया जाता था । दोषी छात्रों को दण्ड देने के लिये विद्यालय में छुट्टी होने के बाद सब छात्रों को जाने दिया जाता था पर दण्ड पाये छात्र को रोककर उनसे किसी पाठ को 10 या 15 बार पढ़ने के लिये कहा जाता था । अगर अपराध ज्यादा किया होता था तो कान ऐंठकर गाल में गुरू चाटा मारा करते थे । कभी कभी उकडूँ बैठाकर दोनों पैरों के बीच से हाथ निकालकर कान पकड़ने की सजा दी जाती थी । कभी-कभी कठोर अपराध करने पर गुरू दोषी छात्र को जमीन पर लिटाकर अपने पैर से छात्र की छाती दबाते थे ।[3]

---

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 141.

2. वही, पृष्ठ 141.

3. वही, पृष्ठ 142.

परीक्षा, प्रमाणपत्र :

छात्रों की कोई नियमित परीक्षा नहीं ली जाती थी बल्कि गुरू जब जान लेते थे कि अमुक-अमुक छात्र को सब ज्ञान प्राप्त हो गया है तब वह छात्र को अगली कक्षा में प्रवेश दे देता था। कभी कभी कुछ छात्र इतने विद्वान होते थे कि 6 महीने में ही उन्हें अगली कक्षा में भेज दिया जाता था। जब छात्र शिक्षा पूर्ण ग्रहण कर लेता था तब उनका समावर्तन संस्कार किया जाता था। इसमें पास होने पर डिग्री नहीं दी जाती थी। बल्कि छात्रों को कुछ उपाधियाँ जैसे उपाध्याय, महामहोपाध्याय, पीयूषवर्षी, पक्षधर, आदि दी जाती थी।[1]

गुरू शिष्य सम्बन्ध :

गुरू शिष्य के सम्बन्ध बड़े श्रद्धावान रहते थे। शिष्य अपने गुरू को बड़े आदर की दृष्टि से देखा करते थे और उनका बड़ा सम्मान करता था। शिष्य गुरू के पैर छूते थे। गुरू की सेवा करते थे। गुरू को कुएँ से पानी लाकर देते थे। उनके मकान की फर्श साफ करते, गुरू के लिये भोजन, लकड़ी की व्यवस्था करते थे। उनके लिए भोजन तैयार करते थे। गुरू के सो जाने के बाद स्वयं सोते थे और गुरू के जगने के पहले जाग जाते थे।[2]

----

1. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 142.

2. चोपड़ा, पुरी एण्ड दास : वही, पृष्ठ 141.

स्त्री शिक्षा :

स्त्री की शिक्षा की ओर बहुत कम ध्यान दिया जाता था। बालिकाओं के लिये अलग से विद्यालय नहीं बनाये जाते थे। प्रारम्भिक शिक्षा बालक एवं बालिका एक साथ विद्यालय में ग्रहण करते थे। उच्च शिक्षा बालिकाएँ अपने अपने घरों में ग्रहण करती थीं। धनी लोग स्त्रियों को पढ़ाने के लिये घर पर शिक्षक रखते थे।[1]

भ्रष्टाचार :

हिन्दू, मुस्लिम दोनों समाज में भ्रष्टाचार की भावना व्याप्त थी। उच्च वर्ग के हृदय में लालच, घमण्ड, अत्याचार, निम्न वर्ग का शोषण करने की भावना व्याप्त थी। निम्न वर्ग के हृदय में चोरी डकैती करने की भावना थी। अमीर और राज्य के कर्मचारी जैसे कानकून, मुतसारिर्फ, आमिल, दीवान-ए बजारत, सभी घूस लिया करते थे। इस भ्रष्टाचार के कारण जनता का जीवन कष्टप्रद हो गया था। कभी कभी निम्न वर्ग के लोगों को बिना पैसे के उच्च वर्ग के घरों में काम करना पड़ता था। अमीर लोग उन्हें वेतन भी कम देते थे। अगर वे काम करने से इन्कार करते थे तो उन्हें दण्ड दिया जाता था।[2]

सबसे अधिक भ्रष्टाचार की भावना व्यापारियों में व्याप्त थी। वे जनता का सबसे ज्यादा शोषण करते थे जैसे सुनार काँच के टुकड़ों को हीरा बताकर बेचा करते थे। सुनार सोने में ताँबा अधिक मिला दिया करते थे। ग्वाला दूध में पानी मिलाकर बेचा करते थे। दर्जी ग्राहकों से कपड़ा तो ज्यादा लेते थे पर बाकी स्वयं

----

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 99.

2. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 280-281.

चुरा लेते थे। गल्ला बेचने वाले व्यापारी, दाल, चावल, गेहूँ में कंकड़ मिला दिया करते थे।[1] अन्य दुकानदार ग्राहकों को दिखाते अच्छा सामान थे पर तौलते समय पैकेट में खराब सामान भर दिया करते थे। गुजरात के व्यापारी ईमानदार थे पर लाहौर के व्यापारी बेईमान थे। वे मुनाफा अधिक कमाते थे। सिकन्दर लोदी के शासनकाल में अगर कोई व्यापारी माल में मिलावट करता था और कम तौलता था, बाजार के मूल्य से अधिक मूल्यों में बेंचता था तो उसे दण्ड दिया जाता था।[2]

हिन्दुस्तान के लोगों में रिश्वत की बीमारी भी फैली हुयी थी। शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताक़ी के अनुसार इब्राहीम ने मियाँ हुसैन फर्मुली की हत्या करवाने के लिये चन्देरी के शेख़ फरीद दर्याबादी को 100 सोने की मुहरें और 10 गाँव रिश्वत के रूप में दिया ताकि वह मियाँ हुसैन फर्मुली की हत्या कर दे। इस कहानी का ऐतिहासिक महत्त्व कुछ भी हो पर इससे भारतीय समाज में फैले रिश्वत के अस्तित्व की पुष्टि अवश्य होती है।[3]

----

1. राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 281.

2. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देलही एण्ड आगरा, पृष्ठ 112.

3. शेख़ रिज़्कुल्लाह मुश्ताकी : वाक़ेआते मुश्ताक़ी, पृष्ठ 126, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 168, अब्दुल्लाह : तारीख़े दाउदी, पृष्ठ 96, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 301.

कुप्रथाएँ :

दोनों समाज में कुछ सामाजिक कुप्रथाएँ भी व्याप्त थीं जैसे बाल-विवाह, सती प्रथा, पर्दा प्रथा, आदि । इसके अलावा झूठ बोलना, चोरी करना, झूठी गवाही देना, मक्कारी, धोखेबाजी करना, आम बात हो गया था ।[1] आडम्बर का बोलबाला बढ़ता जा रहा था । चारों ओर आचरण भ्रष्टता और प्रवंचकता नग्न नृत्य करने लगी थीं ।[2]

इस प्रकार हम देखते हैं कि व्यापार, विनिमय, लेन-देन, दूकानदारी आदि आर्थिक क्रियाओं में ईमानदारी कम थी और बेईमानी ज्यादा थी ।

हिन्दू मुस्लिम सम्बन्ध :

डॉ० आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव का कथन है कि हिन्दू और मुसलमानों के बीच सम्बन्ध अच्छे न थे क्योंकि यह युग धार्मिक असहिष्णुता का युग था । हिन्दुओं का पूरा वर्ग बुरी तरह से पीड़ित था । हालांकि सुल्तान बहलोल लोदी ने हिन्दुओं के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाये रखा था जैसे राय करन, राय प्रताप, राय वीरसिंह, राय त्रिलोकचन्द्र, राय धंधू को अपना विश्वासपात्र बनाया । शासन में हिन्दुओं को पद तो दिया पर उच्च पद पर केवल अफगानों को नियुक्त किया ।[3] उनका

---

1. बन्दना पाराशर : बाबर, भारतीय सन्दर्भ में, पृष्ठ 129, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 118.

2. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 5.

3. अब्दुल हलीम : हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देलही एण्ड आगरा, पृष्ठ 52, हबीब निज़ामी : दिल्ली सल्तनत, भाग 1, पृष्ठ 585, ए०बी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 49.

कोई राजनैतिक स्तर नहीं था । मुसलमानों की बर्बरता और धर्मान्धता उन्हें उनसे दूर करती रही । हिन्दू मुसलमानों को म्लेच्छ समझते थे । मुसलमान भी हिन्दुओं को काफिर कहते थे और उन्हें दोजख (नरक) भेजने लायक ही समझते थे । वे अपने धर्म और सभ्यता को हिन्दुओं के धर्म और सभ्यता से श्रेष्ठ समझते थे । इससे हिन्दू जनता के हृदय में असन्तोष की भावना व्याप्त थी । इसलिए एक दूसरे के धर्म और संस्कृति के प्रति वे कोई सहानुभूति उत्पन्न नहीं कर सके ।[1]

समकालीन अकाट्य प्रमाणों के अतिरिक्त सैकड़ों वर्षों से ऐसी अविच्छिन्न परम्पराएँ चली आयी हैं जिनसे प्रमाणित होता है कि तुर्क शासन अत्याचारपूर्ण था क्योंकि मुसलमान शासकों ने शासन मुस्लिम कानूनों के आधार पर किया । उन्होंने किसी धर्मनिरपेक्ष शासन व्यवस्था और धर्मनिरपेक्ष न्याय-व्यवस्था को आरम्भ करने का प्रयास नहीं किया ।[2] ऐसी स्थिति में हिन्दू और मुसलमानों के बीच अच्छे एवं मैत्री पूर्ण सम्बन्ध होने का प्रश्न ही नहीं उठता है । हिन्दुओं को सुल्तान, अमीर और मंगोलों के आक्रमणों से भी बहुत कष्ट हुए थे ।[3]

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 244, द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 617-623.

2. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : वही, पृष्ठ 37-38, द देलही सल्तनत, वही, पृष्ठ 618.

3. एच0जी0 कीन : ए स्केच आफ द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, पृष्ठ 50.

अलाउद्दीन खिलजी और सुल्तान सिकन्दर लोदी के अतिरिक्त सभी सुल्तानों ने उलेमा वर्ग की शक्ति और उसके प्रभाव को स्वीकार करके उन्हें शासन में सलाह देने तथा शासन में हस्तक्षेप करने का अधिकार दिया था ।[1] इन परिस्थितियों में सुल्तान हिन्दुओं के साथ सद्व्यवहार एवं उदारता का व्यवहार करेगा ऐसी आशा नहीं की जा सकती है । हिन्दू जनता स्वयं शासक से न तो उदारता की आशा रखती थी और न ही शासन में उच्च पद पाने की इच्छा रखती थी । वह जानती थी मुसलमानों के बराबर जीवन के किसी भी क्षेत्र में न्याय और सुविधाएँ उन्हें प्राप्त नहीं होगी । इस कारण विशेष अधिकार प्राप्त मुसलमानों और अधिकाररहित हिन्दुओं में शत्रुता के अतिरिक्त अन्य कोई सम्बन्ध हो ही नहीं सकते थे ।[2] इसके अतिरिक्त हिन्दुओं को मुसलमान बनाने के जोशीले प्रयत्नों से हिन्दुओं में रूढ़िवादिता और दृढ़ हो गयी थी ।

उच्च वर्ग के हिन्दू और उच्च वर्ग के मुसलमानों के बीच कुछ समानता दिखायी देती है । परन्तु वह समानता बाहरी थी - जैसे हिन्दू और मुसलमान लगभग एक ही तरह का वस्त्र पहनते थे । उनके पहनावे में केवल यही एक अन्तर था कि मुसलमान अपने कबा को तनियों से दाहिनी ओर बाँधते थे और हिन्दू बायीं ओर बाँधते थे । दोनों ही घुटनों तक लम्बा कबा और लम्बी बाहों का कुर्ता और पायजामा पहनते

----

1. शेख रिज्कुल्लाह मुश्ताकी : वाक़े आते मुश्ताकी, पृष्ठ 9, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 97, अब्दुल्लाह : तारीखे दाउदी, पृष्ठ 10-11, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, पृष्ठ 245, अब्दुल हलीम : द हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान देलही एण्ड आगरा, पृष्ठ 52.

2. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 246-247.

थे ।[1] साफा और पगड़ी सभी हिन्दू मुसलमान पहनते थे ।[2] खानपान में वे हिन्दू जो शाही सेवा में थे मुसलमानों की तरह मांसाहारी भोजन करते थे ।[3]

शासक और विशेष अधिकार प्राप्त मुस्लिम वर्ग की धार्मिक असहिष्णुतापूर्ण नीति ने इस सम्पूर्ण काल में हिन्दू और मुसलमानों के बीच गहरी खाई खोद दी थीं। हिन्दू धार्मिक दृष्टि से उदार परन्तु सामाजिक दृष्टि से पूर्ण अनुदार था जबकि मुसलमान सामाजिक दृष्टि से उदार परन्तु धार्मिक दृष्टि से पूर्ण धर्मान्ध था । धर्म और समाज के प्रति हिन्दू और मुसलमानों की ये विरोधी धारणाएँ ही दोनों को एक दूसरे के निकट लाने में सबसे ज्यादा बाधक सिद्ध हुयीं । धार्मिक कारणों से ही हिन्दू और मुसलमानों के बीच कटुता बढ़ी तथा सम्बन्ध बिगड़े ।[4]

तुर्क अफ़गान शासकों ने कभी हिन्दुओं के भगवान राम-सीता को स्वीकार नहीं किया न ही हिन्दुओं ने कभी अपनी स्वेच्छा से इस्लाम धर्म स्वीकार किया ।

----

1. के०एम० अशरफ : हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ, पृष्ठ 215, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 246-247, के०एम० मिश्रा : उत्तर भारत का मुस्लिम समाज, पृष्ठ 36.
2. सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : बाबर, पृष्ठ 110, के०एम० मिश्रा : वही, पृष्ठ 39, राधेश्याम : सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, पृष्ठ 256.
3. के०एम० अशरफ : वही, पृष्ठ 225, द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 601, ए०वी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 220.
4. एल०पी० शर्मा : भारत का इतिहास, पृष्ठ 246-247.

हिन्दू और मुसलमान दोनों धर्मों के लोगों ने यह मानने से एकदम इन्कार कर दिया कि राम और रहीम, ईश्वर और अल्लाह दोनों एक ही ब्रह्म के विभिन्न नाम हैं ।[1]

डॉ० के०एस० लाल ने लिखा है कि हिन्दू और मुसलमानों के बीच अच्छे सम्बन्ध न होने के मुख्य तीन कारण थे -

(क) मुसलमानों द्वारा भारत विजय की विशेष इच्छा ।

(ख) विजेता और पराजित में स्वाभाविक कटुता की भावना ।

(ग) गैर मुसलमानी देश में लागू किये जाने वाले मुस्लिम कानून ।

यह निश्चित रूप से माना जा सकता है कि मुसलमान शासकों ने भारत में अपने साम्राज्य की स्थापना और उसके विस्तार में धर्म का सहारा लिया । ये धार्मिक विचार ही आपस में सम्बन्ध बिगड़ने में सहायक सिद्ध हुये ।[2]

राम गोपाल का कथन है कि फिरोज तुगलक के शासन काल में हिन्दू और मुसलमान दोनों साथ साथ शान्तिपूर्वक रहने लगे थे । एक दूसरे के रीति-रिवाजों के प्रति सहिष्णुता प्रकट करने लगे थे । दोनों धर्मों के बीच रीति-रिवाज भिन्न भिन्न होने पर भी इन्होंने आपस में मतभेद उत्पन्न नहीं होने दिया । बहुत से मूर्तिपूजा करने वाले हिन्दुओं ने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया क्योंकि सुल्तान ने बहुत से

---

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : दिल्ली सल्तनत, पृष्ठ 325.

2. के०एस० लाल : ट्वाइलाइट आफ द सल्तनत, पृष्ठ 247,

ए०बी० पाण्डेय : मध्यकालीन शासन और समाज, पृष्ठ 172.

हिन्दुओं को इस्लाम धर्म स्वीकार करने के लिये प्रोत्साहित किया था । फिरोज तुगलक ने यह घोषणा करवा दी थी कि जो हिन्दू इस्लाम धर्म अपना लेंगे उन लोगों से जजिया नहीं लिया जायेगा । जब लोगों ने यह घोषणा सुनी तो बहुत बड़ी संख्या में हिन्दुओं ने इस्लाम धर्म ग्रहण कर लिया उन्हें जजिया से मुक्ति मिल गयी । साथ ही साथ शासन की ओर से उन्हें सम्मान और पुरस्कार भी दिया गया । सैय्यद और लोदी शासकों ने भी धर्म परिवर्तन का लालच दिया था । बहलोल लोदी और सिकन्दर लोदी के समय निम्न वर्ग के हिन्दुओं ने इस्लाम धर्म ग्रहण कर लिया था पर ये हिन्दू और मुसलमान पूर्णत: एक दूसरे में घुल-मिल न सके ।[1]

हिन्दू और मुसलमानों के बीच एकता स्थापित करने का प्रयास अनेक सन्तों, दार्शनिकों, कतिपय विद्वानों ने किया पर सबसे अधिक प्रयास कबीर, नानक, नामदेव ने किया था । कबीरनेदोनों धर्मों के मध्य समन्वय स्थापित करने का सबसे अधिक प्रयास किया । बताया कि हिन्दू धर्म और इस्लाम धर्म दोनों एक ही लक्ष्य की ओर ले जाने वाले अलग अलग मार्ग हैं । राम-रहीम, कृष्ण, करीम और अल्लाह और ईश्वर एक ही परमात्मा के विभिन्न नाम हैं ।[2]

दोनों धर्म के मौलवियों तथा पुरोहितों के कर्मकाण्डों की निन्दा की और भक्ति एवं सत्य धर्मनिष्ठा पर बल दिया और बताया कि जाति-पाँतिसेकुछ नहीं होता

----

1. रामगोपाल : भारतीय मुसलमानों का राजनैतिक इतिहास, पृष्ठ 4, (मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ) आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 37-38, द देलही सल्तनत : भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 618.

2. द देलही सल्तनत : वही, पृष्ठ 615-616.

है। हम सभी एक ईश्वर की सन्तान हैं। हिन्दू मुसलमान अलग अलग नहीं हैं। इन्हें आपस में मिलकर रहना चाहिए। कबीर, नानक, नामदेव ने जाति तथा धर्म के भेदभाव को छोड़कर सभी लोगों के बीच आपस में प्रेम से रहने का उपदेश दिया। ताकि दोनों धर्मों के लोगों में आपस में एकता बनी रहे। इसी लिये दोनों धर्मों के लोगों को अपना शिष्य बनाया, पर वे दोनों धर्मों के लोगों के बीच एकता स्थापित करने में सफल न हो सके क्योंकि एक जाति के रूप में मुसलमानों ने स्वयं को अलग ही रखा। उन्होंने हिन्दुओं के समझौते के प्रयत्न की कद्र नहीं की।[1]

---------::0::---------

---

1. शिवमूर्ति शर्मा : कबीर और जायसी, पृष्ठ 506, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव : मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 246, डॉ० त्रिलोकी नारायण दीक्षित : संत दर्शन, पृष्ठ 169-170, विजयेन्द्र स्नातक : कबीर, पृष्ठ 17-18.

नवम् अध्याय

उपसंहार

उपसंहार

राजनीतिक परिदृश्य :

1388 ई0 में फ़िरोज़शाह तुग़लक की मृत्यु के बाद दिल्ली सल्तनत की दशा तेजी से गिरती गयी । एक के बाद एक अयोग्य शासक गद्दी पर बैठे । अमीरों की गुटबन्दी भी चरम सीमा पर पहुँच गयी । अयोग्य सुल्तानों के क्रमानुसार नाम थे - ग़ियासुद्दीन तुग़लकशाह द्वितीय, अबूबक्र, नासिरुद्दीन मुहम्मदशाह उसके बाद उसका पुत्र हुमायूँ "अलाउद्दीन सिकन्दरशाह" के हाथ गद्दी थोड़े-थोड़े दिन क्रम से होती हुयी अन्ततः तुग़लकवंश के अन्तिम शासक सुल्तान नासिरुद्दीन महमूदशाह के हाथों में 1394 ई0 में आ गयी । सुल्तान महमूदशाह में शासन करने की योग्यता न थी इसलिए शासन की वास्तविक सत्ता उसके मंत्री मल्लू इक़बाल खाँ ने अपने हाथों में ले ली थी । इस कमजोरी का फ़ायदा उठाकर तैमूर ने 1398 ई0 में भारत पर आक्रमण कर दिया । वह दिल्ली तक आ गया । महमूदशाह और मल्लू इकबाल ने तैमूर को रोकने का कोई प्रयास नहीं किया । 17 दिसम्बर 1398 ई0 को तैमूर और महमूद के बीच जहाँनुमा महल के पास घनघोर युद्ध हुआ । सुल्तान महमूद की सेना हार गयी । तैमूर ने दिल्ली पर अपना अधिकार कर लिया जिससे दिल्ली सल्तनत की जड़ें हिल गयीं । 19 मार्च 1399 ई0 को तैमूर दिल्ली छोड़कर वापस अपनी राजधानी समरकन्द के लिए रवाना हो गया । तैमूर का आक्रमण का उद्देश्य भारत से अपार धनराशि प्राप्त करना था । तैमूर ने भारत वर्ष छोड़ने से पहले ख़िज्रखाँ जो मुल्तान का प्रान्तपति रह चुका था उसे शासन का कार्य सौंपा । 1412 ई0 में सुल्तान नासिरुद्दीन महमूद की मृत्यु हो गयी । इसी के साथ तुग़लक वंश का अन्त हुआ ।

1414 ई0 में ख़िज्रखाँ ने दिल्ली पर अपना अधिकार कर लिया । ख़िज्रखाँ ने 1414-1421 ई0 तक मुबारकशाह ने 1421-1434 ई0 तक, मुहम्मदशाह ने 1434-

सैय्यद शासक अधिक दिनों तक सफलतापूर्वक शासन नहीं कर सके क्योंकि उनमें प्रशासनिक एकरूपता का अभाव था । अमीरों का अपने अपने क्षेत्र में बोलबाला था । अमीरों ने सुल्तानों को सहयोग नहीं दिया । अमीर, मुक्ता, जाबित, जमींदार, जागीरदार बहुत शक्तिशाली हो गए थे । धीरे धीरे शासन की शक्ति कमजोर होने लगी। स्थिति का फायदा उठाते हुए बहलोल लोदी ने दिल्ली पर अपना अधिकार कर लिया।

बहलोल लोदी एक वीर, निर्भीक, योद्धा, सफल सेनानायक था । उसके अधिकार में दिल्ली, बदायूँ, बरन, सम्भल, रापरी के राज्य थे । राजस्थान का कुछ भाग उसके अधिकार में था । ग्वालियर, जौनपुर, बाड़ी के शासक बराबर उसे कर भेजा करते थे । उसके अन्दर सबसे बड़ा गुण यह था कि उसमें स्वस्थ्य सामान्य बुद्धि, यथार्थवादिता और बुद्धिमत्ता पर्याप्त मात्रा में विद्यमान थी । वह कूटनीतिज्ञ और परिस्थितियों को समझने वाला था । वह अपने समय की सम्भावनाओं को अच्छी तरह समझकर उसके अनुरूप कार्य करता था इसलिये उसने जौनपुर के अतिरिक्त दिल्ली सल्तनत के दक्षिण बंगाल, राजस्थान, मालवा, आदि को जीतने का प्रयास नहीं किया ।

उसकी सफलता उसके साम्राज्य की सीमाओं तक ही नहीं थी । उसने एक ऐसे राजनीतिक सिद्धान्तों की श्रृंखला का सूत्रपात किया जो उसके उत्तराधिकारियों के लिए एक उदाहरण और चेतावनी बन गया । इन सुल्तानों ने अपने शासनकाल के प्रारम्भ से ही समझ लिया था कि बिना अमीरों का सहयोग प्राप्त किये शासन नहीं चला सकते हैं । परिणामस्वरूप इन्होंने अफ़गान अमीरों को महत्त्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किया । उन्हें पद, उपाधियाँ प्रदान किया । बहलोल लोदी को अमीरों से पूर्ण सहयोग मिला था । वह अमीरों की भावनाओं को जानता था । वह जानता था कि अफ़गान अमीर तथा अनुयायी जो शुरू से ही जातीय एवं व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का उपयोग करते आये थे अगर उन पर पाबन्दी लगायी गयी तो विद्रोह

करेंगे। इसलिये बहलोल लोदी ने अमीरों के साथ समानता का व्यवहार किया। अमीरों के सामने कभी सिंहासन पर नहीं बैठता था। अमीरों को प्रसन्न रखने के लिए उन्हें पद, जागीर एवं सम्मान दिया। जिन अमीरों ने विद्रोह किया, उद्दण्डता दिखायी उन्हें दण्ड दिया। रापरी, मेवात, सम्भल, कोल, भोगाँव के ऊपर इसी कारण आक्रमण किया तथा वहाँ के जागीरदारों को अपना आधिपत्य मानने पर बाध्य किया।

सिकन्दर लोदी :

सिकन्दर लोदी अमीरों के साथ अच्छे सम्बन्ध न बनाये रख सका। सुल्तान इन्हें बराबर का दर्जा नहीं देता था। अब अमीरों को सुल्तान के दरबार में क्षुब्ध स्थिति में हाथ बाँधे खड़े रहना पड़ता था, सिकन्दर लोदी तुर्कों की तरह निरंकुशता-पूर्वक शासन करता था। उद्दण्ड अमीरों को शक्ति के बल से दबाया। उसने अमीरों को आभास कराया कि वे सुल्तान के नौकर हैं। इससे अमीर सुल्तान से चिढ़ गये। अमीरों ने बदला लेने के उद्देश्य से सिकन्दर को पदच्युत करके उसके भाई फतेहखाँ को सिंहासन पर बैठाने का षड्यन्त्र रचा पर समय से पहले भेद खुल गया। सुल्तान ने क्रोधित होकर 22 अमीरों को दरबार से निकाल दिया। सुल्तान ने अमीरों पर इस कारण नियन्त्रण रखा ताकि अमीर संगठित होकर विद्रोह न कर सके, सिंहासन पर किसी और को बैठा न सके। सुल्तान की इस नीति के कारण साम्राज्य की जड़ें गहरी हो गयी।

इब्राहीम लोदी :

इब्राहीम लोदी का भी अपने अमीरों के साथ व्यवहार अच्छा न था। वे भी उसे वह मान-सम्मान नहीं देता था जो उसके पितामह दिया करते थे। इब्राहीम ने अमीरों को अपराध करने पर जिन्दा जलवाया। कुछ को दीवारों के

नीचे लटकवाया । इससे अन्य अमीर नाराज हो गये । अमीरों ने ही मुगल सम्राट बाबर को भारत पर आक्रमण करने का निमन्त्रण दिया जिससे लोदी वंश का अन्त किया और मुगल साम्राज्य की नींव डाली । हिन्दू जमींदारों का उत्थान तैमूर के आक्रमण के समय हुआ । कटेहर में रायहरिसिंह, पटियाली में राय बाबिर, ग्वालियर में वीरसिंह उसका पुत्र वैरमदेव, समाना के समीप राय हेनु जुलजैन आदि शक्तिशाली हिन्दू जमींदार थे । मुबारकशाह के समय सिधारन गंगू और सिद्धपाल का दरबार में उदय हुआ। बहलोल के समय हिन्दू जमींदारों की स्थिति अच्छी थी । बहलोल लोदी ने अपने शासनकाल में इटावा के रायदादू, बक्सर की विलायत के राय त्रिलोकचन्द, धौलपुर के राय विनायक देव तथा राय जगरसेन, कछवाहा के राय त्रिलोक को अपने शासन में महत्त्वपूर्ण पद दिया । ग्वालियर के राजा कीर्तिसिंह और मानसिंह से बहलोल के अच्छे सम्बन्ध थे ।

<u>हिन्दुओं की स्थिति :</u>

हिन्दुस्तान में मुसलमानों ने राज्य का प्रसार धर्म और तलवार के बल से किया था जबकि समाज का बहुसंख्यक वर्ग हिन्दुओं का था । सुल्तानों ने हिन्दू जनता के साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया । उन्हें प्रशासन में नीचे पदों पर रखा, सरकारी नौकरी केवल अफ़गानों को ही दी जाती थी । हिन्दुओं से जज़िया, तीर्थयात्रा कर, लिया जाता था । पूजापाठ करने, मन्दिरों को बनवाने पर प्रतिबन्ध था । मुसलमानों के बराबर उन्हें कोई मान सम्मान नहीं दिया जाता था । इससे हिन्दू जनता के हृदय में शासक वर्ग के प्रति हमेशा एक भय व विद्वेष की भावना बनी रहती थी । हिन्दू मुसलमानों के बीच एकता स्थापित करने का प्रयास सन्त कबीर, गुरू नानक ने किया । इन सुल्तानों में एक अच्छाई यह थी कि स्त्रियों का बड़ा आदर सम्मान करते थे । जब जौनपुर के सुल्तान हुसेनशाह की बेगम सुल्तान बहलोल लोदी के हाथ में आ गयी तो बहलोल ने उसे बड़े आदर-सम्मान के

साथ उसे उसके पति के पास भिजवा दिया । इसी तरह 1473-74 ई0 में जब जौनपुर का घेरा डाला तो सुल्तान के सैनिकों ने मलकये जहाँ (बीबी खूंजा) को बन्दी बनाया । जब सुल्तान को पता चला तो उसे बड़े आदर के साथ सुल्तान हुसैन के पास भिजवा दिया । सिकन्दर लोदी ने इसी मान सम्मान के कारण स्त्रियों को सन्तों की दरगाहों, मेले, घर में जाने पर प्रतिबन्ध लगाया ।

<u>वास्तुकला</u> :

वास्तुकला के क्षेत्र में काफी उल्लेखनीय कार्य हुए । मस्जिद, महल, मक़बरे बनवाये गये । कई नये नगर, गाँव बसाये गये । चित्रकला का विकास कम हुआ क्योंकि इस्लाम में जीवित प्राणियों की अनुकृति बनाना वर्जित बताया गया था । शिक्षा के विकास की ओर सभी सुल्तानों ने पूरा ध्यान दिया । मकतब, मदरसे खोले गये । राज्य की ओर से उसे आर्थिक सहायता दी गयी । सभी सुल्तानों ने उर्दू, फ़ारसी को बढ़ावा दिया, देश-विदेश से विद्वानों को बुलाकर दरबार में संरक्षण एवम् मान-सम्मान, धन, पदवी दी जिससे बहुत बड़ी संख्या में लेखक, विद्वान्, सन्त, कवि अरब, ईरान, मध्य एशिया से आये ।

सुल्तानों की जनकल्याण की भावना, न्यायप्रियता, कुशलता एवं चुस्त न्याय-प्रशासन, स्थानीय अधिकारियों द्वारा अत्याचार को रोकने की उनकी जिज्ञासा और उनकी हर किसी की शिकायत को सुनने की प्रवृत्ति ने उन्हें बहुत लोकप्रिय बना दिया था । ज्योतिष और सन्तों के आशीर्वाद में उनका विश्वास, उनका अच्छा व्यवहार, स्पष्टवादिता और सबसे बड़ी बात जीवन के प्रति उनका जबरर्जस्त उत्साह, इन सबने उन्हें अपने समर्थकों और प्रजा के बीच बहुत अधिक लोकप्रिय बना दिया था ।

धार्मिक नीति :

धर्म में उनकी रुचि बहुत अधिक थी । सभी सुल्तानों ने अपने धर्म के प्रति पूरी निष्ठा थी । 15वीं शताब्दी ने आर्थिक, राजनीतिक मसलों को इतना अधिक उत्वेलित कर रखा था कि सिवाय सिकन्दर लोदी के हमें किसी अन्य सुल्तान की धार्मिक नीतियों में धर्मान्धता व कट्टरता का पुट कदाचित नहीं दिखायी पड़ता है। सुल्तानों ने हिन्दू प्रजा को भूमि, धन, जागीर, पद का लालच देकर मुसलमान बनाने का यथासम्भव प्रयास किया । अगर कोई हिन्दू इस्लाम धर्म स्वीकार कर लेता था तो उसे राज्य में उच्च पद, धन, सम्मान, जागीर आदि दी जाती थी । उसे इस्लाम की शिक्षा दी जाती थी एवं नमाज़ पढ़ना सिखाया जाता था । अगर कोई हिन्दू विरोध करता था या सुल्तान की आज्ञा का पालन नहीं करता था तो उसकी हत्या कर दी जाती थी । इतिहासकार टाइटस ने लिखा है कि इस्लाम का प्रसार करने के लिए सिकन्दर ने एक दिन में 1500 हिन्दुओं की हत्या करवा दी थी । हिन्दुओं को मुसलमान बनाने का प्रयास इस कारण किया कि वे जानते थे कि जब तक मुसलमानों की जनसंख्या में वृद्धि नहीं होती तब तक प्रशासन को हिन्दुओं के विरोध का सामना करना पड़ेगा जबकि अलाउद्दीन खिलजी और मुहम्मद तुग़लक आदि राजनीतिक विचारों के सुल्तानों ने इस्लाम धर्म का प्रचार करने एवं हिन्दुओं को मुसलमान बनाने एवं राज्य में उच्च पद देने का लालच नहीं दिया । सिकन्दर लोदी की धार्मिक नीति ही कट्टर धर्मान्ध मुसलमानों की थी । हिन्दुओं से उसे घृणा थी । हिन्दुओं पर तरह तरह के प्रतिबन्ध लगाया । मथुरा, मन्दैल, उत्त-गिर, नरवर, चन्देरी आदि स्थानों के मन्दिर गिरवाये । उसके सम्पूर्ण शासनकाल में हिन्दुओं की इतनी हिम्मत नहीं थी कि वे मन्दिर का निर्माण कर सकें और पूजापाठ कर सकें ।

आर्थिक दशा :

तैमूर के आक्रमण से पूर्व देश की आर्थिक दशा बहुत अच्छी थी । देश की

सम्पन्नता और आर्थिक समृद्धि से आकर्षित होकर ही तैमूर ने भारत पर आक्रमण किया जिससे आर्थिक दशा बिगड़ने लगी । अन्नाभाव के कारण अकाल पड़ गया । बहलोल लोदी के समय से आर्थिक दशा सुधरने लगी थी । सिकन्दर लोदी एवं इब्राहीम लोदी के समय तक दशा अच्छी रही । अनाज की पैदावार अच्छी होने के कारण अनाज सस्ता हो गया । अनाज पर से ज़कात नामक चुंगी हटा ली गयी । इस कारण कम वेतन पाने वाला व्यक्ति भी आराम, सुख का जीवन बिताने लगा । फ़कीरों की भी आर्थिक स्थिति अच्छी हो गयी थी । उसके माँगने से पूर्व उसे कुछ न कुछ अवश्य मिल जाता था । अगर किसी फकीर की मृत्यु हो जाती थी तो उसके पास से हजारों लाखों की धन सम्पत्ति प्राप्त होती थी जो उसके उत्तराधिकारी को दे दी जाती थी । चोरी डकैती का कहीं नामोनिशान तक न था ।

लोदी सुल्तानों का अधिकार शताब्दी के तीन चौथाई हिस्से तक रहा और मुग़लों के पहले तुग़लकों को छोड़कर इनका शासनकाल सबसे बड़ा था । उनके दोष को देखते हुए भी उनकी उपलब्धियाँ काफी उल्लेखनीय हैं । उन्होंने तुर्कों और हिन्दुओं के विरोध के बावजूद एक साम्राज्य की आधारशिला रखी । उन्होंने तुर्कों को परास्त किया । हिन्दुओं से मित्रता की और दिल्ली सल्तनत को पुन: शक्तिशाली बनाया । राजनीतिक एकीकरण की प्रक्रिया, जिसमें दिल्ली एक केन्द्र था, शक्तिशाली तरीके से आरम्भ हुई । मिटने के पूर्व लोदी सल्तनत की दशा ऐसी थी कि बाह्य रूप से यह अभी भी शक्तिशाली लग रही थी, यद्यपि आन्तरिक विद्रोहों के कारण यह सल्तनत विघटनकारी तत्वों की गिरफ्त में आ चुकी थी । फिर भी देशी नरेशों की तुलना में लोदी सल्तनत इतनी कमज़ोर भी नहीं थी कि इसे कोई हड़प सकता, राणा सांगा भी नहीं । शर्की राज्य को बहलोल लोदी ने आत्मसात ही कर लिया था ।

मगर उनकी कमियाँ भी कम उल्लेखनीय नहीं हैं । अफ़ग़ानों की स्वतन्त्रता

और समानता से प्रेम उन्हें अनुशासनहीनता और बेतुके घमण्ड पर मजबूर कर देता था। उनके जातीय संगठन में स्थानीय स्वयत्तता थी जो कि उनके राजाओं के सत्ता एकीकरण की प्रवृत्ति से मेल नहीं खाती थी। बहलोल ने अमीरों को खूब महत्त्व दिया क्योंकि उस समय की राजनीतिक परिस्थितियाँ ऐसी थी। इन्हीं अमीरों ने बहलोल के बेटे सिकन्दर के तानाशाही रवैये की आलोचना की थी। जब इब्राहीम ने सत्ता के केन्द्रीयकरण की गति तेज की तब अमीरों ने विद्रोह करना प्रारम्भ कर दिया। अगर अफ़ग़ान अमीर कम घमण्डी होते और सुल्तान ज़्यादा होशियार होता तो स्थिति इतनी न बिगड़ती। लोदी साम्राज्य के पतन का यह एक प्रमुख कारण था।

सामाजिक दशा :

शोध प्रबन्ध में तत्कालीन सामाजिक दशा का विस्तृत विवरण इस प्रकार समाहित किया गया कि समकालीन हिन्दू समाज एवं मुस्लिम समाज का अलग अलग विवरण है। प्रत्येक समाज में कई वर्ग थे जिन्हें उच्च, मध्य एवं सामान्य वर्ग कहा जा सकता है। मुस्लिम वर्ग में कलम से जीवन यापन करने वाले तथा तलवार से जीवन यापन करने वाले थे। उलमा वर्ग का समाज में सर्वाधिक सम्मान था। हिन्दू वर्ग जातिगत आधार पर हमेशा से संगठित रहा है। अत: ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र पारम्परिक रूप से अपना जीवन यापन करने का प्रयास कर रहे थे। ब्राह्मण एवं क्षत्रिय जैसे उच्च वर्ग के लोगों को बदली हुई परिस्थितियों का सामना करने में थोड़ी कठिनाई हो रही थी, लेकिन वैश्य एवं शूद्र वर्ग पूर्व की भाँति अपने अपने पेशे में लगे रहे थे, एवं कठिनाई से भरा जीवन व्यतीत कर रहे थे। हिन्दू एवं मुस्लिम समाज में स्त्रियों की दशा पर भी अलग अलग प्रकाश डाला गया है। इस सन्दर्भ में यह निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि दोनों ही समाजों में स्त्रियों की दशा बहुत सन्तोषजनक नहीं थी। हिन्दू समाज का तो वही पारंपरिक हाल था। स्त्रियाँ बाल विवाह, सती, जौहर, देवदासी आदि प्रथाओं से ग्रस्त

थीं । हिन्दू वर्ग की अधिकांश स्त्रियों का शिक्षा से दूर दूर तक का कोई सम्बन्ध न था ।

भक्ति आन्दोलन एवं सूफ़ीवाद :

तत्कालीन समाज को सर्वाधिक आन्दोलित करने वाले भक्ति आन्दोलन एवं सूफ़ीवाद का विस्तृत अध्ययन किया गया है । यदि सिकन्दर लोदी जैसा सुल्तान इस काल में हुआ जो अपनी धर्मान्धता के लिए विख्यात है तो समूची मानवता को भाई चारे एवं आडम्बर विहीन धर्म का उपदेश देने वाले कबीर और गुरूनानक इसी युग की विभूति थे । सूफ़ी सन्तों ने समाज को अपने आलोक से आलोकित कर रखा था । समाज उनका सदैव ऋणी रहेगा । हिन्दू-मुस्लिम सौष्ठव सोलहवीं शताब्दी में, विशेषकर अकबर के समय अचानक नहीं पैदा हो गया । उसके लिए चौदहवीं एवं पन्द्रहवीं शताब्दियों में आधारशिला तैयार हुई थी ।

आर्थिक दशा :

आर्थिक दशा का अध्ययन भी प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के दायरे में हुआ है । ग्रामीण समुदाय एवं नगरीय समुदाय का अध्ययन आर्थिक दृष्टि से किया गया है । आयात-निर्यात के अलावा शाही कारखानों पर भी प्रकाश डाला गया है । सुल्तानों की भू-राजस्व नीति के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि सुल्तानों को कृषकों की भलाई की भी चिन्ता थी । लोदी काल में अनाज व कपड़े इत्यादि के सस्ते होने की भी जानकारी मिलती है ।

---------::0::---------

दशम अध्याय

सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

परिशिष्ट

सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

समकालीन फ़ारसी ग्रन्थ

क्र० सं०	लेखक		कृति
1.	अब्दुल्लाह	:	तारीखे दाउदी, अनुवादक, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, अलीगढ़, 1958.
2.	अहमद यादगार	:	तारीखे शाही, अनुवादक, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, अलीगढ़, 1958.
3.	अमीर खुर्द	:	सियार-उल-औलिया, उद्धरित, रशीद ।
4.	बाबर	:	तुजुके बाबरी, अनुवादक : श्री केशव कुमार ठाकुर, श्रीमती बेवरिज, लन्दन, 1922.
5.	फ़ख़्र-ए-मुदब्बिर	:	तारीख-ए-फ़खरुद्दीन मुबारकशाही (सम्पादक डेनिसन व रौस, लन्दन, 1927)
6.	फ़िरोज़शाह तुग़लक	:	फुतूहात-ए-फ़िरोज़शाही, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लककालीन भारत, भाग 1, अलीगढ़, 1958.
7.		:	तारीख-ए-फ़िरोज़शाही : अनुवादक, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लककालीन भारत, भाग 1-2, अलीगढ़, 1956-1957.
7.	ख्वाजा अब्दुल्लाह मलिक इसामी	:	फुतूह-उस-सलातीन, भाग 1, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लककालीन भारत, भाग 2, अलीगढ़, 1957.

क्र0 सं0	लेखक		कृति
8.	मुहम्मद कबीर बिन शेख़ इस्माईल	:	अफ़्सानाये शाहाने, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, अलीगढ़, 1958.
9.	निज़ामुद्दीन अहमद बख्शी	:	तबक़ाते अकबरी : अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूरकालीन भारत, भाग 1, अलीगढ़, 1958.
10.	शेख रिज़्कुल्लाह मुश्ताकी	:	वाके-आते-मुश्ताकी, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, अलीगढ़, 1958.
11.	सिकन्दर बिन मन्झू गुजराती	:	मिरात-ए-सिकन्दरी, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 2, अलीगढ़, 1958.
12.	शम्स-सिराज-अफ़ीफ़	:	तारीखे फ़िरोज़शाही, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुगलक कालीन भारत, भाग 1, अलीगढ़, 1957.
13.	यहया बिन अहमद अब्दुल्लाह सिहरिन्दी	:	तारीखे मुबारकशाही, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लक कालीन भारत, भाग 1, अलीगढ़, 1958.
14.	ज़ियाउद्दीन बरनी	:	फतवा-ए-जहाँदारी, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लक कालीन भारत, भाग 1-2, अलीगढ़, 1956-1957.
		:	तारीख़-ए-फ़िरोज़शाही, सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लक कालीन भारत, भाग 1-2, अलीगढ़, 1956-1957.

समकालीन यात्रियों के विवरण

1. बारबोसा : द बुक आफ दौरत-ए-बारबोसा, खण्ड 1-2, हकल्यूट सोसायटी (लन्दन 1918-1921)

2. इब्नबतूता : द रेहला आफ इब्नबतूता, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुग़लक कालीन भारत भाग 1, अलीगढ़, 1956.

अंग्रेजी

क्र0 सं0	लेखक	कृति
1.	अब्दुल हलीम	: हिस्ट्री आफ लोदी सुल्तान्स आफ देहली एण्ड आगरा, (दिल्ली 1974 ई0)
2.	ए0बी0 पाण्डेय	: फर्स्ट अफ़ग़ान एम्पायर इन इण्डिया (कलकत्ता, 1956 ई0)
3.	एडवर्ड थामस	: क्रानिकल्स आफ द पठान किंग्स आफ देहली (लन्दन, 1871 ई0)
4.	अब्दुल रशीद	: सोसायटी एण्ड कल्चर इन मेडीवल इण्डिया,

क्र0 स0	लेखक		कृति
5.	ए0एल0 श्रीवास्तव	:	द सल्तनत आफ देलही
6.	ए0के0 मजूमदार	:	चैतन्य, हिज़ लाइफ एण्ड डाक्ट्रिन
7.	ऐलेक्जेण्डर डॉन	:	द हिस्ट्री आफ़ हिन्दुस्तान, भाग 1-2.
8.	द देलही सल्तनत	:	भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित
9.	एच0जी0 कीन	:	ए स्केच आफ़ द हिस्ट्री आफ़ हिन्दुस्तान
10.	हमीदा खातून नक्वी	:	एग्रीकल्चरल इण्डस्ट्रीयल एण्ड अरबन डायनमिज्म अण्डर दी सुल्तान्स आफ़ देहली
11.	होडीवाला	:	स्टडीज इन इन्डो मुस्लिम हिस्ट्री ।।
12.	हैवल	:	आमरून रूल इन इण्डिया
13.	हुसैन	:	मैरेज कसटम्स अमंग मुस्लिम्स इन इण्डिया
14.	ईश्वरी प्रसाद	:	ए शार्ट हिस्ट्री आफ़ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, इलाहाबाद, 1936.
		:	हिस्ट्री आफ करौना टर्क्स आफ इण्डिया, इलाहाबाद
15.	आई0एच0 कुरेशी	:	द एडमिनिस्ट्रेशन आफ़ द सल्तनत आफ़ देहली, (लाहौर, 1942)
16.	इक्तदार हुसैन सिद्दीकी	:	सम आस्पेक्टस आफ़ अफ़गान डिस्पॉटिज़्म इन इण्डिया (अलीगढ़, 1969)

क्र0 स0	लेखक		कृति
17.	इरफान हबीब एवं तपन राय चौधरी	:	कैम्ब्रिज इकोनामिक हिस्ट्री आफ़ इण्डिया, भाग 1, 1982.
18.	जे0एस0 ग्रेवाल	:	मुस्लिम रूल इन इण्डिया
19.	जान ब्रिग्स	:	हिस्ट्री आफ़ दि राईज़ आफ़ मुहम्मदन पावर, इन इण्डिया, भाग 4.
20.	के0ए0 निज़ामी	:	स्टेट एण्ड कल्चर इन मेडीवल इण्डिया (देहली 1985.)
21.	के0पी0 साहू	:	सम आस्पेक्ट्स आफ़ नार्थ इण्डियन सोशल लाईफ़
22.	के0एस0 लाल	:	द ट्वाइलाइट आफ़ द सल्तनत, बम्बई, 1963.
23.	कुँवर मुहम्मद अशरफ	:	लाइफ़ एण्ड कन्डीशन्स ऑफ़ द पीपुल आफ़ हिन्दुस्तान, दिलली, 1959.
24.	मुहम्मद हबीब	:	सम आस्पेक्ट्स आफ़ दि फ़ाउन्डेशन आफ़ दिल्ली सल्तनत, दिल्ली, 1966.
		:	दि पालिटिकल थ्योरी आफ़ द दिल्ली सल्तनत, इलाहाबाद
25.	मुहम्मद ज़की	:	एक्यूजिशन आफ़ इस्लामिक लर्निंग अण्डर द सैय्यद एण्ड लोदीस, मेडीवल इण्डिया मिसिलेनी, भाग 4, अलीगढ़, 1977.
26.	नेल्सन राईट	:	कैटेलाग आफ़ क्वाइन्स इन इण्डियन म्यूजियम, भाग 1-2.

क्र0 स0	लेखक		कृति
28.	आर0पी0 त्रिपाठी	:	सम आस्पेक्ट्स आफ् मुस्लिम एडमिनिस्ट्रेशन, इलाहाबाद, 1936.
29.	रशब्रुक विलियम्स	:	ऐन एम्पायर बिल्डर आफ् द सिक्सटीन्थ सेन्चुरी
30.	शेख़ अब्दुल रशीद	:	लैण्ड रेवेन्यू एडमिनिस्ट्रेशन ड्यूरिंग द सल्तनत पीरियड, 1962.
31.	सुलेमान नदवी	:	दि एडूकेशन आफ् हिन्दूस अण्डर द मुस्लिम रूल, करांची, 1963.
32.	सर बूल्ज़ले हेग	:	कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ् इण्डिया.
33.	एस0ए0ए0 रिज़वी	:	मुस्लिम रिवाइवलिस्टम मूवमेन्ट इन नार्दर्न इण्डिया 13th एण्ड 18th सेन्चुरी
34.	एस0वी0पी0 निगम	:	नोबिलिटी अण्डर द सुल्तान्स आफ् देहली, दिल्ली 1968.
35.	ताराचन्द	:	इन्फ्लुएन्स आफ इस्लाम आन इण्डियन कल्चर, इलाहाबाद, 1946.
36.	टाइटस	:	इण्डियन इस्लाम
37.	डब्लू0एच0 मोरलैण्ड	:	दि एग्रेरियन सिस्टम् आफ् मुस्लिम इण्डिया, कैम्ब्रिज, 1929, इलाहाबाद ।
		:	मुस्लिम भारत की ग्रामीण व्यवस्था, अनुवादक : कमलाकर तिवारी, इलाहाबाद, 1963.

क्र0 स0	लेखक		कृति
38.	युसुफ अलीखाँ	:	मेडीवल इण्डिया, सोशल एण्ड इकनामिक कन्डीशन, लन्दन, 1932.
39.	युसुफ हुसैनखाँ	:	सोशल एण्ड इकोनामिक कन्ट्रीव्यूशन इन मेडिवल इण्डिया, आई0सी0 1956, भाग 30.
		:	द एजूकेशनल सिस्टम इन मेडिवल इण्डिया, आई0 सी0 1956.

हिन्दी

1.	अवध बिहारी पाण्डेय	:	मध्यकालीन शासन और समाज
2.	ए0बी0 एम0 हबीब उल्लाह	:	फाउन्डेशन आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, लाहौर, 1945.
3.	अमीर खुसरो	:	तुगलकनामा, अनुवादक : सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी : तुगलकालीन भारत, भाग 1,
4.	अयोध्या सिंह उपाध्याय: हरिऔध		कबीर वचनावली, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, 2015 वि0.
5.	आगा मेहदी हसन	:	द तुगलक डाइनेस्टी, कलकत्ता, 1963.
6.	आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव	:	दिल्ली सल्तनत, तृतीय संस्करण, 1959.
		:	मध्यकालीन भारतीय संस्कृति

क्र0 सं0	लेखक		कृति
7.	विद्यापति	:	कीर्तिलता, इण्डियन प्रेस
8.	वी0के0 शर्मा	:	मध्यकालीन भारत
9.	चोपड़ा, पुरी एण्ड दास	:	भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास
10.	इलियट एवं डाउसन	:	भारत का इतिहास, भाग 3-5.
11.	गोविन्द त्रिगुणायत	:	कबीर की विचारधारा
12.	गुरू ग्रन्थ साहब	:	राग आसा, 1951.
13.	हबीब निज़ामी	:	दिल्ली सल्तनत, भाग 1-2.
14.	घनश्याम दत्त शर्मा	:	मध्यकालीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थाएँ
15.	हजारी प्रसाद द्विवेदी	:	कबीर, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय, बम्बई, 1964.
16.	हरिहर सिंह	:	हमारे पर्व और त्यौहार
17.	ईश्वरी प्रसाद	:	मध्यकालीन इतिहास
18.	कबीर	:	संतवानी संग्रह, भाग 2.
19.	के0एम0 पणिक्कर	:	भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण
20.	के0एम0 मिश्रा	:	उत्तरी भारत में मुस्लिम समाज

क्र0 सं0	लेखक		कृति
21.	केशव कुमार ठाकुर	:	बाबरनामा
22.	केदार नाथ द्विवेदी	:	कबीर और कबीर पंथ, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1965.
23.	कृ0ज्ञा0 भिंगारकर	:	संत साहित्य के शिक्षित कबीर और ज्ञानेश्वर
24.	एल0पी0 शर्मा	:	भारत का इतिहास, आगरा
25.	ललित मुकर्जी	:	सम्पूर्ण भारत का इतिहास
26.	नज़ीर मुहम्मद	:	कबीर के काव्य रूप, 1973.
27.	माताप्रसाद गुप्ता	:	कबीर ग्रन्थावली, प्रामाणिक प्रकाशन, आगरा, 1969.
28.	मलिक मुहम्मद जायसी	:	पद्मावत, सम्पादक, वासुदेव शरण अग्रवाल, साहित्य सदन, चिरगाँव, 2018 वि0
29.	मुहम्मद मुजीब	:	इण्डियन मुस्लिम, लन्दन, 1967.
30.	परशुराम चतुर्वेदी	:	उत्तरी भारत की सन्त परम्परा, भारती भण्डार इलाहाबाद, 2008 वि0
		:	कबीर साहित्य की परख, भारती भण्डार, प्रयाग 2011 वि0
31.	पारसनाथ तिवारी	:	कबीर ग्रन्थावली, हिन्दी परिषद् प्रयाग विश्वविद्यालय, प्रयाग, 1961.

क्र0 सं0	लेखक		कृति
32.	पुरुषोत्तम लाल श्रीवास्तव	:	कबीर साहित्य का अध्ययन, सं0 2008 वि0
33.	पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल		गोरखबानी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 2003 वि0
		:	हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय ।
34.	रत्नचन्द शर्मा	:	मुगलकालीन सगुण भक्ति काव्य का सांस्कृतिक विश्लेषण ।
35.	रति भानु सिंह नाहर	:	भक्ति आन्दोलन का अध्ययन, प्र0सं0
36.	आर0के0 सक्सेना	:	अमीर तैमूर की आत्मकथा
37.	रामचन्द्र शुक्ल	:	जायसी ग्रन्थावली, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, सं0 2013 वि0
38.	रामचन्द्र तिवारी	:	कबीर मीमांसा
39.	रामगोपाल	:	भारतीय मुसलमानों का राजनैतिक इतिहास, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ
40.	राधेश्याम	:	सल्तनतकालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास, इलाहाबाद, 1987.
		:	मध्यकालीन भारत के इतिहास के सन्दर्भ में प्रशासन, समाज और संस्कृति
		:	मुगल सम्राट बाबर, पटना, 1974.

क्र0 सं0	लेखक		कृति
41.	रामकुमार वर्मा	:	संत कबीर का रहस्यवाद, साहित्य भवन लि0, इलाहाबाद, 1959.
42.	रामनाथ शर्मा	:	मध्यकालीन कलाएँ एवं उनका विकास
43.	सैय्यद अतहर अब्बास रिज़वी	:	उत्तर तैमूर कालीन भारत, भाग 1, अलीगढ़
		:	तुगलक कालीन भारत, भाग 1-2, अलीगढ़
		:	सूफीज्म इन इण्डिया, भाग 1, दिल्ली.
		:	जफ़रनामा, भाग 2.
		:	बाबर
44.	सावित्री चन्द्र"शोभा"	:	समाज और संस्कृति
45.	शिवमूर्ति शर्मा	:	कबीर और जायसी
46.	शुकदेव सिंह	:	कबीर बीजक
47.	सैय्यद इकबाल अहमद जौनपुरी	:	जौनपुर शर्की राज्य का इतिहास
48.	सावित्री शुक्ला	:	संत साहित्य की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि
49.	सुकुमार सेन	:	इस्लामी बंगाल साहित्य

क्र0 सं0	लेखक		कृति
50.	श्याम सुन्दर दास	:	कबीर ग्रन्थावली नागरी प्रचारिणी सभा, काशी 1038 ई0 ।
51.	श्याम मनोहर पाण्डेय	:	मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, इलाहाबाद
52.	साधू पूरनदास	:	बीजक श्री कबीर साहब, कर्नलगंज, इलाहाबाद, 1905 ई0
53.	श्री निवास बत्रा	:	हिन्दी और सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन
54.	संतबानी संग्रह, भाग 2	:	बेलविडियर प्रेस, इलाहाबाद, 1905 ई0
55.	सुनीति कुमार चातुर्ज्या	:	भारत की भाषायें
56.	एस0एम0 जाफर	:	सम कल्चरल आस्पेक्टस ऑफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, दिल्ली
57.	त्रिलोकी नारायण दीक्षित	:	संत दर्शन
58.	उदय नारायण तिवारी	:	हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास
59.	विचारदास	:	कबीर साहित्य की परख
60.	विजयेन्द्र स्नातक	:	कबीर
61.	विश्वनाथ प्रसाद मिश्र	:	हिन्दी साहित्य का अतीत, भाग 1.
62.	वन्दना पाराशर	:	बाबर, भारतीय सन्दर्भ में

क्र0 सं0	लेखक	कृति
63.	डब्लू0एच0 मोरलैण्ड	: मुस्लिम भारत की ग्रामीण व्यवस्था
64.	यूसुफ हुसैन	: मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति

अप्रकाशित शोध प्रबन्ध

1. रीता जोशी : द रोल आफ अफ़गान नोवेल्टी ड्यूरिंग द मुग़ल पीरियड

2. रुद्रदेव : मध्यकालीन सन्त काव्य और सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन, थिसिस नम्बर 2151.

3. विजय चन्द्र चतुर्वेदी : हिन्दी उपन्यास साहित्य, 1947 (थिसिस नम्बर 1999).

पत्रिकाएँ

1. सम्मेलन पत्रिका भाग 54 : डॉ0 पारस नाथ तिवारी

2. सम्मेलन पत्रिका भाग 56 :

गजेटियर

1. बनारस डिस्ट्रिक्ट गजेटियर

उर्दू

लेखक	कृति
अबुल हयी	: तारीख़-ए-फरिश्ता, भाग 1.
नवल किशोर	: तारीख़-ए-फरिश्ता
रियाज अहमद खाँ शेरबानी	: मुगलिया सल्तनत का उरूज का जवाल

---------::0::---------